विज्ञान एवं संस्कृति

संपादक
सुरेश कुमार जिन्दल
फूलदीप कुमार

रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र (डेसीडॉक)
रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन (डी आर डी ओ)
रक्षा मंत्रालय, मेटकॉफ हाउस, दिल्ली

विज्ञान एवं संस्कृति
सुरेश कुमार जिन्दल
फूलदीप कुमार

विज्ञान एवं संस्कृति

विज्ञान एवं संस्कृति

सम्पादक

सुरेश कुमार जिंदल

फूलदीप कुमार

प्रकाशक

रक्षा मंत्रालय
रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन (डी आर डी ओ)
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र [डेसीडॉक]
मेटकॉफ हाउस, दिल्ली

डी आर डी ओ विशेष प्रकाशन श्रृंखला
विज्ञान एवं संस्कृति
द्वारा रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र (डेसीडॉक), दिल्ली

श्रृंखला सम्पादक

सम्पादक
सुरेश कुमार जिन्दल
फूलदीप कुमार

मुद्रण
एस के गुप्ता
हंस कुमार

सम्पादकीय सहायक
अशोक कुमार

विपणन
आर पी सिंह

आई एस बी एन 978-81-86514-40-5

© 2013 सर्वाधिकार सुरक्षित, डेसीडॉक, मेटकॉफ हाउस, दिल्ली

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। भारतीय कॉपीराइट अधिनियम 1957 में स्वीकृत प्रावधानों के अतिरिक्त प्रकाशक की पूर्व लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलैक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से, अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनः प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में, आंशिक या पूर्ण रूप से, पुनरूत्पादित, संचारित तथा प्रसारित नहीं किया जा सकता है।

इस पुस्तक में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता का उत्तरदायित्व पूर्णतः संबंधित लेखकों का है। आलेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण लेखकों की निजी अभिव्यक्ति हैं। डेसीडॉक अथवा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केंद्र (डेसीडॉक), डी आर डी ओ, मेटकॉफ हाउस, दिल्ली–110 054 द्वारा अभिकल्पित एवं प्रकाशित।

भूमिका

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विश्व की प्राचीनकाल की उपलब्धियों से लेकर इस शताब्दी में प्राप्त महान सफलताओं की एक लम्बी और अनूठी परंपरा रही है। प्राचीन विश्व में विज्ञान, गणित, खगोल शास्त्र और दर्शन शास्त्र का अद्वितीय विकास हुआ। विश्व कणाद, कपिल, भारद्वाज, नागार्जुन, चरक, सुश्रुत, वराहमिहिर, आर्यभट, गैलीलियो, आर्किमिडीज, अरस्तू, और भास्कराचार्य जैसे वैज्ञानिकों की जन्मभूमि और कर्मभूमि रहा है। इन वैज्ञानिकों ने गणित, ज्योतिष, चिकित्सा शास्त्र, रसायन शास्त्र, खगोल शास्त्र, दर्शन शास्त्र, इत्यादि क्षेत्रों में अभूतपूर्व योगदान दिया। कालांतर में विश्व भर में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन आया।

परम्परागत कुशलताओं को परिष्कृत करके तर्कसंगत एवं स्पर्द्धात्मक बनाने और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के अग्र क्षेत्रों में अग्रिम क्षमताओं का विकास करने के प्रयास होते रहे।

विश्व में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति लाने वाले दृष्टिवेभाओं को विश्वास था कि विश्व को आधुनिक, औद्योगिक समाज बनाने में विज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। अनुभव और परिणाम से यह सिद्ध हो गया है कि उनका विश्वास बिल्कुल ठीक था।

आज विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी एवं नई प्रक्रियाएं और भी प्रासंगिक प्रतीत होती हैं। वैज्ञानिक ज्ञान और अनुभव, प्रौद्योगिकी, नई प्रक्रियाएं, उच्च प्रौद्योगिकीय औद्योगिक संरचना और कुशल कार्यबल इस नए युग की संपत्ति हैं। आज के विश्व में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी आर्थिक प्रगति और विकास के महत्वपूर्ण वाहक हैं। भारतीय विज्ञान के लिए वर्तमान स्थिति अति महत्वपूर्ण है और यदि सकारात्मक बड़े तथा ठोस कदम इस क्षेत्र में उठाए जाएं तो भविष्य में देश स्थायी और तीव्र प्रगति कर सकता है।

आज के युग में अनेक खोज एवं अन्वेषण कार्य चल रहे हैं जिनसे मानव को प्रकृति को समझने में मदद मिल रही है तथा इस ज्ञान के उपयोग से नित नये संसाधनों की रचना हो रही है। इन संसाधनों से मानवीय कार्य को दक्षता एवं सुविधाजनक रूप से पूर्ण करने में मदद मिल रही है।

प्रस्तुत पुस्तक **विज्ञान एवं संस्कृति** में पर्यावरण, कृषि, औद्योगिकिकरण, भारतीय परंपराओं, वैदिक गणित तथा विभिन्न सांस्कृतिक पक्षों पर आलेखों को संकलित किया गया है। ये आलेख डी आर डी ओ द्वारा 05–07 दिसंम्बर 2013 के दौरान विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का योगदान नामक विषय पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हेतु प्राप्त आलेखों से चयनित किए गए हैं।

आशा है कि उच्च कोटी के वैज्ञानिकों एवं अकादमीगणों के इन आलेखों से इन विषयों पर नवीन जानकारी उभर कर आएगी। यह पुस्तक राजभाषा हिन्दी में विज्ञान एवं संस्कृति के अर्न्तसंबंधों पर जानकारी उपलब्ध कराने की वाहक सिद्ध होगी।

सुरेश कुमार जिंदल

फूलदीप कुमार

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	आलेख का शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं0
01.	वैश्विक प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान	विनीता सिंघल	01
02.	विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के साथ शिक्षा का बदलता परिदृश्य	कृष्ण कुमार मिश्र	09
03.	सी–डैक, पुणे का भारतीय भाषाओं के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान	काजल बाजपेयी	16
04.	महिला सशक्तिकरण में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिकाः एक समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण	शीतल शर्मा	21
05.	आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका	पवन कुमार राघव, सिद्धार्थ पाण्डेय, नीरज सतीजा, योगेश कुमार वर्मा, तथा गुरुदत्ता यू गंगेनाहल्ली	29
06.	विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का योगदानः एक दार्शनिक विश्लेषण	औतार लाल मीणा	35
07.	हरित रसायन विज्ञान का आधुनिक तकनीक व विज्ञान में महत्व	नीलम वोहरा एवं मोनिका खुराना	41
08.	स्मृति ह्रास के प्रतिकार हेतु प्राचीन भारतीय चिकित्सा विज्ञान का योगदान एवं महत्त्व	संजीव कुमार ओझा, अर्चना राय, प्रमोद कुमार सिंह तथा श्रीकृष्ण तिवारी	46
09.	इस्पात रेशों द्वारा प्रबलित कंक्रीट सम्मिश्र का सुरक्षात्मक अभियांत्रिकी में अनुप्रयोग	अमर प्रकाश, नागेश रं अय्यर, आनन्दवल्ली, एन भरतकुमार, बी एच कृष्णमूर्ति तथा कुलभूषण राय	50
10.	प्लाज़्मा–एक अदभुत उर्जा–स्त्रोत और उसके विविध औद्योगिक उपयोग	मुश्ताक अली खान बाबी एवं सतीश दीक्षित	59
11.	विज्ञान संचार में वैज्ञानिकों एवं मीडिया की सहभागिता	ज्योति सिंह	66
12.	भारत की प्रगति में जल का महत्व	प्रवीण गुप्ता	70
13.	कृषि के विकास के बिना विश्व प्रगति में विज्ञान एवं तकनीकी अधूरी	संजय वर्मा	74
14.	नैनो प्रौद्योगिकी : एक लघु, लघु, लघु छोटी सी दुनिया	सोनिया चौधरी, सुमन लता, तथा फूलदीप कुमार	77
15.	प्राचीन भारत में विज्ञान का उद्भव एवं विकासः एक अध्ययन	गीता रानी एवं फूलदीप कुमार	80
16.	विज्ञान और प्रौद्योगिकी के स्थायी विकास में बाधक प्रतिभा पलायन	रीति थापर कपूर	89
17.	विश्व की प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के निहितार्थ– भारतीय परिप्रेक्ष्य	आशुतोष जोशी	95

18.	विस्फोट परिचय	प्रियव्रत शर्मा	101
19.	मानव संसाधनः महत्व व विकास	बी एस यादव	104
20.	अनुसंधान तथा विकास संगठनों के लिए भविष्य की मानव संसाधन चुनौतियां	अशोक कुमार, पुनीत कुमार तथा चंचल	108
21.	जैविक खेतीः समस्याएं और संभावनाएं	अर्चना सेठी	112
22.	रासायनिक शोध का नया दर्शनः हरित रसायन	अमर श्रीवास्तव एवं प्रान्जल चन्द्रा	116
23.	भारतीय वादन, गायन, संस्कार, पनघट एवं प्याऊ परम्परा का संवाहक हरियाणवी वाघ–घड़ा	दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार	121
24.	भारतीय संस्कृति में मृत्यु सम्बन्धी संस्कार हरियाणवी मृत्युसम्बन्धी संस्कार पर होने वाली रीत एवं नाट्य का अध्ययन	दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार	140
25.	आदिवासियों का प्रकृति प्रेम	दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार	155
26.	विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में संस्कृत एवं प्रान्तीय भाषा का योगदान	देवराज शर्मा	160
27.	विश्व की प्रगति में प्राचीन भारतीय विज्ञान–प्रौद्योगिकी का योगदान	विश्व मोहन तिवारी	164
28.	महाशक्ति बनते भारत की तस्वीर	विजन कुमार पाण्डेय	169
29.	वृक्षायुर्वेद मे वर्णित तरल उर्वरक का धान के विकास पर प्रभाव	प्रशान्त कुमार मिश्र	174
30.	मानव जीवन में विज्ञान का योगदान	दीप भार्गव एवं पवन कुमार राकेश	178
31.	विज्ञान को चाहिए अध्यात्म का सहचर्य	कमलेश गोगिया	180
32.	चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान	गीतांजलि एवं फूलदीप कुमार	185
33.	विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में मानव की संवेदनाएं	अमित कुमार	187
34.	भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी	सुरेन्द्र कुमार	191
35.	विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने संवारा है, जीवन	अजय आर्य	194
36.	विश्व में विज्ञान प्रौद्योगिकी का योगदान	लवकुश ठाकुर	197
37.	भारतीय गणित–वैदिक गणित	प्रज्ञा मिश्रा	200
38.	कम्प्यूटर नटेवर्क	ईश्वर सिंह	203
39.	सम्मिश्र पदार्थ द्वारा संरचना	दयानंद	206
40.	कार्बन के प्रकार और उसके बहुआयामी उपयोग	पी के जैन	208
41.	डेंगू प्रकोप और रोकथाम	रीना तिलक	211
42.	प्रवाह कोशिकाभित्ति–कार्य प्रणाली व उपयोग	नमिता कालरा	213
43.	संगणक–लगातार बदलाव, तकनीक व प्रयोग करने में	महेश कुमार, दीपमाला, तथा फूलदीप कुमार	215
44.	विश्व को भारत की देन	प्रणव शास्त्री	217

45.	उपग्रह के माध्यम से शिक्षाः विज्ञान की एक अमूल्य देन	इरफाना बेगम	220
46.	सफेद मूसली की सूखी जड़ों के मेथेनॉल अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता	मृदुला त्रिपाठी,, प्रियंका चावला, टन्डन सिंह, तथा एर गेबर	222
47.	भारतीय कृषि में मौसम–आधारित परंपरागत देशज ज्ञानः एक अध्ययन	श्याम किशोर वर्मा, बी यु दुपारे, तथा जगदीशन ए के	228
48.	समाज के विकास में विज्ञान की भूमिका	अनीप कुमार, अंशु, फूलदीप कुमार, तथा संदीप गोयत	238
49.	लोक प्रशासन – कला या विज्ञान	नरेश कुमार लोर, फूलदीप कुमार, तथा विनोद कुमार	245

वैश्विक प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान

विनीता सिंघल
राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना स्रोत संस्थान, नई दिल्ली

सारांश

मानव इतिहास की प्रगति शक्तिशाली रूप से अनेक कारकों से प्रभावित रही है, उनमें से कुछ विध्वंसक और कुछ लाभकारी थे। विध्वंसक कारकों में प्रमुख थेः युद्ध, महामारियां, प्राकृतिक आपदाएं, और अकाल। अनेक समाज प्राकृतिक कारकों से नष्ट हो गए। लेकिन मानव समाज सकारात्मक विकासों से भी काफी प्रभावित हुआ है। शिकार और आहार की खोज में यायावरी जीवन बिताने वाले मानव समुदाय द्वारा स्थायी खेती को अपनाकर बस्तियां बना लेने से जनसंख्या में काफी बढ़ोतरी हुई। इससे लोगों के एक वर्ग ने स्वयं को संगीत, साहित्य, धर्म आदि के प्रति समर्पित किया। धातु की खोज से टिकाऊ और मजबूत कृषि उपकरण और गाड़ियां आदि बने।

सबसे अद्यतन और सबसे शक्तिशाली कारक जिसने मानवता को प्रभावित किया, वह है वैज्ञानिक–तकनीकी क्रांति। विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने पिछली कुछ शताब्दियों में विगत की सभी सहस्राब्दियों की अपेक्षा, दुनिया को बदल दिया है और अंत कहीं दिखाई नहीं देता। वास्तव में, परिवर्तन की गति बढ़ रही है और यहां तक कि वैज्ञानिक भी बताने में असमर्थ हैं कि यह हमें भविष्य में कहां ले जाएगी। विज्ञान प्रकृति के नियमों का क्रमबद्ध अध्ययन है और प्रौद्योगिकी मानव के लिए लाभदायक साधन और सेवाएं जुटाने के लिए वैज्ञानिक ज्ञान का अनुप्रयोग है। आधुनिक वैज्ञानिक युग सोलहवीं शताब्दी में यूरोप में आरंभ हुआ और उसके कुछ शताब्दिओं के बाद औद्योगिक क्रांति हुई, जो आवश्यक रूप से मानव की आवश्यकता के लिए विज्ञान का अनुप्रयोग है। एक अपेक्षाकृत धीमे आरंभ के बाद, प्रक्रिया में तेजी आई और उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दौर में तो जैसे बाढ़ ही आ गई।

प्रस्तावना

विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रमुख देन थी औद्योगिक क्रांति। लेकिन सब कुछ आसानी से नहीं हुआ। जब भी कोई नवीन तकनीक लाई जाती है उसे दो प्रकार के प्रतिरोधों का सामना करना पड़ता है। एक तो मौजूदा तकनीक का प्रयोग करने वालों का जिन्हें नई तकनीक को अपनाने पर कुछ खोना पड़ता है। दूसरा है परिवर्तन का विरोध करने की स्वाभाविक मानव प्रवृत्ति। लेकिन प्रगति का मार्ग ऐसे अवरोधों से रोका नहीं जा सकता।

वैसे तो मानव सभ्यता के विकास का क्रम पहिए के आविष्कार के साथ आरंभ हुआ लेकिन लगभग एक शताब्दी पहले, प्रौद्योगिकी ने मानव को वाष्प शक्ति और बिजली का उपहार दिया और अंतर्दहन इंजन ने मानव को कमर–तोड़ श्रम से निजात दिलायी। मानवता पर चिकित्सा विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी में प्रगति के प्रभाव अगाध रहे हैं। अनेक बीमारियों पर विजय पाईं गईं, औसत जीवन काल बढ़ गया और सामान्य लोगों का स्वास्थ्य सुधर गया।

हमेशा की अपेक्षा आज विज्ञान तेजी से प्रगति कर रहा है। मानव को चांद पर पहुंचे तो बहुत समय हो गया और अब वह मंगल पर बस्तियां बसाने की सोच रहा है। वैज्ञानिक प्रगति द्वारा लाए गए

लाभों से समाज पूरी तरह परिचित है। इसीलिए उन्नत देशों में सरकारों और समृद्ध लोगों ने स्कूलों और विश्वविद्यालयों सहित विशाल शिक्षा प्रणालियां स्थापित की हैं, जहां भविष्य के वैज्ञानिकों को प्रशिक्षित किया जाता है। आधुनिकतम सुविधाओं से युक्त प्रयोगशालाएं और विशाल अनुदान वैज्ञानिकों को प्रकृति के रहस्यों को खोजने में सक्षम बनाते हैं। निजी उद्योगों में भी अब वैज्ञानिक अनुसंधान की एक प्रमुख भूमिका है।

विज्ञान और वैश्विक प्रगति

यूं तो जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी से प्रभावित न हुआ हो इसीलिए तो आज का युग विज्ञान का युग कहलाता है। क्योंकि यहां सभी क्षेत्रों की चर्चा करना तो संभव नहीं है, इसलिए हम उन प्रमुख क्षेत्रों में हुए विकासों की बात करेंगे जो आज मानव जीवन का प्रमुख आधार हैं।

कृषि

कृषि मानव सभ्यता का आधार है क्योंकि यह जीवन की मूल जरूरतों जैसे भोजन, ईंधन और कपड़ा, को पूरा करती है। खेती का इतिहास तो 10–12 हजार साल से ज्यादा पुराना नहीं है। प्रागैतिहासिक काल में महिलाओं द्वारा खाद्यान्नों की खोज करने से लेकर परंपरागत किस्मों को उगाने और बचाने तक उपज को बढ़ाना और उसकी गुणवत्ता को सुधारना ही मुख्य उद्देश्य रहा औद्योगीकरण से पहले खेती करना एक श्रमसाध्य कार्य था लेकिन यंत्रीकरण के बाद, विशेष रूप से ट्रैक्टर के आने के बाद खेती करना काफी सरल हो गया। संश्लेषित उर्वरकों और कीटनाशकों, चयनित नस्ल की फसलों और यंत्रीकरण ने कृषि को एक नई दिशा दी। उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में कृषि तकनीकों, उपकरणों, सीड स्टॉक में आए परिवर्तन ने उपज को कई गुणा बढ़ा दिया। प्राचीन काल की तुलना में एक परिवर्तन यह आया कि पहले लोग खेती केवल अपने भरण–पोषण के लिए करते थे जबकि अब ऐसा नहीं है।

कुदरत जो करिश्मा लाखों सालों में कर पाती थी, अब आनुवंशिक अभियांत्रिकी के जरिए पलक झपकते ही किया जा रहा है। वर्तमान में फसल की उत्पादकता बढ़ाना जितना महत्वपूर्ण है, उससे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है फसलों की सुरक्षा करना। कृषि तकनीकों जैसेकि सिंचाई, फसल चक्रण, उर्वरक, कीटनाशकों का विकास काफी पहले हो गया था लेकिन पिछली शताब्दी में इसमें बहुत परिवर्तन आया। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में हुए विकास के कारण पिछली शताब्दी में जहां उत्पादकता बढ़ी वहीं किसानों के श्रम में भी कमी आई। पराजीनी पद्धति के सहारे सुपर फसलें विकसित करने में सहायता मिली जो कीटरोधी, रोग प्रतिरोधी, लवण व सूखा प्रतिरोधी होने के साथ साथ अनेक पोषक गुणों से भरपूर हैं।

यातायात

लगभग दो सौ साल पहले, मानव के पास यातायात का सबसे तेज उपलब्ध साधन घोड़ा था। अट्ठारहवीं शताब्दी के अंत में जेम्स वाट द्वारा विकसित वाष्प के इंजन ने यातायात को गति दी।

समुद्री यातायातः बड़े और तेज वाष्प के इंजन से चलने वाले जहाजों से माल दूरस्थ तटों तक तेजी से जा सकता था, जिससे व्यापार तेजी से बढ़ा। आज भी अंतरराष्ट्रीय व्यापार मुख्यतः जहाजों पर ही निर्भर है। पारंपरिक जहाजों के अतिरिक्त, हाल के दशकों में कुछ असाधारण सामुद्रिक जहाज भी विकसित किए गए हैं, होवरक्राफ्ट उनमें से एक है।

रेलवेः वाष्प इंजन से चलने वाले जहाजों के कुछ वर्ष बाद रेलवे अस्तित्व में आयी। रेलों को चलाने के लिए स्टीम इंजन का प्रयोग किया जाता था जो पटरियों पर डिब्बों की एक श्रृंखला को खींचते थे। पहली नियमित यात्री रेल सेवा 1825 में यू.के. में स्टॉकटन और डार्लिंगटन के बीच स्थापित की

गई। 1830 के बाद कुछ ही दशकों में सभी विकसित देशों और उसके बाद विकासशील देशों में रेलवे लाइनों का जाल बिछ गया। रेल तेज गति से बड़ी मात्रा में सामान के साथ–साथ यात्रियों को भी लंबी दूरियों तक सहजता से ले जा सकती थी। डीजल इंजन के विकास के साथ एक नए युग का आरंभ हुआ। आज पूरी तरह विद्युत चालित इंजन सेवा में हैं। आज का सबसे उत्साहवर्धक विकास हैं मैग्नेटिक लेवीटेशन (मैगलेव) ट्रेनों का विकास।

स्वचालित वाहनः रेलवे ने पटरियों से जुड़े दो निश्चित स्थानों के बीच आवागमन को संभव बनाया लेकिन वे व्यक्तिगत गतिशीलता प्रदान नहीं कर सकती थीं। इसके लिए हल्के छोटे वाहनों की जरूरत थी। इस जरूरत को चार स्ट्रोक वाले पैट्रोल इंजन के आविष्कार द्वारा 1876 में जर्मनी के निकोलस ऑटो ने और डीजल इंजन के आविष्कार द्वारा जर्मनी के ही रूडोल्फ डीजल ने 1893 में पूरा किया। वर्ष 1890 में ऑटो वाहन सड़क पर दिखाई देने लगे थे।

लेकिन ऑटोवाहन क्रांति दो समानांतर विकासों के बिना उड़ान नहीं भर सकती थी– पेट्रोलियम और रबड़ उद्योग का उदय। जबरदस्त परिवर्तन 1889 में आया, जब संपीड़ित हवा से भरे कड़ी रबड़ के टायर और ट्यूब बने। ऑटोवाहन के इतिहास में हेनरी फोर्ड (1863–1947) एक जाना माना नाम है।

कारों के अलावा बड़े पैमाने पर ट्रकों का उपयोग भी आधुनिक समाज की एक उपलब्धि है। ट्रक सामान को सीधे फैक्ट्री से उपभोक्ता के दरवाजे तक पहुंचा सकते हैं। तकनीकी रूप से ऑटोवाहन अपने प्रारब्ध से लेकर आज तक असीमित रूप से उन्नत हुए हैं। इंजन कहीं अधिक शक्तिशाली और ईंधन प्रभावी हैं जिन्हें गाड़ी में लगे कंप्यूटर्स द्वारा नियंत्रित किया जाता है। ग्लोबल पॉजिशनिंग सैटेलाइटों पर आधारित तंत्र, चालक द्वारा लिए जाने वाले मार्ग को प्रदर्शित करते हैं। प्रदूषण स्तर को कम करने के लिए कैटालिटिक कन्वर्टर, निकास गैसों को उपचारित करते हैं। एलुमिनियम, प्लास्टिक और कम्पोजिटों के उपयोग से वाहनों के भार में कमी आ गई है। रेलवे की अपेक्षा ऑटो वाहनों ने मानव के व्यवहार और जीवनशैली में गंभीर परिवर्तन ला दिया है।

हवाई यात्राः पक्षियों की तरह उड़ना युगों से मानव का सपना रहा है। लेकिन पहली वास्तविक उड़ान 1783 में फ्रांस के मांटगोल्फियर बंधुओं द्वारा बनाए गए गर्म हवा के गुब्बारों द्वारा हुई। हवा से भारी उड़ने वाली मशीन बनाने के प्रयास उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में क्रांतिक अवस्था में पहुंचे। दिसंबर 1903 में विल्बुर और ऑरविले राइट के बनाए वायुयान, फ्लायर ने इतिहास की पहली उड़ान भरी।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, सैनिक आवश्यकताओं के साथ–साथ व्यापारिक कारणों से विशाल जेट विमान विकसित किए गए। वायु सेना ने बमवर्षक और मालवाहक के रूप में उनका उपयोग किया और एयरलाइनों ने यात्री विमानों के रूप में। नागरिक विमानन धीरे–धीरे विकसित हुआ। वर्ष 1920 के दशक में नागरिक विमानन की धीमी प्रगति हुई लेकिन 1945 के बाद, हवाई यात्रा तेजी से विकसित हुई। संपूर्ण जेट यात्री विमान कुछ वर्षों के बाद सेवा में आए। चूंकि उनका रखरखाव सरल था, उतने ही समय में ज्यादा ट्रिप कर सकते थे और सेवा काल भी लंबा था, हवाई यात्रा सस्ती हो गई और जन यात्रा का युग शुरू हुआ।

दुपहिया वाहन/टू–व्हीलर्सः जब लोगों का ध्यान परिवहन के आकर्षक साधनों जैसे बड़े यात्री जहाज और विमान पर केंद्रित था, साधारण साइकिल और बाद में अर्जित दुपहिया वाहनों के जरिए एक गुप्त आमूल परिवर्तन भी हो रहा था। अधिकांश विकासशील देशों में साइकिल यातायात का एक महत्वपूर्ण साधन है। साइकिल की खोज 1860 के दशक के बाद हुई लेकिन पूरी तरह उपयोग में 1888 के बाद आई, जॉन बॉयड डनलप द्वारा हवा भरे टायरों की खोज के बाद। साइकिल ने आम आदमी की गतिशीलता को काफी बढ़ाया। विकसित देशों में एक प्रदूषण–मुक्त और स्वास्थ्यवर्धक परिवहन के रूप में साइकिल का पुनर्जन्म हो रहा है।

साइकिलों में इंजन की शक्ति के संयोजन की बात सोचना समय की मांग था। पहली सफल मोटरसाइकिल 1894 में बनी। विकसित राष्ट्रों में मोटरसाइकिल विशेष रूप से मनोरंजन का साधन रही है, केवल पुलिस और सेना ने ही इसका सीमित गंभीर उपयोग किया है। लेकिन विकासशील देशों में स्थिति भिन्न है। यहां दुपहिया के अनेक विभेद मौजूद हैं–मोटरसाइकिल, स्कूटर, मोपेड–तीन पहिए वाले ऑटो रिक्शा और भारवाहक आदि सहित।

सूचना और संचार

समाज में रहने वाली किसी भी प्रजाति के लिए संदेशों का प्रसार एक जरूरी आवश्यकता है। दूर दूर बड़े शहरों में रहने के बावजूद मानव भाषाओं के जरिए परस्पर संप्रेषण करने की अपनी क्षमता के कारण मूलतः जुड़े रहते हैं। किंतु लंबी दूरियों पर संदेश भेजने और ग्रहण करने के साधनों के बिना, मानव समुदायों की प्रगति अत्यंत सीमित थी। वैज्ञानिक क्रांति के पहले लोगों ने लंबी दूरी के संचार के अनेकों प्रकार के साधन आजमाए, जैसे कि धावक, घुड़सवार संदेशवाहक, धूम संकेत आदि। लेकिन प्रसारण में त्रुटियां आ जाती थीं और खराब मौसम में ये काम नहीं करते थे।

टेलीग्राफः पहली युक्ति जिसने वास्तव में संदेश भेजने को गति दी, टेलीग्राफ थी। इसकी खोज अमेरिका के सैम्मुअल मोर्स (1791–1872) ने की थी। अल्फ्रेड वेल की सहायता से, मोर्स ने धीरे–धीरे टेलीग्राफ विकसित किया। मई 1844 में पहली टेलीग्राफ लाइन डाली और प्रचालित की गई। एक बार टेलीग्राफिक प्रणाली के लाभ अनुभव करने के बाद यह तेजी से लोकप्रिय हुई। इतिहास में पहली बार, दूर घटी घटनाएं 'वास्तविक समय' में रिपोर्ट की गईं। इसके समाचार रिपोर्टिंग, प्रशासन, सैनिक मामलों आदि में दूरगामी परिणाम हुए।

टेलीफोनः संचार के क्षेत्र में अगला महत्वपूर्ण कदम टेलीफोन नामक युक्ति थी जो आज भी सब जगह व्याप्त है। टेलीग्राफ का उपयोग केवल प्रशिक्षित ऑपरेटर ही कर सकते थे जो मोर्स कोड जानते थे। लेकिन टेलीफोन के साथ ऐसा नहीं था। इस क्रांतिकारी देन के आविष्कारक थे एलेक्जेंडर ग्राहम बैल (1847–1922)। मार्च 1897 में एक दिन प्रयोगशाला में दुर्घटनास्वरूप बैटरी का अम्ल उनके ऊपर गिर गया और दर्द से कराहते हुए उन्होंने अपने सहायक को पुकारा। टेलीफोन के प्रायोगिक उपकरण पर उनकी आवाज को दूसरे कमरे में उनके सहायक ने सुना। फोन पर बोले गए ये पहले शब्द थे जो इतिहास का हिस्सा बन गए।

धीरे–धीरे टेलीफोन लाइनों के जाल ने विकसित विश्व को ढक लिया और बाद में सारे विश्व को। अगली महत्वपूर्ण प्रगति थी संचार उपग्रहों के जरिए टेलीफोन संयोजन। आज, टेलीफोन की बदौलत, चाहे किसी से भी, कहीं भी और कभी भी संपर्क किया जा सकता है। टेलीफोन विश्व को एक साथ लाया, यहां तक कि वाणिज्य, प्रशासन, निजी संबंध आदि मुख्यतः फोन पर ही निर्भर हैं। आज हम बिना टेलीफोन के विश्व की कल्पना भी नहीं कर सकते। अब तो मोबाइल फोनों ने मानव को लैंडलाइन टेलीफोन के बंधन से मुक्त कर दिया है।

बेतारः लेकिन टेलीफोन भी संचार की सभी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता था क्योंकि प्रारंभिक अवस्था में इसे एक व्यापक नेटवर्क की आवश्यकता थी। जाहिर है समुद्री जहाजों पर या अलग–थलग स्थानों पर लोगों से संप्रेषण के लिए ऐसा नहीं किया जा सकता था। इसके लिए किसी ऐसी चीज की जरूरत थी जो पृथ्वी के किसी भी बिंदु पर किसी भी समय वायुमंडल के जरिए जा सके। एक जर्मन वैज्ञानिक हेनरिख हर्ट्ज (1857–1894) ने 1887 में विद्युत चुंबकीय तरंगों की खोज की। लेकिन हर्ट्ज इसमें छुपी संभावना को समझ नहीं पाए और इसे मारकोनी (1874–1937) के प्रयासों की प्रतीक्षा करनी पड़ी। बेतार युद्ध और शांति दोनों ही स्थितियों में बहुमूल्य सिद्ध हुआ।

टेलीविजनः विश्व को एक साथ लाने वाला एक और साधन टेलीविजन 1920 में सामने आया। रेडियो द्वारा आवाज को तेजी से और दूर तक प्रसारित किया जा सकता था तो चित्रों को क्यों नहीं? सूचना और मनोरंजन के ऐसे माध्यम के लिए जनता में उत्साह था। इसमें सबसे कठिन समस्या थी चित्रों को विद्युत संकेतों में बदलना। अंत्तः सफलता मिली। पहले 1949 में श्वेत–श्याम टेलीविजन सैट आने शुरू हुए और इसके बाद रंगीन टी वी की मांग प्रबल हो गई और 1960 के दशक के मध्य में रंगीन टीवी एक वास्तविकता बन गया। टेलीविजन के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रभाव विशाल हैं। प्रिंट या रेडियो की अपेक्षा दृश्य संचार दर्शकों को कहीं अधिक प्रभावित करता है।

इलैक्ट्रॉनिक्स

संचार के सभी चमत्कार और बहुत कुछ, मूल इलैक्ट्रॉनिक्स में प्रगति के कारण संभव हुए। परमाणु के केन्द्रक के चारों ओर घूमने वाले इलैक्ट्रॉन की खोज जे जे थॉमसन ने 1897 में की थी। निर्वात नलिका वाल्वों ने रेडियो और कम्प्यूटर को संभव बनाया। कम्प्यूटर जो पहले विशुद्ध रूप से यांत्रिक–विद्युत मशीन थे अब पूर्ण रूप से इलैक्ट्रॉनिक युक्ति बन गए थे। परिणामस्वरूप वे बहुत तेज और ज्यादा जटिल गणनाओं में सक्षम हो गए। प्रगत औद्योगिकीकरण के साथ, सभी स्तरों पर कंप्यूटर आवश्यक हो गए। अंतरिक्ष यान के प्रक्षेपण और नियंत्रण के लिए आवश्यक गणनाएं करने से लेकर मौसम की भविष्यवाणी जो अनेक कारकों को प्रभावित करती है, बैंकों में खातों का रखरखाव करने तक कंप्यूटर और टेलीकम्यूनिकेशन एक समान प्रभाव रखते हैं। रेलवे और एयरलाइन आरक्षण और बल्कि कंप्यूटर से टिकट भी खरीदे जा सकते हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के क्षेत्रीय प्रबंधकों को कांफ्रेंस के लिए एक नियत स्थान तक नहीं जाना पड़ता। स्टील संयंत्र में फोरमैन और कामगारों को फैक्टरी में प्रक्रियाओं को मॉनीटर और नियंत्रित करने के लिए ऊपर नीचे नहीं भागना पड़ता।

शिक्षा में भी कंप्यूटरों से बहुत लाभ हुआ है। अब पढ़ने के लिए कक्षा में बैठने की जरूरत नहीं है। 'परस्पर क्रिया' व्याख्यानों के जरिए विद्यार्थी कहीं भी पढ़ सकते हैं। वह बिना लाइब्रेरी जाए भी सूचना प्राप्त करने के लिए इंटरनेट एक्सेस कर सकता है।

चिकित्सा और जैव प्रौद्योगिकी

जनता का अच्छा स्वास्थ्य किसी सभ्य समाज की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक है। विगत में भयानक महामारियों ने सभ्यताओं को या तो पूरी तरह समाप्त कर दिया या उन्हें गंभीर रूप से कमजोर बना दिया। बुबोनिक प्लेग के कारण 1348–1350 के दौरान यूरोप की एक तिहाई जनसंख्या नष्ट हो गई थी।

आद्य जनजातियां बीमारियों से लड़ने के लिए जड़ी बूटियों और चिकित्सा के जादू का उपयोग करती थीं। आधुनिक चिकित्सा इतिहासकारों की नजर में सभी प्राचीन चिकित्सा पद्धतियां स्वास्थ्य के बारे में विकासशील दर्शनों पर केन्द्रित थीं क्योंकि उनके पास इस काम के लिए साधनों, माइक्रोस्कोप, रासायनिक विश्लेषण, एक्स–रे, आदि की कमी थी जब तक प्रौद्योगिकी ने वैज्ञानिकों को ऐसे साधन नहीं उपलब्ध कराए जिनके बिना मानव शरीर और बीमारियों का अध्ययन करना असंभव था।

आधुनिक चिकित्सा का उदयः प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ साथ धीरे–धीरे अनेक प्रकार के उपकरण बने जिससे सीधे ही बीमारियों का अध्ययन किया जा सकता था। माइक्रोस्कोप की खोज और इसमें धीरे–धीरे हुए सुधार ने वैज्ञानिकों को अति सूक्ष्म रोगकारी जीवाणुओं को देखने और उनमें हेरा फेरी करने में सक्षम बनाया। मानव की एक महाविपत्ति, छोटी चेचक पर ब्रिटेन के एडवर्ड जेनर द्वारा विकसित टीकाकरण की प्रक्रिया द्वारा 1796 में नियंत्रण पाया गया। इसके लिए छोटी चेचक से पीड़ित रोगियों से निकाले गए रोगाणुओं को स्वस्थ व्यक्तियों में प्रतिरक्षा उत्पन्न करने के लिए संरोपित किया गया।

धीरे–धीरे जन स्वास्थ्य में स्वच्छता की भूमिका को भी समझा गया। दो महान प्रवर्तकों फ्रांस के लुइस पाश्चर और जर्मनी के राबर्ट कॉख के कारण उन्नीसवीं शताब्दी के दूसरे भाग में संक्रामक रोगों के नियंत्रण में असाधारण सफलता मिली। पाश्चर की सबसे यादगार उपलब्धि संक्रमित कुत्ज्ञों और भेड़ियों द्वारा फैलने वाले भयंकर रोग रेबीज का उपचार है। पाश्चर के समकालीन, राबर्ट कॉख ने तपेदिक और हैजा उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं की पहचान की। उन्होंने यह भी खोज की कि प्लेग चूहों से और निद्रा रोग त्सेत्से मक्खी द्वारा फैलता है। भारत में कार्यरत सेना के डॉक्टर, सर रोनाल्ड रॉस ने बहुत परिश्रम के बाद यह निर्धारित किया कि मलेरिया फैलाने में एनोफिलिज मच्छर सहायक होता है। औषधियों के साथ, स्वच्छता सबसे बेहतर प्रतिकारक है। चिकित्सा में एक और मील का पत्थर था 1921 में सर फ्रेडरिक बेंटिग द्वारा इंसुलिन की खोज। जिसने करोड़ों मधुमेह के रोगियों को एक नया जीवन दिया। 1895 में विल्हेल्म रॉन्टेजन द्वारा एक्स–रे की खोज, 1905 में हार्मोनों की और 1911 के बाद विटामिनों की खोज ने चिकित्सा उपचार के विस्तार को बढ़ा दिया।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों तक शल्यक्रिया एक कठोर और क्रूर काम था। निश्चेतकों के ज्ञान से शल्य क्रिया न केवल अधिक मानवीय बल्कि अधिक प्रभावी भी हो गई क्योंकि शल्य चिकित्सक ज्यादा सोच–समझकर और संपूर्ण रूप से काम कर सकते थे। छोटे ऑपरेशनों में स्थानीय निश्चेतक भी प्रयोग में आए। धीरे–धीरे, रोगाणु सिद्धांत की स्थापना के साथ, ऑपरेशन थियेटर, सर्जिकल उपकरणों और शल्यचिकित्सकों के हाथों को रोगाणु मुक्त किया जाने लगा। फलस्वरूप शल्य क्रिया वाले रोगियों की जीवन दर बेहतर हो गई। 1980 में सल्फा औषधियां उपयोग में आईं और बीमारियों की एक लंबी श्रृंखला नियंत्रण में आ गई। लेकिन सबसे नाटकीय मोड़ पेनिसिलिन की खोज से आया। पेनिसिलिन की सफलता से अन्य औषधीय फफूंदों पर व्यापक खोज शुरू हुई। सेल्वान वैक्समैन ने स्ट्रेप्टोमाइसिन और बेंजामिन ड्यूगर ने ट्रेटासाइक्लिन की खोज की, जिनका कुछ वर्ष बाद सूरत में फैले प्लेग में व्यापक रूप से उपयोग हुआ। एक अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि थी डॉ. जोनस साहक और डॉ सबिन द्वारा 1950 के दशक में पोलियो वैक्सीन का विकास।

आधुनिक चिकित्सा ने निस्संदेह रूप से संक्रामक रोगों के विरूद्ध महान सफलता प्राप्त की। परिणामस्वरूप, पिछले सैकड़ों वर्षों में दुनिया भर में मृत्यु दर में तेजी से कमी आई है। पश्चिमी देशों में औसत जीवन काल जो 1900 में लगभग 50 वर्ष था आज लगभग 80 वर्ष है। संक्रामक रोगों को नियंत्रण में लाने के बाद, कैंसर और हृदय रोग जैसी बीमारियां बढ़ने लगीं। ये जटिल रोग हैं जिनके मूल कारण अभी भी पूरी तरह पता नहीं हैं। दिखाई देने वाले संबंधित कारण हैं आनुवंशिकता, पर्यावरणीय कारक, धूम्रपान और तनाव। कैंसर का उपचार औषधियों, कीमोथिरैपी, रेडियम थिरैपी और सर्जरी द्वारा किया जाता है । हृदय का उपचार औषधि और शल्य क्रिया द्वारा किया जाता है। आज शीघ्र रोग निदान के लिए कंप्यूटरीकृत टोमोग्राफी (सी टी) और मैग्नेटिक रिजोनेंस इमेजिंग (एम आर आई) जैसे उपकरण उपलब्ध हैं। पिछले कुछ दशकों का एक उल्लेखनीय विकास है जैव–प्रौद्योगिकी। यह विज्ञान की ऐसी शाखा है जिसमें जैवरसायन, सूक्ष्मजीव विज्ञान, आनुवंशिकी, रासायनिक अभियांत्रिकी आदि शामिल हैं। जैव प्रौद्योगिकी में उपयोगी उत्पाद बनाने के लिए सजीवों का उपयोग किया जाता है। इसमें अपनी जरूरतों के अनुसार फसलों, पशुओं का नस्ल सुधार करना भी शामिल है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी की ऐसी मिली–जुली प्रगति है जिससे आनुवंशिकी, बीमारियों के कारणों और विभिन्न प्रजातियों के बीच क्या समान और क्या भिन्न था जैसे रहस्यों को समझना संभव हुआ। वर्ष 1953 में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के जेम्स वाटसन और फ्रांसिस क्रिक ने डी एन ए की खोज की उसके बाद जीवविज्ञान के क्षेत्र में तेजी से प्रगति हुई। चूंकि डीएनए की संरचना किसी जीव के लक्षणों को सुनिश्चित करती हैं, जो बाद में उसकी संतति में आगे जाते हैं, इन लक्षणों को वांछित दिशा में बदलना संभव हो गया है।

1990 में आरंभ की गई और 2003 में पूरी की गई मानव जीनोम परियोजना में करोड़ों मूल निर्माण इकाइयों से बने संपूर्ण मानव जीनोम को मैप किया गया। अब आवश्यकतानुसार, पहले की अपेक्षा बहुत जल्दी नई दवाइयां और वैक्सीन बनाई जा सकती हैं। अब तक केवल पशु इंसुलिन के स्रोत के रूप में काम करते थे। अब इसे बहुत सरलता से उत्पादित किया जा सकता है। आनुवंशिक प्रोब जो एक विशेष रोगाणु से चिपक जाते हैं, द्वारा बीमारियों का बहुत जल्दी निदान किया जा सकता है। अपराध स्थल पर छोड़े हुए एक रक्त के छोटे से धब्बे या एक बाल से डी एन ए विश्लेषण द्वारा अपराधी की पहचान की जा सकती है। बच्चों की पैतृकता निश्चित रूप से निर्धारित की जा सकती है। बच्चों में संभावित आनुवंशिक दोषों के बारे में जाना जा सकता है।

जीन थैरेपी द्वारा कुछ आनुवंशिक दोषों जैसे हीमोफीलिया को आनुवंशिक रूप से रूपांतरित कोशिकाओं के प्रत्यारोपण द्वारा दूर किया जा सकता है। विशेष लक्षणों वाली फसलों जैसे अतिरिक्त विटामिन ए वाले धान (गोल्डेन राइस) को जैव प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पादित किया जा सकता है। ऊर्जा के संदर्भ में, शर्करा को अल्होकल में किण्वित करने वाले जीवाणुओं को अधिक प्रभावी और तेजी से क्रिया करने वाला बनाया जा सकता है। प्रदूषण नियंत्रण में, अभिकल्पित जीवाणु फैले हुए तेल को साफ कर सकते हैं, कचरे को तेजी से पचाते हैं और पौधों के पानी से भारी धातु प्रदूषकों को अवशोषित करने के लिए रूपांतरित किया जा सकता है। आनुवंशिक अभियांत्रिकी खनन में भी सहायक होती है। इस प्रकार अगर विवेकपूर्ण ढंग से और संयम से प्रयोग किया जाए तो जैव प्रौद्योगिकी मानवता के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी का महानतम उपहार सिद्ध हो सकती है।

घरेलू परिदृश्य

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के कारण घरेलू रहन–सहन में काफी परिवर्तन आया है। विद्युत की घरेलू खपत, अब कुल राष्ट्रीय खपत का प्रमुख हिस्सा है। अनेक देशों में प्राकृतिक गैस की आपूर्ति इसे पूरा करती है। तरलीकृत पैट्रोलियम गैस (एल पी जी) भी एक महत्वपूर्ण खाना पकाने वाला और परिवहन ईंधन है। घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक प्रकार की मशीनें बनाई गई हैं। रेफ्रिजरेटर भोजन को परिरक्षित करते हैं। वाशिंग मशीनों ने पुराने समय के धोबियों को विस्थापित कर दिया है। वैक्यूम क्लीनर, लॉन मोवर, विद्युत–चालित ओवन, माइक्रोवेव हीटर–कोई भी किसी आधुनिक घर में ऐसे सौ उपकरणों की सूची बना सकता है जो अब से सौ साल पहले मौजूद नही थे। इन मशीनों के अलावा, मनोरंजन के साधन जैसेकि टेलीविजन, रेडियो, कम्पैक्ट डिस्क प्लेयर आदि प्रायः जरूरत बन गए हैं। खाद्य उद्योग ने अनेक प्रकार के पूर्व–पके और पैकेज्ड उत्पाद विकसित किए हैं जिससे खाना पकाने का भार कम हो गया है। चूंकि घरेलू कामों का मशीनीकरण हो गया है, स्त्रियां भी आत्मनिर्भर होने के लिए काम करने में सक्षम हो गई हैं।

निष्कर्ष

विज्ञान ने अनेक सदियों पुरानी समस्याओं को हल किया है। अनेक बीमारियों पर विजय पाई है। आज बड़ी मात्रा में भुखमरी नहीं होती। सभी को शिक्षा उपलब्ध है। उच्च उत्पादकता के कारण इतिहास में वर्णित समय की अपेक्षा लोग बेहतर जीवन जीते हैं। यह सच है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वर्तमान स्तर के बावजूद विश्व की संपूर्ण जनसंख्या की मूलभूत निम्नतम जरूरतों को पूरा नहीं किया जा सका है लेकिन विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सामाजिक लाभों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। यह प्रौद्योगिकी ही है जिसने दासता को अनावश्यक बना कर उसका उन्मूलन कर दिया। यह प्रौद्योगिकीय प्रगति ही है जिसने जाति, धर्म और नस्ल की बाधाओं को तोड़ा है। यह सुनिश्चित है कि अगर राष्ट्र सब समस्याओं पर सही ढंग से काम कर सकें, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्व की संपूर्ण जनसंख्या पर संपन्नता, स्वास्थ्य और ज्ञान के सौभाग्य की वर्षा करने में कमी नहीं करेगी।

संदर्भ

1. बी बी सिंह एवं संदीप, वाघ, (2008) अर्ली अचीवमेंट्स ऑफ इंडियन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, एर्वीमैंस साइंस, XLIII (1) 36.41.
2. के वी गोपालाकृष्णन, इम्पैक्ट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी ऑन मैनकाइंड, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया।
3. http//www.pkrishna.orgèimpact_science_society.html.
4. http//www.unesco.orgèscienceèwcsèmeetings.
5. http//www.iputech.comèsyllabusèimpact_science_technology_society.
6. http//www.publishyourarticles.netèknowledge-hubèessay.
7. http//www.nep365.wordpress.comè2010èthe_impact-of-science-and-technology-to-society.
8. http//www.ujf-grenoble.frèresearchèscience-technology-and-innovation-in-the-service-of-mankind-and-society.

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के साथ शिक्षा का बदलता परिदृश्य

कृष्ण कुमार मिश्र
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मानखुर्द, मुम्बई

सारांश

आज का युग विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का युग है। इसके अवदानों ने मानव जीवन के तकरीबन हर क्षेत्र में युगान्तरकारी परिवर्तन लाने में अहम भूमिका निभायी है। देश में पिछले तीन दशकों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) सेवाओं का ज़बरदस्त विस्तार हुआ है। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे अछूता नही रहा है। इक्कीसवीं सदी को ज्ञान की सदी कहा जा रहा है। इसमें वही समाज तथा राष्ट्र तेजी से प्रगति पथ पर अग्रसर होगा जो ज्ञान संपन्न होगा। प्राचीन गुरुकुल परंपरा से होते हुए शिक्षा ने आज अनेक सोपान तय किए हैं। शिक्षा का समूचा परिदृश्य तेजी से बदल रहा है। आज की कक्षा नवयुगीन साधनों तथा युक्तियों से सुसज्जित होती जा रही है। शिक्षा में दृश्यश्रव्य तथा एनिमेशन युक्तियों का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। संक्षेप में कह सकते हैं कि शिक्षण प्रणाली में तेजी से बदलाव आ रहा है तथा पारंपरिक युक्तियों का स्थान अब इलैक्ट्रॉनिक युक्तियां लेती जा रही हैं। यानी शिक्षा अब तेजी से ई–शिक्षा की ओर अग्रसर है।

होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र (TIFR) मुंबई, ने विज्ञान में ई–शिक्षा के लिए पहल करते हुए इंटरमीडिएट स्तर तक के हिन्दी माध्यम के छात्रों तथा अध्यापकों के लिए एक स्वतंत्र ई–लर्निंग पोर्टल (http://ehindi.hbcse.tifr.res.in) विकसित किया है। इस वेबसाइट की शुरूआत वर्ष 2008 में की गयी। इस पोर्टल पर ई–व्याख्यान, ई–बुक्स, ई–ग्लॉसरी, ई–जीवनी, ई–डॉक्यूमेंटरीज, ई–प्रश्नमाला, तथा इंटरैक्टिव ई–प्रश्न मंच मौजूद हैं। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में हर रोज का महत्व जानने के लिए 'विज्ञान की दुनिया' नामक स्तम्भ भी है। यह एक तरह का साइंस कैलेण्डर है जो किसी दिन की अहम वैज्ञानिक घटनाओं तथा उपलब्धियों की जानकारी देता है। इस वेबसाइट पर होमी भाभा केन्द्र द्वारा तैयार स्कूली पाठ्यक्रम की विज्ञान की पुस्तकें तथा लोकोपयोगी विज्ञान की किताबें उपलब्ध हैं। इस वेबसाइट पर भौतिकी, रसायन, जीव विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, नैनो साइंस, मृदा विज्ञान से लेकर कृषि–विज्ञान तक, अनेक विषयों पर रुचिकर व्याख्यान दिए गए हैं। प्रस्तुत आलेख में इक्कीसवीं सदी में ई–शिक्षा की बढ़ती भूमिका के परिप्रेक्ष्य में होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र द्वारा हिन्दी में विज्ञान शिक्षा के लिए विकसित किए गए उपरोक्त ई–लर्निंग पोर्टल पर प्रकाश डाला गया है।

विगत तीन दशकों के दौरान देश में जीवन के हर क्षेत्र में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) सेवाओं का ज़बरदस्त प्रसार तथा विस्तार हुआ है। जाहिर है शिक्षा के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व बदलाव आया है। प्राचीन गुरुकुल तथा आश्रम की मुख्यतः वाचिक परंपरा से होते हुए शिक्षा ने अब तक अनेक सोपान तय किए हैं। बीसवीं सदी के शुरूआती पारम्परिक श्यामपट तथा खड़िया मिट्टी के दौर से गुजरते हुए इक्कीसवीं सदी के इस दूसरे दशक में पठन–पाठन का समूचा परिदृश्य एकदम से बदल चुका है। आज की स्कूली कक्षा नवयुगीन साधनों तथा युक्तियों से सुसज्जित होती जा रही है। साधारण ब्लैकबोर्ड की जगह स्मार्टबोर्ड ने ले ली है तथा विविध प्रकार के मार्कर पेन ने खड़िया मिट्टी की छुट्टी

कर दी है। इंगित करने के लिए इस्तेमाल होने वाली स्टिक का स्थान लेज़र प्वाइंटर ने ले लिया है। स्लाइड प्रोजेक्टर तथा एलसीडी प्रोजेक्टर अब हर कक्षा की अनिवार्य आवश्यकता बनते जा रहे हैं। शिक्षा में दृश्यश्रव्य प्रणालियों का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। सुगम तथा बेहतर प्रस्तुतीकरण के लिए टचस्क्रीन वाले बोर्ड अब स्कूलों में इस्तेमाल किए जा रहे हैं। संक्षेप में कहें तो शिक्षण प्रणाली के तौर तरीकों में बड़ा तेजी से बदलाव आ रहा है। पारंपरिक युक्तियों का स्थान अब इलैक्ट्रॉनिक युक्तियां लेती जा रही हैं। शिक्षा अब तेजी से ई–शिक्षा की दिशा में अग्रसर हो रही है। प्रस्तुत लेख में इक्कीसवीं सदी में ई–शिक्षा की बढ़ती भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना

वर्तमान युग सूचना का युग है। सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आयी क्रान्ति ने आज समूचे वैश्विक परिदृश्य को बदल दिया है। दूरियाँ तेजी से सिमट रही हैं तथा समूची दुनिया एक विश्वग्राम में तब्दील हो रही है। विगत वर्षों के दौरान भारत ने सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ज़बरदस्त कामयाबी हासिल की है। उसने आज दुनिया में अपना एक अहम मुकाम बनाया है। नवयुगीन इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों ने हमारे जीवन के सभी पहलुओं को अपने आगोश में ले लिया है। अपनी आनलाइन तथा आफलाइन माध्यमों के जरिए ये माध्यम हमें सूचना संचय और संचार के बहुत शक्तिशाली तथा बहुमुखी साधन सुलभ करा रहे हैं। इनके जरिए ब्रह्माण्ड की तकरीबन हर चीज के बारे में जानकारी आज हमारी उंगलियों पर उपलब्ध है। लेकिन हमारे लिए महत्वपूर्ण यह है कि ब्रह्माण्ड के बारे में ज्ञान की पहुंच या सुलभता सार्वत्रिक होनी चाहिए। सबसे पहले कि यह सिर्फ इंटरनेट ही नहीं अपितु सी डी पर उपलब्ध होना चाहिए जोकि देश भर के कंप्यूटरों पर मौजूद है। दूसरे, यह हिन्दी सहित दूसरी सभी भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होना चाहिए। ऐसा समता तथा समावेशी मूल्यों एवं भावनाओं के आलोक में नितांत जरूरी है।

इस प्रौद्योगिकी ने मानव जीवन के तमाम पहलुओं को प्रभावित किया है। जनसंचार माध्यमों में इलेक्ट्रॉनिक माध्यम का दायरा तेजी से बढ़ता जा रहा है। इसमें रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, प्रोजेक्टर तथा बाईस्कोप इत्यादि शामिल हैं। एक समय था जब बाईस्कोप में चलते फिरते चित्रों के साथ ध्वनि–प्रभाव ही बहुत बड़ी ईजाद हुआ करते थे। यह तकरीबन तीन से चार दशक पहले की बात है। उस समय हिन्दुस्तान के गांवों के बालवृंद के लिए बाईस्कोप वाले का आना खुशी का सबब हुआ करता था। यह वास्तव में उनके लिए अजूबा था। वे चलते फिरते चित्रों से अभिभूत हो जाते थे। उसी उम्र वर्ग के आज के दौर के बच्चे मल्टीमीडिया युक्तियों का इस्तेमाल कर रहे हैं तथा मनोरंजन लाभ ले रहे हैं।

कंप्यूटर युग का सूत्रपात

पिछली सदी में अस्सी के दशक में शुरू हुए कंप्यूटरीकरण ने सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी को पंख लगा दिए। विगत कुछ वर्षों के दौरान डिजिटल माध्यम एक सशक्त तथा प्रभावी विधा के रूप में उभरा है। ऐसा इसलिए क्योंकि इसमें दृश्य, श्रव्य, वीडियो, एनिमेशन और अनुरूपण के जरिये सूचना तथा ज्ञान–विज्ञान की बातें प्रभावी ढंग से लक्ष्य वर्ग तक पहुँचाई जा सकती हैं। शिक्षा के क्षेत्र में पठन–पाठन के लिए ई–सामग्री बहुत उपयोगी साबित हो रही है तथा इन दिनों इसके विकास पर काफी जोर दिया जा रहा है। देश और दुनिया का हिन्दी जगत बहुत बड़ा तथा विस्तृत है। जाहिर है, उसकी आवश्यकताएँ भी बहुत बड़ी हैं। सूचना प्रौद्योगिकी का लाभ आम आदमी तक भी पहुँचे, यह अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी तथा दूसरी भारतीय भाषाओं में ई–लर्निंग की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों के पीछे यही भावना काम कर रही है।

इंटरनेट तथा वर्ल्ड वाइड वेब

ई–शिक्षा को समझने से पहले कुछ तकनीकी बातों से परिचित होना जरूरी है। इंटरनेट आज विश्व की सर्वाधिक सक्षम सूचना–प्रणाली है। इंटरनेट विश्व के विभिन्न स्थानों पर स्थापित कम्प्यूटरों के नेटवर्क को टेलीफोन लाइन की सहायता से जोड़ कर बनाया गया एक अंतर्राष्ट्रीय सूचना महामार्ग है जिस पर पलक झपकते ही सूचनाएँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाती हैं। इंटरनेट से किसी भी विषयों जैसे वाणिज्य, शिक्षा, मनोरंजन व विज्ञान आदि पर शीघ्रता और सरलता से जानकारियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। उपयोगकर्ता द्वारा अपने सामान एवं सेवाएँ, क्रय–विक्रय, सौदों तथा सेवाओं के निर्धारण, व्यापार के विज्ञापन व निर्धारण, रुचियां खोजने, सृजनात्मकता की अभिव्यक्ति में इंटरनेट का उपयोग दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इंटरनेट पर विश्व में कही भी रहने वाले व्यक्ति से बातें की जा सकती हैं, इलैक्ट्रॉनिक समाचार–पत्र पढ़ा जा सकता है, शेयर बाजार पर नजर रखी जा सकती है, शिक्षा प्राप्त तथा प्रदान की जा सकती है, विज्ञापन दिए जा सकते हैं, पुस्तकालयों से आवश्यक सूचना प्राप्त की जा सकती है, वीडियों अथवा आडियो कैसेट देख सुन सकते हैं।

इंटरनेट के जरिए कंप्यूटरों पर दिखायी देने वाला टैक्स्ट वास्तव में सर्वर में डिजिटल रूप में संचित होता है। मांगे जाने पर यह सूचना दूसरे कंप्यूटर को प्रेषित की जाती है। इस प्रोग्राम को हाइपर टैक्स्ट ट्रांसफर प्रोटोकोल (http) कहते हैं। कम्प्यूटर की भाषा अलग होती है। उस तकनीकी भाषा को हाइपर टैक्स्ट मार्कअप लैंग्वेज (html) कहते हैं। एक कम्प्यूटर दूसरे कंप्यूटर से इसी भाषा में संवाद करता है।

इलैक्ट्रॉनिक मेल

इलैक्ट्रॉनिक मेल का संक्षिप्त रूप है ई–मेल। ई–मेल के तीन आवश्यक घटक हैं–निजी कंप्यूटर, टेलिफोन और माडेम संयोजक। ई–मेल के अंतर्गत कम्प्यूटर में एकत्र सूचनाएँ, आँकड़े, जानकारियाँ एवं तस्वीरें आदि अपने गंतव्य ई–मेल बॉक्स तक टेलीफोन लाइनों द्वारा भेजी जाती हैं। अन्य सूचनाओं की अपेक्षा ई–मेल की सेवा बहुत अधिक अच्छी हैं। ई–मेल अपने गंतव्य तक विश्व के किसी भी भाग में अल्प समय में पहुंच जाती है। अगर प्राप्तकर्ता कोई स्पष्टीकरण चाहता है तो प्रेषक से तुरन्त संपर्क कर जवाब प्राप्त कर सकता है। दुनिया में कुछ पॉपुलर वेबसाइट्स हैं जिनका इस्तेमाल ई–मेल भेजने व प्राप्त करने के लिए बहुतायत से किया जाता है। ये हैं, www.gmail.com, www.yahoo.com, तथा www.rediffmail.com। वर्ल्ड वाइड वेब को www या संक्षेप में वेब के नाम से भी जाना जाता है। इंटरनेट पर जानकारी वितरित करने या इंटरनेट से जानकारी प्राप्त करने का सर्वाधिक प्रचलित साधन है। वर्ल्ड वाइड वेब के अंतर्गत टैक्स्ट, ग्राफ, संगीत, तस्वीर, फिल्म, आदि सभी संग्रहीत किए जा सकते हैं तथा इंटरनेट यूज़र्स को सुलभ कराए जा सकते हैं।

ई–शिक्षा के मायने

ई–शिक्षा कौशल एवं ज्ञान का कंप्यूटर एवं नेटवर्क आधारित अंतरण है। ई–शिक्षा इलैक्ट्रॉनिक अनुप्रयोगों और सीखने की प्रक्रियाओं के उपयोग को रेखांकित करती है। ई–शिक्षा के अनुप्रयोगों और प्रक्रियाओं में वेब–आधारित शिक्षा, कंप्यूटर–आधारित शिक्षा, आभासी कक्षाएं और डिजिटल युक्तियां शामिल हैं। इसमें इंटरनेट, इंट्रानेट / एक्स्ट्रानेट, ऑडियो या वीडियो टेप, उपग्रह टी वी, और सीडी–रोम (CD&ROM) के माध्यम से पाठ्य सामग्रियों का वितरण किया जाता है। ये कुछ वेबसाइट्स हैं जहां शैक्षणिक सामग्रियां प्रचुरता से उपलब्ध हैं। मसलन कि www.columbiascientific.com, www.hi.syvum.com, www.e-learningforkids.org, www.kentchemistry.com, www.khanacademy.org, इत्यादि।

संस्थागत प्रयासः एक झलक

होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र (TIFR) मुंबई, ने स्कूल तथा कॉलेज स्तर तक के हिन्दी माध्यम के छात्रों तथा अध्यापकों के लिए एक हिन्दी में स्वतंत्र ई–लर्निंग पोर्टल (http://ehindi.hbcse.tifr.res.in) विकसित किया है। इस वेबसाइट की शुरूआत वर्ष 2008 के उत्तरार्द्ध में की गयी। इस पोर्टल पर ई–व्याख्यान, ई–बुक्स (आनलाइन तथा पीडीएफ दोनों रूपों में), ई–ग्लॉसरी, ई–जीवनी, ई–डॉक्युमेंटरीज, ई–प्रश्नमाला, तथा इंटरैक्टिव ई–प्रश्नमंच मौजूद हैं। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में हर दिन का महत्व जानने के लिए 'विज्ञान की दुनिया' नामक स्तम्भ भी है। यह एक तरह का साइंस कैलेण्डर है जो किसी दिन की अहम वैज्ञानिक घटनाओं तथा उपलब्धियों की जानकारी देता है। इस वेबसाइट पर होमी भाभा केन्द्र द्वारा विकसित पाठ्यक्रम की पुस्तकें तथा लोकोपयोगी विज्ञान की किताबें पाठकों के लिए उपलब्ध हैं। पाठक चाहें तो इन्हें डाउनलोड कर सकते हैं तथा प्रिंट आउट ले सकते हैं। इस वेबसाइट पर भौतिकी, रसायन, जीव विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, नैनो साइंस, मृदा विज्ञान से लेकर कृषि–विज्ञान तक पर विशेषज्ञों के रुचिकर व्याख्यान दिए गए हैं।

विज्ञान प्रसार, भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक संस्था है जो देश के आम जनमानस तक विज्ञान के प्रसार में पूर्णरूपेण संलग्न है। इसकी स्थापना 1989 में हुई। इस संस्था ने कम समय में ही देश भर में अपने कार्यों से अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है। संस्था की वेबसाइट (www.vigyanprasar.gov.in) बहुत सुरुचिपूर्ण है। इस पर वैविध्यपूर्ण सामग्रियां उपलब्ध हैं जो शैक्षिक तथा विज्ञान के लोकव्यापीकरण की दृष्टि से बहुत उपयोगी हैं। पोर्टल पर प्रिंट के साथ–साथ इलेक्ट्रानिक सामग्रियां प्रचुरता से उपलब्ध हैं। विज्ञान जगत की समसामयिक घटनाचक्र पर अद्यतन जानकारी इस वेबसाइट पर मिलती है। संस्था ने भौतिकी, रसायन, पर रुचिकर हैंड्सआन किट्स तैयार किए हैं जिनसे इन विषयों की संकल्पनाएं समझने में मदद मिलती है। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के साथ मिलकर इस संस्था ने धारावाहिकों का निर्माण किया है। विज्ञान प्रसार, देश की दूसरी विज्ञान संस्थाओं तथा संगठनों के साथ मिलकर कार्यशालाएं तथा विज्ञान साक्षरता से संबन्धित कार्यक्रम आयोजित करता है।

खान एकेडमी अमेरिका की एक स्वैच्छिक संस्था है। इसके संस्थापक हैं सलमान खान। ये महाशय मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट आफ टैक्नालाजी से तीन तीन विषयों में ग्रेजुएट हैं। इन्होंने वर्ष 2006 में खान एकेडमी की वेबसाइट (www.khanacademy.org) लांच की। बहुत कम समय में ही इस प्रयास को दुनिया भर में प्रसिद्धि तथा शैक्षिक जगत से प्रशंसा प्राप्त हुई है। विश्व भर में हर कहीं तथा हर एक के लिए निःशुल्क शिक्षा प्रदान करना इस एकेडमी का मिशन है। आज इस वेबसाइट पर 2600 वीडियो हैं तथा गणित, भौतिकी, रसायन, जीवविज्ञान, खगोल–विज्ञान से लेकर कम्प्यूटर साइंस तक सभी विषयों पर प्रचुर शैक्षिक सामग्रियां उपलब्ध हैं। ये सामग्रियां अग्रेजी में है लेकिन इन्हें दूसरी भाषाओं में भी अनूदित कराने के प्रयास चल रहे हैं।

इसके अलावा भोपाल की संस्था एकलव्य (www.eklavya.in), जयपुर की संस्था दिगन्तर (www.digantar.org), इंदौर की लर्न बाइ फन (www.lbf.in) वेबसाइटों पर भी शैक्षिक रूप से, खास तौर से बच्चों के लिए, विपुल शैक्षिक सामग्रियां विशेषतः हिन्दी में मौजूद हैं।

ई–प्रकाशन

इंटरनेट पर किताबें तथा पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित करना या उपलब्ध कराना, इलैक्ट्रॉनिक प्रकाशन (ई–प्रकाशन) कहलाता है और इस तरह की पुस्तकें ई–बुक्स कहलाती हैं। कई बार इन्हें आनलाइन किताबों के नाम से भी पुकारा जाता है। आमतौर पर ये किताबें प्रकाशक, वितरक या पुस्तक विक्रेता उपलब्ध कराते हैं। लेकिन कई बार लेखक ही इन्हें इंटरनेट पर उपलब्ध कराते है। इलैक्ट्रॉनिक

प्रकाशन के लिए ज्यादा साजो–सामान या तकनीकी ज्ञान की आवाश्यकता नहीं होती है। बस पाठ्य–साम्रगी को डिजिटाइज करने की सुविधा होनी चाहिए। ऐसा इसलिए क्योंकि कम्प्यूटर डिजिटल लैंग्वेज या अंकीय भाषा ही समझता है। इलैक्ट्रॉनिक किताबों की शुरूआती कामयाबी ने इलैक्ट्रॉनिक प्रकाशन को दुनिया के तेजी से उभरते व्यवसायों की श्रेणी में ला खड़ा किया है।

इलैक्ट्रॉनिक किताबें

इलैक्ट्रॉनिक किताबें वे किताबें हैं जो प्रायः कॉम्पैक्ट डिस्क (सीडी) पर उपलब्ध होती हैं जिन्हें कम्प्यूटर में लगाकर स्क्रीन पर ठीक उसी तरह पढ़ा जाता है जैसे कागज पर छपी किताबें। ये इलेक्ट्रानिक किताबें कागज पर छपी किताबों से कहीं अधिक रोचक होती है। काम्पैक्ट डिस्क (सी डी) 120 मिमी व्यास की गोल पॉलीकार्बोनेट चकत्ती होती है तथा जिसकी मोटाई 1.2 मिलीमीटर होती हैं। इसकी सतह पर लेजर किरणों द्वारा सर्पिल संकेत अंकित किए गए होते हैं। एक सी डी में 650 से 700 मेगाबाइट या लगभग 36,000 पृष्ठों तक की सामग्री आ सकती है। सीडी पर अंकित जानकारी को बिना किसी खर्च के ई–मेल के जरिए दुनिया भर में कहीं भी प्रेषित किया जा सकता है।

डिजिटल पुस्तकालय

ई–लाइब्रेरी

इक्कीसवीं सदी में इस दौर में चीजें तेजी से बदल रही हैं। पुस्तकालय भी इसके अपवाद नहीं हैं। विद्यार्थी, शिक्षक, पत्रकार, वैज्ञानिक या आम लोग जानकारी के लिए लाइब्रेरी जाते थे। इंटरनेट ने हर किसी के लिए, कहीं भी, कभी भी, सूचना प्राप्त करना अत्यंत सरल बना दिया है। कोई भी विद्यार्थी या शोधकर्ता अपने प्रोजेक्ट के बारे में नवीनतम जानकारी प्राप्त कर सकता है। कोई पत्रकार दुनिया के किसी भी कोने में घटी घटना से संबंधित विस्तृत जानकारी लेकर रिपोर्ट तैयार कर सकता है। डॉक्टर किसी नवीन खोज या पद्धति के जरिए मरीज को जीवनदान दे सकता है।

किसी अच्छी लाइब्रेरी में एक कैटलॉग होता है जिससे हमें आसानी से पता चल जाता है कि लाइब्रेरी में कौन से डॉक्यूमेंट (किताबें, पत्रिकाएँ या विश्वकोष) उपलब्ध हैं और वह किस रैक में हैं। इंटरनेट पर भी डॉक्यूमेंट को कुछ इसी तरह बल्कि और भी प्रभावी ढंग से वर्गीकृत किया गया है। इंटरनेट पर वेब पेज विशेष को एक ही समय में अनेक लोग देख सकते है। विभिन्न मंत्रालयों, विभागों तथा संगठनों ने अपने दफ्तरों में उपलब्ध अभिलेखों को डिजिटल रूप में उपलब्ध कराने की पहल की है। पिछले दिनों सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने डिजिटल पुस्तकालय के प्रयासों को प्रोत्साहन तथा संरक्षण देने का प्रयास किया है। किसी भी भाषा या विषय पर पुस्तक इन वेबसाइटों पर प्राप्त की जा सकती हैं। (www.new.dli.ernet.in, तथा (www.dli.cdacnoida.in)। इनके अलावा कुछ अन्य डिजिटल पुस्तकालयों के पते इस प्रकार हैं–

- इंजीनियरिंग विज्ञान और प्रौद्योगिकी में भारतीय राष्ट्रीय पुस्तकालय कंसोर्टियम (INDEST), आई आई टी दिल्ली www.indest.iitd.ac.in
- इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्, नई दिल्ली, www.ignca.gov.in
- विद्यार्थी डिजिटल लाइब्रेरी, मैसूर विश्वविद्यालय, www.vidyanidhi.org.in
- अर्नेट इंडिया नई दिल्ली, डिजिटल लाइब्रेरी, www.digitallibrary.ernet.in
- सूचना एवं लाइब्रेरी नेटवर्क केंद्र, अहमदाबाद, www.inflibnet.ac.in
- नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस कम्यूनिकेशन और इनफार्मेशन रिसोर्स, डा. के. एस. कृष्णन मार्ग, नई दिल्ली 110012, www.niscair.res.in
- वी वी गिरी राष्ट्रीय श्रम संस्थान, नोएडा, www.vvgnli.org

ई–यूनिवर्सिटी

उच्च शिक्षा को ग्रामीण लोगों के दरवाजे तक पहुंचाने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू जी सी) ने पहल करते हुए ई–यूनिवर्सिटी की स्थापना की है। इसमें विद्यार्थी को शिक्षा के लिए यूनिवर्सिटी तक जाने की जरूरत नहीं है बल्कि यूनिवर्सिटी स्वयं छात्र तक पहुंच रही है। ई–यूनिवर्सिटी अपने सैटेलाइट 'एडुसैट' के जरिए एक क्लिक पर कम्प्यूटर या टेलीविजन के माध्यम से देश के दूर–दराज के छात्रों तक उच्च शिक्षा की सामग्री तथा संसाधन पहुंचा रही है। यूजीसी की इस योजना के अंतर्गत न तो परम्परागत कॉलेज या महाविद्यालय की तरह किसी बड़े आधारभूत ढांचे की जरूरत है और न ही लाखों–करोड़ों रूपए के खर्च की। बेहद कम खर्च में देश के दूर–दराज तथा ग्रामीन इलाकों में रहने वाले विद्यार्थी घर बैठे अपने– अपने विषयों के ख्यातिप्राप्त प्रोफेसरों के व्याख्यान सुन सकते हैं, उनके नोट्स प्राप्त कर सकते हैं।

यूजीसी की योजना के मुताबिक ई–यूनिवर्सिटी में सैटेलाइट के जरिए कॉलेज की पढ़ाई उपलब्ध करवाई जाएगी। इससे स्टूडेंट्स को पढ़ाई के लिए कहीं दूर नहीं जाना पड़ेगा, बल्कि वे अपने घरों में बैठकर ही टेलीविजन और इंटरनेट के जरिए पढ़ाई पूरी कर लेंगे। वे जब चाहें, तब एक निश्चित वेब पेज खोलकर अपने विषय का अध्ययन कर सकते हैं। ई–लर्निंग में अलग–अलग विषयों की हार्ड कॉपी को सॉफ्ट कॉपी (ई–कॉपी) में बदला जाता है। कहने का मतलब यह है कि आप अपने वेब पेज को खोलकर अपने मनचाहे विषय के ऑप्शन पर क्लिक कर उसे पढ़ सकते हैं। इसमें स्टूडेंट्स को कठिन लगने वाले सवालों के कई ऑप्शन मौजूद रहते हैं, जिन्हें क्लिक कर वे अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। इसमें ऑनलाइन परीक्षा की भी व्यवस्था है।

इस ई–यूनिवर्सिटी www.cec-ugc.org, के तहत दिल्ली स्थित मेन स्टडी सेंटर सहित कुल 17 इलैक्ट्रॉनिक मल्टीमीडिया रिसर्च सेंटर्स हैं जहां सैटेलाइट के जरिए कक्षाओं की व्यवस्था की गई है। इसके अन्य केन्द्र अहमदाबाद, कोलकाता, हैदराबाद, जोधपुर, मदुरै, पुणे, कालीकट, चेन्नई, इम्फाल, इंदौर, मैसूर, पटियाला, रूड़की, सागर, श्रीनगर आदि। शहरों में हैं। यूजीसी का अपना सैटेलाइट लिंक (एडुसैट) भी है जो दिल्ली और अन्य केन्द्रों को परस्पर जोड़ता है। इसी की सहायता से स्टडी प्रोग्राम का प्रसारण होता है। यदि एक पंचायत के पास डी टी एच (डायरेक्ट टु होम) का एंटीना है, तो उस पंचायत के सभी गांवों के छात्र–छात्राएं टेलीविजन की सहायता से पढ़ाई कर पाएंगे। यदि वहां इंटरनेट की सुविधा भी उपलब्ध हो तो यह उनके लिए और भी लाभप्रद होगा।

ई–शब्दकोश

शब्दकोश वास्तव में शब्दों की एक बृहद् सूची होती है जिसमें शब्दों के साथ उनके अर्थ व व्याख्या लिखी होती है। शब्दकोश एकभाषीय हो सकते हैं, द्विभाषीय हो सकते हैं या ये बहुभाषीय हो सकते हैं। अधिकतर शब्दकोशों में शब्दों के उच्चारण के लिए भी व्यवस्था होती है। कुछ शब्दकोशों में चित्रों का सहारा भी लिया जाता है। अलग–अलग कार्य–क्षेत्रों के लिये अलग–अलग शब्दकोश हो सकते हैं; जैसे, विज्ञान, गणित, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, विधि, के शब्दकोश।

सही अभिव्यक्ति के लिए सही शब्द का चयन आवश्यक है। सही शब्द के चयन के लिए शब्दों के संकलन आवश्यक हैं। इस बारे में पहल करते हुए गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग (भारत सरकार) ने सी–डैक पुणे के तकनीकी सहयोग से ई–महाशब्दकोश www.e-mahashabdkosh.cdac.in का निर्माण किया है। इस योजना के अंतर्गत शुरूआती दौर में प्रशासनिक शब्द संग्रह को देवनागरी यूनिकोड में प्रस्तुत किया गया है। इसमें आप अंग्रेजी का हिंदी पर्याय तथा हिंदी शब्दों का वाक्य में अतिरिक्त प्रयोग देख सकते है। इसकी विशेषता यह भी है कि आप हिंदी शब्दों का उच्चारण भी सुन सकते है। यह एक बहुउपयोगी शब्दकोश है। वास्तव में यह महज एक शब्दकोश ही नहीं वरन् इससे

शुद्ध उच्चारण, विशेष प्रयोगकर्ताओं के लिए विशिष्ट अर्थ देना, शब्दों और मुहावरों को प्रयोग करने का विवरण आदि सुविधाओं को देने में सहायक है। यह शब्दकोश मुहावरों को प्रयोग करने में आने वाली दिक्कतों को दूर करने तथा उनको ठीक से दिखाने में प्रयोगकर्ता के लिए लाभकारी होगा। ई–महाशब्दकोश उनके लिए बहुत उपयोगी होगा जो हिंदी में काम करना चाहते हैं। तकनीकी शब्दों के लिए विज्ञान तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार, ने विविध विषयों के लिए शब्दकोश तैयार किए हैं जो कि आयोग की वेबसाइट (www.cstt.nic.in) पर उपलब्ध हैं।

ई–शिक्षा, साथ में ई–परीक्षा भी

शिक्षा के साथ अब परीक्षा भी इलैक्ट्रॉनिक हो गयी है। अभी तक पढ़ाई लिखाई के इलेक्ट्रानिक साधनों का जिक्र हुआ मसलन ई–बुक्स, ई–क्लासेज, आनलाइन तथा आफलाइन शैक्षिक सामग्रियां, वगैरह। परीक्षाएं भी अब आनलाइन हो गयी हैं। प्रबन्धन, इंजीनियरिंग की प्रवेश परीक्षाएं आनलाइन हो गयी हैं। अब आवेदन भी इलैक्ट्रॉनिक हो गया है। व्यक्ति सीधे संस्था की वेबसाइट पर जाकर लाग–इन तथा पासवर्ड के जरिए जाकर आवेदन फार्म भरकर उसे सबमिट करने के पहले चाहे तो सेव कर ले। जांचने परखने तथा तथ्यों के सही भरे होने की संतुष्टि पर उसे सबमिट कर सकता है। सबमिट करने पर इस बात की पुष्टि हो जाती है कि आवेदन सफलतापूर्वक भरा जा चुका है। इस आशय का ई–मेल आवेदक के मेलबाक्स पर आ जाता है। कभी–कभी परीक्षा का प्रवेश–पत्र भी तुरन्त जनरेट हो जाता है जिसे चाहें तो तुरन्त प्रिंट ले सकते हैं या सेव कर सकते हैं। प्रवेश–पत्र आवेदक के ई–मेल खाते पर भी प्रेषित हो जाता है। परीक्षा से संबन्धित अनुदेश भी समय पर छात्र को मिल जाते हैं। ऑनलाइन डेमो–टेस्ट भी छात्र देख सकते हैं कि वास्तव में परीक्षा के दौरान किस तरह से प्रश्नपत्र होंगे तथा उनके उत्तर का तरीका क्या होगा। कुछ संस्थाएं अब ई–सर्टिफिकेट भी प्रदान करना शुरू कर चुकी हैं। इस तरह से अब आने वाले दिनों में शिक्षा में पठन–पाठन से लेकर फॉर्म भरने तथा परीक्षा और प्रमाण–पत्र, सभी कुछ इलैक्ट्रॉनिक हो जाने वाला है।

ई–ज्ञानकोश

विकीपीडिया (www.wikipedia.org) एक मुक्त ज्ञानकोश है। यह महज एक दशक पुराना है लेकिन बहुत ही लोकप्रिय हो चुका है। इसकी शुरूआत जनवरी 2001 में हुई। जुलाई 2003 से हिन्दी विकीपीडिया (www.hi.wikipedia.org) का श्रीगणेश हुआ। किसी भी चीज के बारे में जानकारी करीब करीब इस पर मिल जाती है। आज की तारीख में हिन्दी विकीपीडिया पर 1,01,840 लेख उपलब्ध हैं। यह विश्वकोश दूसरी कई भारतीय भाषाओं जैसे पंजाबी, मराठी, बांग्ला, तमिल, तेलुगू, कन्नाड़, मलयालम में भी उपलब्ध है। कुछ उत्साहीजनों के प्रयास से यह भोजपुरी में भी शुरू हो चुका है। दूसरी आंचलिक भाषाओं में भी इस पर पहल हो चुकी है। देश में संस्कृत के जानकार बहुत सीमित हैं। फिर भी इस देवभाषा के उपासकों ने प्रयास करके संस्कृत में भी विकीपीडिया मुक्त ज्ञानकोश (www.sa.wikipedia.org) शुरू कर दिया है। आज इस वेबसाइट पर 7372 लेख उपलब्ध हैं।

विकीपीडिया की खासियत यह है कि इस पोर्टल पर कोई भी रजिस्टर करके सामग्री जोड़ सकता है तथा वेबसाइट पर मौजूद सामग्री को संपादित कर सकता है। इस प्रकार लोगों के जुड़ाव तथा योगदान से यह पोर्टल दिनोंदिन विस्तार पाता जा रहा है। इस तरह हम देखते हैं कि इक्कीसवीं सदी में, जो कि ज्ञान की सदी कही जा रही है, ई–शिक्षा का दायरा तेजी से बढ़ रहा है तथा आने वाले बरसों में शिक्षा का समूचा परिदृश्य पूरी तरह से बदल जाएगा।

सी–डैक, पुणे का भारतीय भाषाओं के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान

काजल बाजपेयी
सी–डैक, पुणे, महाराष्ट्र

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पिछले कुछ दशकों से शीघ्र गति से विकास हुआ है। यह मनुष्य को सोचने–विचारने और संप्रेषण करने के लिए तकनीकी सहायता उपलब्ध कराती है। सूचना प्रौद्योगिकी के अंतर्गत कंप्यूटर के साथ–साथ माइक्रोइलैक्ट्रॉनिक्स और संचार प्रौद्योगिकी भी शामिल हैं और इसके विकास का नवीनतम रूप हमें इंटरनेट, मोबाइल, रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, उपग्रह प्रसारण, कंप्यूटर आदि के रूप में दिखाई देता है। इन सबके द्वारा आज सूचना प्रौद्योगिकी ने पूरे विश्व को अपने आगोश में ले लिया है।

कंप्यूटर टेक्नोलॉजी के अंतर्गत प्राकृतिक भाषा संसाधन के क्षेत्र में विश्व भर में अनेक विशेषज्ञ प्रणालियों का विकास किया गया है, जिनके माध्यम से कंप्यूटर साधित भाषा शिक्षण, मशीनी अनुवाद और वाक्–संसाधन से संबंधित विभिन्न अनुप्रयोग विकसित किए गए हैं।

हिंदी में कंप्यूटरीकरण को बढ़ावा देने के लिए सरकारी स्तर पर ही नहीं बल्कि गैर–सरकारी स्तर पर भी अनेक संस्थाओं द्वारा हिंदी सॉफ्टवेयर के निर्माण में सक्रिय रूप से कार्य प्रगति पर है। भारतीय भाषा कंप्यूटिंग या हिंदी भाषा कंप्यूटिंग का अंतिम लक्ष्य यह निश्चित करना है कि सूचना प्रौद्योगिकी जनमानस तक उसकी अपनी भाषा में पहुँचे ताकि वह नई टैकनोलॉजी से काम करने में अधिक आसानी महसूस करे।

कंप्यूटर पर हिंदी प्रयोग को सरल व कुशल बनाने के लिए विभिन्न सॉफ्टवेयरों द्वारा हिंदी भाषा को प्रौद्योगिकी और तकनीकी से जोड़ने का सफल प्रयास उन्नत संगणन विकास केन्द्र (सी–डैक), पुणे ने किया है। एप्लाइड आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस ग्रुप, उन्नत संगणन विकास केंद्र, पुणे द्वारा हिंदी और विभिन्न भारतीय भाषाओं के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के लिए सॉफ्टवेयर विकसित किए जा रहे हैं। ये ग्रुप (एएआई ग्रुप) (प्रायोगिक कृत्रिम बुद्धि समूह) भाषा विद्यार्जन शिक्षण, मशीनी अनुवाद इत्यादि के लिए कृत्रिम बुद्धि और ज्ञान आधारित समाधान प्रदान करता है :

मंत्र

मंत्र, राजभाषा एक मशीन साधित अनुवाद सिस्टम है, जो अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करता है। मंत्र प्रौद्योगिकी पर आधारित यह सिस्टम सी–डैक, पुणे के एप्लाइड आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस ग्रुप (एएआई) द्वारा विकसित किया गया है। इसके अंतर्गत तीन परियोजनाएँ हैं–

(i) मंत्र–राजभाषा– मंत्र–राजभाषा एक मशीन साधित अनुवाद सिस्टम है, जो राजभाषा के प्रशासनिक, वित्तीय, कृषि, लघु उद्योग, सूचना प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य, रक्षा, शिक्षा एवं बैंकिंग क्षेत्रों के दस्तावेजों का अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद करता है।

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा प्रायोजित मंत्र–राजभाषा स्टैंडअलोन इंट्रानेट और इंटरनेट संस्करणों को विकसित किया गया है ।

भारत की सामाजिक, आर्थिक, जनसांख्यिकीय स्थिति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा अल्पकालीन चरण जो वर्तमान में उपस्थित है, उसमें मंत्र की उपयोगिता निश्चित ही अधिक है।

मंत्र में हिंदी और अंग्रेजी के लिए लेक्सिकल ट्री एडजॉइनिंग ग्रामर का प्रयोग किया जाता है। मंत्र को कंप्यूटर जगत स्मिथसोनियन अवार्ड से पुरस्कृत किया गया और यह अमेरिकी ऐतिहासिक राष्ट्रीय संग्रहालय में 1999 नवीन शोध संकलन का भाग है।

मंत्र राजभाषा इंटरनेट संस्करण का डिज़ाइन और विकास थिन–क्लांइट आर्किटेक्चर पर आधारित है। इसमें संपूर्ण अनुवाद प्रक्रिया सर्वर पर ही होती है इसलिए दूरवर्ती स्थानों में भी इंटरनेट कनेक्शन उपलब्ध लो–एण्ड सिस्टम पर भी दस्तावेज़ों के अनुवाद करने के लिए इस सुविधा का उपयोग किया जा सकता है। अनुवादित दस्तावेज़ों की पुनःप्रप्ति के लिए प्रयोक्ता के इनबॉक्स में रखा जाता है। प्रौद्योगिकी आपके घर तक पहुँचेगी, आप को उस तक पहुँचने की ज़रूरत नहीं है।

मंत्र–राजभाषा इंटरनेट के लिए वेबसाइट देखें :

http://www.mantra-rajbhasha.cdac.in/mantrarajbhasha/

(ii) मंत्र–राज्यसभा– अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद

(iii) बहुभाषी मंत्र– हिंदी से अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद, हिंदी से विदेशी भाषाओं में अनुवाद

अनुवादक्ष (अंग्रेजी से भारतीय भाषाओं में अनुवाद)

भाषा की बाधा को दूर करने के लिए और सहायता प्रदान करने के लिए मशीन साधित अनुवाद का प्रयोग भारत में भाषा की बहुलता को प्रोत्साहित करने के लिए, इलैक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग (DeitY) मशीन अनुवाद (MT) प्रणालियों के लिए संघ के लक्ष्य के साथ आया है। अंग्रेजी से भारतीय भाषा अनुवाद संघ (EILMT) इस लक्ष्य के एक भाग के रूप में गठित हुआ है।

अनुवादक्ष एक नवोन्नत प्रौद्योगिकी है जो अंग्रेजी से आठ अन्य भारतीय भाषाओं में पाठ का अनुवाद करती है।

1. हिंदी	2. उर्दू	3. उड़िया
4. बंगला	5. मराठी	6. तमिल
7. बोडो	8. गुजराती	

यह संघ संस्थानों का एक सहयोगात्मक प्रयास है जो चार मशीनी अनुवाद प्रौद्योगिकी के एकीकरण को आगे लाया है:

- Tree-Adjoining-Grammar (टैग) आधारित मशीन अनुवाद
- सांख्यिकीय आधारित मशीन अनुवाद (SMT)
- नियमों का विश्लेषण एवं उत्पत्ति (AnalGen) आधारित मशीन अनुवाद
- उदाहरण आधारित मशीन अनुवाद (EBMT)

तकनीकी मॉड्यूल जैसे नामांकित इकाई पहचानकर्ता [NER], शब्द अर्थ बहुविकल्पी [WSD], रूप संश्लेषक, मिलान एवं श्रेणीबद्ध और मूल्यांकन मॉड्यूल अलग–अलग संघ संस्थानों द्वारा विकसित किए गए हैं।

अनुवादक्ष एक संघ आधारित परियोजना होने के कारण एक मिश्रित दृष्टिकोण लिए हुए, प्लेटफार्म और प्रौद्योगिकी स्वतंत्र मॉड्यूलों के साथ काम करने के लिए डिज़ाइन किया है। इस प्रणाली को बहुभाषी समुदाय को सुविधाजनक बनाने के लिए विकसित किया गया है।

वाक् से वाक् मशीन अनुवाद प्रणाली

इस मूलभूत अनुदान परियोजना का उद्देश्य डिजाइन, विकास, एकीकरण, परिनियोजन, और हिन्दी से अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं के लिए एक वाक् से वाक् मशीन अनुवाद प्रणाली का वितरण करना है।

वाक् से वाक् अनुवाद के लिए उपर्युक्त भाषा युग्म स्थान–निर्धारण पर सहयोगी विकास और पुणे, कोलकाता, मोहाली और तिरुवनंतपुरम में सी–डैक केन्द्रों की तकनीकी जानकारी है।

इसमें तीन प्रौद्योगिकी शामिल हैं–पाठ से पाठ अनुवाद, पाठ से वाक् अनुवाद और वाक् पहचान

लीला

कृत्रिम बुद्धि प्रौद्योगिकी पर आधारित लीला पैकेज भाषा शिक्षण के क्षेत्र में एक मील का पत्थर है। लीला (LILA-लर्न इंडियन लैंग्वेजस थ्रू आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेन्स) सॉफ्टवेयर के निर्माण में मल्टीमीडिया प्रौद्योगिकी और भाषा–शिक्षण के क्षेत्रों में विकसित अद्यतन तकनीकों का उपयोग किया गया है। लीला के ज़रिए आप हिंदी प्रबोध पाठ्यक्रम असमिया, बोडो, बांग्ला, अंग्रेज़ी, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, तमिल तथा तेलुगू के माध्यम से वल्ड वाईड वैब पर सीख सकते हैं। ये पाठ्यक्रम गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा पहले से चलाए जा रहे हिंदी प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ पाठक्रमों की पाठ्यचर्या पर आधारित हैं।

ई–लर्निंग– ई–लर्निंग शिक्षा के किसी भी प्रकार को संदर्भित करता है, जो तकनीकी साधनों के माध्यम से कार्य करता है। इसके दो घटक हैं–विषय–सूची और प्रौद्योगिकी।

ई–लर्निंग के क्षेत्र

(क) ऑनलाइन शिक्षण पैकेज

लीला हिंदी प्रबोध

लीला हिंदी प्रबोध पैकेज का उद्देश्य प्राथमिक स्तर की हिंदी सिखाना तथा प्रयोगकर्ता को अपने दैनंदिन जीवन में राजभाषा हिंदी का प्रयोग करने हेतु योग्य बनाना है । इस पैकेज में वर्णमाला (1–25 यूनिट), शब्दावली, पाठ (26–51 यूनिट) तथा शब्दकोश हैं। वर्णमाला मापांक प्रयोगकर्ता को उच्चारण सहित वर्ण लेखन सीखने में मदद करता है। शब्दावली मापांक आपको चित्रों, खेलों तथा अभ्यास के माध्यम से शब्दावली का ज्ञान करवाता है। पाठ के विभिन्न भाग–जैसे उद्देश्य, वाक्य संरचना, व्याकरण, संवादात्मक अभ्यास और विवरणात्मक (श्रव्य–दृश्य सहित) भाषा सीखने की विधि को और अधिक व्यवस्थित एवं रोचक बना देते हैं। ऑनलाइन परीक्षा देकर प्रयोगकर्ता अपनी प्रगति का अंदाज़ा लगा सकता है। द्विभाषी शब्दकोश प्रयोगकर्ता को प्रत्येक शब्द का अर्थ, उसकी व्याकरणिक श्रेणी तथा उच्चारण जानने में मदद करता है।

लीला हिंदी प्रवीण एवं प्राज्ञ

लीला हिंदी प्रवीण मध्यम स्तर का पूर्णकालिक हिंदी पाठ्यक्रम है, जिसे सरकारी तथा उपक्रमों के कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से प्रारूपित किया गया है। यह लीला हिंदी प्रबोध से अगले स्तर की हिंदी सीखने में मददगार है। प्रवीण पैकेज में पाठ (31 यूनिट) तथा शब्दकोश हैं।

मोबाइल फोन पर लीला हिंदी प्रबोध

अब आप लीला हिंदी प्रबोध पाठयक्रम को मल्टीमीडिया मेमोरी चिप (एम एम सी) के माध्यम से मोबाइल फोन पर सीख सकते हैं।

(ख) अनुरूपक

(ग) एम–लर्निंग

(घ) टी–लर्निंग

(ड़) वास्तविक कक्षा

(च) सी बी टी

ई–लर्निंग के अंतर्गत निम्नलिखित परियोजनाएँ हैं:

(i) गणित मित्र: गणित तैयारी संदर्शिका कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं के छात्रों के लिए वेब और मोबाइल (WAP और MMC) पर ऑनलाइन ई–लर्निंग अनुप्रयोग है। अधिक जानकारी के लिए www.ganitmitra.in पर जा सकते हैं।

(ii) ई–विज्ञान शाला: ई–विज्ञान शाला कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं के छात्रों और शिक्षकों के लिए जीव–विज्ञान के प्रयोगों के लिए एक वास्तविक प्रयोगशाला है। यह एक ऑनलाइन सॉफ्टवेयर है जिसमें वैज्ञानिक प्रयोगों के चित्रण के लिए विभिन्न वीडियो, इंटरएक्टिव एनिमेशन और ऑडियो वर्णन है जोकि कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं में सिखाए जाते हैं। अधिक जानकारी के लिए www.e-vigyanshala.in पर जा सकते हैं।

(iii) बाल शिक्षा: बाल शिक्षा (मल्टीमीडिया आधारित पूर्व प्राथमिक शिक्षक संसाधन किट) 1.6 से 5. 6 साल के आयु समूह में बच्चों के लिए एक व्यापक ई–लर्निंग पैकेज है जो डीवीडी, वेब एवं मोबाइल (MMC & WAP) जैसे विभिन्न प्लेटफॉर्म के माध्यम से बच्चे के अनुभव को समृद्ध करेगा और अंग्रेजी और हिंदी भाषाओं में उपलब्ध होगा। अधिक जानकारी के लिए www.balshiksha.in पर जा सकते हैं।

(iv) लीला–राजभाषा: लीला–राजभाषा एक मल्टी मीडिया आधारित हिंदी सीखने के लिए बुद्धिमान स्वं शिक्षक पैकेज है। सीखने के माध्यम–अंग्रेजी, असमिया, बांग्ला, बोडो, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, तमिल और तेलुगू भाषाएँ हैं।

(v) हिंदी प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ के लिए ऑनलाइन परीक्षा प्रणाली: केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान [CHTI], राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के लिए वेब आधारित पूरी तरह से स्वचालित परीक्षा प्रणाली विकसित की गई है।

(vi) राजभाषा के लिए भाषा प्रयोगशालाएँ: भाषा प्रयोगशाला सीखने के शिक्षक और छात्रों के बीच इंटरएक्टिव माहौल प्रदान करती है। करीबी वातावरण में छात्रों को प्रशिक्षित करने के लिए बनाया गया है लेकिन सक्रिय भागीदारी के साथ अपनी गति से।

(vii) ई–महा शब्दकोश: राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार ने सी–डैक, पुणे के तकनीकी सहयोग से ई–महा शब्दकोश का निर्माण किया है। ई–महा शब्दकोश एक द्विभाषी–द्विआयामी हिंदी–अंग्रेजी उच्चारण शब्दकोश है। यह इंटरनेट पर उपलब्ध है और द्विआयामी खोज की सुविधा प्रदान करता है। इस शब्दकोश में दोनों भाषाओं हिंदी और अंग्रेजी में खोजे गए शब्दों का प्रयोग इनके उच्चारण सहित दिया गया है। इस शब्दकोश में शब्दों के विशिष्ट क्षेत्रों का प्रयोग भी दिया गया है। इसका उद्देश्य शब्द का पूर्ण, सटीक, संक्षिप्त अर्थ और परिभाषा उपलब्ध कराना है। यह शब्दकोश बड़ी संख्या में जनसामान्य के लिए उपयुक्त है। आप इस ई–महाशब्दकोश को इस वेबसाईट पर एक्सेस कर सकते हैं:

http://www.e-mahashabdkosh.cdac.in/AboutUs.asp

(viii) इंटरनेट आधारित प्रवेशिका–हिंदी सर्टिफिकेट कोर्स: हिंदी–प्रवेशिका में सर्टिफिकेट कोर्स केंद्रीय हिंदी निदेशालय [CHD] द्वारा चलाए गए हिंदी प्रमाण–पत्र पाठ्यक्रम के लिए एक वेब आधारित ट्यूशन पैकेज है। पत्राचार पाठ्यक्रम के विभिन्न किट और पुस्तकें आकर्षक मल्टीमीडिया आधारित सामग्री में ऑडियो, वीडियो, चित्र, इंटरऐक्टिव GUI, आदि के समर्थन के साथ बदल रहे हैं।

वाक् प्रौद्योगिकी

मानव द्वारा सूचना का आदान–प्रदान करने या अपनी बात को व्यक्त करने के माध्यम को वाक् कहते हैं। वाक् प्रौद्योगिकी बोली जाने वाली भाषा के उत्पादन और मानव की आवाज के उत्तर के लिए डिजाइन की गई प्रौद्योगिकियों से संबंधित है। दो प्रमुख अंतर्निहित प्रौद्योगिकियाँ हैं:

(i) वाक् पहचान: यह एक ध्वानिक भाषण पाठ करने के लिए संकेत मानचित्रण की प्रक्रिया है। इसके अंतर्गत वाक् के आधार पर इंटरनेट ब्राउजिंग–आवाज प्रश्न पहचान एवं क्षेत्र विशिष्ट खोज परियोजनाएँ है।

(ii) वाक् संश्लेषण: वेब से जानकारी की पुनर्प्राप्ति को वाक् संश्लेषण (पाठ से वाक्) प्रौद्योगिकी का उपयोग करके पढ़ा जाएगा। इसके अंतर्गत श्रुतिलेखन–राजभाषा, वाचांतर–राजभाषा, प्रवाचक–राजभाषा और श्रुति दृष्टि जैसी महत्त्वपूर्ण परियोजनाएँ हैं।

संधान

इलैक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा शैक्षिक, अनुसंधान संस्थानों और उद्योग भागीदारों के एक संघ द्वारा निष्पादित किया गया है। परियोजना का अंतिम रक्षणीय पोर्टल है। शामिल भाषाओं में बांग्ला, हिन्दी, मराठी, पंजाबी, तमिल, तेलुगु, असमिया, उड़िया और गुजराती हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई परियोजनाएँ हैं जिस पर सी–डैक, पुणे का एप्लाइड ए आई ग्रुप कार्य कर रहा है जैसे–अन्वेषक, सारांशक, वस्तुरूप विज्ञान मॉडल का उपयोग करके शब्दार्थगत खोज, नामांकित इकाई पहचान, डिजिटल ऑडियो रिकॉर्डिंग प्रणाली आदि।

सच तो यह है कि सूचना को जन–जन तक पहुँचाने के लिए भारतीय भाषाएँ सशक्त माध्यम हैं और जिसके प्रचार–प्रसार में हिंदी के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाएँ सूचना प्रौद्योगिकी के विकास में अपनी अहम् भूमिका निभाती आ रही हैं और आगे भी निभाती रहेंगी। आने वाली शताब्दी अंतर्राष्ट्रीय संस्कृति की शताब्दी होगी और सम्प्रेषण के नए–नए माध्यमों व आविष्कारों से वैश्वीकरण के नित्य नए क्षितिज उद्घाटित होंगे। इस सारी प्रक्रिया में भारतीय भाषाओं की महती भूमिका होगी। इससे वसुधैव कुटुम्बकम की उपनिषदीय अवधारणा साकार होगी।

संदर्भ

1. सी–डैक विवरणिका
2. दूरसंचार, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, ओझा, डी डी/कौशिक ओम प्रकाश, ज्ञान गंगा 2001
3. सूचना प्रौद्योगिकी, शर्मा प्रहलाद, पंचशील प्रकाशन 2005
4. सूचना प्रौद्योगिकी कम्प्यूटर और अनुसंधान, हरिमोहन/आशा मोहन, तक्षशिला प्रकाशन 2011
5. सूचना प्रौद्योगिकी के नवीन आयाम, शंकर सिंह, साइबर टेक पब्लिकेशन 2002
6. सूचना एवं दूरसंचार प्रौद्योगिकी, गर्ग सी.एल., आकाश गंगा प्रकाशन 2011
7. शिक्षा तथा सूचना तकनीकी, शर्मा बी.डी., ओमेगा पब्लिकेशन्स 2009
8. भारत में सूचना प्रौद्योगिकी का विकास, चौधरी पंकज, संस्कार साहित्य 2008
9. सूचना प्रौद्योगिकी और इंटरनेट, शंकर सिंह, पूर्वांचल प्रकाशन 2007
10. सूचना प्रौद्योगिकी के दौर में कॅरियर, सिंघल विनीता, नेशनल बुक ट्रस्ट 2008

महिला सशक्तिकरण में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका एक समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण

शीतल शर्मा
पद्धति अध्ययन तथा विश्लेषण संस्थान, दिल्ली

सारांश

विज्ञान वस्तुतः ज्ञान की शाखा है जो प्रौद्योगिकी के निर्माण का आवश्यक आधार है। मानव की इस रचनात्मकता का उपयोगितावादी उद्देश्य व्यक्ति, सामाज तथा राष्ट्र के विकास को गति प्रदान करने से प्रेरित हैं। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर स्तर तक गुणात्मक उन्नति यथा बर्वर समाज से ज्ञान समाज,घुम्मकड़ समाज से स्थपित समाज, स्थिर समाज से सूचना प्रौद्योगिकी समाज तथा पार्थिव पहुँच से ब्रह्माण्ड तक ही पहुँच, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के परिणाम स्वरूप ही दृष्टव्य हैं। भौतिक निर्माण की मूलभूत लक्ष्य के साथ–साथ स्वतः सहउत्पाद के रूप में अभौतिक उपलब्धियां भी परिलक्षित होने लगती हैं और यही कारण है कि व्यक्ति के मूल्य व्यवस्था, चिंतन प्रक्रिया, जीवन पद्धति इत्यादि जैसी अभौतिक उपलब्धियां एक सहउत्पाद के रूप समाज को गहराई से प्रभावित करती हैं। इन अभौतिक उपलब्धियों को गुणात्मक स्तर देने में एक उत्प्रेरक के रूप से शिक्षा संदर्भ एक महत्वपूर्ण कारक है जो समाज के सभी वर्गों के व्यक्तित्व व बौद्धिक विकास के लिये महत्वपूर्ण घटक है। प्रस्तुत लेख में वनस्थली गांव, राजस्थान की शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं तथा कला संकाय एवं विज्ञान संकाय की छात्राओं पर शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन किया गया हैं। इस अध्ययन द्वारा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के युग में महिला सशक्तिकरण के लिये शिक्षा की भुमिका के विश्लेषण हेतु सशक्तिकरण के सूचकांकों यथा निर्णयन क्षमता, अधिकारों के ज्ञान व उनके उपयोग के प्रति जागरुकता का अध्ययन किया गया है। अध्ययन में प्राथमिक आकड़े अनुसूची प्रविधि द्वरा एकत्रित किये गये हैं जिन्हें आवश्यकता अनुसार सारणीबद्ध किया गया हैं।

प्रस्तावना

समाज और राष्ट्र के स्वस्थ एवं संतुलित विकास में महिलाओं की भूमिका एवं उसकी उपयोगिता को कतई नकारा नहीं जा सकता है। जनसंख्या की दृष्टि से भारत में महिलाऐं लगभग 50 प्रतिशत (43.50 करोड़, जनगणना 2001) जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती हैं, इस दृष्टि से कोई भी समाज, महिलाओं में विद्यमान संभावनाओं की अनदेखी कर अपने विकास के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता हैं। स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि जिस प्रकार कोई पक्षी एक पंख के बिना उड़ नहीं सकता उसी प्रकार महिलाओं की स्थिति में सुधार लाए बिना किसी भी समाज का कल्याण असंभव हैं।

विगत वर्षो में विश्व भर की सरकारें महिला सशक्तिकरण के अभियान में पूरे जोर शोर से जुटी दिखती हैं। इससे संबधित गतिविधियां विगत एक दशक से अपने चरम स्तर पर है। विभिन्न संगठनों व मंचो के माध्यम से सरकार 'शक्तिहीन महिलाओं' को सबल बनाने की प्रक्रिया में अपनी सम्पूर्ण शक्ति का प्रयोग कर रही हैं। इसके बावजूद इन्हें अनेक स्तर पर हिंसा, बलात्कार, यौन उत्पीड़न, लैंगिक हिंसा, लैंगिक आक्रमण, दुर्व्यवहार, कुपोषण आदि का शिकार होना पड़ता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आत्म–विश्वास व शासकीय संस्थाओं में सहभागिता आम महिलाओं की पहुंच से अभी भी बहुत दूर हैं।

इन तथ्यों के आलेक में महिलाओं का सशक्तिकरण नीति निर्धारकों के साथ–साथ समूचे समाज के लिए महत्वपूर्ण मसला बन गया है।

यद्यपि वैज्ञानिक युग में महिलाएं पारम्परिक दासता को तोड़कर वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास में अपनी सार्थकता स्थापित करने का प्रयास कर रही हैं एवं अस्मिता के प्रति धीरे–धीरे सतर्क होती जा रही हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि समाज वैज्ञानिक क्रांति के दौर से गुजर रहा है और यह क्रांति निर्दिष्ट महिला सशक्तिकरण के एक साधन के रूप में शिक्षा के प्रयोग के माध्यम से ही लाई जा सकती है। वस्तुतः महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र तथा व्यक्तिगत रूप से आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जाता है जिससे वो किसी भी स्थिति का सामना कर सकें। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण एक समृद्ध प्रक्रिया है जो विकास के मार्ग में पीछे छूट गई, महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक रूप से मजबूत व शक्ति समय करने का सतत् प्रयत्न करती हैं।

ICPD प्रोग्राम ऑफ एक्शन में भी शिक्षा को महिला सशक्तिकरण का प्रमुख माध्यम माना गया। भारत में महिला साक्षरता दर (सारणी संख्या 1–4) को देखे तो स्पष्ट होता है कि पिछले पांच दशकों में साक्षरता दर में लगभग 46 प्रतिशत वृद्धि हुई है जिसे सारणी संख्या 1.1 में दर्शाया गया है।

सारणी 1.1

भारत में महिला साक्षरता दर (विभिन्न वर्षों में)

वर्ष	Literacy Rate
1951	8.66
1961	15.35
1971	21.97
1981	29.76
1991	39.29
2001	54.16

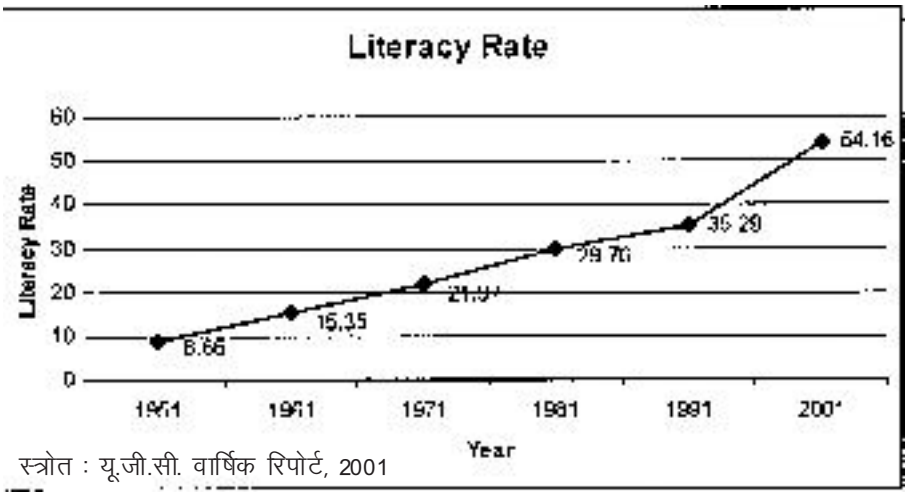

स्त्रोत : यू.जी.सी. वार्षिक रिपोर्ट, 2001

भारत में (1991–2001) में महिला साक्षरता दर में 15 प्रतिशत वृद्धि होना उत्साहवर्द्धन माना जा सकता है। भारत में महिला साक्षरता दर 1951 में मात्र 8.86 प्रतिशत थी जो बढ़कर 1991 में 35.29 प्रतिशत हो गयी। 2001 में यह 54.16 दर्ज की गयी है। उपर्युक्त सारिणी के माध्यम से स्पष्ट होता है कि जहां साक्षरता दर बढ़ रही है वहीं शिक्षा का स्तर भी बढ़ रहा हैं। संभवतः जो महिला सशक्तिकरण की पृष्ठभूमि तैयार कर रहा हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में महिला सशक्तिकरण में महिला शिक्षा की भूमिका का मूल्यांकन करते हुए, शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं की सामाजिक–पारिवारिक पृष्ठभूमि के साथ साथ उनके निर्णयन क्षमता, अधिकारों के प्रति जागरूकता, अधिकारों के उपयोग सम्बन्धी दृष्टि का अध्ययन किया गया हैं।

समस्या कथन

समाज के स्त्री विषयक सोच एवं समाज में स्त्री की स्थिति, ये दो परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले पक्ष हैं। जो मूलतः सशक्त है लेकिन जिसे अशक्त बना दिया गया, समाज के संतुलित, सम्यक् और स्वस्थ के लिए उसे पुनः सशक्त बनाना अत्यन्त आवश्यक है इसलिए स्त्री–सशक्तिकरण को एक सामाजिक अभियान के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता है। स्त्री–सशक्तिकरण विषयक विमर्श इस आकांक्षा से संचालित है कि समाज के सभी क्षेत्रों में स्त्री के अस्तित्व को मनुष्य के रूप में वास्तविक और व्यवहारिक स्वीकृति प्राप्त हो, वह पुरूष की अनुचरी नहीं सहचरी बने। शिक्षा महिला–सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है, यह आर्थिक शक्ति एवं स्वतंत्रता, आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का एक महत्त्वपूर्ण स्त्रोत है। शिक्षा द्वारा यह आशा की जाती है कि यह महिलाओं की कुल–सहभागिता दर पर सकारात्मक प्रभाव डालती है यदि महिलाऐं शिक्षा का उच्च स्तर प्राप्त करती हैं तो वह काम बाजार में अधिक उत्पादकीय भूमिका निभा सकती हैं। महिलाओं के विशेष संदर्भ में सशक्तिकरण और शिक्षा का प्रत्यक्ष संबंध है। हालांकि सशक्तिकरण एवं शिक्षा के विभिन्न स्तरों के मध्य रेखीय संबंध है, यह आवश्यक नहीं है।

प्रश्न यह उठता है कि क्या शिक्षा महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है या नहीं, अतः प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं में शिक्षा के फलस्वरूप उत्पन्न सशक्ता के अंतर के स्तर को ज्ञात करने के लिए निर्णयन क्षमता, अधिकारों के प्रति जागरुकता इत्यादि संकेत परिलक्षित होते हैं।

निर्णयन क्षमता

बेहतर निर्णयन की सम्भवना

महिलाऐं तभी सशक्त मानी जा सकती हैं जब वे सभी क्षेत्रों में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता रखती हैं। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.2 में महिलाओं के बेहतर निर्णय लेने की क्षमता संबंधी तथ्य प्रदर्शित किए गए हैं।

सारणी 1.2

बेहतर निर्णय लिए जा सकने की क्षमता के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्रम	बेहतर निर्णय की सम्भावना	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	हाँ	32 (80%)	4 (10%)	36 (45%)
2	नहीं	8 (20%)	36 (90%)	44 (55%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उक्त वर्णित तथ्यों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि शिक्षित उत्तरदात्रियां अशिक्षित उत्तरदात्रियों की तुलना में बेहतर व उच्च निर्णय लेने की क्षमता रखती हैं। अपने द्वारा लिए गए निर्णयों पर अधिक विश्वास है। जो उनके आत्मविश्वास को प्रदर्शित करता है।

शिक्षा द्वारा परिवर्तन

शिक्षा द्वारा महिलाओं के विचारों में ही नहीं बल्कि जीवन स्तर में भी परिवर्तन आता हैं। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.3 में शिक्षा से महिलाओं के जीवन स्तर में परिवर्तन के प्रति उत्तरदात्रियों के दृष्टिकोण संबंधी तथ्यों को प्रदर्शित किया गया हैं।

सारणी 1.3

शिक्षा के महिलाओं के जीवन स्तर में परिवर्तन के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्र.सं.	जीवन स्तर में परिवर्तन	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	हां	34 (80%)	38 (95%)	72 (90%)
2.	नहीं	6 (20%)	2 (5%)	8 (10%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उपर्युक्त वर्णित आकड़ों के आधार पर स्पष्ट होता है कि अशिक्षित व शिक्षित दोनों ही वर्ग की महिलाऐं शिक्षा को जीवन स्तर में परितर्वन लाने का महत्वपूर्ण कारक मानती हैं। उक्त वर्णित तथ्य शिक्षा की महत्ता को दर्शाते हैं।

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका

शिक्षा के प्रभाव से लड़कियों में अपनी आवश्यकता के प्रति संवेदनशीलता बढ़ी हैं। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.4 में यह दर्शाया गया है कि उत्तरदात्रियों के अनुसार शिक्षा महिला सशक्तिकरण में किस प्रकार सकारात्मक भूमिका निभती हैं।

सारणी 1.4

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की सकारात्मक भूमिका संबंधी विचारों के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्र.सं.	महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की सकारात्मक भूमिका	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	[illegible]	4 (10%)	8 (20%)	12 (15%)
2.	आत्मनिर्भरता	6 (15%)	4 (10%)	10 (12.5%)
3.	निर्णयन क्षमता	12 (30%)	18 (45%)	30 (37.5%)
4	समाज में सम्मान	18 (45%)	10 (25%)	28 (35%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उपर्युक्त वर्णित आकड़ों के आधार पर स्पष्ट होता है कि अशिक्षित महिलाऐं शिक्षा को समाज में सम्मान दिलाने में महत्वपूर्ण मानती हैं वहीं दूसरी और शिक्षित वर्ग की अधिकांश महिलाऐं निर्णयन क्षमता बढ़ाने में ज्यादा उपयोगी मनती हैं। उक्त वर्णित तथ्यों के अनुसार शिक्षा महिलाओं में

जागरूकता, आत्मनिर्भरता, निर्णयन क्षमता तथा समाज मे सम्मानजनक स्थिति प्रदान कर सशक्त बनाती हैं। अतः स्पष्ट है कि महिला सशक्तिकरण में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

जीवन–वृत्ति निर्णयन क्षमता में वृद्धि करने में शिक्षा की भूमिका

उच्च शिक्षा व्यक्ति का न सिर्फ बौद्धिक विकास करती है बल्कि व्यक्ति को अपने जीवन से संबंधित सभी पक्षों के निर्णय लेने के लिए सक्षम बनाती हैं। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.5 में उच्च शिक्षा जीवन–वृत्ति निर्णयन क्षमता में वृद्धि करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है या नहीं के संबंध में उत्तरदात्रियों के विचारों का अध्ययन किया गया हैं।

सारणी 1.5

जीवन–वृत्ति सम्बन्धी निर्णयन क्षमता में वृद्धि करने में शिक्षा की भूमिका के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्र.सं.	जीवन–वृत्ति संबंधी निर्णय में शिक्षा की भूमिका	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	हाँ	32 (80%)	36 (90%)	68 (85%)
2.	नहीं	8 (20%)	4 (10%)	12 (15%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उपर्युक्त वर्णित आकड़ो के आधार यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश उत्तरदात्रियों जीवन–वृत्ति निर्णयन क्षमता में वृद्धि करने में शिक्षा को महत्वपूर्ण मानती है जो शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को दर्शाता हैं।

पारिवारिक निर्णयन क्षमता बढ़ाने में शिक्षा की भूमिका

पुरूष प्रधान भारतीय समाज में महिलाओं को पारिवारिक निर्णयन की स्वतंत्रता नहीं होती परन्तु शिक्षा द्वारा इस प्रवृत्ति में परिवर्तन आया है। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.6 में यह जानने का प्रयास किया गया है कि पारिवारिक निर्णयन क्षमता बढ़ाने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है या नहीं

सारणी 1.6

उत्तरदात्रियों के दृष्टिकोण के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्र.सं.	पारिवारिक निर्णयन क्षमता बढ़ाने में शिक्षा की भूमिका	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1	हाँ	32 (80%)	40 (100%)	72 (90%)
2	नहीं	8 (20%)	0 (0%)	8 (10%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उपर्युक्त वर्णित आकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि लगभग सभी उत्तरदात्रियों का मानना है कि शिक्षा पारिवारिक निर्णयन क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परंतु अध्ययन में निर्णय लेने सम्बंधि प्रश्नों से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि शिक्षित महिलाओं की पारिवारिक निर्णयन में भागिदारी अधिक होती है।

जो इस तथ्य की पुष्टि करते कि शिक्षा महिलाओं की निर्णयन क्षमता में वृद्धि करने में सार्थक भूमिका निभाती है।

छात्राओं में अधिकारों के प्रति जागरूकता व उपयोग

घरेलू हिंसा कानून–घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 नामक अधिनियम को 26 अक्टूबर, 2006 से लागू किया गया। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.7 में उत्तरदात्रियों के घरेलू हिंसा कानून की जानकारी व विचारों का अध्ययन किया गया हैं।

सारणी संख्या 1.7

घरेलू हिंसा कानून सम्बन्धी जानकारी के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्र.सं.	घरेलू हिंसा कानून की जानकारी	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	पूर्ण जानकारी	4 (10%)	21 (60%)	26 (35%)
2.	आंशिक जानकारी	8 (20%)	12 (30%)	20 (25%)
3.	कोई जानकारी नहीं	28 (70%)	4 (10%)	32 (40%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उक्त तथ्यों को मूल्यांकित करने से ज्ञात होता है कि घरेलू हिंसा कानून के सम्बन्ध में अधिकांश शिक्षित उत्तरदात्रियां पूर्ण जानकारी रखती हैं। तथ्यों के विश्लेषण स्पष्ट होता है की शिक्षा में महिलाओं में निर्णयन क्षमता का तो विकास हुआ है साथ ही सरकार द्वारा प्राप्त कानून सम्बन्धी सैद्धांतिक जानकारी अधिक रखती हैं।

पिता की सम्पत्ति में स्वभाग लेने सम्बन्धी विचार

सरकार द्वारा पिता की सम्पत्ति में पुत्रियों को अधिकार प्रदान करने के बावजूद महिलाऐं पिता की सम्पत्ति में अधिकार लेना नहीं चाहती। प्रस्तुत सारणी संख्या 1.8 में यह दर्शाया गया है कि एम ए व एम सी ए की चयनित उत्तरदात्रियों पिता की सम्पत्ति में हिस्सा लेने का प्रयास करेंगी अथवा नहीं।

सारणी संख्या 1.8

पिता की सम्पत्ति में भाग लेने के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्रम.	पिता की सम्पत्ति में हिस्सा	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		एम. ए	एम.सी.ए	
1.	हाँ	4 (10%)	24 (60%)	28 (35%)
2.	नहीं	36 (90%)	16 (40%)	52 (65%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उक्त तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि शिक्षित उत्तरदात्रियां इस पक्ष में तो हैं कि पिता की सम्पत्ति का भाई–बहनों में बराबर वितरण होना चाहिए परन्तु पिता की सम्पत्ति में हिस्सा लेने के सम्बंध में कम्प्यूटर सांइस में अध्ययनरत छात्राओं का प्रतिशत आधिक है, जिससे स्पष्ट होता है कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिक शिक्षा द्वारा महिलाओं में अधिकारों का ज्ञान तथा प्रयोग की क्षमता का विकास हुआ है। परन्तु उसका प्रयोग किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में ही करना चाहती हैं।

स्त्रियों द्वारा अर्जित राशि का उपयोग

वर्तमान समय में महिलाएं न सिर्फ पुरूषों के समान शिक्षा प्राप्त कर रही हैं बल्कि पुरूषों के समान आय भी अर्जित कर रही हैं। प्रस्तुत सारणों 1.9 में स्त्री को अपने द्वारा अर्जित राशि का उपयोग करने के सम्बन्ध में उत्तरदात्रियों के विचारों को दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 1.9

स्त्रियों द्वारा अर्जित आय के उपयोग के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण।

क्रम	स्त्रियों द्वारा अर्जित आय के उपयोग	उत्तरदात्रियों की संख्या		कुल योग
		अशिक्षित	शिक्षित	
1.	स्वयं पूर्ण स्वतंत्रता से खर्च करना चाहिए	4 (10%)	24 (60%)	30 (35%)
2.	पति की इच्छा से करना चाहिए	16 (40%)	4 (10%)	20 (25%)
3.	संयुक्त परिवार की इच्छा से करना चाहिए	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)
4.	पति-पत्नि दोनों को मिलकर इस संबंध में निर्णय करना चाहिए	20 (50%)	12 (40%)	32 (40%)
	कुल योग	40 (100%)	40 (100%)	80 (100%)

उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि शिक्षित उत्तरदात्रियां अशिक्षित उत्तरदात्रियों की तुलना में अधिक स्वतंत्र विचारों वाली हैं। शिक्षित उत्तरदात्रियों में भी कंम्प्यूटर सांइस में अध्ययनरत उत्तरदात्रियां अधिक सशक्त हैं।

निष्कर्ष

इस वैज्ञानिक युग में समाज में जो परिवर्तन हुए हैं उनका महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर व्यापक प्रभाव पड़ा हैं। जिसमें शिक्षा का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। शिक्षा के प्रसार से महिलाओं में जिस चेतना का विकास हुआ उसका प्रत्यक्ष प्रभाव उनमें विकसित होने वाली निर्णयन क्षमता व अधिकारों के प्रति चेतना के रूप में देख जा सकता है। इसके द्वारा महिलाएं हर क्षेत्र में आगे आयी हैं। अध्ययन में प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि जिन महिलाओं ने विज्ञान तथा प्रौद्धौगिकी में उच्च शिक्षा प्राप्त की उनमें कला संकाय की तुलना में आत्मनिर्भर होने की प्रवृत्ति अधिक विकसित हुई। परन्तु महिलाओं के इस विकास पर उनकी पैतृक पृष्ठभूमि का प्रभाव भी महत्वपूर्ण रूप से पड़ता है। परिवार में जिस प्रकार का वातावरण एवं जिस प्रकार के शिक्षा के अवसर दिये जाते हैं उसी के अनुसार उनका विकास होता है तथा वे सशक्त होती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन द्वारा यह भी ज्ञात होता है कि शिक्षित महिलाऐं आर्थिक रूप से अधिक आत्मनिर्भर होती हैं जिसके परिणाम स्वरूप उनमें आत्मविश्वास की वृद्धि होती है। जिसके फलस्वरूप अशिक्षित महिलाओं के तुलना में शिक्षित महिलाओं में निर्णयन क्षमता में वृद्धि होती है। उक्त अध्ययन से प्राप्त तथ्य यह भी स्पष्ट करते हैं कि लगभग समस्त उत्तरदात्रियां यह मानती हैं कि शिक्षा द्वारा उनमें न केवल अधिकारों के प्रति जागरूकता आई है बल्कि उनके जीवन स्तर में भी परिवर्तन आया है। जो महिलाओं के निर्णयन क्षमता में वृद्धि एवं उन्हें सशक्त करने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। समस्त उत्तरदात्रियों के अनुसार शिक्षा महिलाओं में जागरूकता आत्मविश्वास, चेतना, समाज में सम्मान लाकर महिला सशक्तिकरण में सकारात्मक भूमिका निभा रही हैं।

उपरोक्त अध्ययन मैं शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं के अध्ययन द्वारा प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि शिक्षित व अशिक्षित महिलाओं के निर्णयन क्षमता व अधिकारों के उपयोग में अन्तर है, निर्णयन क्षमता के व अधिकारों के ज्ञान संदर्भ में दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता है कि शिक्षित महिलाऐं अशिक्षित महिलाओं की तुलना में अपने निर्णय लेने में अधिक सक्षम हैं तथा अधिकारों का ज्ञान भी अधिक है। वहीं दूसरी और अधिकारों के उपयोग के संदर्भ में देखें तो शिक्षित महिलाओं में कंम्प्यूटर सांइस की उत्तरदात्रियों का प्रतिशत अधिक हैं।

इस प्रकार उक्त तथ्यों के सम्पूर्ण विश्लेषण से यह स्पष्ट होता हैं कि शिक्षा महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। परन्तु यह भी सत्य है कि शिक्षा का प्रसार अभी भी सम्पूर्ण रूप से नहीं हुआ है, साथ ही शिक्षा के सैद्धांतिक ज्ञान के साथ साथ व्यवहारिक ज्ञान पर भी बल दिया जाना चाहिए।

सन्दर्भ

1. कौशिक, आशा, "सशक्तिकरण विमर्श एवं यथार्थ", पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004.
2. गुप्त, डॉ. नत्थूलाल, "प्राचीन भारतीय शिक्षा और शिक्षाशास्त्री", राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005.
3. गुप्ता, कृष्णा, "उच्च शिक्षा की लाभार्थी के रूप में भारतीय महिला", नवजीवन पब्लिकेशन, राजस्थान, 2009.
4. रजा, यूनिस, "शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम", ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 1996.
5. लाल, रामचरण, "महिला सशक्तिकरण में शिक्षक की भूमिका", शिविरा पत्रिका, माध्यमिक शिक्षा निदेशालय राजस्थान, मार्च अंक 9, 2003.
6. वर्मा, सवलिया बिहार, एम एल सोनी एवं संजीव गुप्ता, "महिला जागृति और सक्तिकारण", आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर 2005.
7. शेण्डे, डॉ हरिदास, रामजी (सुदर्शन), "नारी सशक्तिकरण", ग्रन्थ विकास, जयपुर, 2005.
8. द्विवेदी, डॉ राकेश, "महिला सशक्तिकरण चुनौतियों एवं रणनीतियों", पूर्वाशा प्रकाशन, भोपाल, 2005.
9. सक्सेना, एन आर स्वरूप, "शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय सिद्धांत", आर लाल बुक डिपो, मेरठ, 2007.
10. सारस्वत, स्वप्निल, "महिला विकासः एक परिदृश्य", नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005.

आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका

पवन कुमार राघव, सिद्धार्थ पाण्डेय, नीरज सतीजा, योगेश कुमार वर्मा,
तथा गुरुदत्ता यू गंगेनाहल्ली
नाभिकीय औषधि तथा सम्बद्ध विज्ञान संस्थान, दिल्ली

विज्ञान ने हमारे जीवन को आसान, आरामदायक, स्वस्थ और सुखद बना दिया है। इस से परिवाहन और संचार तेज हो गए हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी से हमें खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के लिए मदद मिली है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी से हमें काफी हद तक बीमारियों को नियंत्रित करने में सफलता मिली हैं और उसमें तेजी लाना बहुत आवश्यक हो गया है। शरीर के रोगों के कारक न ही आज तक काबू में आयें हैं और न ही जड़ से मिटाए जा सके हैं। मगर अब इन सब का जवाब जैव प्रौद्योगिकी (बायो–टेक्नोलोजी), जैव सूचना विज्ञान (बायो–इन्फोर्मेटिक्स), आण्विक जीव विज्ञान (मोलिक्यूलर बायोलॉजी) और नैनो प्रौद्योगिकी (नैनो–टेक्नोलॉजी) तकनीक के रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं। क्लोनिंग और जीन–थेरपी के माध्यम से स्टेम सेल कोशिकाओं के डी एन ए में बदलाव करके विकसित जीव बना सकते हैं। शुरुआती प्रक्रिया में जैव सूचना विज्ञान की मदद से जीनों की जानकारी ली जाती हैं फिर आण्विक जीव विज्ञान और नैनो प्रौद्योगिकी की मदद से कोशिकाओं में यह कमाल कर पाना संभव हैं। इन तकनीकों के सूक्ष्मतर घटक और उपकरण ऐसी आशा बांधते हैं जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। मोलिक्यूलर डायनामिक्स सिमुलेशन किसी भी प्रोटीन या ड्रग का, कोशिका या उसके न्युकलियेस में घुसने का व्यवहार और सम्भावना बताता हैं। इसी तरह से सिस्टमस जीव विज्ञान (सिस्टमस बायोलॉजी) किसी भी ड्रग का पूरे शरीर पर प्रभाव बताता है। सिस्टम जीव विज्ञान, जैव चिकित्सा और जैविक वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए एक उभरता हुआ व्यावहारिक दृष्टिकोण है।

यहीं नहीं, नैनो रोबोट्स जैसी नवविकसित संरचनाएं अब रक्तवाहिकाओं में पहुँचकर सहज रुकावट को हटाएंगी। दवाओं के बड़े आकार के कारण उनकी घुलन क्षमता कम होती है और वह ट्यूमर में प्रवेश नहीं कर पातीं और इस तरह से दवा बेअसर हो जाती है। मगर अब अति सूक्ष्म नैनो कणों के सहारे इन दवाओं का निर्माण संभव होगा और इलाज भी। वही दूसरी तरफ, स्टेम कोशिकाओं से रक्त बनाने वाली कोशिकाएं तैयार करी जा रही हैं। इसी के साथ रक्त की कमी और खराबी से जुड़ी हर बीमारी जैसे थैलासीमिया, हीमोफिलिया, ल्यूकीमिया आदि पर काबू पा लेने का रास्ता खुल गया है। स्टेम कोशिकाओं के क्लोन से ऊतक (टिश्यू) बना लेना सहज है जिसे हृदय के वाल्व, आँखों की कोशिकाए, जली कटी त्वचा की मरम्मत और विकास के लिए प्रयोग में लाया जा रहा हैं।

इन सब बातों को ध्यान में रखकर हम ऐसी तकनीक पर काम कर रहे हैं जो केवल लक्षित यानि टार्गेट को ही निशाना बनायेंगी। इससे केवल बीमार कोशिकाओं का शरीर से सफाया होगा जोकि कैंसर (कर्क रोग) जैसी बीमारियों से निपटने में कारगर साबित होगी साथ ही प्रतिरक्षा प्रणाली भी दृढ़ता से विकसित की जा सकेगी। अभी हम पेप्टाइड डिलीवरी और छोटे रासायनिक अणुओं पर काम कर रहे

हैं जो सीधे रोगी कोशिका को निशाना बनाएंगी। इस के साथ हम स्टेम कोशिकाओं के कुछ ऐसे जीनों पर काम कर रहे हैं, जिससे कि डी एन ए से हटाए या बदलाव, आनुवंशिक अभियांत्रिकी के द्वारा, प्रसार (प्रोलिफ्ररेशेन) और विभाजन (डफरेनिन्एशन) को बढ़ा सकते हैं।

विज्ञान और प्रोद्योगिकी

विज्ञान और प्रौद्योगिकी एक ही सिक्के के दो पहलु हैं। विज्ञान से मस्तिष्क की खबर, लाइलाज बीमारियों का इलाज, रक्त की एक बूँद से व्यक्ति विशेष के रोगों का पता लगाना और दवा को बीमार कोशिका तक पहुंचाना अब सम्भव हो गया है। विश्वस्तर पर भारत सहित कई अन्य देशों में नई क्रांतिकारी विद्या पर प्रयोग किया जा रहा है। जीव विज्ञान, भौतिक, पदार्थ विज्ञान, रसायन विज्ञान, भू–गर्भ विज्ञान, कृषि, अन्तरिक्ष, चिकित्सा, उद्योग जैसे कितने ही क्षेत्रों में बायो–टेक्नोलोजी, बायो–इन्फोर्मेटिक्स, मोलिक्यूलर बायोलौजी और नैनो–टेक्नोलोजी (बी बी एम एन) के उपयोगो की बात की जा रही है। जहां एक ओर विश्वस्तर पर इन सभी प्रौद्योगिकी के विविध स्वरुप को लेकर शोध कार्य किये जा रहे हैं, वहीं भारत में भी इस दिशा में विभिन्न शाखाओं में परियोजनाएं करवट बदल रही हैं और ठोस कदम उठाये जा रहे हैं। जैव प्रोद्योगिकी पर शोधकार्य बहुत तेजी से चल रहा है जिसका प्रभाव प्रतिदिन बढ़ रही पत्रिकाओं की संख्या से पता लग रहा है। दिनोंदिन बढ़ती आबादी की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये जैव प्रौद्योगिकी सबसे कारगर साबित हुई है। भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा नैनो पदार्थ के विकास के लिये राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास प्रारंभ किये जा चुके हैं, जो न केवल इन नई शाखाओं को प्रभावी शुरुआत देने के लिए तैयार है, बल्कि सुखद भविष्य की बात भी करते हैं। यदि देखा जाए तो आज विज्ञान और प्रोद्योगिकी का चहुं और तीव्र विकास हो रहा है। नैनो विज्ञान जैसी नई शखाएं, नए सिद्धांत, विचार और अभिव्यक्ति संकल्पनाओं के साथ नित्य नए–नए आविष्कार और सेवाएं सामने आ रही हैं।

बी बी एम एन का योगदान

बी बी एम एन को शुरुआत से ही बहुआयामी तकनीक कहा गया है और भविष्य में दुनिया बदलने का आधार कहा गया है। इस में दो राय नहीं की बात सच है और बी बी एम एन ने हर क्षेत्र में नए रूप दिखाए और सफलता के द्वार खोले हैं। वे उपलब्धियाँ सामने आयीं जिन्हें सोच पाना भी सम्भव नहीं था। आज इसकी सहायता से समूची जीवित कोशिका अथवा उसके भाग का प्रयोगशाला में प्रयोग कर एक नया परिवर्धित अंश खोज पाना संभव हुआ है। प्रकृति जो काम लाखों वर्षो में कर पाती थी, जैव प्रौद्योगिकी आधारित आनुवंशिक अभियांत्रिकी यानि आनुवंशिक इंजीनियरिंग के चलते वही काम पलक झपकते ही सम्भव हो रहा है। आनुवंशिक आशोधित (जी एम) भोजन या जीन संवर्धित खाद पदार्थ और फसलें जैव प्रौद्योगिकी की ही देन हैं। अब परायी जीन डालकर प्रोजनी तैयार कर लेना जैव प्रौद्योगिकी का ही कमाल है। यही प्रभावशाली तकनीक न केवल पौधों में बल्कि जंतुओं में भी उपलब्धियाँ हासिल कर रही हैं। यही नहीं मानव रोगों के उपचार के लिए कितनी ही महत्त्वपूर्ण और कारगर दवाएं इसी तकनीक द्वारा तैयार की जा रही हैं। आधुनिक युग में पशुधन संवर्धन के लिए यह प्रौद्योगिकी महत्त्वपूर्ण साबित हुई है। क्लोनिंग द्वारा आज मानव प्रतिरूप तैयार कर लेना संभव हो चला है। पशुधान में तो यह सफलता हाथ भी लग चुकी है। वहीं दूसरी ओर, परमाणु बल सूक्ष्मदर्शी (एटॉमिक फोर्स माइक्रोस्कोप), नैनो विज्ञान की ही देन है जिसका प्रयोग उल्लेखनीय है। नैनो विज्ञान में सूक्ष्मतर सूक्ष्म कोशिकाएं मानव देह के ऊतक बनाती है। यही ऊतक आपस में मिलकर अंग बनाते है और अंगो से मिलकर बनता है शरीर। कोशिका में बहुत कुछ है, और उसमे भी बहुत कुछ समाया है कोशिका–दर–कोशिका जुड़ती है ये गाथा सिमटती चली जाती है। एक लम्बे समय से सभी जीनों का आपसी व्यवहार पता नही चल पाया है, कुछ एक जैसे हैं या विभिन्न हैं और अगर हैं तो ऐसे कितने जीन हैं। यह पहेली

जीव विज्ञानिको को हमेशा परेशान करती रहती है और हमेशा इस बात के लिए उकसाती रही है कि आखिर इसकी तह तक कैसे पहुंचा जाए और उसे कैसे पढ़ा जाए। कुछ ने कल्पनाएं कीं तो कुछ ने कल्पनाओं को साकार करने की दिशा में कदम उठाये और बहुत कुछ तलाश लिया। मानव कोशिका नैनो संरचना का एक महत्वपुर्ण उदाहरण है। असल में इसमें समाये सभी भागो को नैनो स्केल में ही मापा जा सकता है। जाहिर है कि जब कोशिका इतनी सूक्ष्म है तो इसके अंश तो नैनो स्केल के होंगे ही। इसकी प्रोटीन को 1 से 10 नेनोमीटर ही पाया गया है। एक कोशिका का व्यास 30–50 माइक्रोमीटर होता है और इसमें समाये नाभिक का व्यास लगभग 10 माइक्रोमीटर मापा गया है। सबसे छोटे जीवित कोशिका 0.1 माइक्रोमीटर की पाई गयी हैं। कोशिका और उसमे सम्मलित अन्य संरचनो को नैनो स्तर पर जानने से पहले उनकी सारी जानकारी ले लेना बहुत जरुरी है। जीनों के अध्ययन को बायो–इन्फार्मेटिक्स के द्वारा कंप्यूटर में कैद कर लिया गया है। इससे आने वाले समय में ऐसे लोगो का पता चल सकेगा जिनमें कैंसर, हृदय रोग आदि के पनपने की आशंका होगी। इससे रोग के लक्षण और उन पर काबू पाने के रास्ते भी ढूंढे जा सकेंगे। उसी के अनुरूप दवाएं भी तैयार की जा सकेंगी। इंटरफेरॉन दवा ऐसा ही उदाहरण है, जो मानव में कैंसर की बढ़ती कोशिकाओं पर रोक लगा सकती हैं। अब तो जीवाणुओं में आदमी के हारमोन बनाए जा सकते हैं। इस तरह जीवाणु अब इन्सुलिन हारमोन तैयार कर रहे हैं। इन कार्यों में वृद्धि का सबसे बड़ा योगदान अनुसंधानों का रहा है जिसे न जाने कितनी ही असंख्य दवाओं का पेटेंट कर लोगो तक पहुचाया गया है।

डी एन ए की खोज ने विज्ञान को जो बढ़ावा दिया हैं वह अपने आप में एक बहुत बड़ी उपलब्धि हैं। वास्तव में जब हम मानव जीनोम अनुक्रमण और मानचित्रण की चर्चा करते हैं तो हम डी.एन.ए सिक्वेंसिंग की ही चर्चा करते है। डी एन ए की दोहरी कुंडली या डबल हेलिक्स के अक्षरों का पता करके ही जीनोम यानी जीन कोश बनाये जा रहे हैं। इस कुंडली का एक अंश यानी, जीन प्रोटीन तैयार करता है। जीन की स्थापन और उसका आकार मानचित्रण से जाना जता है। यही मानव कोश या जेनोम कहलाता है। शरीर में साठ से सौ खरब कोशिकाएं है। कुछ रोज मरती तो कुछ नयी जन्म लेती हैं और यह चक्र निरंतर चलता रहता है। डी एन ए में सूचनाओं को एकत्र कर वैज्ञानिकों ने टेस्ट ट्यूब बेबी की संचरना कर दी है। डी एन ए की खोज ने कई कंप्यूटर उपकरण को जन्म दिया जैसे पी सी आर मशीन, माइक्रोएक्सरे, एक्स–रे क्रिस्टलोग्राफी और एन एम आर। इन सभी उपकरणों से जीवन की उलझी गुथियाँ सूक्ष्म अध्ययन से अति सूक्षम स्तर पर ही खुल जाएँगी। हयूमन जीनोम प्रोजेक्ट (मानव जीनोम परियोजना) की सफलता के बाद से बायो–इन्फोर्मेटिक्स एक नये विषय में चर्चित हुआ। प्रोजेक्ट परियोजना के अनुसार मानव जीनोम की सभी जानकारी को कंप्यूटर में डेटाबेस के रूप में संजोया गया है।

कंप्यूटरों से विज्ञान में क्रांति

भारत में से कंप्यूटर इस्तेमाल करने वालों की संख्या में दिन प्रति दिन वृद्धि हो रही है। यह विज्ञान में आने वाली और उपलब्धियों का संकेत है। वी एल एस आई में वृद्धि के कारण अनेक प्रकार की गणना और तीव्रता व कीमत में कमतर वाले माइक्रो प्रोसेसर तेजी से उपलब्ध हो रहे हैं। आज इसी तेजी से बढती हुई प्रौद्योगिकी के कारण भारत सुपर कंप्यूटर तक की यात्रा तय कर पाया है।

गिनीज वर्ल्ड रिकॉर्ड्स ने यह घोषणा की है कि डी एन ए कंप्यूटर अब तक की सबसे छोटी गणनात्मक युक्ति है। ये कंप्यूटर अपने शुरुआती अवस्था मे है और केवल मूलगणना ही कर सकते हैं। यह अभी व्यावहारिक कामों के लिए उपयुक्त नहीं है लेकिन गति और क्षमता के मामले में डी एन ए कंप्यूटर आम कंप्यूटर के मुकाबले कहीं अधिक उत्कृष्ट है। वैज्ञानिकों का कहना है कि डी एन ए परमाणु की सभी कोशिकाओं में होते है जिसमें एक सी डी जितनी सूचनायें जमा हो सकती हैं। डी एन ए कंप्यूटर

की क्षमता आम कंप्यूटर के मुकबले दस गुना अधिक होगी। इसके अनुसार आने वाले समय में हमारे शारीर के क्षतिग्रस्त ऊतकों को सही किया जा सकेगा।

मानव विकास की गुथी को सुलझाने के लिए मिशीगन के ईस्ट लांसिंग की एक प्रयोगशाला में कंप्यूटर विशेषज्ञ जीव विज्ञानी और दार्शनिक मिलकर डिजिटल ऑर्गेनिज्म की पुष्टि कर लेने का दावा कर चुके हैं। इस प्रोग्राम का नाम "आविदा" रखा गया हैं। यह डी एन ए की तरह व्यवहार करने वाले अंकीय जीव बना रहे हैं। यह प्रोग्राम कंप्यूटर को उस तरह सन्देश देता हैं जैसे डी एन ए कोशिका को इससे सन्देश के आधार पर एमिनो एसिड्स की लड़ियां बनती हैं और आपस में जुड कर एक विशेष प्रोटीन बनाती हैं। इसी श्रंखला में ऑस्ट्रेलिया स्थित "द इंटेलिजेंट रिसर्च सेंटर" ने कृत्रिम क्रोमोसोम्स यानि गुणसूत्र बना डाले हैं जो मशीनो में अहसास, तर्क और इच्छा की भावनाएं पैदा करेंगे।

विज्ञान और प्रोद्योगिकी की खोज और उसका योगदान

कैंसर की रोकथाम के लिए अब टारगेट दवा बन रही है। कार्सिनोमा या अर्बुद को पनपने देने वाले जींस पहचान लिए गए हैं। इसके अनेक रूप हैं जैसे 'कार्सिनोमा' मुख्यतः एपिथेलियल (ग्रंथी बनाने वाले) कोशाणुओं में उत्पन्न होता है जो शरीर के प्रत्येक अंग में पाया जाता है, क्योंकि ये विशेष जन समहू बनाते हैं, इसीलिए इन्हें 'कठोर अर्बुद' के रूप में वर्गीकृत किया जाता है और यह अत्यधिक सामान्य कर्क रोग में से एक हैं। वही सार्कोमा शरीर की हड्डी और उससे जुड़े ऊत्तक में उत्पन्न होता है ये भी विशेष जन समहू बनाते हैं। इसीलिए इन्हें 'कठोर अर्बुद' के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। श्वेत रक्त या लिंफोमा कैंसर के अन्य बड़े, समहू हैं। ये खून और लसिका बनाने वाले कोशाणुओं अस्थि–मज्जा में पायें जाते हैं। कैंसर के उपचार में शल्य चिकित्सा (सर्जरी), विकिरण चिकित्सा, रसायन चिकित्सा (कीमोथेरपी), प्रतिरक्षा थेरेपी और हार्मोन थेरेपी शामिल है। लेकिन (बी बी एम एन) की मदद से उच्च समेकितदवाओं का बना पाना सम्भव हो पाया है। विज्ञान के नये क्षेत्रों से अनुसंधान भी काफी प्रभावित हुए हैं और इन तकनीकियों का प्रोयोग कर नए उत्पाद भी बनाए जा रहे है। इन सब से परे, फिंगर प्रिंटिंग एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा अपराध अन्वेषणकर्ताओ से प्राप्त नमूनों की डी एन ए छाप बना कर अपराधियों की सही पहचान का काम सुचारू रूप से हो रहा है। वही दूसरी ओर, जर्मनी स्थित मैक्स प्लांक् इंस्टिट्यूट के वज्ञानिकों द्वारा कार्बन नैनोट्यूब में डी एन ए पहुंचाकर अनोखी सफलता प्राप्त की है। एंथ्रेक्स जैसे गंभीर रोग की दवा शरीर में पहुंचाने के लिये वकी बाल्स को माध्यम बनाया जा रहा है। नैनो स्केल की एक रोचक और महत्त्वपूर्ण मशीन सबमैरीन भी तैयार कर ली गयी है जो मानव रक्त में तैरकर दवा पहुचाएगी। इस मशीन का इंजन 'ई कोलाई' और 'सालमोनेल' नामक बैक्टीरिया होगा। कैप्सूल के आकर के साधन के पिछले भाग में दवा भर दी जाएगी और अगले भाग में इंजन बना बैक्टीरिया होगा। यह रक्त में तैरकर चलेगा और अर्बुद (ट्यूमर) तक पहुचकर दवा छोड़ देगा, साथ ही रक्त्वाहिनियो की अनचाही वसा को पिघला भी देगी।

इससे मिलती हुई एक और खोज मिशीगन स्टेट यूनीवर्सिटी के वैज्ञानिकों द्वारा की गयी है जिसके अनुसार ऐसे बैक्टीरिया (जीवाणु) की खोज कर ली गयी है जो गोल्ड क्लोराइड (विषैले रासायनिक तत्वों वाले तरल स्वर्ण) को ठोस सोने में बदल देता है। वैज्ञानिकों को क्यूप्रिएविदस मैटालीडुरेंस नाम का यह बैक्टीरिया कुछ वर्ष पहले ऑस्ट्रेलिया में मिला था, जिस पर शोध के बाद वैज्ञानिकों ने इससे 24–कैरेट सोने के उत्पादन का दावा किया। शोधकर्ताओं ने जहरीली धातु के भीतर जीवित रहने में सक्षम बैक्टीरिया की खोज की है। यह प्राकृतिक रूप से उपलब्ध गोल्ड क्लोराइड या तरल सोने में पैदा होकर उसे ठोस सोने में बदलने की क्षमता रखता है। शोधकर्ताओं ने इस बैक्टीरिया को गोल्ड क्लोराइड की भारी मात्रा परोसी और एक सप्ताह के भीतर यह जहरीला तरल ठोस सोने में बदल गया।

यूनिवर्सिटी ऑफ सिनसिनाटी (यूसी) और सिनसिनाटी चिल्ड्रेन्स हॉस्पिटल मेडिकल सेंटर के वैज्ञानिकों ने बहरेपन और सुनने में कमी के लिए जिम्मेदार एक नए जीन की खोज की। इस जीन का संबंध उशर सिंड्रोम टाइप–1 से है। उशर सिंड्रोम एक आनुवंशिक बीमारी है जिसके कारण बहरापन होता है। इस अध्ययन के मुख्य जांचकर्ता और नेत्र विज्ञान के सहायक प्रोफेसर जुबैर अहमद के अनुसार इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने उशर सिंड्रोम टाइप–1 में बहरापन पैदा करने वाले जीन का पता लगाया। इसके लिए वैज्ञानिकों ने पाकिस्तान और तुर्की से 57 लोगों का आनुवंशिक परीक्षण किया। जल्द ही हुए प्रयोग में इंग्लैण्ड के चिकित्सा वैज्ञानिकों ने आंखों के ऑपरेशन में प्रथम बार भ्रूणीय स्टेम कोशिकाओं का सफल प्रत्यारोपण किया। उम्र से संबंधित मैक्युलर से ग्रस्त अधिक उम्र की रोगी तथा स्टारगार्डट से ग्रस्त एक युवती के आंखों के ऑपरेशन में प्रथम बार भ्रूणीय स्टेम कोशिकाओं का सफल प्रत्यारोपण किया गया था। इस सफल शोध के लेखक डॉ रॉबर्ट लांजा के अनुसार मानव भ्रूणीय कोशिकाओं की खोज एक दशक पहले की गई थी और इससे जुड़े सारे शोध प्रयोगशाला में पशुओं पर किए गए थे। वहीं दक्षिण कोरिया की राजधानी सोल स्थित जनरल अस्पताल में डॉ ह्यूं मी रियू के नेतृत्व में शोध दल ने एक ऐसी विधि की खोज की है, जिसके द्वारा पांच सप्ताह की गर्भवती महिला के रक्त नमूने से उसके गर्भ के लिंग के बारे में पता लगाया जा सकता है। यह टेस्ट गंभीर बीमारियों से बचाव में सहायक है। वैज्ञानिकों की टीम ने जिस टेस्ट की खोज की है उसमें ब्लड प्लाज्मा में मौजूद दो एंजाइमों के अनुपात के आधार पर गर्भस्थ शिशु के लिंग का पता लगाया जाता है। इसके द्वारा गर्भस्थ शिशु में हीमोफीलिया (खून में थक्का न जमना) और मस्कुलर डिस्ट्रॉफी (मांसपेशियों का कमजोर होना) जैसी बीमारियों के जीन का पता लगाया जा सकता है। कन्या भ्रूण में या तो ये बीमारियां पाई ही नहीं जाती और अगर उनके जीन होते भी हैं तो सक्रिय नहीं होते हैं। इसके ठीक विपरीत अगर गर्भ में लड़का है तो उसमें माता–पिता से इन बीमारियों के जीन के पहुंचने की आशंका 50 प्रतिशत अधिक होती है। विदित हो कि मौजूदा अल्ट्रासाउंड तकनीक करीब पांच महीनों में शिशु के लिंग का पता लगा सकते हैं जबकि इनवैसिव परीक्षण 11 हफ्तों में यह पता लगाता है।

इनमास में स्थित स्टेम सेल जीन थेरेपी रिसर्च ग्रुप के द्वारा प्रयास

इनमास में स्थित हमारा अनुसंधान केंद्र सभी दुविधाओं को सुलझाने एवं रोगों पर विजय पाने के लिए निरंतर प्रयास कर रहा है। हम उन जीनों पर काम कर रहे हैं जो प्रसार (प्रोलिफ्रेरेशेन) और विभाजन (डिफ्रेन्सिएशन) को बढ़ाने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इसके लिए हड्डी मज्जा की प्रोढ़ कोशिकाओं को स्टेम कोशिकाओं के रूप में प्रोयोग कर रहे हैं। हम स्पष्ट रूप से अस्थि मज्जा प्रत्यारोपण में वृद्धि का कार्य कर रहे हैं। यह वृद्धि उन कर्क रोग से पीड़ित लोगों के लिए कारगर साबित है जिनका इलाज रसायन चिकित्सा से किया जाता है। हमारी प्रयोगशाला में स्टेम कोशिकाओ का माइक्रोएन्कप्सुलेशन भी किया जा रहा है जिससे स्टेम कोशिकाओं के लिए कवच बना कर उसे अस्थि मज्जा में पहुंचाया जायेगा। यह काम अभी प्रयोगशाला में अंतिम चरण में चल रहा है और इसका फायदा जल्द ही लोगों को मिलेगा। इस विधि से स्टेम सेल प्रवास, प्रसार, भेदभाव और एपाप्टोसिस को नियंत्रित किया जा सकेगा इससे अधिक मात्र में कोशिकाएं अस्थि मज्जा तक पहुचाई जा सकेंगी। यही नही अभी हम स्टेम कोशिकाओं के निरोपण के लिए स्केफोल्ड का भी प्रोयोग करेंगे जिससे कि नये दन्त और सिर पर फिर से केश उग सकेंगें। अस्थि–मज्जा प्रत्यारोपण करते समय संक्रमण का ज्यादा खतरा होता है इसलिए इस आशंका को ध्यान में रखते हुए हम प्रतिरोधक क्षमता को बढाने का प्रयास कर रहे हैं। इस के लिए हम गाटा–1 अवरोधक का प्रारूप बना रहे है जिसकी मदद से सी–जन आसानी से PU-1 के साथ जुड़ कर अधिक प्रतिरक्षित कोशिकाए उत्पन्न कर पायेगा। इसके साथ–साथ काफी

इन–सिलिको प्रयोग करने के बाद हमने एंटी–एपाप्टोटिक प्रोटीन (बी सी एल–2) की संरचनात्मक रचना में परिवर्तन होने वाले डोमेन/अवशेषों की पहचान कर ली हैं जिस पर प्रो–एपाप्टोटिक सदस्य जुड़ते हैं। मॉलिक्यूलर डायनामिक्स सिमुलेशन से पता चला है कि बी सी एल–2 का एक महत्त्वपूर्ण डोमेन/अवशेष ही जिम्मेदार हैं, जो कि प्रो–एपाप्टोटिक सदस्यों को बांधने में सक्षम हैं जिनसे एपाप्टोसिस होता है। यह खोज 'स्परिन्जर' के जे. म पत्रिका में प्रकाशित हुई है। यही नहीं हमने कुछ ऐसे पेप्टाइड भी खोज निकले हैं जिनसे हम एपाप्टोसिस करा सकते हैं। यकीनन यह कर्क रोग की रोकथाम में कुशल साबित होगा। हाल ही में यह खोज 'एल्सवियर' के इ ज ब म पत्रिका में प्रकाशित हुई है। इससे संबंधित हाल में ही हमने बी सी एल–2 के कुछ ऐसे उत्परिवर्ती तैयार किये हैं जिससे एपाप्टोसिस में घटोती और अस्तित्व वृद्धि देखी गयी है। इसके द्वारा इससे कुछ ऐसी दवा बनायेंगे जो विकिरण युद्ध की वजह से बी सी एल–2 के अति–अभिव्यक्ति के कारण होने वाले एपाप्टोसिस की रोकथाम करेगा।

विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का योगदानः एक दार्शनिक विश्लेषण

औतार लाल मीणा
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान

सारांश

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान मनुष्य में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं नैतिक जागरूकता उत्पन्न करना है। विज्ञान के अध्ययन से एक ऐसी वैज्ञानिक दृष्टि विकसित की जा सकती है, जिससे मनुष्य में सत्य के प्रति निष्ठा गहरी होती जाती है और वे झूठ, छल, प्रपंच, झूठे आडम्बर, अंधविश्वास, भ्रष्ट–आचरण, कुरीतियाँ, कुप्रथाओं तथा अमानवीय व्यवहारों से स्वतः दूर होते चले जाते हैं।

दुर्भाग्य से हमारे देश की अधिकांश जनता आज भी अंधविश्वासों और कुरीतियों के मकड़जाल में उलझकर अपने लक्ष्य को भूल रही है और ऐसे कामों में लिप्त है जो राष्ट्रीय और सामाजिक विकास के मार्ग में बहुत बड़े बाधक हैं। इसका एक मुख्य कारण देश में विज्ञान शिक्षण की समुचित और प्रभावी व्यवस्था का न होना है। आज भी हमारे देश में जातिप्रथा, दहेजप्रथा, अंधधार्मिकता, अनैतिकता, अराजकता, अपराध और भ्रष्टाचार आदि समाज पर इतने हावी हैं कि लोगों को इनसे बचने का कोई मार्ग दिखाई नहीं दे रहा है। ऐसे में एकमात्र विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ही वह साधन है, जो हमें न्यायप्रिय और विकासोन्मुखी दिशा प्रदान करते हुए इन सब बुराइयों से बचा सकता है।

प्रस्तावना

दिये गये विषय पर अनेक दृष्टियों से विश्लेषण किया जा सकता है यथाः सामाजिक, आर्थिक, जैविक, सांस्कृतिक दृष्टिकोण आदि लेकिन दर्शन का विद्यार्थी होने के नाते मैं, इस विषय का सम्प्रत्यात्मक (Conceptual) दृष्टिकोण से विश्लेषण करने का प्रयास करूँगा। इस संदर्भ में विषय में सम्मिलित तीन प्रमुख सम्प्रत्ययों का अर्थ एवं उनके अन्तर–सम्बंध को समझना आवश्यक है। प्रगति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी ये तीन सम्प्रत्यय हैं जिनका विश्लेषण आवश्यक है।

प्रगति

प्रगति, विकास, उन्नति का अभिप्राय सामान्य अर्थ में किसी भी व्यक्ति, समाज, देश, विश्व, ब्रह्माण्ड आदि के विकास से है। प्रगति का आधार परिवर्तन है, परिवर्तन बहुमुखी हो सकता है– किसी यथास्थिति से विचलन परिवर्तन कहलाता है। व्यक्ति तथा प्रकृति से सम्बंधित तथ्य जिसके अनुसार किसी सत्ता अथवा वस्तु का एक स्थान से दूसरे स्थान पर अथवा एक अवस्था से दूसरी अवस्था अथवा गुणों को पूर्ण रूप से अथवा कुछ अंश रूप से त्याग करना तथा नये गुणों को प्राप्त करना परिवर्तन है। इसका सम्बंध गति से नहीं किया जा सकता क्योंकि गति का सम्बंध स्थान–परिवर्तन से है, जबकि परिवर्तन का सम्बंध गुण, स्थिति, वातावरण, प्रकृति, नियम आदि से है। हेरेक्लाइटस, ह्यूम, बर्गसा आदि दार्शनिकों ने इस परिवर्तन को अस्तित्व का सार तथा विश्व को तात्विक गुण से युक्त परिवर्तनशील माना हैं। परिवर्तन आरोही और अवरोही हो सकता है, पुराने से नये की ओर ओर नये से पुराने की

ओर, नीचे से ऊपर की ओर तथा ऊपर से नीचे की ओर, आदि हो सकता है। जब यह परिवर्तन ऊर्ध्वमुखी (आरोही) हो तो प्रगति कहलाता है और अधोमुखी (अवरोही) हो तो अवगति कहलाता है।

विज्ञान

अनुसंधान से सम्बंधित कार्यकलाप का क्षेत्र, जो प्रकृति, समाज तथा चिन्तन के विषय में नया ज्ञान प्राप्त करने की ओर लक्षित होता है, विज्ञान कहलाता है, अर्थात् प्रकति में घटित होने वाली घटनाओं में अन्तर्निहीत कारणात्मक नियमों (Casual Principle) की खोज और उनका आनुभविक सत्यापन (Empirical verification) करके जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है, जब उस ज्ञान को सुव्यवस्थित, सुसंगठित एवं क्रमबद्ध कर लिया जाता है तो ऐसा विशिष्ट ज्ञान विज्ञान कहलाता है।

विज्ञान का मानव जीवन में व्यावहारिक दृष्टि से उपयोग करने की पद्धतियां तकनीकी या प्रौद्योगिकी कहलाती हैं जोकि मानव जीवन को सहज बनाने की दृष्टि से सुविधा प्रदान करती हैं। इस प्रकार विज्ञान और प्रौद्योगिकी का सम्बंध इस दृष्टि से सिद्धान्त और व्यवहार का सम्बंध है, क्योंकि विज्ञान प्रौद्योगिकी का आधार है जबकि प्रौद्योगिकी विज्ञान का व्यवहार में उपयोग है।

विज्ञान हमारे जीवन का ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और प्रकृति का एक अभिन्न अंग है। जन्म से लेकर मृत्यु तक और सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक जितनी भी प्राकृतिक या कृत्रिम घनटाएँ घट रही हैं, सभी का मूल आधार विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी ही है। विज्ञान एक ऐसी व्यापक अवधारणा है जो सृष्टि के कण–कण में समायी हुई है और उतनी ही सत्य है, जितनी सूर्य की किरणें, जल की तरंगे एवं वायु की गति। यदि कहा जाए कि विज्ञान एवं प्रौद्यागिकी सर्वव्यापी है, सर्वाधिक शक्तिमान है और सम्पूर्ण जीवन का अक्षय स्रोत है, तो अनुचित नहीं होगा। आज जिस प्रकार हमारे दैनिक जीवन में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी समाता जा रहा है, उसे देखकर निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि हमारा सम्पूर्ण जीवन ही विज्ञानमय हो गया हैं, Hi-tech हो गया है। सोते–जागते, उठते–बैठते हर पल जितने भी क्रिया–कलाप हमारे द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं, उन सभी में हमें वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान, वैज्ञानिक नियमों एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता पड़ती है। अब यह हमारे जीवन जीने की कला पर निर्भर करता है कि हम ऊर्जा के इस अनन्त स्रोत का उपयोग कब, कहाँ, क्यों और कैसे करते हैं?

विश्व की वर्तमान स्थिति और विज्ञान के विकसित होने की स्थिति से पूर्व की स्थिति की यदि तुलना की जाये तो यह निश्चित है कि विश्व में प्रगति हुई है और यह परिवर्तन द्रुतगति से हुआ है। हालांकि इस प्रगति में अनेक घटकों का योगदान है लेकिन सबसे अधिक और आधारभूत योगदान विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का ही है। यद्यपि वर्तमान में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के कुछ नकारात्मक लक्षण भी सामने आये हैं, लेकिन वे वस्तुतः उनके दुरुपयोग के कारण ही हैं, इसलिए अपने इस पत्र में विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के योगदान के विभिन्न पक्षों की चर्चा करूँगा।

विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के योगदान बहुपक्षीय हैं, जिन्हें मोटे तौर पर समझने के लिए निम्न प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं:

1. वैश्वीकरण में योगदान।
2. विश्वशान्ति के पक्ष में योगदान।
3. साँस्कृतिक पक्ष।
4. सामाजिक एवं सामुदायिक पक्ष।
5. राजनैतिक पक्ष।
6. आर्थिक पक्ष।
7. विधिक पक्ष।

8. धार्मिक पक्ष।
9. नैतिक पक्ष।
10. सौन्दर्य एवं कलात्मक पक्ष।
11. वैयक्तिक पक्ष (व्यक्तिमूलक)।
12. आधुनिक सूचना क्रान्ति में योगदान।
13. समुद्री विकास में योगदान।

वैश्वीकरण में योगदान

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से विश्व–प्रगति में सर्वप्रथम योगदान वैश्वीकरण, भू–मण्डलीकरण है। यह वस्तुतः न तो नया है और ना ही अनिवार्य रूप से पश्चिमी, न ही यह अभिशाप है। हजारों वर्षों के दौरान के वैश्वीकरण ने पर्यटन, व्यापार, प्रवास, साँस्कृतिक प्रभावों के विस्तार, ज्ञान व आपसी समझ (जिसमें विज्ञान एवं तकनीकी भी शामिल है) के प्रसार में पूरे विश्व की प्रगति में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। वैश्विक अंतर्सम्बंध विभिन्न देशों की प्रगति में बहुत उपयोगी सिद्ध हुये हैं।

वैश्वीकरण में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की भूमिका विभिन्न प्रकार से स्पष्ट की जा सकती है, जैसे, सूचना एवं संचार (पेपर, प्रिंटिंग प्रेस, टेलीग्राफी, टेलीफोन, टेलीविजन, मोबाइल, कम्प्यूटर, इंटरनेट, आई–पेड, आई–फोन, सोशल साइट्स, वीडियो कांफ्रेंसिंग इत्यादि), यातायात (चुम्बकीय दिशासूचक, जहाज, रेलवे, हवाई जहाज, हैलीकॉप्टर इत्यादि), पर्यटन, व्यापार, बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ, विवाह और धार्मिक आस्था आदि।

विश्वशान्ति के पक्ष में योगदान

आण्विक शक्ति, हाइड्रोजन बम, युद्ध प्रौद्यागिकी का विकास, आंतकवाद के दुष्परिणाम के कारण अहिंसा के दर्शन की ओर उन्मुख होना, पारम्परिक युद्ध का अन्त, अशांति और तनाव का मानव प्रजनन में बाधक होने की पहचान एवं विश्वशांति स्थापित करने की पहल के तहत मिसाइलों का विकास।

सांस्कृतिक पक्ष

सांस्कृतिक मूल्यों का आदान–प्रदान, सामुदायिक संस्कृति के स्थान पर विश्व–संस्कृति का उदय, भौतिकवादी संस्कृति का आध्यात्मवादी संस्कृति की ओर रुझान और आध्यात्मिक संस्कृति द्वारा विज्ञान और तकनीकी प्रदत्त भौतिक पद्धतियों का सहयोग लेना, संचार तकनीकी के बढ़ते प्रसार से साँस्कृतिक प्रसार का भी निर्माण होना, संस्कृति के विभिन्न घटकों यथाः दर्शन, धर्म, शिक्षा, साहित्य कलाएँ, परम्पराएँ आदि में तद्नरूप प्रगति।

सामाजिक एवं सामुदायिक पक्ष

सामुदायिक भावना का विकास एवं उसमें उन्नत, सामाजिक संगठन एवं संरचना के नियमन में सहायक, सामाजिक अन्तःक्रिया को अत्यंत सहज एवं सरल बनाना, अस्पृश्यता एवं रंगभेद की समस्या का निराकरण, सामाजिक समरूपता का निर्माण, जाति व्यवस्था को तोड़कर उसके दुष्परिणामों में कमी करना, सामाजिक सहिष्णुता का विकास होना, वसुधैव कुटुम्बुकम की भावना को विकसित करना, सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं में तेजी से कमी लाना।

राजनैतिक पक्ष

शासन की लोकतंत्रीय व्यवस्था का प्रसार, राज्य में कानून एवं व्यवस्था में वैज्ञानिक तकनीकी के प्रयोग द्वारा विकास, चुनाव पद्धति का सरलीकरण (EVM), अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक संगठनों का उद्भव, राजनेताओं का परस्पर सम्बंधों का विकास, राज्य का मानवतावादी एवं सुधारवादी दृष्टिकोण को अपनाना, धर्म निरपेक्षतावाद का विकास, राजनैतिक तानाशाही एवं राजनैतिक कट्टरता का अन्त।

आर्थिक पक्ष

अर्थव्यवस्था में उदारवादी दृष्टिकोण को अपनाना, विज्ञान व तकनीकी के विकास की सहायता से अर्थव्यवस्था में सुधार एवं विकास, पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था को अपनाना, समाज की आर्थिक दृष्टि से जीवन पद्धति में उन्नति, औद्योगिकीकरण में तेजी। उत्पादन के साधनों में वैज्ञानिक प्रयोग से सुधार एवं विकास, यातायात के साधनों के तकनीकी करण से व्यापार में तेजी जिससे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्टीय अर्थव्यवस्था में विकास, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठन यथाः विश्व बैंक, IMF, UNO आदि का निर्माण जिसकी सहायता से विश्व अर्थव्यवस्था के संतुलन में सहायता, E-trading का विकास, FDI, कॉर्पोरेट जगत के निर्माण में तकनीक प्रयोग की सहायता से अर्थव्यवस्था के विकास में तेजी लाना, बैकिंग प्रणाली में सुधार–TM, CBS, E-banking, ऋण व्यवस्था का सहज और सरल बनाना, उत्पादन के भण्डारण में तकनीकी सहायता, कृषि के संसाधनों में उन्नत तकनीकी का प्रयोग, जेनेटिक तकनीकी के विकास से उन्नत बीज को विकसित करना जिससे परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दृष्टि से उत्पादन में वृद्धि।

विधिक पक्ष

विधि–विज्ञान अपराधिक न्याय व्यवस्था का अभिन्न अंग है। इसका जन्म विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग से ही हुआ है। इसका मुख्य कार्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के साधनों का उपयोग करके विवेचना में भौतिक सूत्रों का एकत्रीकरण करना है और आपराधिक न्यायिक प्रणाली में एक अहम भूमिका निभाना है, साथ ही फोरेन्सिक विज्ञान का बहुत तेजी से विकास, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्र एवं विश्व में अपराधों पर नियंत्रण, विधि व्यवस्था को बनाये रखने के लिये काम में आने वाले उपकरणों का विकास एवं उनमें उन्नत प्रौद्योगिकी का प्रयोग, डिजिटल तकनीक के विकास से विधिक व्यवस्था में उन्नति, दण्ड के सिद्धान्तों में सुधार।

धार्मिक पक्ष

विज्ञान के विकास के साथ–साथ धार्मिक रूढ़ियों में तदनुरूप कमी, धर्म सुधार आन्दोलनों के प्रभाव से धार्मिक सुधार, धार्मिक मान्यताओं का वैज्ञानिक एवं तकनीकी दृष्टियों से परीक्षण, धार्मिक प्रचार और प्रसार में वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रयोग, विज्ञान के भौतिकवाद के आधिक्य से उकताकर धर्म की ओर उन्मुख होने की प्रवृति का विकास, सर्वधर्म सम्भाव की भावना का उदय एवं धार्मिक कट्टरता में कमी और धार्मिक सहिष्णुता का विकास, विश्व धर्म के विकास की सम्भावना, साम्प्रदायिक दंगों व वैमनस्यता में कमी, धार्मिक चेतना का विकास एवं धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा देना।

नैतिक पक्ष

विज्ञान एवं तकनीकी के विकास से नैतिक संदर्भ में विधायक ओर निषेधात्मक दोनों ही संदर्भों में परिवर्तन हुआ है। यद्यपि इसका निषेधात्मक प्रभाव तकनीकी के कारण नहीं वरन् तकनीकी के दुरुपयोग के कारण है यथाः सोनोग्राफी की तकनीकी का दुरुपयोग– कन्या भ्रूण हत्या में लिया जाने लगा है, तकनीकी विकास से हिंसक साधनों के विकास से हिंसा में बढ़ोत्तरी, मोबाईल के प्रयोग से अपसंस्कृतिकरण, असत्य वचन का प्रयोग होना, व्यक्ति में भोगवादी एवं विलासितापूर्ण मूल्यों की ओर झुकाव, सादे जीवन के स्थान पर आडम्बरपूर्ण, दिखावटी जीवन पद्धति को अपनाना, विज्ञापनों के दुष्परिणामों का नैतिक मूल्यों पर कुप्रभाव, नैतिक चेतना और मूल्य बोध का विकास।

सौन्दर्य एवं कलात्मक पक्ष

विज्ञान तथा प्रौद्यागिकी सिद्धान्तों के आधार पर निर्मित भव्य भवनों, मनोरंजन केन्द्रों तथा उद्यान आदि को देखकर व्यक्ति में सौन्दर्य और कला के प्रति लगाव तो उत्पन्न होता ही है, साथ ही विज्ञान के चमत्कारों पर उसकी आस्था भी बढ़ जाती है। विश्व के नामचीन पुल, स्मारक, मूर्तियाँ आदि भी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के ज्ञान द्वारा ही बनाए जाते हैं, सत्य ही शिक्षा है और शिव ही सुन्दर है की भावना

स्वतः जागृत होकर सत्यम्–शिवम्–सुन्दरम् के शाश्वत सिद्धान्तों की व्याख्या करती है। विश्व प्रसिद्ध सातों आश्चर्य, दिल्ली का लाल किला, अजन्ता–एलोरा की गुफाएँ आदि विज्ञान और सौन्दर्य की अमूल्य धरोहर हैं। निःसंदेह वैज्ञानिक युग की आधारशिला ज्ञान और सौन्दर्य पर निर्भर है।

वैयक्तिक पक्ष (व्यक्तिमूलक)

व्यक्ति की जीवन पद्धति में सुधार, व्यक्तित्व निर्माण विकास (Personality Development), व्यक्ति की बुरी आदतें यथा मद्यपान, नशाखोरी आदि से मुक्ति दिलाने में वैज्ञानिक तकनीक का प्रयोग, व्यक्ति एवं व्यक्ति के मध्य परस्पर सम्बंध का निर्माण, व्यक्ति में मानवतावादी दृष्टिकोण का विकास, व्यक्ति से जुड़े हुए विभिन्न पक्ष यथाः स्वास्थ्य, शिक्षा मनोरंजन, प्रसाधन, साहित्य आदि में सहायक, व्यक्ति में आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास की वृद्धि, व्यक्ति में जीवन प्रत्याशा का विकास, सामाजिक प्रगति के माध्यम से व्यक्तिगत जीवन में प्रगति यथाः प्रतिव्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी, क्रय क्षमता में बढ़ोतरी आदि, सुख–सुविधाओं में बढ़ोतरी।

आधुनिक सूचना क्रान्ति में योगदान

विज्ञान और प्रौद्यागिकी की विश्व प्रगति में सबसे बड़ी देन आधुनिक सूचना क्रान्ति है। इस क्रान्ति से युगान्तकारी परिवर्तन सम्भव हो सके हैं। अब सम्पूर्ण विश्व एक वैश्विक गाँव (Global village) के रूप में बदल गया है और 'विश्व समुदाय', 'सूर्य समुदाय' की ओर तेजी से बढ़ रहा है। इससे प्रतीत होता है कि वर्तमान युग केवल सूचना युग ही है जिसके पास जितनी अधिक सूचना है वह उतना ही ज्ञानवान है और जो अपनी जानकारी का जितना अधिक उपयोग कर सकता है वह उतना ही अधिक शक्ति सम्पन्न है। इसका उदाहरण अमरीका तथा जापान है।

यह सूचना क्रान्ति मानव स्मृति और उसकी सृजन क्षमता का परिचायक है। इस सूचना क्रान्ति ने मनुष्य के वैयक्तिक और सामाजिक जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है।

कम्प्यूटर आज हमारे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन चुका है। साधारण से कार्यों में भी इसकी उपयोगिता व लोकप्रियता बढ़ती ही जा रही है। इसका प्रमुख कारण– कम्प्यूटर की तीव्र गति, विपुल संग्रह क्षमता, अति शुद्धता व सक्षमता है। आधुनिक सूचना क्रान्ति के जनक कम्प्यूटर ही हैं, इसमें ई–मेल, ई–कामर्स व इंटरनेट अति महत्त्वपूर्ण आविष्कार हैं।

समुद्री विकास में योगदान

समुद्री संसाधनों के विकास और समुद्री पर्यावरण के संरक्षण में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के द्वारा महती प्रगति हुई है जिसके तहत समुद्री क्षेत्र में सर्वेक्षण, संसाधनों की खोज, संसाधनों का प्रबंधन तथा समुद्री तकनीक के विकास को प्रोत्साहन एवं मदद दी गयी है।

विभिन्न अनुसंधान एवं सर्वेक्षण द्वारा यह स्पष्ट हो चुका है कि समुद्रीय क्षेत्रों के 50–70 प्रतिशत क्षेत्रों में खनिज संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। समुद्री संसाधनों में पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, टिन, फॉस्फोराइट, हीरे, लौह, सल्फर, मैंगनीज, आदि धातुएँ अधिकांश मात्रा में पायी जाती हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से मानव को लाभ

- विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी मानव समाज के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक, साँस्कृतिक और आर्थिक विकास के लिए बहुत उपयोगी है।
- यह मनुष्य में एक ऐसा वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है, जिसके आधार पर उनमें ढोंग, पाखण्ड, छल–कपट, झूठ, अंधविश्वास तथा कुरीतियों एवं कुप्रथाओं का विरोध करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है।
- यह नवीन अनुसंधानों एवं आविष्कारों के लिए छात्रों में सृजनात्मक प्रतिभा का विकास करता है।

- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के द्वारा व्यक्ति में ईमानदारी, सत्य के प्रति निष्ठा, न्यायप्रियता, कर्त्तव्यनिष्ठा, परोपकार और उत्तरदायित्व की भावना आदि गुणों का विकास किया जा सकता है।
- यह कम से कम समय, धन व श्रम व्यय करके अधिक से अधिक उपलब्धि प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करता है।
- यह औद्योगिक विज्ञान एवं जीविकोपार्जन के क्षेत्र में अधिक उपलब्धि प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करता है।
- यह व्यक्ति में आत्मनिर्भरता, आत्मगौरव, आत्मविश्वास और आत्मदर्शन की क्षमता उत्पन्न करता है
- इसके द्वारा कोई भी समाज स्थापत्य कला, ललितकला, मनोरंजन, खेल, सड़क निर्माण और भौतिक समृद्धि आदि के क्षेत्रों में नित्य नई ऊँचाइयों को स्पर्श कर सकता है।
- विज्ञान केवल ज्ञान ही नहीं देता बल्कि क्रियात्मक व्यवहार (प्रौद्योगिकी) के माध्यम से मनुष्य में मानवीयता, जागरूकता, सामाजिकता, सहयोग, धैर्य, सहिष्णुता और विश्वबन्धुत्व आदि की भावनाएं सहज रूप से उत्पन्न करता है।

निष्कर्ष

यद्यपि विज्ञान और तकनीकी का विकास निर्विवाद रूप से हुआ है, लेकिन जैसे कि मानव की प्रकृति होती है, वह किसी भी चीज का सदोपयोग एवं दुरूपयोग कर सकता है, इसी दृष्टि से जहाँ–जहाँ विज्ञान एवं तकनीकी का सद्उपयोग हुआ है वहाँ–वहाँ विज्ञान और तकनीकी वरदान सिद्ध हुई है। साथ ही जहाँ दुरूपयोग हुआ हैं, वहाँ अभिशाप सिद्ध हुई है। फिर भी तुलनात्मक दृष्टि से यह ही कहा जा सकता है कि विज्ञान व तकनीकी के विकास का विश्व प्रगति में विधायक योगदान है, क्योंकि इसका निषेधात्मक परिणाम केवल इनके दुरूपयोग के कारण है इसके लिए विज्ञान व तकनीकी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।

वास्तव में वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा का महत्व आधुनिक युग की प्रगति का द्योतक है। आज इसकी आवश्यकता लगभग प्रत्येक क्षेत्र के विकास के लिए प्रासंगिक माना जाने लगा है। वास्तव में बेहतर समाज वही होता है जहाँ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

हरित रसायन विज्ञान का आधुनिक तकनीक व विज्ञान में महत्व

नीलम वोहरा एवं मोनिका खुराना
अंसल प्रौद्योगिक संस्थान, अंसल विश्वविद्यालय, गुडगांव, हरियाणा

सारांश

आज आवश्यकता है पर्यावरण हितैषी, न्यूनतम घुलनशील रसायन उत्पादनों की और उस काम की जिससे कम से कम ऊर्जा का प्रयोग करके अणु क्षमता और सुखद मैत्रीपूर्ण वातावरण का निर्माण किया जा सके। यंत्र विज्ञान में परिवर्तन आवश्यक है और उसके लिए सुखद मैत्रीपूर्ण वस्तुओं का नवनिर्माण हो, भौतिक वस्तुओं में कमी हो और सुरक्षा की दिशा में सुधार हो। इससे भी अधिक आवश्यकता है इस कार्यशैली द्वारा वातावरण को हानी पहुँचाये बिना सामाजिक एवं आर्थिक लाभ हो।[1]

दीर्घकालीन उन्नति का रासायन आश्रित उद्योगों के साथ विशेष सम्बन्ध है क्योंकि इसका सीधा प्रभाव वातावरण प्रदूषण और प्राकृतिक साधनों का असावधानी पूर्ण प्रयोग करने पर पड़ता है। अतः अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए हमें ऊर्जा के नये साधनों को उन्नत करने की आवश्यता है।[2] आज यह सर्वविदित है कि वातावरण को नियन्त्रित करने के लिए स्थायी टैक्नोलॉजी का विकास और प्रदूषण को रोकना सबसे सुन्दर एवं प्रभावशाली तरीका है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि सम्बद्ध वैज्ञानिक, अभियन्ता, शैक्षणिक और अन्य समुदाय मिलकर हरित कार्य प्रणाली द्वारा स्थायी भविष्य के लिए मिलकर कार्य करें।

भूमिका

रसायन उद्योग ने दवाईयाँ, प्लास्टिक जीवाणुनाशक, ईंधन, कृषि रसायन जैसे कीटनाशक व उर्वरक आदि कई उत्पाद दिए हैं। इन रासायनिक उत्पादों के कई हानिकारक प्रभाव हैं जो कि मनुष्यों के साथ साथ पर्यावरण को भी बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

वर्तमान शहरीकरण अपने बेहतर जीवन स्तर को बनाये रखने के लिए रसायन उद्योग पर बहुत निर्भर है। अधिकांश रासायनिक उत्पादों में पाये जाने वाला कार्बन, पेट्रोलियम पदार्थों से मिलता है जो कि एक सीमित स्त्रोत है यद्यपि कार्बन कोयले के रूप में भी उपलब्ध है परन्तु वह भी सीमित मात्रा में ही मिलता है। कोयले को रासायनों में रूपान्तिरत करने के लिए धात्विक उत्प्रेरक की आवश्यकता होती है जोकि स्वंय अत्यधिक सीमित मात्रा में शेष है अतः वर्तमान में उपलब्ध तकनीकों को बदलने की आवश्यकता है।

पिछले कुछ दशकों से जल शोधन, कचरा निवारण तरीकों, कृषि रसायनों पोलिमर पदार्थ डिटरजेन्ट, पेट्रोलियम योगिक आदि रासायनिक उत्पादों में बहुत सफल तकनीकी विकास हुए है ये सब उपलब्धियाँ हमारे जीवन के गुणवत्ता को बढ़ानें में सहयोगी भी है। परन्तु यह सब प्रदूषण के पर्याय है। रासायनिक उद्योंगों के समक्ष सबसे बड़ी समस्या विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं से अधिकाधिक मात्रा में उत्पन्न ऐसे कचरे का सुरक्षित निष्कारण है जो कि पर्यावरण पर निरन्तर बढ़ता भार है।

आज उद्योगों, शिक्षा जगत व आम जनता में स्थायी विकास की आवश्यकता के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण अन्तर्राष्ट्रीय रासायनिक समुदाय में विद्यमान कार्यशैलियों को बदलने और प्रदूषण निवारक विकल्प खोजने का दबाव बढ़ता जा रहा है।[1] प्रदूषण सम्बन्धी समस्याओं को सुधारने के लिए हरित रासायन का

अधिकाधिक प्रयोग तथा पर्यावरण सहयोगी उत्पाद कार्यविधियों के विकास के लिए प्रयास किए गए हैं।

प्रदूषण दर में गंभीर वृद्धि ने विश्व भर में सरकारों को प्रदूषण को न्यूनतम करने संबधी कानून बनाने के लिए बाध्य कर दिया है। इसी कारण हरित रसायन व हरित तकनीक जैसे विचारों का जन्म हुआ है। इसी क्षेत्र में रसायनिक संश्लेषण में होने वाले कचरे से बचने के प्रयास किए गए हैं ताकि बाद में पर्यावरण की स्वच्छता एक समस्या न बन जाए।[3] हरित रसायन विज्ञान के अन्तर्गत विकसित रसायनिक संश्लेषण के वैकल्पिक तरीकों को अधिकाधिक अपनाया जाना चाहिए ताकि प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव न्यूनतम हो। विद्यमान तकनीक इन सब समस्याओं से नहीं निबट सकती। यद्यपि रसायनिक उद्योग ने अपनी प्रक्रियाओं की क्षमता वृद्धि के लिए बहुत सुधार किए हैं परन्तु अभी भी नियमित स्थायी योजनाओं की आवश्यकता है। हमारे पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए, निरंतर बढ़ती जनसंख्या की मांगों की पूर्ति के अनुरूप रासायनिक पदार्थों का उत्पादन इस तकनीक का प्रथम चरण है।

वर्तमान रसायन विज्ञान की चुनौती

स्वभाविक रूप से नवीकरणीय उत्पादों की पहचान और ऐसे पौधों की खोज जो खाने में प्रयोग न हो व पूर्णरूपेण उपयोगी उत्पादों में सफलतापूर्वक परिवर्तित किए जा सकें। अगला चरण है रासायनिक पदार्थों के उत्पादन संबंधी प्रतिक्रियाओं का पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव हो। वर्तमान में उपलब्ध अत्यधिक मात्रा में एक साथ उत्पन्न रासायनिक उत्पादों की बजाय कम जहरीले व प्राकृतिक रूप से क्षयकारी उत्पादों की खोज, और पर्यावरण पर रसायनों के हानिकारक प्रभाव कम हो।[3] पूरी रासायनिक प्रक्रिया हरित रसायन विज्ञान के 12 सिद्धान्तों पर निर्धारित होनी चाहिए।[4]

1. रासायनिक अपशिष्ट पदार्थ कम करें।
2. स्वाभाविक रूप से नष्ट होने योग्य रासायनिक उत्पाद।
3. पुर्न उपयोगी पदार्थ।
4. सुरक्षित कृत्रिम विधियों का उपयोग।
5. कम डैरिवेटिव
6. उत्प्रेरक अभिकर्मक
7. सामान्य ताप, दाब परिवेशी
8. प्रक्रिया के मध्य निरीक्षण
9. सहायक रसायनों का कम से कम प्रयोग
10. ई–कारक उत्पाद में अधिकता
11. रासायनिक उत्पादों की कम विशाक्तता
12. हाँ, यह सुरक्षित है ।

किसी भी विधि को पर्यावरण अनुकूल परखने के बहुत से माध्यम हैं परन्तु सबसे सरल तरीका है। कि प्रक्रिया से उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थ की मात्रा मापना। प्रक्रियाओं को ई–कारक का प्रयोग करके परखा जाता है– अपशिष्ट पदार्थों की मात्रा व उत्पन्न उत्पाद की मात्रा का अनुपात। न्यूनतम संभवः ई–कारक जोकि पूर्णतः स्वच्छ व सुरक्षित विधि के लिए शून्य होना चाहिए।[4]

तालिका, सूची–रसायन उद्योग में ई–कारक

उद्योग विभाग	आयतन घनफल (ty^{-1})	ई खण्ड (कि. अपशिष्ट पदार्थ/कि. उत्पादन)
विस्तृत रसायन	104–106	<1–5
परिष्कृत रसायन उद्योग	102–104	5–>50
औषधिविज्ञान (रसायन उद्योग)	10–103	25–>100

रसायनिक प्रतिक्रिया की क्षमता, परमाणु क्षमता के द्वारा निश्चित की जा सकती है। जिसके मूल्य की गणना निम्न रसायनिक समीकरण के द्वारा की जा सकती है–

$$\text{परमाणु क्षमता} = \frac{\text{इच्छित उत्पाद का आणविक भार}}{\text{उत्पन्न सभी उत्पादों का आणविक भार}}$$

सबसे महत्वपूर्ण यह है कि अवांछित पदार्थ कम से कम हों क्योंकि रसायनिक प्रक्रियाओं से अवान्छित अवशेषों को हटाया नहीं जा सकता। परन्तु कुछ सह उत्पादों को अगली रासायनिक क्रिया के प्रारम्भिक पदार्थ के रूप में उपयोग किया जा सकता है। जो जैविक कचरा इस्तेमाल में न लाया गया वह ऊर्जा के स्त्रोत के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। अधिकांश विलायक कचरा के रूप में होता है। अतः पर्यावरण अनुकूल विलायक ढूंढने चाहिए। उदाहरण के लिए हरित विलायक का प्रयोग। ऐसे बहुत उदाहरण हैं जहां कई उपयोगी औद्योगिक रसायनिक क्रियाएं पर्यावरण हितैषी विलायकों के साथ सफलतापूर्वक पूर्ण की जा सकी है।

कुछ रसायनिक प्रतिक्रियाएं जिनमें हाइड्रोकार्बन समूह ऐरोमेटीक योगिकों के साथ संलग्न होते हैं–आयनिक तरल की उपस्थिति बहुत सफल रहती है। इन दोनों प्रकार की क्रियाओं का उपयोग रसायनिक पदार्थों के उत्पादन में होता है। सर्वाधिक उपयोगी पर्यावरण हितैषी विलायक सुपर क्रिटिकल कार्बन डाइऑक्साईड, (गैस को कम्प्रैस करके तरल की भांति सघन बनाया जाता है) आयनिक तरल (जैसे, जैविक लवण जो सामान्य ताप पर तरल होते है) और पानी है। सुपर क्रिटिकल कार्बन डाइऑक्साईड का लाभ यह है कि यह विषैली नहीं है, मात्र गैस का दबाव बदलकर पदार्थों की कार्बन डाइऑक्साईड में विलयता बदली जा सकती है और कार्बन डाइऑक्साईड में अधिकांश पदार्थों के अत्यधिक विसरण के कारण उनका पृथककरण अन्य पारम्परिक विलायकों की तुलना में अधिक प्रभावी होता है। यौगिकों का क्रोमैटोग्राफीक शुद्धिकरण अधिक प्रभावी हो जाता है। यह वातावरण को प्रभावित नहीं करता क्योंकि प्रयोग में लाई जाने वाली कार्बन डाइऑक्साईड अन्य प्रक्रियाओं का सह उत्पाद है इसका ऋणात्मक पहलू यह है कि कार्बन डाइऑक्साईड को सुपर क्रिटिकल दशा तक दबाना अधिक ऊर्जा व्ययी है।

बहुत प्रकार की जैविक प्रतिक्रियाएँ पानी में भी की जा सकती हैं। परन्तु उत्पादों को पानी से प्राप्त करने के लिए बढ़े संयत्र की आवश्यकता होगी जिसके लिए अधिक स्थान चाहिए और यह ऊर्जा व्ययी है। साथ ही शुद्धिकरण प्रक्रिया के लिए बहुत अत्याधिक मात्रा में जैविक विलायकों की भी आवश्यकता होगी।[10]

क्रियाओं में पर्यावरण हितैषी विलायको की मात्रात्मक आंकड़ों के ज्ञान भौतिक विज्ञान की जरूरत है और यह विलायक जैविक रसायन उद्योग में पुनः नई रूचि जागृत करते हैं। हरित रसायन का एक उत्साहवर्धक पहलू यह है कि यह रसायनविज्ञन और रसायनिक अभियंताओ को निकट लाता है।

हरित प्लास्टिक

उभरते उद्योगों का ध्यान ग्रीन प्लास्टिक पर केन्द्रित है जो हमें वातावरण की स्थिरता के साथ सुविधा पूर्ण जीवन प्रदान कर सकता है। नवीकरण साधन के प्रयोग से प्लास्टिक का उत्पादन एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि किस प्रकार हरित तकनीक, रसायन उद्योगों को बदल सकते हैं? उहाहरण स्वरूप मिडलैंड के आर्थर डैनियलस ने पी एच एज उत्पन्न करने के लिए पहला व्यवसायिक प्लांट बनाने के लिए योजनाओं की घोषणा की।[5]

कैम्बिज मास कम्पनी ने पी एच ए तकनीक को मूलरूप से विकसित किया और 2004 में अपने मैटाबॉलिक इंजीनियरिंग और आणविक जीवविज्ञान का प्रयोग करके जैव प्लास्टिक के व्यवसायीकरण पर किए कार्य के लिए राष्ट्रपति सम्मान जीता। यह स्वाभाविक रूप सें क्षयकारी उच्च क्षमता प्लास्टिक

(पी एच ए) उपयोग मे लाये वाले पेट्रो रसायनिक प्लास्टिक से बहुत उपयोगी है। जैसे चादर, फिल्म व मोल्डेड सामान को बनाना। यह पी एच ए पदार्थ अपने कच्चे माल के रूप में स्टार्च को उपयोग में लाता है।

पाली लेक्टिक एसिड पॉलीमर स्वाभाविक रूप में नष्टकारी प्लास्टिक है जो ब्लेयर के प्लांट में 140,000 मैट्रिक टन / वर्ष की दर से मक्का से उत्पन्न होता है। पी एल ए ने वर्तमान में ही स्वाभाविक रूप से नष्टकारी पैकेजिंग में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। वालमार्ट ने अपने फल व जड़ी बूटियों को 2005 में ही पैक करने के लिए पी एल ए का प्रयोग करना शुरू कर दिया था।

दवाई उद्योग में हरित रसायन

हरित रसायन की एक सफल गाथा फाईजर से शुरू होती है जहाँ वियाग्रा की निर्माण प्रक्रिया मात्र ई–कारक संख्या 6 के साथ प्रयोग में लाई जाती है। इस प्रक्रिया में–

(1) कुशल चरण निर्धारण

(2) हर चरण पर कोई निष्कासन न हो

(3) उत्पाद में शीघ्र व सक्षम विलायक पुर्नप्राप्ति आदि बिन्दुओं को प्रयोग में लाया जाता है। हरित रसायन तकनीक के अन्तर्गत इस प्रक्रिया के द्वारा फाईजर ने यूके पुरस्कार जीता।

आईबूप्रोफेन कई वर्षों से दर्द निवारक दवाओं के मुख्य अवयव हैं। यह सर्वप्रथम 1961 में बनाया व पेटेंट कराया गया। मूलरूप से उपयोग किए गए कृत्रिम पथ में 6 क्रमिक चरण थे व कुल परमाणु क्षमता मात्र 40 थी।

अगर आईबूप्रोफेन को इसी प्रकार बनाया जाता प्रतिवर्ष 20,000 टन से अधिक अवांछित अवशेष उत्पन्न हो जाता। 1940 दशक के आरम्भ में बी एच सी कम्पनी (अब बी ए एस एफ का भाग है) ने हरित रसायन के कई सिद्धान्तों का उपयोग करते हुए कृत्रिम पथ की पुनः संरचना की। पहली प्रक्रिया में प्रथम चरणों में एल्यूमिनियम ट्राईक्लोराइड के प्रयोग ने एल्यूमिनियम हाइड्रोक्साइड उत्पन्न किया जो कि ठोस पदार्थ के रूप में छन कर निकला। एक उच्च पैदावार क्रिया के लिए एल्यूमिनियम ट्राईक्लोराइड अधिक मात्रा में आवश्यक थी जो कि अपशिष्ट पदार्थ की समस्या को बड़ा रही थी। परन्तु हरित रसायन विधि के अर्न्तगत हाइड्रोलोरिक एसिड को एल्यूमिनियम ट्राईक्लोराइड के स्थान पर उत्प्रेरक के रूप में प्रक्रिया को उत्तेजित करने के लिए प्रयोग किया गया। हाइड्रोजन फलोराइड को पुर्नप्राप्त किया गया और उत्पादन के अगले चरण में फिर से उपयोग किया गया। इस प्रकार प्रक्रिया में एक बड़ी मात्रा में ठोस अपशिष्ट पदार्थ हटाना संभव हुआ।

इस नई प्रक्रिया में दो और चरण जरूरी थे दोनों में ही उत्प्रेरक का उपयोग किया गया हैं। मूलरूपी संश्लेषण के विपरीत अतः फिर से अपशिष्ट पदार्थ कम संभव हुआ। इस प्रकार कुल मिलाकर परमाणु क्षमता में 77 प्रतिशत की प्रमुख वृद्धि हुई। सैद्धान्तिक रूप से पहली क्रिया (एसिटिक एसिड जो प्रथम चरण का प्रतिकारक है उसको सरलता से एसिटिक एनंहाइड्राइड में परिवर्तित किया जा सकता है) के सह उत्पाद को पुर्नप्राप्ति द्वारा क्षमता को 99 प्रतिशत तक सुधारा जा सकता है। अतः इस नवीन पथ द्वारा अधिक आईबूप्रोफेन कम समय व कम व्यय के साथ उत्पन्न होता है, अर्थात ग्राहक के लिए सस्ते उत्पाद व उत्पादक के लिए अधिक मुनाफा (लाभ) देता है।

जैविक ईंधन (स्वच्छ ईंधन)

पैट्रोलियम उत्पाद शक्ति प्रदान करते आए हैं लेकिन ये सीमित हैं। हमें ऐसा विकल्प चाहिए जो अषोधित तेल की भांति कार्य करें परन्तु उससे सम्बद्ध हानियों के बिना। जैविक ईंधन इसका सम्भावित उत्तर है। यह ईंधन कई प्रकार के पदार्थों द्वारा बनाया जा सकता है। बेकार लकड़ी से लेकर

शैवाल, यहां तक कि आनुवांशिक जैविक बैक्टीरिया से भी यह ईंधन अलग अलग स्थानों पर विभिन्न कार्यकलापों के लिए उत्पन्न किया जाता है।

एल्कोहल निर्भर जैविक ईंधन के विकल्पों में ब्यूटेनॉल सबसे प्रभावी सिद्ध हुआ है क्योंकि यह पानी में घुलनशील है और एथेनाल से अधिक ऊर्जा देता है और आन्तिरक दहन इंजन में बिना किसी बदलाव के प्रयोग में लाया जा सकता है। सबसे अधिक ब्यूटेनॉल के उत्पादन में काम में आने वाली जैविक फसलें हैं–खाद्य निर्भर स्रोत जैसे स्टार्च गन्ने की शर्करा परन्तु यह समस्या पूर्ण भी है क्योंकि यह फसल खाद्य पदार्थों के उत्पादन को प्रभावित करेगा। इस समस्या को ब्यूटेनॉल उत्पादन की नयी विधि विकसित करके दूर किया जा सकता है। जिसमे सरल लकड़ी की छीलन का प्रयोग होता है।

जैविक इथेनॉल फसल के अवशेष अवयवों, जैसे मक्का, गन्ना, गेहूँ व चावल की फसल, से खमीर बनाकर प्राप्त किया जाता हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि 25 प्रतिशत राष्ट्रीय परिवहन ईंधन बायो रिफाइनरी से मिल सकता है।

निष्कर्ष

ई–कारक की जानकारी, परमाणु अपव्ययता, उद्योग व शिक्षा जगत के जैविक संश्लेषण की मूल धारा में सम्मिलित हो गए हैं। कुछ वर्षों पूर्व से औषधि निर्माण में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। जिसने शुद्ध उत्पादों के निर्माण में किफायती तरीकों को प्रोत्साहन दिया है। इनमें सर्वोपरि है पारम्परिक विधि के स्थान पर स्थायी तकनीक प्रणाली को महत्व दिया जाना।

पैट्रोल व कोयला के भण्डारों की दुर्लभता, नवीकरण ऊर्जा स्त्रोतों की खोज को और आकर्षक बना रही है। जैविक डीज़ल अपने पर्यावरण हितैषी स्वभाव के कारण ईंधनों में सर्वश्रेष्ठ ईंधन है और इसका उत्पादन खर्च भी कम है। अतः संक्षेप में, स्थिरता व हरित रसायन की चुनौती जैविक संश्लेषण में बदलाव को प्रेरित कर रही है। यह रसायन, औषधि व सहयोगी उद्योग के आर्थिक, पर्यावरण व सामाजिक हित को सहायक होगी।

सन्दर्भ

1. www.epa.gov/greenchemistry.
2. www.rsc.org/Publishing/Journals/gc/index.asp.
3. R. A. Sheldon (1993) Marcel Dekker , New York, 47 - 6 .
4. R. A. Sheldon (2008) Chem. Commun., 29 3352 -3365.
5. R.A . Sheldon (2007) Green Chem., 9, 1273 - 1283.
6. S. L. Y. Tang, R. L. Smith and M. Poliakoff (2005) Green Chem., 7, 761-762.
7. M. Poliakoff and P. Licence (2007) Nature, 450, 810-812.
8. M. Senthil Kumar, A. Ramesh, B. Nagalingam (2003) Biomass and Bioenergy, 25, 309-318.
9. D. J. C. Constable (2007) Green Chem., 9, 411-420.
10. E. J. Beckman (2004) J. Supercrit. Fluids, 28, 121-19.

स्मृति ह्रास के प्रतिकार हेतु प्राचीन भारतीय चिकित्सा विज्ञान का योगदान एवं महत्त्व

संजीव कुमार ओझा, अर्चना राय, प्रमोद कुमार सिंह, तथा श्रीकृष्ण तिवारी
राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001

सारांश

बुद्धि अर्थात् मेधा ईश्वर द्वारा मनुष्य को प्रदत्त एक अनुपम देन है जिसके द्वारा मनुष्य समस्त जीव लोक में सर्वोच्च स्थान पर आसीन है। स्मृति ह्रास या तो एक अचानक या क्रमिक शुरुआत है, हो सकता है और स्थायी या अस्थायी रूप में हो सकता है। एलजाएमर्स डिजीज (ए डी) स्मृति ह्रास के प्रमुख कारणों में से एक कारण है। यद्यपि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में निरंतर नवीन शोधों के द्वारा स्मृतिनाश (डिमेंशिआ) रोग के प्रतिकार हेतु उन्नत औषध प्राप्ति के लिए प्रयास किये जा रहे हैं, परंतु अद्यतन उपलब्ध औषधियों द्वारा इस रोग का प्रतिकार संभव नहीं हो पा रहा है। कतिपय दवाएँ सफल परिणाम तो दिखाती हैं किंतु साथ–साथ में अनेक दुष्परिणामों (साइड इफैक्ट) को भी उत्पन्न कर देती हैं। प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में वर्णित औषधीय पौधों का प्रयोग न केवल सुपरिणाम लाने की क्षमता रखता है, अपितु होने वाले दुष्परिणामों से भी सुरक्षा प्रदान करता है। इस दिशा में आयुर्वेद एक आशा की किरण पैदा करता है।

परिचय

बुद्धि अर्थात् मेधा ईश्वर द्वारा मनुष्य को प्रदत्त एक अनुपम देन है जिसके द्वारा मनुष्य समस्त जीव लोक में सर्वोच्च स्थान पर आसीन है। इसके तीन घटक हैं–धी (Recognition power), धृति (Retention power) एवं स्मृति (Recalling power)? पूर्व में दृष्ट, श्रुत, अनुभूत आदि संदर्भों का प्रसंग उपस्थित होने पर पुनः वर्तमान में प्रस्तुत होना स्मृति कहलाता है। स्मृति मस्तिष्क की एक प्रमुख बौद्धिक क्षमता है। मस्तिष्क में जो कुछ भी अनुभव, सूचना और ज्ञान के रूप में संग्रहित है वह सभी स्मृति के ही विविध रूपों में व्यवस्थित रहता है। स्मृति मानस पटल पर अंकित होकर मानव के व्यवहार और व्यक्तित्व को बनाती है। बाह्य अथवा आंतरिक कारणों द्वारा इस स्मृति का नष्ट होना स्मृति ह्रास या नाश के नाम से जाना जाता है, जो कि वर्तमान युग की प्रमुख समस्या में से एक है। स्मृति हानि या तो एक अचानक या क्रमिक शुरुआत है, हो सकता है और स्मृति हानि स्थायी या अस्थायी रूप में हो सकता है। एलजाएमर्स डिजीज (ए डी) स्मृति नाश के कारणों में से एक प्रमुख कारण है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं अंतर्राष्ट्रीय एलजाएमर्स डिजीज (ए डी आई) की रिपोर्ट 2012 के अनुसार समस्त विश्व में प्रति चार सेकेण्ड में स्मृतिनाश (डिमेंशिआ) का एक नया रोगी पाया जाता है अर्थात् 77 लाख नये रोगी प्रतिवर्ष बढ़ जाते हैं, जो कि इस रोग की भयावहता का प्रदर्शन करता है। एलजाएमर्स एण्ड रिलेटेड डिसओर्डर्स सोसाइटी ऑफ इण्डिया द्वारा निर्मित डिमेंशिआ इण्डिया रिपोर्ट 2012 के अनुसार 2015 तक भारत में 60 वर्ष से अधिक आयु वाले स्मृतिनाश के रोगियों की संख्या करीब 44 लाख तक पहुँचने का अनुमान है जबकि वर्तमान में इनकी कुल संख्या करीब 37 लाख है।

गीता में स्मृतिभ्रंश की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि –

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोघभिजायते।।
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

(श्रीमद्भगवतगीता अध्याय–2 श्लोक सं.–62–63)

अर्थात् सांसारिक विषयों के ध्यान से संग, संग से काम, काम से क्रोध, क्रोध से संमोह, संमोह से स्मृतिभ्रंश एवं स्मृतिभ्रंश से बुद्धि का नाश हो जाता है।

विवरण–यद्यपि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में निरंतर नवीन शोधों के द्वारा स्मृतिनाश (डिमेंशिआ) रोग के प्रतिकार हेतु उन्नत औषध प्राप्ति के लिए प्रयास किये जा रहे हैं, परंतु अद्यतन उपलब्ध औषधियों द्वारा इस रोग का समूलनाश संभव नहीं हो पा रहा है। कतिपय दवाएँ सफल परिणाम तो दिखाती हैं किंतु साथ–साथ में अनेक दुष्परिणामों (साइड इफैक्ट) को भी उत्पन्न कर देती हैं। प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में वर्णित औषधीय पौधों का प्रयोग न केवल सुपरिणाम लाने की क्षमता रखता है, अपितु होने वाले दुष्परिणामों से भी सुरक्षा प्रदान करता है। इस दिशा में आयुर्वेद एक आशा की किरण पैदा करता है। प्रस्तुत शोध पत्र में आयुर्वेदोक्त औषधीय पौधों का आधुनिक विज्ञान सम्मत एक तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। स्मृतिनाश में लाभप्रद कुछ आयुर्वेदीय औषधीय पौधों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है –

1. अश्वगंधा (Bot. Name Withania somnifera Family: Solanaceae) इसके मूल से विदाफेरिन –ए, विदानिन, सुडोविदनिन, कुसियोहाइग्रिन, एनाहाइग्रिन, ट्रापिन तथा एनाफेरिन आदि क्षाराभ निकाले जा चुके हैं। इसका चूर्ण घी व मिश्री के साथ अनिद्रा समाप्त करता है।

2. अतसी (Bot.Name Linum usitatissimum Family. Linaceae) – इसके तेल में अल्फा लाइनोलिक एसिड प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो कि एक प्रकार का ओमेगा 3 फैटी एसिड है। मस्तिष्क के स्वस्थ विकास के लिए ओमेगा 3 फैटी एसिड अति आवश्यक तत्व है, साथ ही मानसिक अवसाद, मानसिक असंतुलन, स्मृति हानि आदि रोगों रोगों पर भी इसका प्रयोग सफल परिणाम दिखाता है। अतसी का बीज कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड स्तर को भी संतुलित करने में समर्थ होता है।

3. आमलकी (Bot.Name: Emblica officinalis Family: Euphorbiaceae \ Phyllanthaceae) आचार्य चरक ने इसे वयःस्थापन हेतु सर्वश्रेष्ठ बताया है। इसे अमृत फल भी कहते हैं। इसका प्रयोग रसायन के रूप में करते हैं। इसके प्रयोग से बुद्धि में वृद्धि तथा वृद्धावस्था दूर होती है।

4. अखरोट (Bot.Name: Juglans Regia Family: Juglanduceae) इसमें मुख्य रूप से मोनो एवं पॉली अनसेचुरेटेड फैटीएसिड, प्रोटीन तथा फाइबर पाये जाते हैं। ओमेगा–3 का एक प्रमुख स्रोत है जो कि मस्तिष्क के लिए आवश्य है। इसमें मिलेटोनिन नामक हार्मोन (bio-available form) भी पाया जाता है, जोकि निद्रा लाने एवं उसके नियंत्रण में सहायक होता है। यह एंटीऑक्सिडेंट के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

5. कपिकच्छू (Bot.Name: Mucuna pruriens Family : Fabaceae)–इसकी रोमश लता होती है। इसके रोम में मुकुनैन नामक तत्व पाया जाता है जो कि शरीर पर लगने पर हिस्टैमिन का स्राव करवाता है जिससे खुजली होने लगती है। बीजों में लीवोडोपा प्रमुखता से पाया जाता है जोकि न्यूरोट्रांसमीटर डोपामीन के स्रवण हेतु आवश्यक होता है। कपिकच्छू का प्रयोग डोपामीन की कमी से उत्पन्न रोगों एवं स्मृतिनाश जैसे पार्किंसंस डिजीज में अच्छा परिणाम दिखाता है।

6. गुडुची (Bot.Name: Tinospora cordifolia Family. Menispermaceae) इसमें ग्लाइकोसाइड–कार्डियोसाइड, गिलोइन, गीलेनिन, एल्कैलॉयड, टिनोस्पोरिन, टिनोस्पोरॉल, टिनोस्पोरिक एसिड, बर्बेरिन, पल्मिटिन आदि, सेस्किट्रिपनॉयड–टिनोकर्डीफोलिन, स्टिरॉयड आदि पाये गये हैं। यह एडाप्टोजेनिक होता है, अतः तनाव आदि रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है। यह विभिन्न प्रकारों के मानसिक विकारों में लाभप्रद होता है। इसका स्वरस स्मृति व मेधावर्धक होता है।

7. ज्योतिष्मती (Bot.Name: Celastrus paniculatus Family. Celastraceae) इसे इण्टलैक्ट ट्री के नाम से भी जाना जाता है। बीज में उपस्थित तेल में मुख्यतः फैटी एसिड जिनमें ओलिक एसिड, लाइनोलिक एसिड, स्टिरिक एसिड आदि पाये जाते हैं। इसके तेल का प्रयोग स्मृतिनाश जैसे रोगों तथा मस्तिष्क टॉनिक के रूप में किया जाता है।

8. टामाँसी (Bot.Name Nordostachys jatamansi Family - Valeriananceae) इसमें जटामांसिक तथा जटामांसोन नामक तत्व पाये जाते हैं। इसका प्रयोग संज्ञास्थापन एवं मानसदोषहर औषध के रूप में किया जाता है। इसका प्रयोग मानसिक अवसाद की अवस्था में भी किया जाता है।

9. तगर (Bot Name : Valeriana Wallichii Family: Valerianaceae) इसके मूल में वेलेरिएनिक एसिड पाया जाता है। ये मध्य व मस्तिष्क शामक प्रभाव रखता है। यह रक्तभार कम करता है, हृददौर्बल्य में इसका प्रयोग करते हैं।

10. बादाम (Bot.Name Prunus amygdalus Family Rosaceae) यह विटामिन ई का अच्छा स्रोत होता है (24 मिग्रा/100 ग्राम)। इसमें प्रचुर मात्रा में रेशे, विटामिन बी, आवश्यक खनिज तत्व तथा मोनोअनसेचुरेटेड वसा आदि पाये जाते हैं। इसके त्वचा में पॉलफिनॉल भी मिलता है। यह मस्तिष्क एवं नाड़ी संस्थान के लिए पोषक तत्व प्रदान करता है। इसमें मेधावर्धक गुण भी पाया जाता है। एक अध्ययन के अनुसार यह एण्टीड्नलैमेट्री, एण्टीहिपैटोटॉक्सिक तथा इम्यूनिटी बढ़ाने वाला होता है।

11. ब्राह्मी – नाम से दो पौधे लिये जाते हैं –

(अ) ऐन्द्री – (Bot.Name :Bacopa monnieri Family Scrophulariaceae) यह नम तथा जलासन्न भूमि में पाई जाती है। इसे संस्कृत भाषा में ऐन्द्री (शक्तिदायक तथा जलासन्न भूमि में होने के कारण) कहते हैं। स्वाद कटु होने तथा जल के समीप होने के कारण इसे जलनीम भी कहते हैं। इसमें ब्राह्मीन, हपेस्टिन नामक क्षाराभ एवं तीन अन्य क्षारों का मिश्रण पाया जाता है। इसके अतिरिक्त सैपोनिन, मोनिएरिन, हरसैपोनिन, बेकोसाइड–ए और बी आदि पाये जाते हैं। स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए इसका चूर्ण दूध के साथ प्रयोग में लाया जाता है। अवसाद व मानसिकदौर्बल्य आदि अवस्थाओं में इसके पत्तों का चूर्ण अत्यंत उपयोगी है। इसका प्रयोग वाक्शक्ति वर्धन, मस्तिष्क एवं नाड़ी दौर्बल्यनाश हेतु भी किया जाता

(ब) मण्डूकपर्णी (Bot.Name Centella asiatica, Family Umbelliferae (Apiaceae) यह भारत में लगभग दो हजार फीट की ऊँचाई तक नम तथा जलासन्न भूमि के निकट पाई जाती है। इसे मण्डूकपर्णी (मेढ़क के समान पत्र होने के कारण) तथा सरस्वती (मेध्य होने के कारण) कहते हैं। इसमें हाइड्रोकोटिलिन नामक एल्कैलॉयड, एशिटिकोसाइड नामक ग्लाइकोसाइड पाया गया है। इसमें से ब्राह्मोसाइड, ब्राह्मोइनोसाइड, ब्राह्मोसाइड, ब्राह्मोइक एसिड, आइजोब्राह्मिक एसिड, वेटुलिक एसिड व स्टिग्मास्टेरोल भी निकाले गये हैं। इसका पत्र स्वरस मेधा व स्मृति वर्धक होता है। यह मस्तिष्क तथा नाड़ीसंस्थान की रक्षा करताहै व संज्ञानात्मक वृद्धि करता है।

12. यष्टिमधु (Bot.Name Glycyrrhiza glabra Family Araceae)–इसका मुख्य घटक ग्लाइसिराइजिन नामक तत्व है जोकि ग्लाइसिराइजिक एसिड के रूप में उपस्थित रहता है। इसके

अतिरिक्त इसमें स्टीरॉयड भी पाये जाते हैं। यह मेधावर्धक होता है। शिरोरोग, कास, श्वास तथा मानसिक विकारों में इसका प्रयोग किया जाता है।

13. वचा (Bot.Name Acorus calamus Family Araceae) इसमें एकोरिन (उड़नशील तेल), एकोरिटीन (choline), कैलेमाइन (crystalline alkaloid), कैल्शियम ऑक्जलेट, स्टार्च, म्युसिलेज तथा टैनिन आदि पाये जाते हैं। विविध मानसिक विकारों तथा वाकशक्ति को बढ़ाने हेतु इसका प्रयोग करते हैं। मेधा को बढ़ाने हेतु कुमार रसायन में इसका प्रयोग किया जाता है। इसके राइजोम का प्रयोग विविध प्रकार के मानसिक विकारों में किया जाता है। इसका लेप मस्तक पर करने से सिरदर्द में लाभ होता है।

14. शंखपुष्पी – (Bot.Name Convolvulus pleuricaulis Family: Convolvulaceae) इसमें मुख्यतः दो प्रकार के क्रिस्टलीय द्रव्य तथा एक एल्कैलॉयड शंखपुष्पीन पाया गया है। इसके अतिरिक्त ग्लाइकोसाइड, कॉमेरिन तथा लैविनॉयड भी पाये जाते हैं। इसके चूर्ण का प्रयोग प्रतिदिन प्रातःकाल में करने से स्मरण शक्ति बढ़ती है। यह शरीर के स्ट्रैसहार्मोन (cortisol and adrenaline) पर नियंत्रण रखता है अतः इसका प्रयोग चिंता, अवसाद आदि अवस्था में भी किया जाता है। स्मृतिवर्धक गुण होने के कारण ये स्मृतिह्रास, एल्जाइमर्स आदि रोगों में भी लाभप्रद है। इसके स्वरस या चूर्ण का प्रयोग अपस्मार, विषाद, हिस्टीरिया रोगों में किया जाता है।

15. हल्दी (Bot.Name: Curcuma domestica Family:Zingiberaceae) – इसका मुख्य घटक कर्क्यूमिन नामक पीत रंजक द्रव्य है। कर्क्यूमिन एमलॉयड प्रोटीन बॉडी द्वारा बनने वाले प्लैक (एलजाएमर्स डिजीज) को रोक कर मस्तिष्क को सुरक्षा प्रदान करता है। आधुनिक शोधों द्वारा यह पुष्ट किया जा चुका है कि कर्क्यूमिन तंत्रिकाओं को भी सुरक्षित करता है (न्यूरोप्रोटेक्शन)। इस प्रकार हल्दी का प्रयोग स्मृतिनाश में लाभप्रद हो सकता है।

विमर्श – सारतः स्मृतिनाश में लाभप्रद आयुर्वेद में वर्णित पौधों का आयुर्वेदीय ग्रंथोक्त एवं आधुनिक वैज्ञानिक शोधों का एक तुलनात्मक अध्ययन सारिणी संख्या–1 में है।

निष्कर्ष : प्राचीन ज्ञान आयुर्वेद में तीन उपस्तम्भों के अंतर्गत आहार निद्रा और ब्रह्मचर्य बताये गये हैं ये क्रमशः भौतिक शरीर, मन और आत्मा का पोषण करते हैं इनमें एक के भी न रहने पर जीव नष्ट हो जाता है। आहार पौष्टिक होना चाहिए जिनमें आजस्रिक रसायन जैसे दुग्ध, मधु व घृत आदि का नित्य प्रयोग सम्मिलित है। निद्रा–यह दिनचर्या रात्रिचर्या का एक अंग है इसे आचार्य चरक ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि यदा तु मनसि क्लांते (च.सू. 21/35) जब मन और इन्द्रियाँ अपना कार्य करते हुए थक जाती हैं –जिसे आधुनिक विज्ञान द्वारा सर्केडियन चक्र (circadian rhythm) से तुलना करते हुए अंधेरा होने पर या तम के बढ़ने पर निद्रा का प्रादुर्भाव माना जाता है। यह निद्रा मन का पोषण करती है जिससे मन और इन्द्रियाँ पुनः चेतनावान होकर अपना कार्य सुचारू रूप से कर पाती है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का विकास माना गया है। अतः पौष्टिक आहार के साथ सम्पूर्ण निद्रा स्वास्थ्य एवं रोग रहित दीर्घ आयु के लिए अति आवश्यक होते हैं, परन्तु आजकल का यह भागदौड़ व तनाव भरा जीवन विविध शारीरिक तथा मानसिक विकारों को उत्पन्न करने में अग्रणी है। स्मृति ह्रास इस नव जीवन पद्धति की ही एक देन है।

उपर्युक्त वर्णित द्रव्यों का यदि प्रयोग किया जाये तो स्मृतिनाश नामक रोग का प्रतिकार संभव हो सकता है। यह औषधीय द्रव्य सरलता से उपलब्ध है तथा इनके प्रयोग का कोई दुष्परिणाम भी नहीं होता है। इस क्षेत्र में नवीन मापदंडों पर आधारित शोधों की आवश्यकता है जिसके द्वारा उन्नत किस्म की औषध विकसित की जा सके।

इस्पात रेशों द्वारा प्रबलित कंक्रीट सम्मिश्र का सुरक्षात्मक अभियांत्रिकी में अनुप्रयोग

अमर प्रकाश, नागेश रं अय्यर, आनन्दवल्ली, एन भरतकुमार, बी एच कृष्णमूर्ति
तथा *कुलभूषण राय
संरचनात्मक अभियांत्रिकी अनुसंधान केन्द्र, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद
**अनुसंधान तथा विकास स्थापना (इंजीनियर्स), आलंदी रोड, दिघी, पुणे,*

सारांश

इस लेख में परमाणु बम विस्फोट से सुरक्षा प्रदान करने के लिए भूमिगत कठोर आश्रय के अभिकल्प में इस्पात रेशा (स्टील फाइबर) द्वारा प्रबलित कंक्रीट सिफ्कॉन) के अनुप्रयोग को प्रस्तुत किया गया है। सिफ्कॉन (8 प्रतिशत मात्रा में इस्पात रेशा) से बने दो प्रकार के अनुप्रस्थ काट वाले (वृत्ताकार और केश पिन आकार) भूमिगत कठोर आश्रयों का अध्ययन किया गया है। उन्नत श्रेणी के वाणिज्यिक सॉफ्टवेयर का उपयोग करके संख्यात्मक अनुरूपन (सिमुलेशन) के माध्यम से आश्रय की संरचनात्मक अभिकल्प पर ध्यान केंद्रित किया गया है। प्रायोगिक और संख्यात्मक जांच के लिए भूमिगत आश्रय के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूनों को अर्ध–स्थैतिक भार के तहत उनके संरचनात्मक व्यवहार को समझने के लिए प्रयोग किया है। इस्तेमाल किए गए सम्मिश्र पदार्थ का गुणात्मक विश्लेषण, अभिकल्प मिश्रण की तैयारी, एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूनों पर किए गए परीक्षण की प्रक्रिया और प्राप्त परिणामों की इस लेख में विशेष रूप से चर्चा की गयी है। संख्यात्मक मॉडल में मृदा और आश्रय संरचना के मध्य होने वाले परस्पर आदान–प्रदान का अध्ययन करने के लिए मृदा को मृदा स्प्रिंग और प्रघात–रोध प्रणाली के माध्यम से उपयोग किया गया है। इन मृदा स्प्रिंग और प्रघातरोध के यांत्रिक गुण उपयुक्त साहित्य में उपलब्ध नमूनों के आधार पर निर्धारित किए गए हैं। एक अनुरूपित कृत्रिम विस्फोट के तहत भूमिगत आश्रय की प्रतिक्रिया की जांच करने के लिए परिमित तत्व विश्लेषण (एफ ई एम) का उपयोग किया गया है। एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने की मदद से संख्यात्मक विश्लेषणों और प्रयोगों से प्राप्त परिणामों के आधार पर वास्तविक पूर्णाकार भूमिगत आश्रय की दीवार की मोटाई वृत्ताकार अनुभाग के लिए 75 मिमी एवं केश पिन आकार के लिए न्यूनतम दीवार की मोटाई 125 मिमी पायी गयी है।

इसके अलावा केश पिन आकार में दीवारों और फर्श के बीच के जोडों में जो अत्यधिक तनाव प्रतिबल उत्पन्न होता है उससे बचने के लिए चिकने ढलानयुक्त जोडों की सिफारिश भी की गयी है। यह भी पाया गया है कि केश पिन आकार वाले भूमिगत आश्रय के फर्श के लिए 200 मिमी मोटी स्लैब की जरूरत होगी। इस तकनीकी लेख में की गयी जांच के आधार पर भूमिगत कठोर आश्रय के निर्माण के लिए संरचनात्मक सामर्थ्य की दृष्टि से जो सिफारिश की गईं हैं, वे एक मील की दूरी पर 50 किलोटन क्षमता के परमाणु बम विस्फोट के विरूद्ध सुरक्षा करने के लिए पर्याप्त हैं। इस लेख का दायरा संरचनात्मक सामर्थ्य की दृष्टि से अभिकल्प प्रदान करने तक ही सीमित है। अतः विस्फोट के दौरान उत्पन्न होने वाले विकिरण, रसायनिक और जैविक इत्यादि के प्रभाव से संबंधित अन्य पहलुओं को इस लेख में शामिल नहीं किया गया है। इस अध्ययन की विशेषता यह है कि सिफ्कॉन से निर्मित भूमिगत आश्रय,

परंपरागत आर सी सी से बने आश्रय की तुलना में काफी हल्के होंगे। साथ ही साथ छोटे–छोटे लंबाई के कई इकाइयों को कारखाने में भी तैयार किया जा सकता है, और फिर आसानी से उन्हें सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण जगहों पर ले जाया जा सकता है। इस तरह यह लेख सामरिक दृष्टि से आपात की स्थिति में सुरक्षा प्रदान करने में सार्थक भूमिका निभा सक्ता है।

परिचय

विस्फोट और प्रघातों के प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करने हेतु संरचनात्मक भूमिगत संरचनाओं का निर्माण कार्य सुरक्षात्मक अभियांत्रिकी के क्षेत्र में काम कर रहे इंजीनियरों के लिए एक चुनौतीपूर्ण काम है। इन विषयों से सम्बंधित प्रासंगिक दस्तावेज और वर्गीकृत प्रयोगात्मक आंकडे प्रतिबंधित या गुप्त होने के कारण खुले स्रोतों से पाना बहुत मुश्किल होता है। इसलिए प्रायः संख्यात्मक अनुरूपन की मदद से इन विशयों का अध्ययन करना एक उचित एवं आम तरीका है, जो कि एक बेहतर विकल्प भी लगता है। बम विस्फोट और विस्फोट से उत्पन्न तरंगों के प्रसार में शामिल भौतिक प्रक्रियाएं बहुत ही जटिल होती हैं। इसलिए इन विस्फोटों की घटनाओं और उनके प्रभावों का सटीक रूपांतरण करने के लिए पदार्थों तथा बलों को परिष्कृत संख्यात्मक नमूने की मदद से समझा जाता है। वास्तव में विस्फोट से उत्पन्न असीम ऊर्जा और बलों को सहन करने के लिए भूमिगत संरचनाओं का अभिकल्प करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। यह जटिलता और भी बढ जाती है, जब मृदा और संरचना के बीच होने वाले बलों के परस्पर आदान–प्रदान को भी अध्ययन में शामिल करना होता है। यान और वू ने 2003 में एवं वांग और लू ने 2002 में पर्याप्त रूप से विस्तृत संख्यात्मक अनुरूपन को इन विषयों का अध्ययन करने के लिए एक वांछनीय विकल्प बताया। हाल के दशकों में छोटे–छोटे इस्पात रेशा द्वारा प्रबलित सम्मिश्र कंक्रीट (सिफ्कॉन), रेशा प्रबलित कंक्रीट (एफ आर सी), उच्च प्रदर्शन वाले छोटे रेशों द्वारा प्रबलित (एच पी एफ आर सी) विभिन्न नागरिक संरचनाओं में जैसे औद्योगिक कारखानों में फर्श, फुटपाथ, पुरानी इमारतों के पुनर्बलन इत्यादि में काफी प्रयोग किया गया है। यह भी कहा जाता है कि इन पदार्थों में कई वांछनीय गुण पाए जाते हैं उदाहरण के लिए, उच्च तन्यता सामर्थ्य, कड़ापन और लचीलापन, इन गुणों के आधार पर ये सम्मिश्र सुरक्षात्मक अभियांत्रिकी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

लंकार्ड ने 1985 में, नामन और होम्रिच ने 1989 में, नामन और साथियों ने 1992 में, तथा परमे वरन ने 1994 में इन रेशा सम्मिश्र से सम्बन्धित काफी अनुसंधान कार्यों को प्रकाशित किया। इन अध्ययनों में ज्यादातर कार्य इन पदार्थों के विशेष गुणों का प्रयोगात्मक अध्ययन से जुडा हुआ था। यांग ने 1997 में भूमिगत संरचनाओं के आस–पास विस्फोट होने पर मृदा द्वारा अवमंदन, संरचना की कठोरता एवं आकार, विस्फोट से स्रोत की गहराई और अधिस्फोटन की दूरी आदि का संरचना की प्रघात प्रतिक्रिया पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। इस प्रकाशित अध्ययन में भूमिगत आश्रयों के ऊपर परमाणु हथियारों से होने वाले विस्फोट की वजह से उत्पन्न बलों के प्रभाव को परिमित तत्व विधि का उपयोग कर जांचा गया। डेनियल और क्रौथाम्मेर ने 1997 में भूमिगत संरचनाओं की क्षमताओं का आकलन करने के लिए संख्यात्मक नमूने के द्वारा जिसमें एक आंशिक रूप से भूमिगत संरचना और भूगर्भिक पुनर्भरण की हुई मृदा को एक गतिशील माध्यम, एक प्रघात अवरोधी पदार्थ, एक विस्फोटक चार्ज से बनी प्रणाली मानकर अध्ययन किया। मेयर और जन्जों ने 2011 में, तथा क्रौथाम्मेर ने 2008 में, और मेयर हौफर ने 1994 में, भूमिगत विस्फोट और विस्फोटों के संरचनाओं पर प्रभाव का व्यापक शोध प्रकाशित किया है। यान ने 2002 में कंक्रीट की सतह पर पड़ने वाले दरारों के प्रतिरूप में इस्पात रेशा की अधिक मात्रा के प्रभाव का एक मात्रात्मक अध्ययन किया। बम विस्फोट के समय उच्च दर पर पडने वाले संपीडन के तहत मृदा के व्यवहार की भविष्यवाणी करना बहुत ही मुश्किल कार्य है। मृदा के गुणों का स्प्रिंग और प्रघातरोध नमूने के आधार पर अध्ययन करने के लिए अनेक पुस्तकें भी उपलब्ध हैं, उदाहरण के

लिए कुछ पुस्तकें इस प्रकार हैं मूरे (1984), मूर्ति (2007) तथा दास (1983) इत्यादि। वांग और लू ने 2003 में मृदा को तीन अवस्थाओं–ठोस कण, पानी और हवा मानकर एक अध्ययन प्रकाशित किया। जिसमें बम विस्फोट के समय, अधिस्फोटन स्रोत के पास की मृदा के विरूपण के लिए दो प्रमुख कारणों का उल्लेख किया। पहला कारण मृदा के ठोस कणों द्वारा निर्मित ढाँचे की विकृति, तथा दूसरा सभी मृदा के कणों का अपना खुद का विरूपण बताया गया। अतः मृदा से सम्बन्धित गुणों का विश्लेषण तथा अत्यधिक संपीडन की परिस्थिति में उसके व्यवहार के जानकारी के लिए ऊपर कही गयीं बातें अति महत्वपूर्ण होती हैं।

इस साहित्य की समीक्षा से यह समझा जा सकता है कि भूमिगत आश्रयों के अभिकल्प के लिए विश्लेषणात्मक और संगणनात्मक कौशल की आवश्यकता होती है। यह स्पष्ट है कि परमाणु विस्फोट की घटनायें दुर्लभ होती हैं अतः कृत्रिम विस्फोट को आमतौर पर ऐसी संरचनाओं के विश्लेषण और अभिकल्प के लिए उपयोग किया जाता है। एक परमाणु बम विस्फोट के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करने के लिए सिफ्कॉन द्वारा निर्मित कठोर भूमिगत आश्रय के अभिकल्प में अपनाई गयी प्रक्रिया के बारे में इस लेख में चर्चा की गयी है। इसके अलावा प्रयोगात्मक और संख्यात्मक जांच से प्राप्त परिणामों के अनुसार कुछ सिफारिशें भी की गयी हैं।

समस्या की परिभाषा

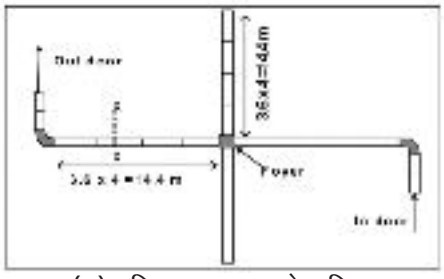

(क) भूमिगत आश्रय का रेखाचित्र।

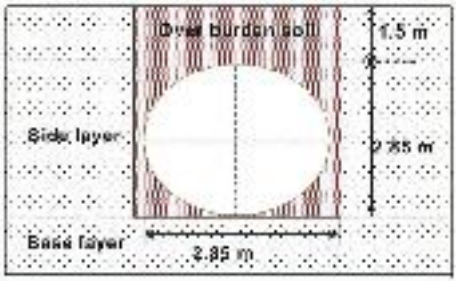

(क) एक्स–एक्स पर अनुप्रस्थ काट।

चित्र 1 : भूमिगत कठोर आश्रय का विशिष्ट विवरण।

चित्र 1 में दिखाये गए सिफ्कॉन से बने कठोर भूमिगत आश्रय को अधिस्फोटन के स्रोत से 01 मील की दूरी पर 500 किलोटन क्षमता वाले बम विस्फोट द्वारा उत्पन्न दबाव को सहने के लिए संरचनात्मक अभिकल्प प्रस्तुत किया गया है। 500 किलोटन क्षमता वाले बम के भूमि की सतह के ऊपर 1 मील की दूरी पर होने वाले विस्फोट द्वारा भूमिगत आश्रय के ऊपर अधिकतम अतिसंपीडन 0.15857 मेगापास्कल 1 सेकंड की अवधि के लिए माना गया है। भूमिगत आश्रय संरचना के वृत्ताकार अनुभाग का आंतरिक व्यास 2.7 मी तथा केश पिन आकार के आश्रय के लिए आंतरिक स्पष्ट विमायें भी 2.7 मी. रखी गयीं हैं। भूमिगत आश्रय के ऊपर 1.5 मी. मोटी मृदा का आवरण भी दिया गया है। यह आवरण विकिरण और परमाणु या रसायनिक बम विस्फोट के दौरान रासायनिक प्रभाव से सुरक्षा के लिए प्रदान किया गया है। आश्रयों के विश्लेषण तथा अभिकल्प में अपनाये तरीकों और प्रक्रियाओं को निम्नलिखित अनुच्छेदों में विस्तार से बताया गया है।

उपयुक्त सामग्री का विवरण

प्रस्तावित भूमिगत आश्रय के निर्माण में उपयोग किए गए सिफ्कॉन (सीधे इस्पात रेशा 8 प्रतिशत आयतनानुसार) के प्रत्यास्थता गुणांक और प्वाइजन अनुपात के मिश्रण को नियम द्वारा निर्धारित किया गया है। प्रत्यास्थता गुणांक अनुदैर्घ्य दिशा में 35200 मेगापास्कल और अनुप्रस्थ दिशा में 21560 मेगापास्कल पाया गया, तथा प्वाइजन अनुपात 0.16 गणना द्वारा प्राप्त किया गया।

सिफ्कॉन की संपीडनात्मक सामर्थ्य 80 मेगापास्कल और विभजित तनाव परीक्षण के तहत तन्यता सामर्थ्य 14 मेगापास्कल निर्धारित की गयी है। हालांकि सिफ्कॉन की वंक सामर्थ्य 24 मेगापास्कल प्राप्त की गयी है। सिफ्कॉन के नमूनों पर संपीडन के तहत किए गए परीक्षणों से प्राप्त व्यवहारों को चित्र 2 में दिखाया गया है।

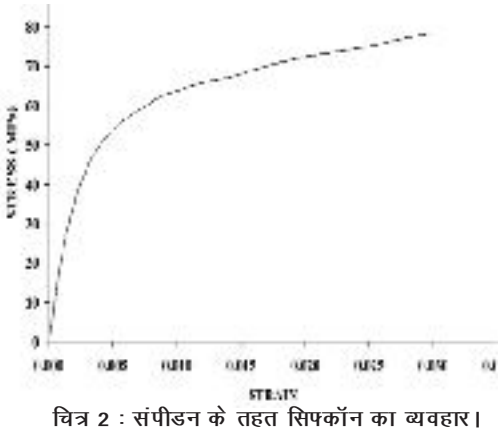

चित्र 2 : संपीडन के तहत सिफ्कॉन का व्यवहार।

मृदा के गुण

कमजोर, मध्यम और अच्छी मृदा के यांत्रिक गुण मौजूदा साहित्य से लिए गए हैं। मृदा की सब–ग्रेड प्रतिक्रियाओं को कमजोर, मध्यम और अच्छी मृदा के लिए क्रमशः 0.02 0.07 0.131 न्यूटन प्रति घन मिमी निर्धारित किया गया है। खोदने के बाद फिर से भरी मृदा और अनछुई मृदा के लिए प्रत्यास्थता गुणांक क्रमशः 12 मेगापास्कल के लिए 50 मेगापास्कल मानकर उपयोग किया है। ताजा भरी मृदा के लिए प्रत्यास्थता गुणांक 200 मेगापास्कल और प्वाइजन अनुपात 0.35 लिए गए हैं, जबकि अनछुई मृदा के लिए ये क्रमशः 400 मेगापास्कल और 0.15 ली गयी हैं। मृदा का निश्चित वजन 1 किलो न्यूटन प्रति घन मी माना गया है।

एक तिहाई पैमाने पर बने नमूने पर जांच

विस्फोट से उत्पन्न संपीडन के तहत सिफ्कॉन के व्यवहार को समझने के लिए, दोनों वृत्ताकार एवं केश पिन आकार वाले आश्रयों के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने विकसित किए गए। दोनों प्रकार के आश्रयों के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने को अर्ध–स्थैतिक भार के तहत संख्यात्मक तथा प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए उपयोग किया है। इन प्रयोगों के द्वारा सिफ्कॉन के व्यवहार को समझने और उसको उपयोग में लाने के लिए कई जांच की गयी हैं।

रैखिक प्रत्यास्थ विश्लेषण

सर्वप्रथम असली भूमिगत आश्रय के अभिकल्प के लिए परिमित तत्व विधि द्वारा आश्रय के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने का सिफ्कॉन के प्रत्यास्थ गुणों के अध्ययन हेतु रेखीय प्रत्यास्थ विश्लेषण किया गया। परिमित तत्व विश्लेषण द्वारा महत्वपूर्ण संयोजनों के अंतर्गत सममित और असममित दबावों के लिए 1 मी लंबाई के एक छोटे से अनुभाग के ऊपर जांच की गयी। इस विश्लेषण में सिफ्कॉन की तन्यता सामर्थ्य 14 मेगापास्कल के आधार पर वृत्ताकार एवं केश पिन आकार के एक–तिहाई मापन के क्रमशः 3 मी और 2 मी लंबाई वाले नमूनों में प्रथम दरार भार का आकलन किया गया, जैसा कि तालिका 1 में दिखाया गया है। एक–तिहाई मापन माडल के नमूनों की अधिकतम भार सहन करने की क्षमता को प्लास्टिक वि लेशण द्वारा ज्ञात किया गया, जो कि संख्यात्मक विश्लेषण में सिफ्कॉन पर वंक परीक्षण के आधार पर प्राप्त तनाव तन्यता 24 मेगापास्कल के लगभग बराबर पायी गयी। यह भी देखा गया है कि आश्रय के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने पर किए गए संख्यात्मक और प्लास्टिक विश्लेषणों द्वारा पूर्वानुमानित अधिकतम भार वहन सामर्थ्य, दरारों के पडने की स्थिति, आदि का प्रयोगात्मक अध्ययन में बहुत लाभ हुआ। विशेष रूप से सिफ्कॉन के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने में विस्थापन एवं विकृति को मापने हेतु नमूनों पर लगाए गए उपकरणों के सही स्थान के चुनाव में।

एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूनों का अध्ययन

चित्र 3 : वृत्ताकार आश्रय संरचना पर प्रायोगिक जांच।

चित्र 4 : केश पिन आकार की आश्रय संरचना पर प्रायोगिक जांच।

प्रयोगात्मक अध्ययन के विभिन्न चरणों अर्थात् दोनों प्रकार के भूमिगत आश्रयों के नमूनों की ढलाई, परीक्षण विधि इत्यादि को चित्र 3 और 4 में दर्शाया गया है। यह देखा जा सकता है कि वृत्ताकार नमूनों को चार खंडों में, तथा केश पिन आकार के नमूनों को एक ही ढलाई में बनाया गया है। इस उद्देश्य के लिए उपयोग में लाये गय साँचे प्रयोगशाला की कार्यशाला में बनाये गए हैं।

भूमिगत आश्रय पर लगाए गए यंत्रों का विवरण

आश्रयों के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूने में भार पड़ने पर होने वाले विस्थापन एवं विकृति को मापने के लिए यांत्रिक डायल गेज और विद्युतीय स्ट्रेन गेजों को संक्लिष्ट स्थानों पर लगाया गया। स्ट्रेन गेज तथा डायल गेज ऊपर शीर्ष भाग के नीचे की तरफ और शीर्ष तथा स्प्रिंगिंग स्तर के बीच के भाग में बाहर की तरफ लगाए गए, क्योंकि यहाँ तनाव अधिकतम होता है। क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाधर विस्थापनों एवं विकृतियों को मापने के लिए उपयोग किए गए उपकरणों की स्थिति को चित्र 5 में दर्शाया गया है। दोनों प्रकार के एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूनों में एक रेखा पर केन्द्रित भार एवं ऊपरी भाग पर दबाव के तहत ऊर्ध्वाधर विस्थापनों को चित्र 6 में दिखाया गया है। एक–तिहाई पैमाने पर बने नमूनों में प्रथम दरार पड़ने के लिए समय के भार और अधिकतम भार सहन करने की सामर्थ्य को विश्लेषणात्मक और प्रयोगात्मक दोनों प्रकार से निर्धारित करके की गयी तुलना को तालिका 1 में दिखाया है। विश्लेषण और प्रयोगों के आधार पर एक तिहाई पैमाने पर बने नमूनों की अधिकतम भार वहन क्षमताओं में अंतर वितरित संपीडन एवं रेखा भार के तहत क्रमशः 5 प्रतिशत से लेकर 24 प्रतिशत तक पाया गया।

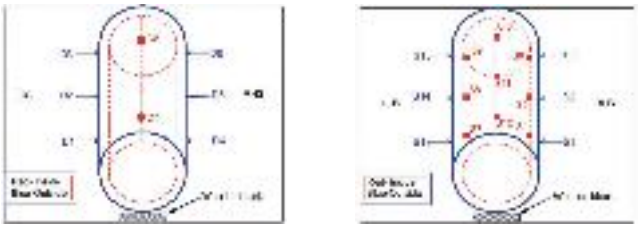

डायल गेज विद्युत स्ट्रेन गेज

चित्र 5 : विस्थापनों एवं विकृतियों को मापने के लिए उपयोग हुए उपकरणों की स्थिति।

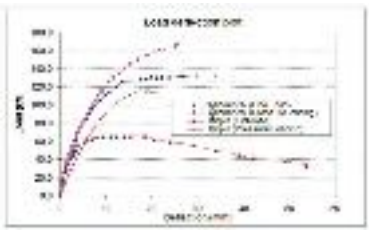

चित्र 6 : उर्ध्वाधर विस्थापन।

तालिका 1 : विश्लेषणात्मक और प्रयोगात्मक भार की तुलना

आश्रय नमूनों के नाम	8 मेगापास्कल के तन्य प्रतिबल पर भार (संख्यात्मक विश्लेषण)	प्रथम दरार के लिए भार (प्रयोगात्मक)	24 मेगापास्कल के तन्यता प्रतिबल पर भार (विश्लेषणात्मक)	अधिकमत भार सहन क्षमता (प्रयोगात्मक)	अधिकमत भार सहन क्षमताओं में अंतर	मॉडलों के मुकुट पर लगे भार के प्रकार
	kN	kN	kN	kN	%	
वृत्ताकार अनुप्रस्थ परिच्छेद						
CS-1	15.8	22.5	46.0	37.0	19.6	**रेखा भार**
CS-2	60.0	75.0	164.0	132.5	19.2	**वितरित दबाव**
CS-3	60.0	80.0	164.0	167.5	2.1	**वितरित दबाव**
केश पिन आकार की अनुप्रस्थ परिच्छेद						
HPS-1	16.0	30.0	50.0	65.5	23.7	**रेखा भार**
HPS-2	36.0	80.0	109.0	115.0	5.5	**वितरित दबाव**

पूर्ण मापन भूमिगत आश्रय का अभिकल्प

मृदा स्प्रिंग की कडापन का निर्धारण

भूमिगत संरचनाओं के विश्लेषण के लिए मृदा की सतह पर पडने वाले किसी भी गतिशील भार से उत्पन्न संपीडन का परिमाण एवं भूमिगत संरचनाओं की सतह पर प्रसार का सही निर्धारण जरूरी होता है। भार की अनिश्चितताओं, मृदा की परत के गुण, मृदा और भूमिगत संरचनाओं के बीच आपसी सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए भूमिगत संरचनाओं का व्यवहार के बारे में कुछ ठीक से कहना एक कठिन

कार्य है। व्यावहारिक रूप से सभी प्रकार की मृदाओं को जांच में शामिल कर पाना प्रायः मुश्किल होता है। इसीलिए एक कमजोर गुणवत्ता वाली मृदा (ई एफ एस 0.0273) और दूसरी अच्छी मृदा (ई एफ एस 0.131) को लेकर विश्लेषण किया गया है।

पूरे भूमिगत आश्रय को ज्यामिति बीम तत्वों का उपयोग कर मृदा स्प्रिंगों सहित मॉडल बनाया। विभिन्न दिशाओं में जैसे क्षैतिज, ऊर्ध्वाधर और ऐंठी हुई मृदा स्प्रिंगों के लिए प्राप्त कठोरता मानों को तालिका 2 में मूल्यांकित किया गया है। इन मृदा स्प्रिंगों की कठोरता को परिमित तत्व मॉडल में उपयोग किया गया है। भूमिगत संरचना के प्राकृतिक दोलन काल के विश्लेषण से अच्छी मृदा के लिए 0.0789 सेकंड तथा कमजोर मृदा के लिए 0.155 सेकंड पाया। इन ऑकडों के आधार पर पूरे भूमिगत आश्रय पर मृदा के प्रभाव को गतिशील भार गुणांक ज्ञात करने के लिए अनुप्रयोग किया गया है। संपीडनस्पंद की समय अवधि (1 सेकंड) और आश्रय संरचना के दोलन काल के समयानुपात कमजोर और अच्छी मृदा के लिए क्रमशः 6.45 और 12.67 पाए गए। इसलिए, गतिशील भार गुणांक 2 निर्धारित किया गया है। अच्छी तरह से त्रिकोणीय एवं आयताकार स्पंदों को प्रथम गत्यात्मक सिद्धांत (बिग्स, 1964) का उपयोग कर निर्धारित किया गया है।

तालिका 2 – मृदा स्प्रिंग की कठोरता और आश्रयों के दोलन काल एवं अनुपात।

विवरण	मृदा के प्रकार	
	कमजोर	अच्छी
मृदा स्प्रिंगों की कठोरता		
क्षैतिज (न्यूटन प्रति मिमी प्रति मी)	134.0×10^3	522.751×10^3
ऊर्ध्वाधर (न्यूटन प्रति मिमी प्रति मी)	155.578×10^3	649.536×10^3
मरोडी (न्यूटन प्रति मिमी प्रति मी)	2.99070×10^{11}	1.143×10^{12}
दोलनकाल T_n (सेकंड)	0.15507	0.07891
समयानुपात t_d/T_n	6.45	12.67

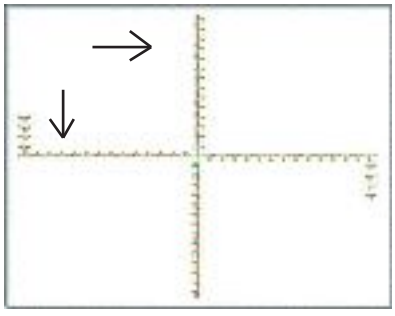

चित्र 7 : भूमिगत आश्रय के प्राकृतिक दोलन।

रैखिक प्रत्यास्थ विश्लेषण

प्राप्त किए गए गतिशील भार गुणांक को ध्यान में रखकर पूर्णाकार भूमिगत आश्रयों के अभिकल्प के लिए किए गए विश्लेषण का इस अनुच्छेद में उल्लेख किया गया है। अतः वास्तविक संपीडन को दो गुना कर स्थिर संपीडन के तहत रैखिक प्रत्यास्थ विश्लेषण किया गया है (चित्र 8)। यह पाया गया

कि 1 मील दूर 500 किलोटन के बम विस्फोट की स्थिति में वृत्ताकार आश्रय की 75 मिमी मोटी दीवार तथा केश पिन आकार के लिए 200 मिमी मोटी दीवार पर्याप्त होंगी। परिमित तत्व मॉडल में चार शीर्षयुक्त शैल 63 नामक तत्व को चुना गया है, जो पतली संरचनाओं के लिए उपयुक्त होता है। इस विश्लेषण में मृदा के प्रभाव को शामिल करने के लिए विंकलर मॉडल पर आधारित प्रत्यास्थ नींव की कठोरता का प्रयोग किया है। 8 मेगापास्कल और 14 मेगापास्कल प्रतिबल से उत्पन्न करने के लिए आवश्यक भार का पूर्वानुमान लगाया गया। इस विश्लेषण के आधार पर वास्तविक आश्रयों के दिए गए आकारों के लिए, दीवारों की मोटाई ज्ञात की गयी।

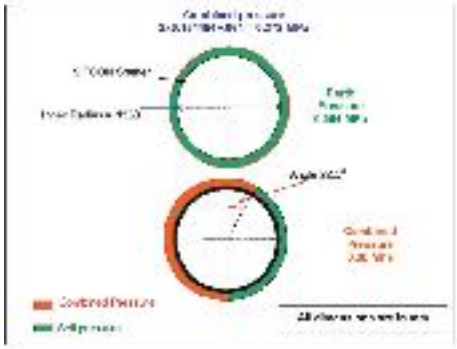

चित्र 8 : परिमित तत्व मॉडल के लिए सममित और असममित दबाव।

अरैखिक अल्पकालिक विश्लेषण

रैखिक प्रत्यास्थ विश्लेषण से प्राप्त अभिकल्प में सिफकॉन के प्रस्तावित भूमिगत कठोर आश्रय की मोटाई को सत्यापित करने के लिए अरैखिक गतिशील विश्लेषण भी किया गया। इसके लिए मिट्टी को मृदा स्प्रिंग एवं प्रघातरोध प्रणाली के माध्यम से प्रयोग किया जैसाकि चित्र 9 में दिखाया गया है। इन तथाकथित मृदा स्प्रिंगों एवं प्रधातरोध के यांत्रिक गुणों को पूर्व प्रकाशित साहित्य के अनुसार निर्धारित कर पूर्णाकार भूमिगत प्रारूप में उपयोग किया है। वास्तविक परमाणु बम विस्फोट को एक कृत्रिम विस्फोट के द्वारा उत्पन्न किया गया। जिसके लिए एक अल्पकालिक अतिसंपीडन (0.17 मेगापास्कल) को 1 सेकंड तक त्रिभुजाकार स्पंद (जैसा चित्र 10 में दिखाया गया है) के रूप में संख्यात्मक मॉडल पर लगाया गया है। कमजोर मृदा के लिए मृदा स्प्रिंग की कठोरता और प्रघातरोध के गुणों को आनुभविक सूत्र (दास, 1983) का उपयोग कर निर्धारित किया गया है। इस अध्ययन में भारित क्षेत्र की त्रिज्या r0 जो कि 2.333 मीटर है, को ध्यान में रखते हुए नीचे लगी स्प्रिंगों की कडापन 254.715 X 10^6 न्यूटन/मी प्रति मी पाया गया। ऊर्ध्वाधर प्रघातरोध के लिए अवमंदन क्षमता 5.00 X 10^6 निर्धारित की गयी है। स्प्रिंग और प्रघातरोध प्रणाली के आधार संख्यात्मक अनुरूपण के द्वारा प्राप्त परिणाम सुरक्षित सीमाओं के भीतर पाए गए हैं।

विश्लेषण में सम्मिलित गणनाओं को करने में लगने वाले समय को बचाने और संसाधनों की भारी माँग से बचने के लिए पूरे भूमिगत कठोर आश्रय का मात्र एक भाग (1 मी की लंबाई) का ही मॉडल बनाया गया। त्रिविमीय परिमिति तत्व प्रारूप को बनाने C3D8R नामक ठोस तत्व का उपयोग किया गया है। इस अल्पकालिक विश्लेषण से प्राप्त क्षैतिज एवं ऊर्ध्व दिशा में विस्थापन के लिए समोच्च रेखाओं को चित्र 11 में दिखाया गया है। दोनों प्रकार के आश्रयों के लिए अधिकतम ऊर्ध्व विस्थापन सबसे लम्बी आंतरिक विमा के 2 प्रतिशत से कम रखा गया है।

भूमिगत आश्रयों के सुरक्षित उपयोग के लिए अधिकतम तन्यता सामर्थ्य 8 मेगापास्कल के आधार मानकर दीवारों की मोटाई तय की गयी है। वृत्ताकार भूमिगत आश्रय के लिए दीवार की मोटाई 75 मिमी तथा केश पिन आकार के लिए दीवार की मोटाई 125 मिमी जबकि इसके फर्शतल की मोटाई 200 मिमी पार्याप्त पायी गयी (चित्र 12)। इसके अलावा केश पिन आकार के आश्रय में दीवार और फर्शतल के बीच के जोडों पर चिकने ढलान भी चाहिए, ताकि, वहां उत्पन्न प्रतिबल की तीव्र प्रवणता को कम किया जा सके। इन्हीं वजहों से यह कहा जा सकता है कि केश पिन आकार की तुलना में

वृत्ताकार भूमिगत आश्रय आर्थिक एवं सरल बनावट के नजरिए से ज्यादा बेहतर रहेगा। सम्पूर्ण भूमिगत आश्रय संरचना एवं आस–पास की मृदा को ध्यान में रखकर बनाये गए संख्यात्मक प्रारूप के द्वारा प्राप्त ऊर्जा का समय के साथ बदलाव चित्र 13 में दर्शाया गया है। यह देखा जा सकता है ऊर्जा का अधिकतम मान लगभग 0.6 सेकंड पर होता है तथा 1 सेकंड बाद ही यह नगण्य हो जाता है।

निष्कर्ष एवं लेख टिप्पणी

1. रैखिक प्रत्यास्थ विश्लेषण के आधार पर विवेचना करने पर यह पाया गया कि आश्रयों की संरचना का अभिकल्प करने के लिए असममित भार के तहत उत्पन्न प्रतिबलों को ध्यान में रखना जरूरी है।
2. विश्लेषण और प्रयोगों के आधार पर एक तिहाई पैमाने पर बने नमूनों की अधिकतम भार वहन क्षमताओं में अंतर वितरित संपीडन एवं रेखा भार के तहत क्रमशः 5 प्रतिशत से लेकर 24 प्रतिशत तक पाया गया।
3. अरैखिक एवं क्षणिक विश्लेषण के तहत वृत्ताकार आश्रय की दीवार की मोटाई 75 मिमी पर्याप्त पायी गयी जबकि केश पिन आकार के आश्रय के लिए दीवार की मोटाई 125 मिमी निर्धारित की गयी। इसके अलावा हमें केश पिन आकार के फर्श तल की मोटाई 200 मिमी चाहिए।
4. विस्फोट से उत्पन्न संपीडन के तहत केश पिन आकार के आश्रय में दीवार एवं फर्श तल के जोड पर जो तीव्र प्रवणता का प्रतिबल पैदा होता है उसे दूर करने के लिए चिकने ढलान देने की आवश्यकता होगी।
5. संरचनात्मक अभिकल्प के आधार पर वृत्ताकार आश्रय केश पिन आकार के आश्रय से आसानी से बनाया जा सकता है और अपेक्षाकृत हल्का होने की वजह से यह अनुप्रयोग के लिए उचित पाया गया।

प्लाज़्मा – एक अदभुत उर्जा–स्त्रोत और उसके विविध औद्योगिक उपयोग

मुश्ताक अली खान बाबी' एवं सतीश दीक्षित
धातुशास्त्र–प्लाज्मा प्रौद्योगिकी, पूना–महाराष्ट्र

सारांश

हम एक पारबहुभाषित समाज में रहते है, जहाँ हम दुनिया के विभिन्न भागों के लोगों के साथ संवाद कर सकते है। इस संवाद के लिए हमें उनकी सम्बंधित भाषाओं का सम्पूर्ण ज्ञान होना अति आवश्यक है। इन सभी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना संभव नहीं है। इसलिए हमें एक ऐसी तकनीक की आवश्यकता है जो हमारे लिए यह काम कर सके, इसी कारण आज हमारे पास एक ऐसा उपकरण उपलब्ध है जिसे मशीन अनुवाद के नाम से जाना जाता है। एक मशीन अनुवादक को बनाने के लिए हमें कई अलग–अलग नियमों के विकास की आवश्यकता है। सबसे पहली चीज़ जो मशीन अनुवादक में ज़रुरी है वह मौर्फोलोजिकल अनालिसिस है। स्टेमिंग एवं लेमेटाईजेशन इसी मौर्फोलोजिकल अनालिसिस के अंतर्गत आता है। इस लेख में हमने लेमेटाईज़र बनाना चाहा है जो प्रत्ययों को हटाने के साथ उनमें दूसरे नियम लगा कर शब्द को एक उचित मूल शब्द बनाने में मदद करता है।

प्रस्तावना

बीसवीं सदी के प्रारंभ में एक अमरिकी भौतिकशास्त्री (ई. लान्म्युर) ने प्लाज्मा का अस्तित्व खोज निकाला और उसका नामकरण भी किया। दूसरी विचित्रता ये रही की अगले पचास सालों तक प्लाज्मा को धर सके वैसा कोई पदार्थ सामने नहीं आया।

प्लाज्मा क्या है? भौतिकशास्त्र का कहना है कि सर्व पदार्थ सामान्य प्रकार से तीन ही रूप में प्राप्त होते है–घन (solid), या प्रवाही (liquid) या फिर वायु (gas)। परंतु वायु रूप से आगे एक और भी रूप है–जिसे प्लाज्मा नाम दिया गया है। प्लाज्मा ग्रीक भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ निकलता है–वह

चित्र 1. सूर्य एवं दामिनी–प्र.ति में दिखाई देने वाले सर्व सामान्य प्लाज्मा के उदाहरण।

पदार्थ जो पारभासी (ट्रांस्लुसेंट डियूज) है। Dr Langmuir ने यह घटना शून्यवाकाश परिस्थिति में विद्युत चिंगारी स्थापित करके एक बिल्लोर नली (quartz tube) इसका अभ्यास किया था–और प्लाज्मा नाम चुना था।

दूसरे विश्व युद्ध के तुरंत बाद हवाई जहाज़ बनाने में अलमुनियम का उपयोग बड़ी मात्र में होने लगा था परंतु इस धातु को काटना या जोड़ना आसान नहीं था और अमरीकी तन्त्र ज्ञानी रोबर्ट गेज ने एक सरल उपाय खोज लिया, उसी अरसे में। प्लाज्मा की प्रचंड उर्जा किसी भी पदार्थो बने पात्र में सीमित करना अशक्य था क्योंकि मृत्तिका कृति (ceramic) के पात्र का भी बाष्पिभावन हो जाता था।

अलावा अल्मुनिअम के स्टेनलेस स्टील भी काटना या जोड़ना आसान नहीं था। जैसे–जैसे धातुशास्त्र विज्ञानं विक्सित होता रहा, वैसे वैसे प्लाज्मा के रूप में विविध अक्रिय वायुओं से काटना (plasma cutting) और plasma welding भी विक्सित होते रहे। आगे चलके प्लाज्मा के बहुतेरे –अनेकविध उपयोग उभर के सामने आये जैसे कि plasma spraying, plasma melting और plasma cladding.

प्लाज्मा स्प्रेयिंग का उत्थान तब हुआ जबकि जेट–विमानोंकी गति सामान्य रूपसे पराध्वनिक (supersonic) हो गयी और वातावरण में वापसी के समय इन जहाजों का पृष्ठ तापमान प्रचंड होने लगा–यानि की धातुओं से बने पृष्ठ नरम हो कर पिघलने लगे। प्लाज्मा स्प्रेयिंग एक ऐसी चमत्कारिक प्रक्रिया के रूप में सामने आयी कि इस प्रक्रिया से किसी भी पदार्थ को किसी भी पदार्थ पर चिपकाकर एक सूक्ष्म परत प्रदान करता है। ये परत प्रचंड तापमान का प्रतिरोध सहज प्रकार से कर सकता था। दूसरी ओर, प्लाज्मा स्प्रेयिंग से हीन प्रकार की धातुओं पर बहुमूल्य धातुओं का पड चढ़ाया जा सकता था। बिनधातु पदार्थ जैसे कि ceramics या मृत्तिका कृति पदार्थ या प्लास्टिक भी काफी आसानी से लगाये जा सकते थे।

प्लाज्मा की उत्पत्ति प्रक्रिया : हालांकि कोई भी भौतिक पदार्थ उसके प्लाज्मा स्वरुप में आसानी से परिवर्तित किया सकता है–वायु स्वरुप में प्लाज्मा स्वरुप में परिवर्तन कुछ विशेष प्रकार से सहज होता है। याद रहे कि यह चर्चा सर्व प्रकार के 'प्लाज्मा' रूपों से जुडी नहीं है, परन्तु मात्र 'उष्मीय' प्लाज्मा रूपों तक ही सीमित है। इसका कारण यह है कि इस चर्चा में हम प्लाज्मा के

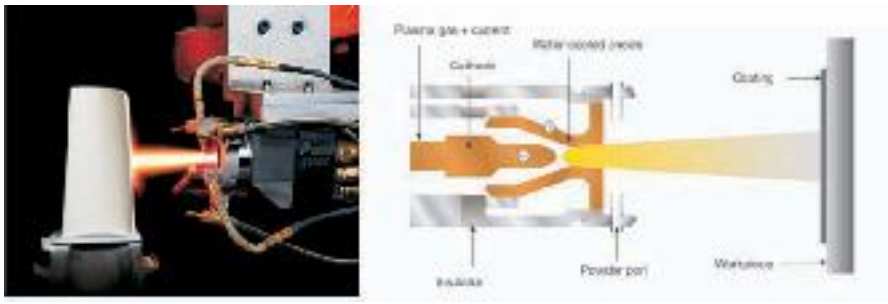

चित्र 2. बायीं ओर : जेट विमानके पुर्ज़ों पर मृत्तिका कृत्ति आवरण प्लाज्मा स्प्रेयिंग से लगाया जाता है दायीं ओर : प्लाज्मा स्प्रेयिंग प्रक्रियाका वृत्त–चित्र।

Image: http://www.progressivesurface.com/images/news/New%20100%20HE_TBC_bucket.jpg
http://www.ret-monitor.com/articles/wp-content/uploads/2011/05/liners-sleeves-thermal-spray-process.jpg

औद्योगिक उपयोग पर महत्व देने जा रहे है। प्लाज्मा के अनेक प्रकार और भी हैं जिनमें इसके उष्मीय गुणधर्म के बजाये दूसरे बहुतेरे गुणधर्म आगे रखे जाते हैं।

उष्मीय प्लाज्मा–अमरीकी अभियंता रोबर्ट गेज सर्व प्रथम प्लाज्मा मेल्टिंग टोर्च बनायी जिससे विविध धातुओं को पिघलकर घन–स्वरुप में पदार्थ ढाले जा सकते थे। फिर भी उन दिनों जेट विमान विशालकाय–रूप में बनाने के लिए अल्मुनिअम और उसकी मिश्र–धातुएं काटने और जोड़ने की समस्या हल करना विशेष प्रकार से आकर्षित व्यव्हार था। इसीलिए सबसे पहले प्लाज्मा कटाई करने वाली टोर्च का patent (एकस्व अधिकार पत्र) महाशय गेज को 1959 में मिला।

प्लाज्मा कटाई संयंत्र में मुख्य अंग टोर्च (धमन–दीप) होती है जिस में स्थायी इलेक्ट्रोड–ज़्यादातर 'टंगस्टन' धातु का बना होता है और दूसरा इलैक्ट्रॉड ताम्र धातु का होता है। इन दोनों के बीच कुछ रिक्त (space) में विद्युत चिंगारी से आर्गन (argon) वायु या हीलियम वायु जैसे अक्रिय वायु प्रसार करने से वायु का रूपांतर प्लाज्मा में हो जाता है। यहां उच्च वीज दाब का उपयोग किया जाता है और उच्च आवृत्ति (high frequency) वीज–प्रवाह से इस प्रक्रिया का आरंभ किया जाता है। ये नवोदित प्लाज्मा को ताम्र इलैक्ट्रॉड में उपस्थित एक संकीर्ण छेद में से बहार धकेलने से इस की उष्मीय प्रचंडता और सविशेष प्रकारसे बढ़ाई जाती है।

इन उष्मीय फुहार का तापमान 3,000 डिग्री सेल्सियस से 100,000 डिग्री सेल्सियस तक होता है और प्लाज्मा टोर्च को प्रचंड गति से बहने वाले जल से ठंडा रखा जाता है। अल्मुनिअम धातु को काटना जटिल समस्या इसलिए बन गया था कि इस धातु के पृष्ठ पर एक पारदर्शित भस्म (oxide) की पतली सी परत (film) होती है जिसे पिघलने के लिए 2,700 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान आवश्यक होता है। सामान्य गैस वेल्डिंग या cutting टोर्च से इतना तापमान उत्पन्न नहीं हो पाता–जबकि प्लाज्मा टोर्च से 70,000 से 100,000 डिग्री सेल्सियस तापमान सहज प्रकार से प्राप्त किया जाता है।

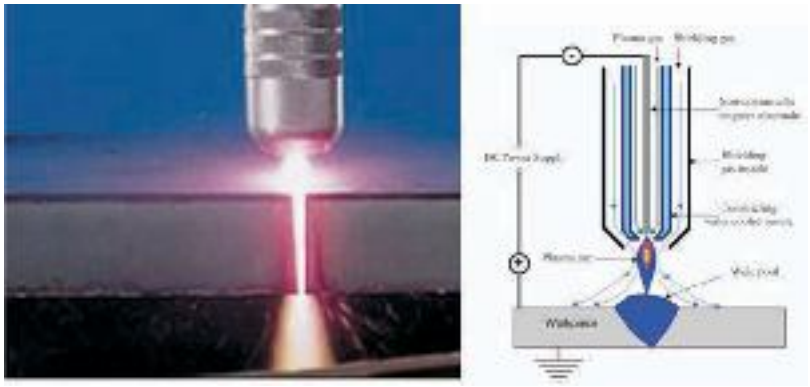

चित्र 3. बांयी और : स्टेनलेस स्टील की मोटी चादर प्लाज्मा कटाई से म्रदुता से निर्विघ्न काटी जाती है दांयी और : प्लाज्मा कटाई प्रक्रिया का वृत्त–चित्र।

Image: http://www.esab.com/global/en/education/images/plasma_cutting.jpg
http://4.bp.blogspot.com/_LTgUeGAbGgI/SqjPyuNLW-I/AAAAAAAAAkk/iM4w17LwOc8/s400/plasma-arc-cutting.jpg

प्लाज्मा टोर्च से 6 इंच (150mm) मोटाई वाली अल्मुन्निअम या स्टेनलेस स्टील की चादर काटना मुश्किल नहीं–परन्तु ऐसे उपयोग में प्रचंड उर्जा की खपत व विकरण उष्मीय प्रक्रिया होती है। इस काम में इतनी गरमी और कोलाहल उत्पन्न होते हैं की इस सयंत्र से काफी दुरी पर खड़े रहना आवश्यक व सुरक्षित हो जाता है। यह करण से ऐसा काम रिमोट कंट्रोल (remote control) से ही किया जाता है। इतनी प्रचंड गरमी पैदा करने वाली टोर्च को बिना हाथ में धरे–सीधी गति से चलने वाली मेकेनाइज्ड ट्राली या गोल घूमने वाली ट्राली पर लगाया जाता है। आर्गन वायु न ज्वलनशील है और न ही विस्फोटक–इन कारणों से प्लाज्मा कटाई बहुत सुरक्षित प्रक्रिया है। इतनी प्रचंड उर्जा से प्लाज्मा कटाई जलमग्न (underwater) भी की जाती है। नाभिकीय उर्जा उत्पादन संयंत्रों में विघत्नाभिक/रडिओधर्मी (radioactive) कूड़ा (waste) काटकर निष्कासन कार्य में भी जलमग्न प्लाज्मा कटाई का उपयोग सचोट रहता है। तीस साल पूर्व गैस प्लाज्मा का चलन था परन्तु आजकल रुखी हवा का उपयोग सर्व–सामान्य बन चुका है। इस प्रकार कटाई–खर्च स्पर्धात्मक रूप से कम हो गया है।

एक हाथ पर उष्मीय प्लाज्मा से उच्च उर्जा–स्तर के अंतर्गत अगणित उपयोग है –जब की दूसरी और प्लाज्मा वेल्डिंग के तहत माइक्रो प्लाज्मा वेल्डिंग जैसे स्वरुप भी हैं – जहाँ प्लाज्मा एक अप्रतिम उर्जा स्त्रोत साबित हो जाता है। तांत्रिक इतिहास दिखता है की स्टेनलेस स्टील की बारीक़ चादरों का वेल्डिंग जबकि TIG (tungsten inert gas) welding से लगभग 1.0 mm मोटाई तक ही सीमित था–और ज्यादा बारीक़ चादारों का वेल्डिंग करनेके प्रयत्न असफल हुआ करते थे–वेल्डिंग के बजाये छेद बनना शुरू हो जाते थे। प्लाज्मा वेल्डिंग की विद्युत चिंगारी अत्यंत ही स्थिर और अचल होती है, और अनाड़ी प्रकार के वेल्डर के हाथों में भी बुझती नहीं है।

एक समय ऐसा भी आया जब 0.1 mm जितनी कागज़–सी सुक्ष्म चादरों को वेल्ड करना आवश्यक बन गया। माइक्रो प्लाज्मा वेल्डिंग प्रक्रिया इतनी स्थिर और सु–नियंत्रित होती है कि 0.01 mm मोटाई वाली चादरें भी अत्यंत निपुणता से जोड़ी जा सकती है।

प्लाज्मा ट्रान्सफर्ड आर्क cladding (PTAC) : इसी प्लाज्मा वेल्डिंग का एक प्रकार है –जापान में प्लाज्मा पाउडर वेल्डिंग के नाम से पहचाना जाता है। यह प्रक्रिया में मेटल पाउडर (धातु का चूरा) को प्लाज्मा रुपी विद्युत चिंगारी में सुमिश्रित करके 'overlaying' या ज्यादा मोटाई का वेल्डिंग किया

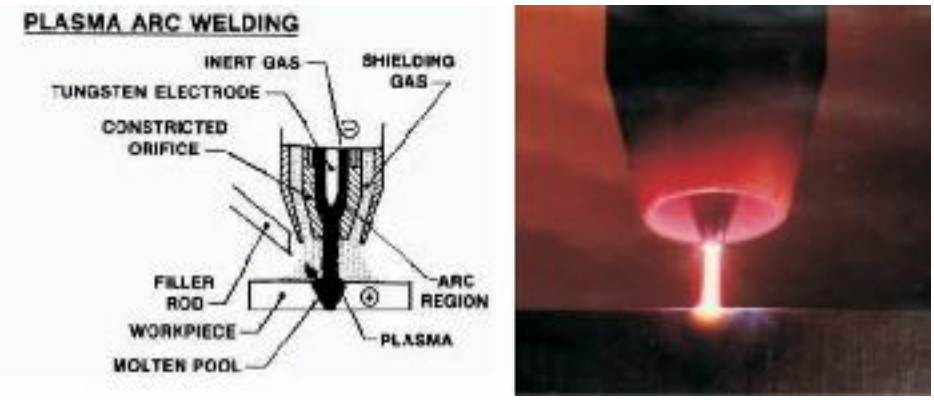

Image: http://www.robot-welding.com/images/plasmaarcwelding.gif
http://www.weldguru.com/images/fig10-36.gif http://www.pro-fusiononline.com/welding/images/plasma.jpg

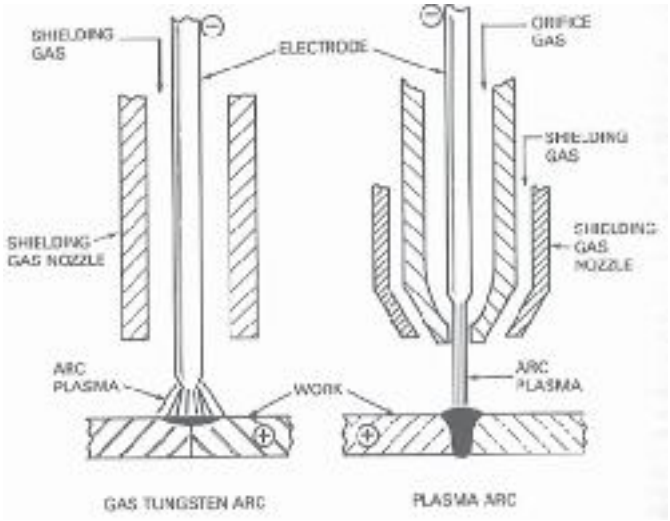

Image: http://ewi.org/cladding-with-plasma-arc-welding-paw/paw-schematic/

जाता है। इस बहुतेरे गुण है :

- अत्यंत उच्च शुद्धता से वेल्ड डिपाजिट (weld deposit) उत्पन्न होती है
- अत्यंत सक्षम metallurgical bond (धातुशास्त्रीय बंधन/आसंजन्शिलता) बनता है
- अत्यंत गति से मेटल टू मेटल डिपाजिट उतपन्न होती है
- अत्यंत विविधतासे इस प्रक्रियाका उपयोग किया जा सकता है–जैसे कि स्टेनलेस स्टील ऊपर पित्तल या जसत–या कास्ट आयरन पर टाइटेनियम या माइल्ड स्टील पर टंगस्टन ....

प्लाज्मा हीटिंग से गैस हीटिंग करना भी धातुशास्त्र के लिए एक अप्रतिम भेंट है। सामान्य प्रकारसे वायुके प्रचंड जत्थे को गरम करने के लिए या तो इलेक्ट्रिक हीटर्स का उपयोग होता है या फिर पेट्रोल–डीजल जैसे इंधन जला कर. ये सब अत्यंत खर्चीले रास्ते है और औद्योगिक प्रमाण में तो इनका चलन अत्यंत सीमित रहता है। जैसे की फाउंड्री (मेटल कास्टिंग) के व्यापार में अगर गैस हीटिंग की आवश्यकता खड़ी हो तो प्लाज्मा हीटिंग से सीधी कुपोला फर्नेस (cupola furnace) में सिर्फ कास्ट आयरन ही नहीं, स्टेनलेस स्टील का पिघालना और कास्ट करना शाक्य बन जाता है। कुपोला वाली फाउंड्री में मूडी बहुत कम होती है और इसके चलाने वाले पूरी आयु में कभी इलैक्ट्रिक आर्क फर्नेस या इंडक्शन (induction) फर्नेस खरीदने का साहस नहीं कर पाते।

अंत में ये भी समझ लिया जाए की प्लाज्मा के माध्यम से मेटलर्जिकल प्रोसेसिंग (धातुशास्त्रिय प्रक्रियाएं) एक अत्यंत विस्तृत क्षेत्र है जिन में निम्नलिखित प्रक्रियाएं सम्मुख हैं :

- अलोयिंग–दो या उस से ज्यादा सम्मिश्रण
- रिफाइनिंग–शुद्ध धातु में से सूक्ष्माधीन अशुद्धिओं को निकाल फेंकना
- अतिशुद्ध धातुओंको विविध आकार में ढालना (कास्टिंग)
- प्रयोगशाला में सूक्ष्म मात्रा में नए–नए विकल्प खोज निकलना
- और आजकल जो nano-technology बहुत प्रचलित हो चली है उस में कार्यरत होना
- सिंगल क्रिस्टल (single crystal) उगाना इत्यदि।

प्रोफेसर रुइन्तन बन्शो–जो प्रथम भारतीय धतुशास्त्री थे जिनके जीवित होते हुए भी अमरीकन वैक्यूम सोसाइटी ने एक सुवर्ण पदक स्थापित किया था–वह अक्सर कहते थे के नए सहस्र वर्ष में औद्योगिक उत्पादन का एक मात्र अंश भी बिना प्लाज्मा के संभावित न होगा। कितनी सच बात बताई थी उन्होने। प्लाज्मा हजारों नए उपयोग विस्काषित होना अवश्य है।

PVD -फिजिकल वैपर डिपोजिशन नामक धातु या बिन–धातु आवरण लगाने की अति शक्तिशाली प्रक्रियाओं का एक जूथ है जिसका वैज्ञानिक विस्तार प्लाज्मा विज्ञान की गतिशील प्रगति से ही शक्य हुआ। इन दिनों अति–सुक्ष्म एक माइक्रोन यानि (0.001mm) की मोटाई वाले अति–जटिल संघटन आवरण सर्व–सामान्य हो गए है।

चित्र 6. धातु कटाई प्रक्रियों में उपयोगी विविध उपकरण जिन्हें PVD coating से समृद्ध किया गया है।
Image: http://www.sulzer.com/en/-/media/Media/Images/ProductsAndServices/CoatingServices/PVD_Coatings/pvd_coatings.jpg?w=570&h=240&crop=1&offset=38&bc=E0E0E0

चित्र 7. अत्याधुनिक MB&F poison dart frog wrist -watch जिस में दिखाई देनेवाले सरे रंग pvd coated ceramics है।

PECVD (plasma enhanced chemical vapour deposition) नामक प्रक्रिया से DLC (diamond like carbon) आवरण उत्पन्न किये जा रहे है जिनकी सतह की कठोरता प्राकृतिक हीरे जितनी होती है। ये सब जादूगरी प्लाज्मा विज्ञान के प्रगतिशील विकास पर निर्धारित है।

पिछले 50 साल में प्लाज्मा पर आधारित प्रर्कियाओं ने इतनी प्रगति साधी है की इन सब का नाम मात्र यहाँ लिखना कठिन हो सकता है। CFL से LED लाइट तक प्लाज्मा ज्ट से cellphones की टच–सेंसिटिव screens तक और बाहरी अवकाश में हर–हमेश के लिए बिना–इंधन के सफ़र कर सके वैसे अंतरिक्ष यान.. लगभग औद्योगिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों में हर नयी सिद्धि से प्लाज्मा का नाम अवश्य जुड़ा दिख रहा है। विज्ञान का भविष्य प्लाज्मा है।

विज्ञान संचार में वैज्ञानिकों एवं मीडिया की सहभागिता

ज्योति सिंह
विज्ञान प्रसार, नोएडा, उत्तर प्रदेश

सारांश

विज्ञान के इस आधुनिक युग में आमतौर पर लोग उन्हीं बातों को मानना चाहते हैं जो कि वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुकी हैं। लेकिन प्रायः ऐसा हो नहीं पाता। जनसाधारण तक विज्ञान और विज्ञान से सम्बन्धित जानकारियाँ पहुँचाने की बड़ी ज़िम्मेदारी मीडिया की है। लेकिन आमतौर पर मीडिया को ही सही जानकारी न होने के कारण लोगों तक पूर्ण एवं सही जानकारी नहीं पहुँच पाती। जनसाधारण अपने चारों तरफ घटित होने वाली घटनाओं, वातावरण, यंत्रों, उपकरणों, और साधनों के बारे में जानने की उत्सुकता रखता है। ज़रूरत यह है कि साधनों, उपकरणों एवं यंत्रों के साथ–साथ उनकी वैज्ञानिक जानकारी भी आम लोगों तक पहुँचे। ब्रह्माण्ड में हो रही घटनाएं, समुद्र में उछलती लहरों और प्रकृति में हो रहे हर एक बदलाव से आम आदमी का सरोकार है। जनसाधारण जब इन छोटी–छोटी चीज़ों के पीछे छुपे अद्भुत विज्ञान को समझेगा तभी ''सर्वजन सुखाय सर्व जन हिताय'' का मंत्र सही मायनों में सार्थक होगा। आज के परिदृश्य में बात की जाए तो मीडिया ही विज्ञान जैसे रोचक विषय से कोसों दूर है तो जनसाधारण तक विज्ञान की बात पहुँचना मुश्किल है। वैज्ञानिकों और जनसाधारण के बीच अगर यह कड़ी मज़बूत नहीं होगी तो लोगों तक सही और अर्थपूर्ण संदेश नहीं पहुँच पाएगा। विज्ञान के लोकप्रियकरण के लिए प्रयास हर ओर से होने की ज़रूरत है। लेकिन यह ध्यान देने वाली बात है कि वैज्ञानिक विचारधारा ऊपर से नीचे की ओर बहने वाली है। उच्चस्तरीय ज्ञान का सहजीकरण करके ही विज्ञान को लोकप्रिय बनाया जा सकता है। अतः वैज्ञानिकों और मीडियाकर्मियों को विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए कदम से कदम मिलाकर काम करना पड़ेगा। तभी विज्ञान प्रयोगशालाओं से निकल कर जन–जन तक पहुँच पाएगा। इस आलेख में वैज्ञानिकों एवं पत्रकारों के बीच संवाद बढ़ाकर विज्ञान को जनसाधारण तक पहुंचाए जाने के विषय पर चर्चा की गई है।

प्रस्तावना

भारत जैसे विकासशील देशों में मीडिया की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है। जनसाधारण को जागरूक बना कर समाज में बदलाव लाने की ज़िम्मेदारी जनसंचार माध्यमों पर है क्योंकि इन माध्यमों के ज़रिए ही सूचना आम लोगों तक पहुँचती है। एक अनपढ़ व्यक्ति भी रेडियो या टी वी पर सुनाई या दिखाई जाने वाली सूचना को आसानी से समझ सकता है। देश की तरक्की के लिए जहाँ आर्थिक विकास की आवश्यकता है वहीं समाज के विकास के लिए जनसाधारण को विज्ञान तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रति संवेदनशील बनाए जाने की ज़रूरत है। इस दिशा में मीडिया ने काफ़ी कार्य किया है लेकिन अभी बहुत सारा कार्य किए जाने की आवश्यकता है। इस विकास–कार्य में जितनी भागीदारी मीडिया की है उतनी ही वैज्ञानिकों एवं विज्ञान से जुड़े लोगों की भी है अर्थात् वैज्ञानिकों तथा मीडियाकर्मियों को एक साथ तथा निरंतर प्रयास करने होंगें और इन प्रयासों के माध्यम से ही विज्ञान जन–जन तक पहुँच सकेगा। वैज्ञानिकों एवं मीडिया के बीच बने फासले को पाटने की अविलम्ब आवश्यकता है। इस क्षेत्र के लिए प्रयास किए भी गए हैं लेकिन अभी तक कोई ठोस सफलता नहीं मिल पाई है। आज भी अगर बात टी वी कि की जाए तो विज्ञान के नाम पर 'हैल्थ शो', 'मौसम की जानकारी, कभी–कभार घटित होने वाली खगोलीय घटनाएं और अंतरिक्ष में छोड़े जाने वाले सैटेलाइटों के बारे में ही जानकारी मिल

पाती है। विज्ञान इन भारी–भरकम विषयों से हट़कर हमारी रोजमर्रा की हर ज़रूरत का हिस्सा भी है। जिस दिन इस बात को वैज्ञानिक एवं मीडिया दोनों ही समझ लेंगे उस दिन विज्ञान हमारे देश की तरक्की में बड़ा योगदान दे सकेगा। बुखार होने पर दवाई ली जाती है, लेकिन ये दवाई शरीर में जाकर ऐसा क्या करती है कि कुछ ही घंटों में आपका बुखार ठीक हो जाता है, कितने लोग हैं जो इसका उत्तर जानते हैं? क्या इसके पीछे विज्ञान नहीं है। लोग जानना चाहते हैं लेकिन जानकारी का अभाव है। अगर ऐसे ही छोटे–छोटे विषयों पर लोगों को जानकारियाँ दी जाऐ। तो वो ज़रूर दिलचस्पी दिखाएंगे।

वैज्ञानिकों और मीडिया के बीच दूरी

वैज्ञानिकों और मीडिया दोनों ही समाज हित के लिए कार्यरत हैं। दोनों का ही दायित्व है समाज को जागरूक बनाना। जहाँ वैज्ञानिक नए–नए शोध करके जन–कल्याण कार्य में अपनी भागीदारी निभा रहे हैं वहीं मीडिया जनसाधारण तक नित्य–प्रतिदिन देश–विदेश में घट रही घटनाओं की ताज़ा जानकारी लोगों तक पहुँचाने का बीड़ा उठाए हुए है। वैज्ञानिक प्रायः यह आरोप लगाते हैं कि मीडिया विज्ञान को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत करता है जिससे विज्ञान, विज्ञान न रह कर एक सनसनीखेज़ ख़बर मात्र रह जाता है। वहीं मीडिया का तर्क है कि विज्ञान विषय ही इतना मुश्किल है कि लोगों को समझाने के लिए उसे आसान बनाना पड़ता है। देखा जाए तो दोनों ही तर्क ठीक हैं। वैज्ञानिक के लिए वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली समझना कोई मुश्किल काम नहीं हैं क्योंकि वे वर्षों से इसी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन मीडिया का 'टारगेट ऑडीयन्स' आम आदमी से लेकर उच्च स्तर का वैज्ञानिक, सभी हैं। तो आम लोगों तक ख़बर पहुँचाने के लिए उसे उनकी ही भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। इसमें विज्ञान का इतना सरलीकरण कर दिया जाता है कि विज्ञान का संदेश अपना मायने ही खो देता है।

यहाँ ज़रूरत है कि वैज्ञानिक यह समझें कि यदि मीडिया को उनका विषय समझने में परेशानी आ रही है तो उसे थोड़ी आसान भाषा में उन तक पहुँचाया जाए। वहीं मीडिया को भी अपनी ज़िम्मेदारी निभाते हुए विज्ञान को इस प्रकार प्रस्तुत नहीं करना चाहिए की विज्ञान अर्थहीन हो जाए।

संपादकों एवं वैज्ञानिकों का पारस्परिक वार्तालाप

अक्सर मीडिया में, अगर वह प्रिंट मीडिया है तो पत्रकारों को दैनिक कार्य संपादक देता है और यदि माध्यम टी वी है तो पत्रकारों का कार्य–निधारण इनपुट हैड द्वारा होता है। इस परिप्रेक्ष्य में 'एडिटर' या 'इनपुट हेड' दर्जे के व्यक्ति को विज्ञान की खबरों के प्रति संवेदित करने की आवश्यकता है ताकि वह भी विज्ञान की समझ रखे और पत्रकार को अधिक–से–अधिक विज्ञान–विषय पर कार्य करने का मौका दे। लेकिन दुविधा यह है कि अमूमन टी वी न्यूज चैनलों में 'साइंस बीट' है ही नहीं। किसी विज्ञान संबंधित खबर पर जानकारी लेने के लिए प्रायः किसी भी पत्रकार को भेज दिया जाता है। संपादकों या चैनल हेड को यह समझना चाहिए कि जैसे राजनीति, खेल, सिनेमा आदि विशिष्ट विषय हैं वैसे ही विज्ञान भी एक विशिष्ट विषय है। पत्रकार शिकायत करते हैं कि उन्हें वैज्ञानिक संस्थाओं से जानकारी नहीं मिलती क्योंकि वैज्ञानिक मीडिया से बात करने में कतराते हैं। वैज्ञानिकों में यह आम धारणा है कि कहीं उनकी शोध–जानकारी के अर्थ का अनर्थ न हो जाए। वहीं अगर उन्हें 'प्रेस–नोट' या 'प्रेस रिलीज़' मिलती है तो उसकी भाषा इतनी क्लिष्ट होती है कि उसको समझना पत्रकारों के लिए ही मुश्किल हो जाता है तो वह जानकारी लोगों तक कैसे पहुँचाऐं?

इस समस्या के लिए संपादकों एवं वैज्ञानिकों के बीच समय–समय पर 'पारस्परिक वार्तालाप एवं गोलमेज सम्मेलन' आदि जैसी गतिविधियाँ होती रहनी चाहिए। इन प्रयासों के परिणाम स्वरूप वैज्ञानिकों को मीडिया की और मीडिया को वैज्ञानिकों की सीमाओं की विस्तृत जानकारी मिल सकेगी। इस प्रकार दोनों समूह सही दिशा में एक–दूसरे की सीमाओं का ध्यान रखते हुए सही कार्य कर पाएंगे।

टी आर पी की दौड़

मीडिया व्यवसाय की एक बहुत बड़ी चुनौती यह है कि पत्रकारों को किसी भी खबर पर काम करने के लिए बहुत कम समय दिया जाता है। इससे अक्सर वे खबर को पूरी गहराई से नहीं समझ पाते। साथ ही टी आर पी (टारगेट रेटिंग पॉइन्ट) की दौड़ में अक्सर पत्रकार यह भूल जाते हैं कि उनकी खबर सनसनीखेज तो हो जाएगी लेकिन उस खबर की अहमियत और विश्वसनीयता खत्म हो जाएगी। मीडिया जगत की भाषा में कहा जाता है विज्ञान विषय बिकता नहीं। चैनल की टी आर पी गिर जाती है या अच्छी नहीं आती। जबकि यह धारणा गलत है। विज्ञान को अगर अच्छी तरह परोसा जाए तो हर कोई इसे पसंद करेगा।

विज्ञान प्रयोगशाला से बाहर कैसे निकलें?

विज्ञान और प्रयोगशाला का बंधन अटूट है लेकिन जब तक विज्ञान प्रयोगशालाओं से निकल कर आम लोगों तक नहीं पहुँचेगा, तब तक उसका शोध–कार्य आम–भाषा में आम–लोगों तक कैसे पहुँचेगा! इसके लिए उन्हें पत्रकारों से बात करने के साथ ही उन्हें अपने शोध–कार्य को विस्तार से समझाने का भी प्रयत्न करना चाहिए। ध्यान रखा जाना चाहिए की विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली बनी रहे और विज्ञान आम लोगों तक पहुँच भी जाए। वैज्ञानिक एवं पत्रकार जन–कल्याण कार्य में सहयोगी हैं न कि प्रतिद्वंदी।

भाषा की बाधा

आम लोगों तक विज्ञान पहुँचाने के लिए उनकी ही भाषा का इस्तेमाल करना होगा। साल 2010–2011 के आँकड़ों पर अगर नज़र डाली जाए तो भारत में कुल पंजीकृत समाचार–पत्रों की संख्या 82,237 है। इनमें हिन्दी में प्रकाशित होने वाले समाचार–पत्रों की संख्या 32,793 है जोकि किसी अन्य भारतीय भाषा के मुकाबले कहीं अधिक है लेकिन हिंदी में विज्ञान लिखने वालों की बात करें तो उनकी संख्या बहुत कम हैं। विज्ञान अधिकतर अंग्रेज़ी भाषा की धरोहर बन कर रह गया है। ज़रूरत है कि इसे हिन्दी के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं में भी लिखा जाए। इससे यह उन जन–समूहों तक भी पहुँच पाएगा जहाँ अंग्रेज़ी पढ़ने एवं बोलने वाले लोग नहीं हैं।

निष्कर्ष

किसी भी कार्य की सफलता कई कारकों पर निर्भर करती है। इसी तरह विज्ञान लोकप्रियकरण का कार्य भी कई कारकों पर निर्भर करता है। जब वैज्ञानिकों, पत्रकारों, संपादकों एवं भाषा का सही ताल–मेल बैठेगा तब ही विज्ञान एक 'खास' विषय से 'आम' विषय हो पाएगा। जन–संचार माध्यमों की कमी नहीं है आज घर–घर में समाचार–पत्र, रेडियो, टी वी एवं मैग्ज़ीन की पहुँच है लेकिन इन साधनों ने राजनीति, खेल, मनोरंजन जैसे विषयों को तो अत्यंत लोकप्रिय बना दिया लेकिन इस दौड़ में विज्ञान कहीं पीछे छूट गया। जबकि आज़ादी से लेकर अब तक देश में शिक्षा दर लगातार बढ़ी है साथ ही ज़नसंचार तकनीक ने भी नए आयामों को छुआ है। इसके बाद भी विज्ञान सबसे उन्नत विषय होते हुए भी सबसे पिछड़ा ही नज़र आता है।

इस समस्या से निदान पाने का सबसे सहज रास्ता है वैज्ञानिकों और मीडिया जगत को साथ मिलकर चलना होगा। इसके लिए कई संस्थाएं भी हैं जो दिन–रात प्रयासरत हैं। विज्ञान लोगों तक पहुँचा है। इस बात का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि अब आप घर से निकलने से पहले छींकने से डरते नहीं या फिर छींक आ जाने पर रुकते नहीं। आज अधिकतर लोग जानते हैं कि छींकने की वजह क्या है।

लेकिन ऐसी कई रुढ़िवादी विचारधाराएं हैं, जो आज भी समाज में व्याप्त हैं और इन रूढ़ियों से आज़ादी सिर्फ विज्ञान के माध्यम से ही हमें मिल सकती है। मीडिया भी इस दिशा में प्रयास कर रहा है। ज़रूरत है तो इन प्रयासों को और तेज़ करने की। मीडिया संस्थाओं के प्रतिनिधि अगर विज्ञान को खुले दिल से अपनाएं तो विज्ञान देश के कोने–कोने तक पहुँच पाएगा। वहीं वैज्ञानिक अपनी व्यस्त दिनचर्या से थोड़ा समय निकाल कर पत्रकारों या सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर आम लोगों से विज्ञान संबधित विषयों पर चर्चा करें तो विज्ञान सभी के बीच आसानी से लोकप्रिय हो सकेगा। वैज्ञानिक अगर सीधे पत्रकारों या संपादकों से बातचीत करने में सहज न हों तो वे सोशल नेटवर्किंग साइट्स का सहारा ले सकते हैं। यहाँ वैज्ञानिक और आम लोग एक मंच पर आकर आमने–सामने किसी भी विज्ञान से जुड़े मुद्दे पर चर्चा कर सकते हैं। आज युवाओं के बीच सोशल नेटवर्किंग साइट्स बेहद लोकप्रिय हैं। युवाओं को विज्ञान की ओर आकर्षित करने के लिए ये साइट्स बहुत ही अच्छा माध्यम साबित हो सकते हैं।

संदर्भ

1. विज्ञान लोकप्रियकरणः प्रारम्भिक प्रयास, डॉ शिवगोपाल मिश्र, डॉ दिनेश मणि।
2. भारत में जनसंवादः डॉ महावीर सिंह।
3. news.outlookindia.com.
4. www.physics.ohio-state.edu.

भारत की प्रगति में जल का महत्व

प्रवीण गुप्ता
रक्षा वैज्ञानिक सूचना एवं प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

वर्ष 2050 तक दुनिया की आबादी मौजूदा सात अरब से बढ़कर नौ अरब हो जाएगी, जबकि पानी की उपलब्धता कई गुना कम हो जाएगी। जनसंख्या के मामले में भारत भी अछूता नही है। जल एवं खाद्य सुरक्षा भारत के आगे एक प्रश्नचिन्ह है। जलपुरूष के नाम से विख्यात श्री राजेन्द्र सिंह ने कहा है कि ''भारत के दो तिहाई भूजल भंडार खाली हो चुके हैं, जो बचे हैं वह प्रदूषित होते जा रहे हैं। नदी का जल पीने लायक नहीं बचा है। अगर ऐसा ही चलता रहा तो आर्थिक वृद्धि, प्रगति और समृद्धि जैसे फलसफे धरे के धरे रह जाएगें।

जल जीवन का जहर

हर वर्ष 22 मार्च को जल दिवस मनाया जाता है। जल सुरक्षा एवं शुद्धता यह वर्तमान की जरूरत है। जल जीवन नहीं, जल जहर बन चुका है और हम इस जहर पर निर्भर हैं। एक व्यक्ति को रोजाना भोजन उपलब्ध कराने के लिए प्रतिदिन 3000–5000 लीटर पानी की जरूरत होती है और हमारे पास इतने पानी की व्यवस्था नहीं है। बात साफ है हमें बिना देर किए अपने जल संसाधनों को बचाने, साफ करने एवं पानी की बर्बादी को रोकने के लिए दृढ़संकल्प होना होगा।

पृथ्वी पर संसाधानों का उपयोग– पृथ्वी की क्षमता व भार को जी एच ए यानी ग्लाबल हेक्टेयर प्रतिव्यक्ति की इकाई से बताया जाता है। इसमें अलग–अलग पैमानों पर देखा जाता है कि किस देश में कितनी जमीन पर इमारतें बनी हैं, किसी मछली पालन, खेती व चराई के लिए इस्तेमाल हो रही है।

देश (कुल152)	संसाधनों का उपभोग	संसाधनों की क्षमता	भार कितना
संयुक्त अरब	**10.67**	**0.85**	**–9.8**
अमेरिका	**7.99**	**3.87**	**–4.12**
चीन	**2.21**	**0.98**	**–1.23**
भारत	**0.91**	**0.51**	**–0.40**
पाकिस्तान	**0.76**	**0.43**	**–0.33**
पूर्वी तिमोर	**–0.44**	**1.21**	**0.77**

भारत की इस सूची में 141 वां स्थान है। इसमें सर्वाधिक योगदान कार्बन 0.33 GHA का है, वन 0.12 GHA, मछलीपालन 0.02 GHA, कृषि 0.39 GHA, इमारतें 0.05 GHA प्रमुख हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भारत की प्रगति में संसाधनों का कितना महत्व है।

शुद्ध पानी का उपयोग

भारत में प्रतिव्यक्ति शुद्ध पानी का उपयोग 1071 क्यूबिक मीटर है। एक क्यूबिक मीटर में एक हजार लिटर होते हैं।

देश	शुद्ध पानी का उपयोग (क्यूबिक मीटर)
संयुक्त राज्य अमेरिका	2842
चीन	1089
भारत	1071
ग्रीस	2400
मलेशिया	2300
इटली	2200
स्पेन	2100
ब्रिटेन	1258

एक अन्य सर्वे के अनुसार भारत दुनिया को दूसरा जनसंख्या वाला देश है और कुल पानी के उपयोग के बारे में भी दूसरे नम्बर पर है। सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश चीन पानी का सबसे अधिक उपयोग करता है और अमेरिका तीसरे स्थान पर है। जहॉ तक शुद्ध पानी का सवाल है भारत बहुत पीछे है।

दुनिया में हर व्यक्ति औसतन हर रोज 4000 लीटर पानी का इस्तेमाल करता है, जहां तक अमेरिकियों का सवाल है वे वैश्विक औसत से दो गुना ज्यादा पानी का इस्तेमाल करते है।

लोगों के लिए कहां कितना पानी

देश/क्षेत्र	जनसंख्या (प्रतिशत में)	पानी उपलब्ध (प्रतिशत में)
एशिया	60	36
उत्तर अमेरिका	5	26
दक्षिण अमेरिका	8	15
अफ्रीका	13	11
यूरोप	13	8
ओशिनिया	1	5

यहां है पानी की भीषण किल्लत

- भारत
- मोरक्को
- बेल्जियम
- जार्डन
- सूडान

यहां है पानी भरपूर

- फिनलैंड
- कनाडा
- न्यूजीलैंड
- जापान
- ब्रिटेन

सिकुड़ती जल सप्लाई

भारत मे सालाना प्रतिव्यक्ति पानी की उपलब्धता

वर्ष	क्यूबिक मीटर
1950	5137
2000	1865
2010	1000
2020	600

दम तोड़ती नदियां

कृष्णा नदी में 1960 में जहां 57 बिलियन क्यूबिक मीटर (BCM) पानी छोड़ा जाता था वह 2004 में शून्य हो गया। सिंधु नदी में 1892 में प्रतिवर्ष 1, 85, 000 मिलियन क्यूबिक मीटर (MCM) पानी का बहाव था जो 1990 में 12,300 (MCM) मिलियन क्यूबिक मीटर हो गया। साल में ऐसा अधिकतर होता है जब दिल्ली में यमुना नदी सूख सी जाती है।

आठ साल बाद की तस्वीर

2020 तक भारत में पानी की मांग 1000 बिलियन क्यूबिक मीटर होगी जबकि पूर्ति सिर्फ 700 बिलियन क्यूबिक मीटर हो पाएगी।

कहां कितना पानी खर्च

कृषि कार्य	70 प्रतिशत
उद्योग	22 प्रतिशत
घरेलू कार्य	8 प्रतिशत

पीने से अधिक 'खाया' जा रहा है पानी। हर व्यक्ति को रोजाना औसतन 2–4 लीटर पानी पीने की जरूरत होती है जबकि एक व्यक्ति के लिए एक दिन में खाने के उत्पादन हेतू 5000 लीटर तक पानी इस्तेमाल होता है। एक किलाग्राम चावल के उत्पादन में 1000–3000 लीटर पानी की जरूरत होती है।

इन्होंने दिखाई राह

महाराष्ट्र में पानी पंचायतों ने सूखाग्रस्त क्षेत्रों के किसानों की जिन्दगी बदल कर रख दी है। इस प्रदेश में एक योजना बनाई गई है जिसके तहत आधा एकड़ के लिए एक साल में 1000 क्यूबिक पानी मिल सकेगा। एक परिवार के लिए सिर्फ 2.5 एकड़ के लिए ही पानी मिल सकता है। इस योजना से सभी को पानी भी मिल रहा है और भूजल स्तर भी बढ़ रहा है।

बरसाती पानी से भूजल स्तर बढ़ाना

रेन हार्वेस्टिंग सिस्टम से गिरते भूजल स्तर को काफी हद तक थामा जा सकता है। 100 वर्गमीटर के क्षेत्र में तय मानकों के अनुसार इस सिस्टम से 40,000 लीटर पानी सालाना बचाया जा सकता है। पॉच सदस्यीय परिवार के पीने के पानी का सालाना खपत से चार गुना पानी बचाया जा सकता है।

कैसे बचाएं पानी व क्या करें

- वाशिंग मशीन का उपयोग करें जो 24 प्रतिशत तक पानी की बचत करती है।
- फ्लो रिडयूसर सहित शॉवर से 10 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है।
- बगीचों को प्रातः चार बजे से छः बजे तक सींचने से 20 प्रतिशत तक पानी बच सकता है।
- देसी पौधे कम पानी में फल–फूल जाते हैं इसलिए इन्हें प्रमुखता दें।
- माइक्रो स्प्रिंक्लर से सींचने पर पानी की खपत 20 प्रतिशत कम होती है।
- नहरों का सरकार द्वारा यदि कवर कर दिया जाए तो वाष्पीकरण नहीं होगा और 25 प्रतिशत पानी बचाया जा सकेगा।
- शहर की पानी सप्लाई प्रणाली में लीकेज को रोककर नौ फीसदी तक पानी की बचत की जा सकती है।

पानी से उत्पन्न बीमारियों से कैसे बचें?

- बाहर खाना खाने से बचें।
- कूलर साफ रखें, दवाई का छिड़काव करें।
- आर ओ वाटर प्यूरिफिकेशन सर्टिफिकेट वाले खरीदें।
- तबीयत बिगड़ने पर डॉक्टर से सम्पर्क करें।
- उबले पानी का इस्तेमाल करें।
- बच्चों का उपयुक्त टीकाकरण करवाऐं।
- कच्चा एवं समुद्र फूड खाने से बचें।
- पाश्च्यूरीकृत पदार्थ ही खाने की कोशिश करें।

निष्कर्ष

इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि भारत की प्रगति में जल का बहुत महत्व है। जरूरत है तो जल को बचाने की, साफ करने की एवं जल बर्बादी रोकने की।

कृषि के विकास के बिना विश्व प्रगति में विज्ञान एवं तकनीकी अधूरी

संजय वर्मा
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश का उत्तरदायित्व अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। दूसरों के प्रति इस उत्तरदायित्व को निभाने से पूर्व उसे स्वयं अपने प्रति भी महान उत्तरदायित्वों को पूरा करना है। यह कार्य शिक्षा ही कर सकती है। राष्ट्र की आन्तरिक तथा सम्पूर्ण विश्व की इस नवीन परिस्थिति में शिक्षा अपना अमूल्य योगदान देकर भविष्य का स्वर्णकाल निर्मित करना है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा विकास की रूपरेखा इसी दिशा में एक प्रयास है। किन्तु हमारा यह प्रयास सफल तभी हो सकता है, जब देश की नवीन परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा में नवीन एवं महान उद्देश्यों की प्रतिष्ठा की जाय। शिक्षा द्वारा राष्ट्र की संस्कृति के कल्याणकारी तत्वों को प्रोत्साहन देकर पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रखना है। अपने राष्ट्र के नवजागरण के प्रथम पहर में शिक्षा को हमारे सांस्कृतिक उत्थान में जो क्रियात्मक सहयोग देना है, उसे निश्चित नहीं किया जा सकता। शिक्षा मानव का सर्वांगीण विकास होना नितान्त असम्भव और दुष्कर है। समाज का रूप विभिन्नता के लिए होता है तथा व्यक्ति समाज का ही अंग होता है। अतः शिक्षा प्रणाली अथवा शिक्षा व्यवस्था को भी विभिन्नता का विभिन्न रंगी परिधान धारण किये हुए होना चाहिए। हमारी वर्तमान शिक्षा के ऊपर तो बड़ा दायित्व है। एक ओर तो उसे अपने गुणों तथा व्यवस्था के माध्यम से ऐसे नागरिकों का निर्माण करना है जोकि प्राचीन भारतीय सभ्यता, संस्कृति तथा मूल्यों की सुरक्षा कर सकें। साथ ही साथ, आज की धरती पर जो निर्धनता का तांडव नृत्य हो रहा है उसे भी समाप्त कर सकें और सम्पूर्ण देशवासियों के लिए उन्नति और समग्र विकास की राह प्रशस्त कर सकें। यही नहीं, आज लगभग 79 प्रतिशत देशों में खाद्यान्न की कमी एवं सिर्फ 31 प्रतिशत राष्ट्रों की ही खाद्यान्न की पूर्ण आत्म निर्भरता जैसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति को देखकर 'कृषि' की हालत भी बतायी जा सकती है। यह न केवल विश्व के विज्ञान एवं तकनीकी विकास की कलई खोल देता है अपितु भारत जैसे कृषि प्रधान राष्ट्र के लिए एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आवश्यक पहल भी है। तभी हम स्व0 लाल बहादुर शास्त्री के "जय जवान, जय किसान" एवं डॉ राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में निम्न राग अलापने में समर्थ होंगे–

"भारत को अपने लिए ऐसी संस्कृति तथा शिक्षा का चुनाव करना है जो कि प्राचीन भारतीय संस्कृति की उत्तमता से प्रेरणा लें, साथ ही वर्तमान मांगों की भी उपेक्षा न कर सके।"

भारत में शिक्षा विज्ञान और विज्ञान लोकप्रियकरण

पिछले दस वर्षों के दौरान देश की वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी क्षमताओं में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। अब विश्वविद्यालयों एवं व्यावसायिक संस्थानों में दी जाने वाली ऊँची दर्जे की शिक्षा को देश तथा देश के बाहर के उद्योग भी मान्यता देने लगे हैं। प्राइमरी कक्षा के स्तर से लेकर ऊपर तक के पाठ्यक्रमों और शिक्षा प्रदान करने के विधियों में समान रूप से और निरन्तर सुधार होता जा रहा है।

सन् 1982 में अपने गठन के समय से ही राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् ने स्कूल जाने वाले विद्यार्थियों सहित लोगों में विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए अने कार्यक्रम प्रारम्भ किये हैं। ये

कार्यक्रम विज्ञान क्षमता में वृद्धि के लिए तैयार किये गये हैं। इसका संक्षिप्त उल्लेख निम्न हैं :–

1. युवा वैज्ञानिकों/बच्चों को अपनी प्राकृतिक सृजनात्मकता के आधार पर कार्य करने के लिए एक माध्यम तैयार करना।
2. युवा वैज्ञानिकों के विज्ञान को अपने आसपास के वातावरण से जोड़ने का अवसर प्रदान करना।
3. बच्चों को एक टीम के रूप में कार्य करते हुए वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके स्थानीय समस्याओं को सुलझाने के लिए प्रेरित करना।
4. अपने समकक्ष लोगों और निर्णायकों के समक्ष अपने परिणामों को प्रस्तुत करके उनमें संचार कौशल विकसित करना।
5. वैज्ञानिक मनोवृत्ति को आत्मसात करना।

ग्रामीण तथा स्कूल के बाहर के बच्चों की भागीदारी को प्रोत्साहित करने पर बल दिया जाता है। देश के लगभग सभी जिलों के 10–17 वर्षों के युवा वैज्ञानिक क्षेत्रोन्मुख खोजपरक प्रयोजनाओं का चुनाव करते हैं। एक मार्गदर्शक अध्यापक की सहायता से 3–5 विद्यार्थियों की टोली में कार्य करते हुए उन्हें जिला स्तर के सम्मेलनों में भाग लेने के लिए चुना जाता है। इसी तरह से प्रतिभावान विद्यार्थियों को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित 'सम्पर्क' कार्यक्रम, उद्योगों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग के प्रति विद्यार्थियों का संवेदीकरण, प्रशिक्षण–कार्यक्रम (जिसमें लेसर, राकेट के मॉडल तैयार करना, ऑरगैमी, कम लागत की विज्ञान शिक्षण सामग्री, पर्यावरण जागरूकता गतिविधियाँ जैसे– प्रगति गतिविधि शिविर, रुट और भूट कार्यक्रम शामिल हैं) विज्ञान क्लबों की गतिविधियाँ, राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस आदि पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

देश में ग्रामीण विज्ञान शिक्षा

आज देश की कुल आबादी की लगभग 70 प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। अब यदि देश की आबादी का इतना बड़ा भाग गाँव में रहता है तो विज्ञान विकास और विशेषकर ग्रामीण जगत् में विज्ञान शिक्षा (Science Education) के बिना देश के निर्माण और विकास की बात कहना कहाँ तक तर्क संगत होगा।

ग्रामीण विकास के लिए वैज्ञानिक परिकल्पना ऊर्जा एवं शक्ति पर आधारित होती है। यह कृषि पर आधारित है और कृषि के लिए जल का होना आवश्यक है। जल संरक्षण को सर्वोच्च प्राथमिकता दिया जाना चाहिए। ऐसे रसायन उपलब्ध हैं जो जल के वाष्पीकरण की दर को धीमा कर देते हैं। इसके अतिरिक्त निम्न क्षेत्रों में भी विज्ञान और तकनीक का प्रयोग एवं उन्हीं कारणों का विकास ग्रामीण शिक्षा की दिशा होनी चाहिए।

1. नाइट्रोजन स्थायीकरण द्वारा तेजी से बढ़ने वाले वृक्षों का शीघ्र गुणन।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे पौधों का पता लगाना जो कीटनाशक की भूमिका निभा सकते हैं।
3. ऐसी वनस्पतियों का पता लगाना जो औषधियों के निर्माण में प्रयोग किये जा सकते हैं।
4. गाँवों में लघु एवं कृषि उद्योगों की स्थापना और उनके विकास के सन्दर्भ में विज्ञान शिक्षा का ज्ञान।
5. गाँवों में सामूहिक गोबर गैस संयंत्रों की स्थापना, जिससे ऊर्जा की समस्या का निदान हो सके और ऊर्जा उत्पादन (Energy production) में वृद्धि हो सके आदि क्षेत्रों में विज्ञान शिक्षा।
6. जिन ग्रामीण क्षेत्रों में जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो और जल संग्रह की सुविधा हो, वहाँ जल, खाद उपलब्ध किये जाने के तरीके पर विज्ञान शिक्षा।

7. ऊर्जा उत्पादन (Energy production) के अन्य विकल्पों का विकास एवं सौर ऊर्जा के विकास के लिए किये जा रहे प्रयत्नों की शिक्षा।
8. मिट्टी की काश्तकारी के लिए अधिक कार्य कुशलता एवं कम दाम वाले साधनों एवं संसाधनों के निर्माण एवं विकास के सन्दर्भ में विज्ञान शिक्षा।
9. यातायात एवं परिवहन के लिए अधिक कार्यकुशलता।
10. बंजर और बेकार पड़ी हुई भूमि को विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा (Education training in Science and technology) द्वारा कृषि योग्य बनाना।

इन सभी चीजों को मुख्यतः दो स्तरों पर कार्य किया आवश्यकता है–

अ. देश के वैज्ञानिकों एवं तकनीशियनों में ग्रामीण विकास के लिए अभिरुचि एवं विज्ञान शिक्षा का जन–जागरण एवं

ब. गांव वालों को अपनी सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं को इन समर्पित वैज्ञानिकों/विज्ञान संचारकों के सामने लाने के लिए प्रेरित किया जाना और उन्हीं की भाषायी शैली में ज्ञान देना।

निष्कर्ष

अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी जैसे विकसित देशों में विज्ञान शिक्षा की स्थिति जो भी हो, मगर भारत जैसे गरीब एवं कृषि आधारित देश में विज्ञान क्रान्ति एवं विज्ञान शिक्षा तभी सफल मानी जायेगी, जब विज्ञान विकास, विज्ञान साक्षरता और विज्ञान शिक्षा मुख्य रूप से कृषकों और कृषि तक पहुँचे। एक सफल वैज्ञानिक ग्रामीण विकास वस्तुतः तभी सम्भव है जब वैज्ञानिकों, विज्ञान–संचारकों एवं ग्रामीण जगत् के मध्य सतत अन्तर्सम्बन्ध बना रहे। इस दिशा में पहल सरकारी, निजी एवं अन्य महत्त्वपूर्ण कारकों द्वारा की जानी चाहिए। इस क्षेत्र में विज्ञान विकास एवं विज्ञान शिक्षा हेतु सामाजिक एवं निजी संगठनों व विज्ञान संस्थाओं की सहायता ली जाय और वरिष्ठ वैज्ञानिकों/संचारकों का वैयक्तिक स्तर पर मार्गदर्शन लिया जाये।

नैनो प्रौद्योगिकी : एक लघु, लघु, लघु छोटी सी दुनिया

सोनिया चौधरी, सुमन लता, तथा फूलदीप कुमार*
गंगा प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान, झज्जर, हरियाणा
**रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली*

सारांश

आम आदमी की दृष्टि में नैनो प्रौद्योगिकी सामग्री, अनुप्रयोगों और प्रक्रियाओं को इस तरह डिजाइन करती है ताकि ये छोटे पैमाने पर काम कर सकें। नैनो प्रौद्योगिकी वर्तमान और भविष्य के लिए एक महत्वपूर्ण तकनीक है और सरकार ने इसके अनुसंधान में अरबों डॉलर निवेष किया है। इस प्रौद्योगिकी ने विज्ञान का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है, जिसमें अपनी छाप ना छोड़ी हो। नैनो तकनीक ने हमारे जीवन में एक क्रांति ला दी है। इस तकनीक ने विश्व की प्रगति में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आज मानव के पास छोटे से छोटे हाथ प्रदान उपकरण हैं जिनसे जीवन जीने का तरीका ही बदल गया है। नैनो अनेकों अनुप्रयोगों को बढ़ावा दे रही है जैसे दवा, इलैक्ट्रॉनिक्स, कृषि और उर्जा उत्पादन। आजकल हर इंसान ऐसा उत्पाद प्रयोग कर रहा है जो नैनो तकनीक से छुआ गया है। इसलिए हर इंसान के लिए ये जानना जरूरी है यह तकनीक क्या है और इसके फायदे और नुकसान क्या हैं?

भूमिका

नैनो विज्ञान की वो तकनीक है जो परमाणु या आण्विक पैमाने पर सामग्री में हेरफेर करती है। नैनो के लिए कई परिभाषाएं हैं। संक्षेप में यह छोटा सा विज्ञान है। कुछ वैज्ञानिकों ने कहा है "हमारे चारों ओर सब कुछ परमाणुओं से बना हुआ है। खाना खाने से लेकर, जो कपड़े हम पहनते हैं, जिन सामग्री और उत्पादों का हम निर्माण कर रहे हैं, जिन कारों और विमानों का हम प्रयोग कर रहे हैं सब परमाणुओं से युक्त है ओर आने वाले समय में ये सभी नैनो तकनीक से प्रभावित होंगे। नैनो तकनीक का लक्ष्य है घर और कार्यालय के लिए लंबे समय तक टिकाऊ, स्वच्छ, सुरक्षित और होशियार उत्पादों को बनाना जिनका प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में हो सके जैसे संचार, चिकित्सा, परिवहन, कृषि, सैन्य, हथियार, जांच और उद्योग।

मूलः नैनों का इतिहास

विज्ञान के उभरते और नये क्षेत्र नैनो का पहली बार 1959 में जिक्र हुआ लेकिन 1980 के दशक तक यह बड़े पैमाने पर सैद्धांतिक ही रही। 1959 में एक भौतिक विज्ञानी रिचर्ड फेनमैन ने नैनो तकनीक का सुझाव दिया कि यह संभेव हो सकता है परमाणुओं और अणुओं में हेरफेर किया जाए। इस सुझाव से नैनो दौड़ का शुभारंभ हो गया। खुर्दबीन स्कैनिंग टनलिंग के अविष्कार ने विशिष्ट परमाणुओं में हेरफेर करने की अनुमति दी। एक बड़ी सफलता 1989 में हुई जब आई बी एम ने ऐसी मशीन का इस्तेमाल अपने कॉर्पोरेट लोगों का वशीकरण करने के लिए किया, वो भी सिर्फ 35 परमाणुओं के प्रयोग से। 1991 में कार्बन नैनोट्यूब का प्रदर्शन किया गया, इन बेलनाकार संरचनाओं में बेहद उच्च शक्ति,

अद्वितीय बिजली, कुशल थर्मल कंडक्टर पाया गया। विभिन्न अन्य संरचनाओं को विकसित किया गया, प्रत्येक परमाणु द्वारा परमाणु आधार पर बनाई गई। आज नैनो विज्ञान और प्रौद्योगिकी के तेजी से बढ़ते क्षेत्र में से एक है जिसने विश्व की प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मौलिक अवधारणा

नैनो तकनीक उन वस्तुओं का वर्णन करती है जिनका व्यास 1–100 नैनोमीटर के दायरे में हो। एक नैनोमीटर एक मीटर का एक अरब है। यह तकनीक कहती है जब सामग्री को नैनोमीटर जितने छोटे पैमाने पर तोड़ा जाए और नए क्रम में रखा जाए तो सामग्री की विशेषताओं में बहुत परिवर्तन आता है। उदाहरण के लिए नैनोमीटर पैमाने पर

- अपारदर्शी तांबा पारदर्शी हो जाता है।
- अघुलनशील सोना घुलनशील हो जाता है।
- स्थिर एल्यूमीनियम दहनशील हो जाता है।

छोटे पैमाने पर डिजाइन की गई सामग्रियां अद्वितीय अनुप्रयोगों को बढ़ावा देती है जैसे दवा, इलैक्ट्रॉनिक्स, कृषि और उर्जा उत्पादन। नैनो सामग्री और नैनो संरचनाओं के निर्माण के लिए दो दृष्टिकोण है–

ऊपर–नीचे दृष्टिकोण– यह दृष्टिकोण संदर्भित करता है नैनो आकार कण प्राप्त करने के लिए थोक की सामग्री को टुकड़ों में तोड़ा जाए।

नीचे ऊपर दृष्टिकोण– यह दृष्टिकोण सामग्री को नीचे से निर्माण करने के लिए संदर्भित करता है, परमाणु को परमाणु के जरिए, अणु को अणु के जरिए या कलस्टर को क्लस्टर के जरिए।

नैनो तकनीक के फायदे

1. एडवांस्ड मैनुफैक्चरिंग

लाभ : नियंत्रित विनिर्माण प्रक्रियाओं में, विफायती और कम लागत के साथ उच्च उत्पादन।

2. एयरोस्पेस

लाभ : CO_2 में कमी, लाइटर सामग्री, कम ईंधन की खपत, सामग्री की कार्यक्षमता में सुधार, कम से कम जोखिम।

3. कृषि

लाभ– उच्च फसल की पैदावार, कीटनाशकों के प्रयोग में कमी और बेहतर जल प्रबंधन।

4. हेल्थकेयर

लाभ– बेहतर रोगी देखभाल और जैविक प्रक्रियाओं की समझ।

5. घरेलू उत्पाद

लाभ– आत्म सफाई, पानी और वायु शोधन प्रणाली।

6. तेल और गैस

लाभ– सुरक्षा निगरानी, तेल वसुली में सुधार, अच्छी तरह से प्रबंधन।

7. सुरक्षा

लाभ– कर्मचारी की निगरानी, इमेजिंग में बढ़ावा और बेहतर परीक्षण।

8. समुद्री

लाभ– उत्पादों के लिए परिवहन में सुधार।

9. निर्माण

लाभ– थर्मल इन्सुलेशन, उर्जा भंडारण उपकरण।

10. इलैक्ट्रॉनिक्स

लाभ– हाथ–प्रदान उपकरणों का आयोजन, क्वांटम कंप्यूटिंग, डाटा भंडारण।

भविष्य में नैनो के लाभ

बेहतर परिवहन

आज अंतरिक्ष में यात्रा बहुत ही महंगी है। नैनो अंतरिक्ष यान और अंतरिक्ष उड़ान की क्षमताओं को बढ़ा सकती है और उनकी लागत को कम कर सकती है। नैनो हमें एक अत्यंत शक्तिशाली कंप्यूटर उपलब्ध करा सकती है जो जहाजों और अंतरिक्ष में अन्य गतिविधियों का मार्गदर्शन कर सके।

एटम कंप्यूटर

भविष्य के कंप्यूटर स्मृति के लिए परमाणुओं का प्रयोग करेगे बजाय की चिप्स का।

सैन्य अनुप्रयोग

आज 'स्मार्ट हथियार' काफी बढ़े हैं लेकिन हमारे पास 'स्मार्ट बम' तो है लेकिन स्मार्ट गोली नहीं है। भविष्य में हथियार गोली जैसे छोटे रूप में होते हुए भी सबसे बड़े सुपर कंप्यूटर की तुलना में अधिक कंप्यूटर शक्ति पैक कर सकते हैं। इसके साथ–साथ वे अपने आस–पास के वास्तविक समय छवि आलंकन कर सकते हैं और अधिक सटीक और नियंत्रण के साथ लक्ष्य पर निगाहें रख सकते हैं।

नैनो तकनीक से मिलने वाली नई चुनौतियाँ और जोखिम

- नैनो उत्पाद में पाये जाने वाले कण अविश्वसनीय रूप से इतने छोटे हैं कि वे बहुत आसानी से स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकते हैं।
- नैनो के साथ एक संभावित समस्या हमारे स्वयं ज्ञान की कमी है। यदि हम नैनो स्तर पर सामग्री की संरचना को बदल रहे हैं बिना इसके संभावित प्रभाव को समझे तो हम पूरी दुनिया को ऐसी सामग्री से बनाकर जोखिम में डाल रहे हैं जिनमें परमाणु वास्तव में एक साथ संसक्ति से फिट नहीं है।
- पारंपरिक खेती और विनिर्माण उद्योग में नौकरियों के संभावित नुकसान हैं।
- नैनो की वजह से परमाणु हथियारों को अब और अधिक सुलभ, शक्तिशाली और विनाशकारी बनाया जा सकता है।
- वर्तमान में नैनो बहुत महंगी है, इसलिए भविष्य में इसको विकासशील करने में पैसे की बहुत लागत आ सकती है।

प्राचीन भारत में विज्ञान का उद्‌भव एवं विकासः एक अध्ययन

गीता रानी एवं फूलदीप कुमार
चौ देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा, हरियाणा
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

ज्योतिष

प्राचीनकाल में भारत ने आध्यात्मिक उन्नति तो की ही थी किन्तु विज्ञान में भी और देशों का अगुआ रहा था। हमारा देश धर्म–प्रधान अवश्य रहा है किन्तु हमारे यहां के धर्म में लौकिक अभ्युदय और निःश्रेयस (आध्यात्मिक उन्नति की चरम सीमा) दोनों ही सम्मिलित थे। अधिकांश विज्ञानों का धर्म के साथ ही विकास हुआ। ज्योतिष को तो वेदांग ही माना गया है। शिक्षा और निरुक्त में भाषा–विज्ञान के ध्वनि और अर्थ सम्बन्धी ऊँचे से ऊँचे सिद्धान्तों की खोज हुई। इन शास्त्राों का वेदों के उच्चारण और अर्थ से सम्बन्ध था। यज्ञ की वेदियों के बनाने में शुल्व सूत्रों द्वारा रेखागणित या ज्यामिति आदि का विकास हुआ। पाइथोगोरस को इस सिद्धान्त का आविष्कारक माना जाता है कि समकोण त्रिभुज में समकोण की सामने वाली भुजा पर का वर्ग शेष दो भुजाओं पर के योग के बराबर होता है। यह सिद्धान्त ईसा से प्रायः 800 वर्ष पूर्व हमारे यहाँ के आचार्य बोधायन को ज्ञात था, किन्तु इसका श्रेय पाइथोगोरस को ही दिया जाता है। यज्ञों को कालाधीन बताया गया है– 'कालानुपूर्व विहिताश्चयज्ञः' यज्ञों के समय निश्चित करने के लिए यह जानना आवश्यक हो जाता था कि दिन–रात्रि कब बराबर होते हैं। वैदिक मासगणना सूर्य और चन्द्र दोनों से होती थी। महीनों के सौर नाम भी थे और चन्द्र नाम भी, जैसे माघ का नाम, तपस, चैत्रा का नाम मधु, वैशाख का नाम माधव था। अधिक मास द्वारा वे इन मासों की संगति बैठाना भी जानते थे। यज्ञों का ऋतुओं से भी सम्बन्ध रहता था, जैसे ज्योतिष्टोम वसन्त ऋतु में होता था और वाजपेय–यज्ञ ग्रीष्म ऋतु में। इन ऋतुओं का सम्बन्ध महीनों और नक्षत्रों से था। वे नक्षत्रों को पहचानते थे और उनका उन्होंने नामकरण भी कर लिया था। वैदिक ऋषि यह भी जानते थे कि जमीन गोल है और सूर्य की शक्ति से अन्तरिक्ष में डटी हुई है। वे लोग बारह राशियों और सूर्य के उत्तरायण दक्षिणायन होने की बात भी जानते थे। प्राचीन ज्योतिषाचार्यो में गर्ग, पाराशर ऋषि–पुत्र काश्यम और देवल (जिनका श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में महर्षि व्यास के साथ उल्लेख हुआ है) आदि के नाम प्रसिद्ध हैं।

महाभारत में पाण्डवों के बारह वर्ष के अज्ञातवास के काल–निर्णय में कई प्रकार के वर्षो का उल्लेख हुआ है और प्रसंगवश ज्योतिष के सिद्धान्तों पर भी प्रकाश डाला गया है। मनुस्मृति आदि में भी ज्योतिष का वर्णन है। 'सूर्य सिद्धान्त' का उल्लेख वाराहमिहिर ने 505 ई में अपनी 'पंच सिद्धान्तिका' में किया है, किन्तु वह उपलब्ध नहीं। आजकल जो सूर्य–सिद्धान्त के नाम से प्रसिद्ध है वह उससे भिन्न है। चलापृथ्विस्थिता वाले आर्यभट्ट का जन्म 576 ई में हुआ था। इन्होंने ज्योतिष को पूर्ण वैज्ञानिक धरातल पर प्रतिष्ठित कर दिया था। आर्यभट्ट पृथ्वी को चल मानते थे। आर्यभट्टीय का उल्लेख 8 वीं शताब्दी में अरबी में 'अर्जवहर' नाम से हुआ था। यहां तक कि वर्तमानकालीन वैज्ञानिक कल्पना से वह परिचित थे।

वाराहमिहिर को, जिनका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं, कुछ लोग कालिदास के साथ ईसा पूर्व पहली शताब्दी का मानते है क्योंकि वे विक्रमादित्य के नवरत्नों में गिनाये गये हैं। नवरत्नों के नाम इस प्रकार हैं–

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंह शंकुवेताल घटकपंर कालिदासाः।

वराहमिहिरो नृपतेः रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य।।

किन्तु वराहमिहिर ने आर्यभट्ट का नामोल्लेख किया है। इस आधार पर उनको आर्यभट्ट से पीछे का मानना अधिक तर्कसम्मत होगा। यह बात भी सम्भव हो सकती है कि आर्यभट्ट, जिनका वराहमिहिर ने उल्लेख किया है, कोई दूसरे हो। वाराहमिहिर ने अपनी पंच सिद्धान्तिका में जिन पांच सिद्धान्तों का विवरण दिया है वे इस प्रकार है–पुलिश, रोमन, विशिष्ट, सौर (सूर्य) और पितामह। रोमन सिद्धान्त के सम्बन्ध में विद्वानों का विचार है कि इसमें यूनानी या रोमन सिद्धान्तों का वर्णन है। सभ्य देशों में सभी देशों के ज्ञान व जानकारी रखने का प्रयत्न होता है सम्भव है यह भी ऐसा ही प्रयत्न हो। वराहमिहिर को पुच्छल तारों का भी हाल मालूम था।

वराहमिहिर के पश्चात् ब्रह्मगुप्त और लल्ल का नाम आता है। ब्रह्मगुप्त ने लगभग ब्राह्म स्फुट सिद्धान्त और खण्ड खाद्य लिखे। उन्होंने तथा उनसे कुछ वर्ष पीछे होने वाले आचार्य लल्ल के सिद्धांत आर्यभट्ट के भू–भ्रमण से बहुत आगे थे। सहज में जनता उनको नहीं स्वीकार कर सकती थी। लल्ल–सिद्धान्त में भू–भ्रमण के विरूद्ध ऐसी ही युक्तियाँ दी गई हैं जैसी कि आजकल के अनपढ़ लोग देते हैं– जैसे कि अगर पृथ्वी घूमती है तो घौंसले से उड़ा हुआ कबूतर क्यों घोंसले में वापिस आ जाता है? इसका तो सहज उत्तर यह था कि न तो पृथ्वी का वातावरण पृथ्वी से अलग है और न घोंसला ही अलग है।

बारहवीं शताब्दी (1114) में महेश्वर के पुत्र भास्कराचार्य ने सिद्धान्त शिरोमणि, ग्रह गणित, ग्रहलाघव, सूर्य सिद्धान्त–व्याख्या, भास्कर दीक्षिती आदि कई ज्योतिष के ग्रन्थ लिखे और आर्यभट्ट के सिद्धान्तों की पुनः स्थापना की। सिद्धान्त शिरोमणि में चार भाग हैं – (1) लीलावती, (भास्कराचार्य की पुत्री को गणित में बहुत रुचि थी, उसी के नाम पर इस अध्याय का नामकरण हुआ) (2) बीज गणित, (3) ग्रहगणिताध्याय और (4) गोलाध्याय। भास्कराचार्य ने इस बात की व्याख्या की है कि पृथ्वी गोल होते हुए भी चपटी क्यों दिखाई देती है। मनुष्य पृथ्वी की परिधि का एक छोटा–सा भाग देखता है। इसलिए वह उसे चपटा दिखाई देता है। भास्कराचार्य को पृथ्वी के आकर्षण का नियम, जिसकी खोज का श्रेय न्यूटन को दिया जाता है, सैकड़ों वर्ष पहले मालूम था।

आकृष्टशक्तिश्च महीतया यत् स्वस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशकत्या।
आकृष्यते तत पततीव भांति समे समान्तात त्वं पतत्विवयरवे।।

अर्थात् पृथ्वी अपनी आकर्षण–शक्ति के बल से सब वस्तुओं को अपनी ओर खींचती है। इसलिए सब पदार्थ उसकी ओर गिरते हुए दिखलाई पड़ते हैं–आकाश में नहीं गिरते। प्रोफेसर विलसन भारतीयों के ज्योतिष–ज्ञान के सम्बन्ध में लिखते हैं–

"भारत में मिलने वाली क्रान्ति–वृत्त का विभाग, सौर और चन्द्रमासों का निरूपण, ग्रहगति का निर्णय, अयनांश का विचार, सौर राशि मंडल, पृथ्वी का निराधार अपनी शक्ति से स्थिति, पृथ्वी की अपने अक्ष पर दैनिक गति, चन्द्र–भ्रमण और पृथ्वी से उसका अन्तर, ग्रहों की कक्षा का मान तथा ग्रहण का गणित आदि ऐसी बातें है जो अशिक्षित जातियों में पाई जाती हैं।"

अठारहवीं शताब्दी में जयपुर के सवाई महाराजा जयसिंह ने जयपुर में वेधशालाएं बनवाई। नई दिल्ली का यंत्र मंदिर (जन्तर मन्तर) उन्हीं का बनवाया हुआ है। उन वेधशालाओं के बनवाने में पाश्चात्य

देशों की खोज की भी सहायता ली गई थी। उन्नीसवीं शताब्दी में बापूदेव शास्त्री तथा सुधाकर द्विवेदी ने पुरानी शैलियों के साथ नई शैलियों का भी सम्मिश्रण किया।

गणित शास्त्र

गणित शास्त्र का ज्योतिष से विशेष सम्बन्ध रहा है। जैसा हम पहले कह चुके हैं वेदियों के निर्माण के सम्बन्ध में रेखागणित के सिद्धान्तों का विकास हुआ। भारत ही बीज–गणित का आविष्कर्ता है। अंकों की गणना का प्रचार यहीं से हुआ। पहले लोग शून्य भी नहीं जानते थे। 10, 20, 30, 100 तक के लिए पृथक्–पृथक् संख्या चिह्न थे, जैसे रोमन अंकों में हैं। दस के लिये X, पचास के लिए L, सौ के लिए C। हमारे यहाँ भी प्राचीन शिलालेखों में ऐसे गणना–चिह्न मिलते हैं। भारतवासियों ने एक पर शून्य लगाकर 10 तथा एक पर एक लिखकर 11 लिखने तथा इसी प्रकार दहाई सैकड़ा आदि की दश गुणोत्तर रीति निकाली। योगसूत्र के व्यास भाष्य में, जो ईसवी सन् 300 के लगभग रचा गया, दशागुणोतर अंक–क्रम का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। पहले हिब्रू, यूनानी, अरब आदि वर्णमाला के अक्षरों से संख्या का काम लेते थे। खलीफा वलीद के समय (ई 705–715) तक अंकों का प्रचार नहीं हुआ था। इसके पश्चात् अरबों ने भारतवर्ष से ये अंक लिये, तभी तो ये हिन्द से कहलाते हैं। यह शब्द ही हिन्द का ऋण स्वीकार करता है। फिर ये अरब यूरोप में गये, तभी से Arabic Figures कहलाते हैं। उन्होंने अरब का ऋण स्वीकार किया और अरबों ने हमारा। इन अंकों का प्रवेश एक भारतीय राजदूत द्वारा 773 ई में बगदाद में हुआ। वहाँ से अरब में फैला। प्राचीन रोमन दस हजार तक की गिनती जानते थे, अरब लोग 1000 तक की ही जानते थे। इस सम्बन्ध में अलबेरूनी लिखता है–"जिन भिन्न–भिन्न जातियों से मेरा सम्पर्क रहा, उन सबकी भाषाओं में संख्या सूचक चक्र के नामों (इकाई, दहाई, सैकड़ा आदि) का मैने अध्ययन किया है कि जिससे मालूम हुआ कि कोई जाति एक हजार से आगे नहीं जानती। अरब लोग भी एक हजार तक (नाम) जानते हैं.....अपने अंक क्रम में, जो हजार से अधिक जानते हैं वे हिन्दू है.....वे संख्या सूचक क्रम को अठारहवें स्थान तक ले जाते है जिसको परार्द्ध कहते हैं।" 100 के दश गुणन के हमारे यहाँ अलग–अलग नाम थे, जैसे सहस्त्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, कोटि, अर्वुद, न्यवुर्द, समुद्र, मध्य, अन्त, परार्द्ध। वाल्मीकी रामायण में सुग्रीव के सेनापतियों की सेनाओं की संख्या के वर्णन में इन संख्याओं का व्यवहारिक प्रयोग हुआ है। अर्बुद की संख्या के आगे का श्लोक देखिए–

अर्बुदैरर्बुदशतैर्मध्यैश्चान्त्यैश्च वानराः।
समुद्राश्च परार्द्धाश्च हरयों हरियूयपाः।। वा. रा. कि. का 38132

अर्थात् अरब (हजार शंख का एक अरब) सौ अरब का एक मध्य तथा अन्त वाले तथा समुद वाले और परार्ध्य वाले वानर यूथों के यूथप या सेनापति थे।

बीज–गणित को अंग्रेजी में ऐलजेब्रा कहते हैं। जिन शब्दों में अल लगा होता है वे प्रायः अरबी के होते है। यूरोपीय विद्वान बीजगणित के सम्बन्ध में भारत का ऋण स्वीकार करते है।[7]

अर्थात् आठवीं–नवी शताब्दी में हिन्दुस्तानी लोग अरबी लोगों के अंकगणित व बीजगणित के शिक्षक बने और उनके द्वारा पश्चिमी जातियों के। इस प्रकार यद्यपि हम उस विज्ञान को अरबी नाम से पुकारते हैं तथापि यह हमको भारतीयों की देन है। हम उनके ऋणी हैं। भारतीयों को त्रिकोणमिति का भी अच्छा ज्ञान था। इस ज्ञान का प्रयोग ज्योतिष की गणना में करते थे।

कामशास्त्र

भारत में कामशास्त्र का वैज्ञानिक दृष्टि से पर्यान्त विकास हुआ। इनमें सर्वाधिक प्राचीन उपलब्ध ग्रन्थ वात्स्यायन का 'कामसूत्र' है। वात्स्यायन के पूर्ववर्ती कामशास्त्रकार ये है–औद्दालकि, श्वेतकेतु, वाभ्रव्य, दत्तक, सुवर्णनाभ, धोटक मुख, गोन्दीय, कूचुमार। इन पूर्ववर्ती लेखकों के ग्रन्थों का सार लेकर

'कामसूत्र' की रचना हुई। इस ग्रन्थ से पता चलता है कि प्राचीन काल में हमारे यहाँ कामशास्त्र अत्यन्त विकसित एवं वैज्ञानिक था। इसमें स्त्री–पुरुष–भेद विवेचन के अतिरिक्त पति के प्रति स्त्री के कर्तव्यों तथा गृहस्थ के योग्य कार्यो आदि का भी विस्तृत वर्णन है। काम चर्तुवर्ग में से एक है। वात्स्यायन के कामसूत्र पर यशोधर (13 वीं शती) की जलमंगल टीका सर्वोत्कृष्ट है।

कामशास्त्र के अन्य ग्रन्थ ये हैं–

(1) ज्योतिरीश्वर का पंचशायक (11वीं शती उत्तरार्द्ध)
(2) कोक्कन का रतिरहस्य (11वीं शतीं उत्तरार्द्ध)
(3) जयदेव की रति मंजरी (अनिश्चित काल)
(4) विजयनगर के राजा प्रौढ़देवराय की रतिरत्न प्रदीपिका (15वीं शती)
(5) कल्याणमल्ल का अनंगरंग (16वीं शती)
(6) वीरभ्रद का कन्दर्प चिन्तामणि (16 वीं शती)

चौसठ कलाएँ

वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में चौंसठ कलाओं का विवरण मिलता है। 'कामसूत्र' के टीकाकार जयमंगल ने इनको इस क्रम में गिनाया है–

(1) गीत, (2) वाद्य, (3) नृत्य, (4) आलेख्य, (5) विशेष कच्छेद्य, (6) तण्डुल कुसुमवलिविकार, (7) पुष्पास्तरण, (8) दशनवसनांङ्गराग, (9) मणि–भूमिका कर्म, (10) शयनरचना, (11) उदकवाद्य, (12) उदकाघात, (13) चित्राश्च योग्या:, (14) माल्यग्रन्थन विकल्प (15) शेखर का पीड़योजन (16) नेपथ्यप्रयोग (17) कर्णपत्राभङ्ग (18) गन्धयुक्ति, (19) भूषणयोजन, (20) ऐन्द्रजाल (21) कौचुमार योग (22) हस्तलाघव (23) विचित्रशाक यूषभक्ष्य–विकार–क्रिया, (24) पानकरस–रागासव–योजन, (25) सूचीवानकमै, (26) सूत्रक्रीड़ा (27) वीणामरूक वाद्य, (28) प्रहेलिका, (29) प्रतिमाला (30) दुर्वाचक योग (31) पुस्तक वाचन, (32) नाटकारूयायिका दर्शन, (33) काव्य समस्या पूरण, (34) पट्टिकावेत्रावानविकल्प, (35) तक्षकर्म, (36) तक्षण, (37) वास्तुविद्या, (38) रूप्यरत्न–परीक्षा, (39) धातुवाद, (40) मणिरागाकर–ज्ञान, (41) वृक्षायुर्वेद योग, (42) मेषकुक्कुटलावकयुद्ध विधि, (43) शुक–सारिका प्रलापन, (44) उत्सादन–संवाहन केशमर्दन–कौशल (45) अक्षरमुष्टिका कथन, (46) म्लेच्छित विकल्प, (47) देशभाषा ज्ञान, (48) पुष्पशकटिका, (49) निमित्त ज्ञान, (50) यन्त्रमातृका, (51) धारणमातृका, (52) संपाठय, (53) मानसीकाव्य–क्रिया (54) अभिधान कोष, (55) छन्दोज्ञान, (56) क्रियाकल्प, (57) छलितक योग, (58) वस्त्रागोपन (59) द्यूतविशेष (60) आकर्षक्रीडा (61) बालक्रीडनक (62) वैनयिकी विद्या, (63) वैजयिकी विद्या, (64) व्यायाम विद्या।

उपवेद

चार वेदों के चार उपवेद भी बहुत प्राचीनकाल से माने जाते हैं। 'चरण व्यूह' के अनुसार ऋग्वेद आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गान्धर्व वेद तथा अथर्ववेद का उपवेद अथर्ववेद (दण्डनीति, राजनीति, अर्थशास्त्र, स्थापत्य कला आदि) है।

आयुर्वेद

आयुर्वेद ऋग्वेद का उपवेद माना गया है। हमारे यहाँ प्राचीन काल के वैद्यों में धन्वन्तरि और अश्विनीकुमार प्रमुख माने गये हैं। धन्वन्तरि तो समुद्र से निकले हुए चौदह रत्नों में माने जाते हैं। अगस्त्य के पुरोहित खेल ऋषि की स्त्री विशला अपने पति के साथ युद्ध में गई थी, वहाँ उसकी जँघा टूट गई। अश्विनीकुमार ने विश्पला की जांच ठीक की। अश्विनीकुमार देवताओं के वैद्य थे। उनके सम्बन्ध में कई पौराणिक कथाएं हैं।

ऋग्वेद में वैद्य और औषधि के सम्बन्ध में बड़ी सुन्दर उपमा दी गई है–

यत्रोषधौः समग्मत राजानः समिताविव

विप्रः स उच्चते भिषग् रक्षोहामीवचातनः।

अर्थात् वही ब्राह्मण वैद्य है जिसके चारों और औषधियाँ उसी प्रकार रहती हैं जैसे राजा के आस–पास उसकी समिति। वैद्यक शास्त्र के सबसे पुराने और प्रामाणिक ग्रन्थ जो आजकल वर्तमान हैं वे चरक और सुश्रुत संहिताएं हैं। चरक कनिष्क के समकालीन माने जाते हैं। चरक सुश्रुत की अपेक्षा प्राचीनतर है। डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय की सम्मति में चरक–संहिता किसी वृहत् आयुर्वेदिक सम्मेलन की कार्यवाही का अकंन–सी जँचती है। सुश्रुत अधिक सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक है।

आजकल चरक का जो ग्रन्थ वर्तमान है वह दृढ़बलकृत चरक संहिता का दूसरा संस्करण है। पूर्व नन्द–युग में तक्षशिला आयुर्वेद शास्त्र का एक प्रसिद्ध केन्द्र था। पाली साहित्य में जीवक का वृतान्त मिलता है। वह तक्षशिला आयुर्वेद सीखने गया था और सात वर्ष तक वहाँ शिक्षा पाई थी। उसको जीवककुमार बच्चा कहते हैं, क्योंकि वह बच्चों की चिकित्सा में कुशल था। सुश्रुत धान्वन्तरि के शिष्य थे। इनके अतिरिक्त भेड़, हारीत, पाराशर, काश्यप आदि अन्य आचार्य भी प्रसिद्ध हैं। बौद्ध आचार्य नागार्जुन आयुर्वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। सुश्रुत का वर्तमान संस्करण उन्हीं के द्वारा सम्पादित हुआ था। उनका उल्लेख अरबी विद्वान अलबरूनी ने भी किया है।

आयुर्वेद साहित्य में चरक व सुश्रुत के पश्चात् तीसरा स्थान वागभट्ट के अष्टांग हृदय का है। यह छठी शताब्दी ईसवी के अन्तिम भाग की रचना है। प्राचीन आयुर्वेदाचार्यो ने चिकित्साशास्त्र के सभी अंगों की विधिवत खोज की थी। रोग के निदान को वे नाड़ी के द्वारा करते थे तथा रोगी से प्रश्नोत्तर पीछे करते थे। रोग के कारणों के अनुकूल ही वे चिकित्सा करते थे। उनको शरीर शास्त्र और शरीर के विभिन्न आन्तरिक अवयवों का पूरा–पूरा ज्ञान था। इस ज्ञान के लिये वे शवों की चीरफाड़ भी करते थे। सुश्रुत के शरीर–स्थान अध्याय में बतलाया गया है कि शल्य के यथार्थ ज्ञान के लिये शव को विधिवत् तैयार करके उसकी चीरफाड़ द्वारा प्रत्येक अंग से परिचय प्राप्त करना आवश्यक है।

यूरोप में सर विलियम हार्वे द्वारा रक्त–संचरण की खोज के बहुत काल पहले यह ज्ञान बड़े स्पष्ट शब्दों में चरक संहिता में दिया गया है। उसमें बताया गया है कि हृदय से नाड़ियों द्वारा रक्त प्रवाहित होकर शरीर के सब अंगों को पहुँचता है। रुधिर द्वारा सब मनुष्यों और जानवरों का पोषण होता है। वे लोग यह भी जानते थे कि गर्भ की प्रारम्भिक अवस्था में माता के हृदय से सीधा उसके (गर्भ) पोषण के लिये जाता है। वह यह भी जानते थे कि गर्भ के तीसरे चौथे महीने बच्चे का हृदय स्वतन्त्र रूप से काम करने लगता है, उस अवस्था को वे दोहद (द्वि–हृदय) कहते थे। शिराओं और धमनियों का उन्हें पूरा–पूरा ज्ञान था। हड्डियों की भी उन्होंने गिनती की थी और बहुत से अंगों के सम्बन्ध में वह आजकल की गणना से मिलती है। याज्ञवल्क्य स्मृति में भी हड्डियों की संख्या दी है। ज्ञान–तंतुओं का केन्द्र पहले हमारे यहाँ हृदय ही माना जाता था, किन्तु इस सम्बन्ध में यूनान के लोगों ने भी कोई प्रगति नहीं की थी। अरस्तू ने भी हृदय को ही ज्ञान का केन्द्र माना है। हठयोगियों ने मेरुदण्ड और मस्तिष्क के सम्बन्ध में बहुत–कुछ जानकारी प्राप्त की थी।

शल्य विज्ञान सम्बन्धी जो यन्त्र बनाये गए थे वे आजकल के यन्त्रों से बहुत कुछ मिलते–जुलते है। सुश्रुत ने चिकित्सा में प्रयोग आने वाले यन्त्रों की संख्या 101 मानी है और वाग्भट ने 115 मानकर लिख दिया है कि वैद्य आवश्यकता के अनुसार और यन्त्र बनवा सकता है। शास्त्रों के लिये लकड़ी के शस्त्र कोशों (Cases) का भी उल्लेख आता है। वे लोग यद्यपि क्लोरोफॉर्म जैसी चीज नहीं जानते थे, तथापि सुश्रुत में शल्य क्रिया के पूर्व नशे द्वारा रोगी को बेहोश करने की बात आती है। बड़े–बड़े

शल्य–प्रयोग भी किये जाते थे, जैसे पेट को चीर कर आँतों को ठीक करना, पथरी निकालना, शल्य क्रिया से बच्चे पेट से निकालना (इसके लिये विशेष यन्त्र होता था जिसे प्रजनन–शंकु कहते थे) आदि।

श्रीयुत वेवर लिखते हैं, 'आज भी पाश्चात्य विद्वान भारतीय चिकित्सा से बहुत कुछ सीख सकते हैं, जैसे कि मैंने कटी हुई नाक को जोड़ने की विधि भारतीयों से सीखी।'

रसायन शास्त्र

आयुर्वेद के अन्तर्गत ही भारतीय रसायन शास्त्र का विकास हुआ। सुश्रुत में पारद, संखिया, अंजनक (Antimony) के समासों (Compounds) का प्रयोग रोगों के उपचार में बताया है। योरोप में इनका प्रचार बहुत पीछे से हुआ है।

मकरध्वज पारे का गंधिद है Sulphide उसमें पारे के सब दोष निकल जाते हैं। वह मनुष्य शरीर संस्थान के लिए ग्राह्य बन जाता है। योरोपीय पद्धति द्वारा बने हुए मकरध्वज में वह गुण नहीं है। स्वर्ण और लोहे की भस्में तैयार हुई। महर्षि पतंजलि ने भी लौह–भस्म तैयार करने की सिद्धि प्राप्त की थी। उनका लिखा हुआ लौह–शास्त्र बतलाया जाता है। उन्होंने पाणिनि व्याकरण का भाष्य लिखकर भाषा की शुद्धि की और योगसूत्रा लिखकर मन की शुद्धि की "योगेन चित्तस्य पदेन कचा मलं शरीरस्य व वैद्यकेन योऽपाकरोत्।"

हमारे आयुर्वेदाचार्य पारे से सिन्दूर बनाना ही नहीं जानते थे वरन् वे विद्याघर यन्त्र द्वारा सिन्दूर से फिर पारा बनाने की भी क्रिया जानते थे। वे क्षारों का भी प्रयोग जानते थे। मृदु क्षारों को वे तीव्र बना सकते थे। वे धातु विद्या में निपुण थे। कुतुबमीनार के पास जो लाट पृथ्वीराज की कीली के नाम से प्रसिद्ध है, धातु–विधा–विज्ञान का अच्छा प्रमाण है। इस सम्बन्ध में वास्तुकला पंडित फर्गुसन की निम्नलिखित पंक्तियाँ[4] विशेष महत्व की हैं–

"चार सौ ईसा पश्चात् को एक मध्यतिथि मानने पर और वह तिथि सत्य से बहुत दूर भी नहीं है, यह कीली सा स्तम्भ हिन्दुओं की तत्कालीन अप्रत्याशित विकासावस्था के सम्बन्ध में हमारा नेत्रोन्मीलन करती है। यह जानकर आश्चर्य होता है कि उस युग में हिन्दू लोग इतनी लम्बी (यह खम्बा 24 फुट और बोझ में 6 टन का है) कीली बनाने में समर्थ हुए, जो योरोप में बहुत पीछे काल तक नहीं बन सकी और अब भी कभी–कभी ही बन सकती है।"

आयुर्वेद में केवल मनुष्यों की ही चिकित्सा नहीं होती थी, वरन् अश्व और गजों के भी अलग–अलग आयुर्वेद प्रसिद्ध है। शालिहोत्र ऋषि ने अश्वों का आयुर्वेद शास्त्र लिखा है। इसीलिये आज भी घोड़ों के चिकित्सक शालिहोत्री कहलाते हैं। पालकाप्य ने गजायुर्वेद शास्त्र लिखा। प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने कुष्ट तथा मोतीझला, चेचक आदि रोगों के सम्बन्ध में कीटाणुओं का भी उल्लेख किया है। वे रुधिर में भी कीटाणुओं का अस्तित्व मानते थे। हमारे यहाँ आयुर्वेदाचार्य दन्त चिकित्सा में भी निपुण थे। वे पायोरिया जिसको वे उपकुश कहते थे और दाँत के कीड़े के रोग से, जिनको वे कृमि दन्तक कहते थे, परिचित थे। वे दाँतों के टारटर को जिसको दन्त शर्करा कहते थे, खुरचने और साफ करने की विधि भी जानते थे। इसके लिए उनके पास यंत्र भी थे। वे दाँत उखाड़ना भी जानते थे। प्राचीन लोग कृत्रिम दाँत भी लगाते थे। एलफिन्सटन के इतिहास (पृष्ठ 365) में लिखा है कि रणभूमि में जयचन्द का शव उसके कृत्रिम दाँतों से पहचाना गया था।

भौतिक विज्ञान और रसायनशास्त्र में भी प्राचीन लोगों ने इतनी उन्नति तो नहीं की थी जितनी कि ज्योतिष में, किन्तु उन्होंने अणु और परमाणु की कल्पना कर ली थी। वैशेषिक दर्शन परमाणुओं को मानता है। प्राचीन ऋषियों ने जो पंच तत्व माने थे वे आजकल के से तत्व न थे, वरन् वे वस्तुओं की मूल भौतिक दशाएँ थीं। हमारे दार्शनिकों ने पंचतत्वों को पंच ज्ञानेन्द्रियों से सम्बन्धित किया था।

वनस्पति शास्त्र

हमारे यहाँ वनस्पतिशास्त्र आयुर्वेद का एक अंग था। आयुर्वेद के अंग रूप में तथा स्वतंत्र रूप में भी वनस्पति शास्त्र का अध्ययन हुआ, क्योंकि वनस्पतिशास्त्र पर आयुर्वेद के अतिरिक्त कृषि–विद्या, उद्यान–विद्या आदि निर्भर थीं। कामसूत्रों में राजाओं और गृहस्थों के प्रासादों और घरों में उद्यानों का होना विदग्धता का सूचक माना गया है। प्राचीन लोगों ने वनस्पतियों के जीवन तत्वों का पूर्णतया अध्ययन किया था। वृक्ष के लिये पादप शब्द का व्यवहार इस बात का द्योतक है कि वे जानते थे कि वृक्ष अपने जीवन–रस को जड़ों से ग्रहण करता है। वे उसके ऊपर उठने की बात भी जानते थे। शांति पर्व में भी बतलाया गया है कि जिस प्रकार पानी कमल–नाल द्वारा मुँह से ऊपर को चूसा जाता है उसी प्रकार वायु के सहारे रस ऊपर उठता है और पत्तियों में पहुँचता है और वहाँ अग्नि (सौर शक्ति) और वायु द्वारा उसके भोजन में परिवर्तित होकर पचता है। वे लोग वृक्षों में चेतना मानते थे। वनस्पतियों के उत्पादन की जितनी विधियां है उनसे वे पूर्णतया अवगत थे। उत्पत्ति के आधार पर वनस्पतियों का एक प्रकार का विभाजन किया गया है–बीजरुह (बीज से उत्पन्न होने वाली), मूलज (जिनकी जड़े लगाई जाती हैं), स्कन्धज (जिनकी टहनी लगाई जाती है), स्कन्धेरोपनीय (जिसमें कलम बांधी जाती है), पूर्णयोनि (जिनकी पत्ती लगाई जाती है)। वे लोग वृक्षों में किसी न किसी प्रकार का योनि–भेद मानते थे। वृक्षों का नामकरण भी उनका बड़ा वैज्ञानिक था। कुछ वनस्पतियों के नाम उनके औषधीय गुणों पर रखे जाते थे जैसे दद्रुघन, अर्शोघ्न। कुछ के विशेष गुणों के आधार पर थे जैसे रीठा के लिये फेनिल; कुछ का बनावट के आधार पर नाम होता था जैसे त्रिपत्रा, कीशपर्णी, पंचागुल, हेम पुष्प, सतमूली, सतपर्णिका। वनस्पतियों के नामकरण के सम्बन्ध में सर विलियम जीन्स का लिखना है।[5]

स्वयम् लेन्युस ने इस प्रकार का नामकरण अपनाया होता, यदि वह इस देश की विद्वत्तापूर्ण प्राचीन भाषा से परिचित होता। इस प्रकार प्रायः सभी विज्ञानों में हमारे प्राचीन मनीषियों ने उन्नति की थी। वे पशु–चिकित्सा ही नहीं, पशुओं का–पालतू जानवरों का ही नहीं, हिसंक का भी वर्गीकरण करते थे। वे यंत्र विद्या में भी पर्याप्त उन्नति कर चुके थे। नाना प्रकार के यंत्रों का उल्लेख आता है। तोप आदि घातक यंत्र भी वे बनाते थे और वे किसी न किसी प्रकार का वायुयान भी बनाते थे, लेकिन कई कारणों से उनका उन्नति–क्रम रुक गया था। इससे हमारे पूर्वज पश्चिमी देशों की अपेक्षा पिछड़ गये।

धनुर्वेद

यह यजुर्वेद का उपवेद है। इसके प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होते किन्तु धनुर्वेद विषयक कुछ अन्य स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध है, यथा, धनुविधि, द्रोणविद्या, कोदण्डमण्डन, धनुर्वेद संहिता। इनके अतिरिक्त रामायण, महाभारत, शार्ङ्गधर पद्धति, अग्निपुराण आदि ग्रन्थों में भगवान शंकर द्वारा प्रवर्तित धनुर्वेद का परिचयन मिलता है। शंकर भगवान के शिष्य परशुराम और उनके शिष्य द्रोणाचार्य हुए। द्रोणाचार्य के प्रधान शिष्य अर्जुन थे, जिन्होंने सात्यकि यादव को इस विद्या की शिक्षा दी। भगवान् शंकर प्रोक्त धनुर्वेद के चार पाद ये है–दीक्षा प्रकार विधि, संग्रह विधि, प्रयोग विधि, अस्त्र सिद्धि विधि।

धनुर्वेद में बाण और आयुध विद्या प्रधान है। आयुध दो प्रकार के हैं– शस्त्र और अस्त्र। शस्त्र के चार भेद यह हैं– मुक्त, अमुक्त, मुक्तामुक्त और यन्त्रमुक्त। बाण के तीन प्रकार– नाराच, नालीक, वृहत्रालीक है। आठ प्रकार के पैतरे ये हैं– आलीढ़, प्रत्यालीढ़, वैशाख, समपाद, विषमपाद, दर्दुरक्रम, गरुडक्रम तथा पद्मासन। इस उपवेद में उपरोक्त सब विषयों तथा युद्ध–लड़ने के प्रकारों का वर्णन है।

स्थापत्यकला या वास्तु–शिल्प

भारतीय संस्कृति में वास्तु–शिल्प का प्रारम्भ से ही बहुत महत्व रहा है। ऋग्वेद में भवन–निर्माण के अत्यन्त उन्नत आदर्शो का वर्णन है। स्थापत्य–कला के स्थापत्य–वेद की भी चर्चा साहित्य में मिलती है। ऋग्वेद का ये वर्णन उस युग की भवन–कला का परिचायक है "प्रजा की द्रोही न होकर राजा तथा

मन्त्री दृढ़, उत्तम तथा हजार स्तम्भों वाले भवन में रहे।" एक स्थान पर पत्थर के 100 फलकों से निर्मित भवन का उल्लेख है।' लोहे तथा प्रस्तर–निर्मित नगरों का वर्णन भी मिलता है।"

सिन्धु–घाटी की सभ्यता के दो प्रमुख नगर सुनियोजित निर्माण के साक्षी हैं। सिन्धु वासियों का वास्तु–कला ज्ञान बहुत बड़ा–चढ़ा था। यही कारण है कि सिन्धु–घाटी के नगर एवं भवन उच्चकोटि की वास्तु–शिल्प के परिचायक हैं। इसके उपरान्त हमे मत्स्यपुराण, स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, लिंगपुराण, नारदपुराण, भविष्य पुराण आदि में स्थापत्य कला की चर्चा मिलती है। कौटिलीय अर्थशास्त्र और शुक्रनीतिसार आदि ग्रन्थों में भी वास्तु–कला सम्बन्धी सामग्री मिलती है। स्थापत्य–कला या वास्तु शास्त्र पर स्वतन्त्र रूप से भी शताधिक ग्रन्थ लिखे गये किन्तु वे उपलब्ध नहीं हैं। रामायण एवं महाभारत में भी वास्तु–शास्त्र का ज्ञान उपलब्ध होता है। यवन राजदूत मेगस्थनीज के चन्द्रगुप्त मौर्य के समय के नगर, भवन–निर्माण राजप्रासाद आदि के वास्तु–शिल्प का विस्तार से वर्णन किया है। हर्षवर्धन काल में आये हुए चीनी यात्रियों (हुएनसांग तथा ईत्सिग) ने भी उस काल के भारतीय वास्तु–शिल्प पर अपने यात्रा विवरणों में प्रकाश डाला है।

इस युग का 'मानसार' नामक ग्रन्थ वास्तु–शास्त्र का महत्वपूर्ण उपलब्ध ग्रन्थ है। इसमें नगर एवं ग्राम निर्माण, भवन–निर्माण, विद्यालय आदि के निर्माण का विचार किया गया है। नीतिसार में राजप्रासाद निर्माण के सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया गया था। जातक एवं अन्य बौद्ध–दर्शन के ग्रन्थों में भी शिल्प की चर्चा है। किन्तु वास्तु–शिल्प का प्राचीनतम उपलब्ध शास्त्रीय ग्रन्थ मानसार ही है। डॉ0 रामजी उपाध्याय के अनुसार 'मानसार की रचना ईसा की पाँचवीं से लेकर सातवीं शती के बीच हुई थी। मानसार के अनुसार वास्तु–शिल्प का आचार्य स्थापति होता था। वह सभी विज्ञानों का पण्डित, सावधान, आचारदान, उदार, सरल और ईर्ष्या–द्वेष की भावना से रहित होता था। उसका प्रथम सहायक सूत्रग्राही गणितज्ञ होता था और माप लेता था। वर्धकि लड़की जोड़ने और रेखा चित्राण में कुशल होता था। वह स्वभावतः शान्त होता था। इस प्रकार के वास्तुशिल्प के आचार्यो का उल्लेख महाभारत में भी मिलता है। युधिष्ठिर का सभा भवन मय नाम के स्थपति की अध्यक्षा में बना था।'9 इस प्रकार मानसार शिल्पशास्त्र का वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत करता है। उसमें नगर एवं ग्राम निर्माण के विभिन्न प्रकार एवं उनका मापचित्र हैं।

समरांगण सूत्रधार

यह धारानरेश राजा भोज (1040 ई) द्वारा लिखा हुआ वास्तु–विद्या सम्बन्धी महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें नगर, दुर्ग आदि के लिए उचित भूमि का वर्णन, नगर बसाने, उसकी सुरक्षा हेतु खाई का निर्माण करने, राजाओं के विभिन्न प्रकार के प्रासाद, उद्यान एवं साज–सज्जा की मूतियाँ आदि बनाने का विस्तृत एवं प्रामाणिक वर्णन है।

भाषा–विज्ञान

पाश्चात्य देशों में भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन की जो प्रवृत्ति 17 वीं 18वीं शताब्दी में दिखाई पड़ती है, भारत में उसका पुष्ट रूप पाणिनि की अष्टाध्यायी में देखने को मिलता है। पाणिनि (ई पू 9 वीं या 8 वीं शती) विश्व के अद्यतन श्रेष्ठतम वैय्याकरण माने जाते हैं। उनके अष्टाध्यायी की अनुपम वैज्ञानिकता अद्वितीय है। प्राचीन इतिहास में यास्क का निरुक्त, ऐन्द्र सम्प्रदाय के वैय्याकरणों का प्रातिशाख्य आदि भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के प्रयत्न हैं, जिन्हें वैय्याकरणों एवं भाष्यकारों ने अनवरत पुष्ट बनाया। पातंजलि महाभाष्य (ई पू द्वितीय श) में भाषा के दार्शनिक विवेचन का प्रयास है। इसमें ध्वनि विज्ञान का अध्ययन है। पाणिनि ने भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन में ध्वनि विज्ञान, अर्थ विज्ञान एवं तुलनात्म्क व्याकरण के अध्ययन की जो सुदृढ़ नीवं रखी और संस्कृत भाषा को मानक रूप दिया, उसे भाषा–विज्ञान के इतिहास में अपना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस क्षेत्र में भी भारत विदेशों से अग्रणी रहा है।

सन्दर्भ

1. ओझा जी की मध्यकालीन 'भारतीय संस्कृति' नाम की पुस्तक के पृष्ठ 84 पर दिया हुआ एक उद्धरण।
2. During the Eighth and Ninth centuries the Indians became the teachers of arithmatic and Algebra of the Arabs and through them, of the nations of the west. Thus, though we call later Science by an Arabic name it is a gift we owe to India.'
3. इण्डियन लिट्रेचन, पृ 270
4. "Taking 400 A.D. as the mean date - and it certainly is not far from the truth, it opens our eyes to an unsuspected state of affairs to find the Hindus at that age capable of forging a bar of iron longer than any that have been forged even in Europe up to a very late date, and not frequently even now?"
5. "Lenneus himself would have adopted them had he known the learned and ancient language of this Country".
6. ऋग्वेद, 2.41.5
7. ऋग्वेद, 4.30.20
8. ऋग्वेद, 7.8512, 2.208, 1.58.8, 7.3.7
9. भारत की प्राचीन संस्कृति, पृ 208

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के स्थायी विकास में बाधक प्रतिभा पलायन

रीति थापर कपूर
एमिटी विश्वविद्यालय, नोएडा, उत्तर प्रदेश

सारांश

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष एक बौद्धिक सम्पदा सम्पन्न देश रहा है। यहाँ पर चरक, सुश्रुत, आर्यभट एवम् भास्कराचार्य जैसे वैज्ञानिकों का जन्म हुआ जिन्होंने अपनी मेधा से भारत ही नहीं वरन् पूरी दुनिया के लोगों का मार्गदर्शन किया। यहीं नहीं आधुनिक युग के वैज्ञानिकों जैसे–डॉ मेघनाथ साहा, डॉ शांति स्वरूप भटनागर, सत्येंद्र नाथ बसु, डॉ हरगोविन्द खुराना और डॉ ए पी जे अब्दुल कलाम ने भी अपने नवीन शोधों के द्वारा विज्ञान के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया और विज्ञान जगत में भारत का मस्तक ऊँचा किया। आज हमारे राष्ट्रीय विकास के समक्ष सबसे बड़ी बाधा प्रतिभा पलायन है। एक अध्ययन के अनुसार आज हमारे देश के अधिकांश युवा, वैज्ञानिक एवम् शिक्षाविद् विदेश जाकर शिक्षा लेकर वहाँ हमेशा के लिए बसना चाहते हैं। प्रतिभा पलायन के मुख्य कारण हमारे देश में रोजगार परक विषयों का अभाव बेरोजगारी, राजनीतिक अस्थिरता और नौकरियों में वेतन का कम होना है। हमारे देश में उच्च शिक्षा प्रदान करने वाले संस्थानों में मूलभूत सुविधाओं एवम् योग्य शिक्षकों का अभाव है वहीं शिक्षण प्रणाली में व्याप्त अनियमितताओं के कारण अनेक योग्य छात्रों को सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ समय पर नहीं मिल पा रहा है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिभा पलायन से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए एक योजनाबद्ध रणनीति बनाने की आवश्यकता है, जिससे हमारे देश के प्रतिभावान युवा, वैज्ञानिक और शिक्षाविद् अपनी प्रतिभा के बल पर भारतवर्ष को पुनः एक सुदृढ़ वैज्ञानिक राष्ट्र बना सकें।

परिचय

विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास, राष्ट्र के विकास का प्रथम सोपान है। विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी का विकास किसी भी देश की सामाजिक और आर्थिक प्रणाली को सुचारू ढंग से संचालित करने के लिए भी बहुत आवश्यक है। समय–समय पर विद्वानों ने विज्ञान एवम् तकनीकी शिक्षा के विविध स्वरूपों और आयामों का क्षेत्रीय एवम् राष्ट्रीय विकास के संदर्भ में विश्लेषण किया है। हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू, विज्ञान एवम् तकनीकी शिक्षा के पक्षधर थे। विकास की इसी अवधारणा को ध्यान में रखते हुए, हमारे देश में पिछले कुछ वर्षों में न केवल साक्षरता स्तर में सुधार हुआ है बल्कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी वृद्धि दर्ज की गई है। हमारा देश प्राचीन काल से ही विज्ञान के क्षेत्र में अपना उच्च स्थान रखता है। यहाँ पर अनेक वैज्ञानिकों जैसे चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट एवम् भास्कराचार्य का जन्म हुआ, जिन्होंने अपनी मेधा से भारत ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया के लोगों का मार्गदर्शन किया। चरक एवम् सुश्रुत ने जहाँ अपनी पुस्तकों के माध्यम से स्वास्थ्य संबंधी अभूतपूर्व ज्ञान पहली बार पूरी दुनिया के सामने रखा, वहीं आर्यभट्ट और भास्कराचार्य ने गणित और खगोल विज्ञान के अनेक महत्वपूर्ण नियम प्रतिपादित किए, जो अरब देशों से होते हुए सारी दुनिया में पहुँचे और विज्ञान की आधारशिला बने। भारत की बौद्धिक सम्पदा जब अनूदित होती हुई, यूरोप पहुँची, तो उसने वहाँ

के विद्वानों की सोच को प्रेरित करने का काम किया, और यहीं से प्रेरणा लेकर कैप्लर, न्यूटन, गौलीलियो और आइंसटाइन आदि वैज्ञानिकों ने विज्ञान की अनेक धारणाओं को पुनर्परिभाषित किया। एक ऐसा समय था, जब हमारे देश में शिक्षा के लिए अन्य दूसरे देशों से विद्यार्थी आते रहे हैं। नवीं शताब्दी में पेशावर के बौद्ध महाविकार में कोरिया से अध्ययन के लिए आए विद्यार्थियों का उल्लेख मिलता है।

आधुनिक भारत की पहली पीढ़ी के वैज्ञानिकों में जगदीश चन्द्र बसु, श्रीनिवास रामानुजन और चंद्रशेखर वेंकट रमन का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिन्होंने देश में अंग्रेजों के शासन काल में जन्म लिया और उन्हीं के राज में अनेक कठिनाईयों का सामना करते हुए अपने शोधकार्यों से देश का सम्मान बढ़ाया। देश की दूसरी पीढ़ी के वैज्ञानिकों में वे लोग आते हैं, जिन्होंने अपनी शिक्षा एवम् शोध कार्य तो अंग्रेजो के राज्य में किया लेकिन उनके कार्यो का लाभ स्वतन्त्र भारत को मिला, इनमें से डॉ. शांति स्वरूप भटनागर, डॉ मेघनाद साहा और डॉ होमी जहाँगीर भाभा का नाम प्रमुख है। तीसरी पीढ़ी के वैज्ञानिकों में डॉ ए पी जे अब्दुल कलाम और जयंत विष्णु नार्लीकर का नाम प्रमुख है, जिन्होंने भारत को विज्ञान की नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने में मदद की। आज हमारा देश जहाँ पर खड़ा है, वहाँ तक इसे लाने में हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू का विशेष योगदान रहा है। उन्होंने पचास के दशक में यह समझ लिया था, कि यदि देश को प्रगति के पथ पर ले जाना है, तो उसके लिए हमें देश को विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाना होगा। उनके अनुसार विज्ञान से ही भुखमरी, निर्धनता, बीमारियों और अस्वच्छता जैसी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। आज हमारे राष्ट्र के स्थायी विकास के समक्ष सबसे बड़ी बाधा प्रतिभा पलायन है। प्रतिभा पलायन केवल हमारे देश की ही समस्या नहीं है, बल्कि ये पूरे विश्व के सामने एक बड़ी चुनौती है। यह समस्या केवल आज उत्पन्न हुई समस्या नही है बल्कि पुराने समय से जब बाहरी देश आक्रमण करके हमारे देश की धन सम्पदा को लूट कर अपने देश ले जाने में सफल रहे हैं, वहीं वे अपने साथ केवल धन सम्पदा ही नहीं बल्कि हमारे देश से योग्य व्यक्तियों को भी अपने देश ले जाते रहे हैं। पुराने समय से आज के समय में सिर्फ फर्क इतना ही है, कि आज व्यक्ति स्वयं बेहतर रोजगार, अच्छे अवसर एवम् उच्च जीवन शैली को पाने के लिए अपने देश को छोड़कर बाहरी देशों को जाते हैं।

हमारे देश में प्रतिभा पलायन की समस्या की शुरुआत द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् हुई, जब अमेरिका, रूस, ब्रिटेन और जर्मनी जैसे विकसित देशों ने नित् नए अविष्कारों के द्वारा आम जनता को अपनी ओर आकर्षित करना शुरू किया। विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी के इसी विकास ने विकासशील देशों के वैज्ञानिकों एवम् तकनीकी क्षेत्र में योग्यता रखने वाले व्याक्तियों को रोजगार के क्षेत्र में भी नई सम्भावनाएं प्रदान की जिससे वैज्ञानिकों एवम् बुद्धिजीवियों का पलायन आरम्भ हुआ।

प्रतिभा पलायनः कुछ आँकड़े

एक अध्ययन के अनुसार हमारे देश से विज्ञान एवम् तकनीकी क्षेत्र में योग्यता रखने वाले लगभग तीन लाख से ज्यादा वैज्ञानिक सन् 1985 तक अन्य देशों को पलायन कर चुके थे। सन् 1966–1986 के बीच इक्कीस हजार से ज्यादा इंजीनियर अमेरिका जाकर बस गए। हमारे देश से अनेक प्रतिभावान युवा लगभग 30 प्रतिशत अमेरिका, 7 प्रतिशत ब्रिटेन, 10 प्रतिशत कनाडा और 51 प्रतिशत लोग पश्चिम एशिया व अन्य देशों को गए (जैन, 1998)। वहीं एक अन्य शोध के अनुसार 32 प्रतिशत इंजीनियर, 28 प्रतिशत डॉक्टर, 6 प्रतिशत वैज्ञानिक एवम् 37 प्रतिशत विज्ञान एवम् तकनीकी क्षेत्र में योग्यता रखने वाले व्यक्तियों ने हमारे देश से विदेशों की ओर पलायन किया।

डॉ कालरा (1992) के अनुसार आई आई टी और एम्स जैसे उच्चकोटि के संस्थानों से पलायन करने वाले इंजीनियर और डॉक्टरों की संख्या भी बहुत अधिक है। डॉ कालरा के अनुसार सन्

1956–1980 के बीच एम्स में अध्ययन करने वाले लगभग 46 प्रतिशत मेडिकल छात्र आज विदेश जाकर वहाँ बस चुके हैं। मेडिकल काउन्सिल ऑफ इंडिया के अनुसार, एम्स जैसे प्रतिष्ठित संस्थान में सरकार एक विद्यार्थी को एम बी बी एस कराने के लिए साढ़े पाँच साल में लगभग 1.5 करोड़ रूपए खर्च करती है, लेकिन यहाँ से एम बी बी एस करने के पश्चात् बेहतर सम्भावनाओं की तलाश में या फिर आगे की पढ़ाई के लिए मेडिकल छात्र विदेश चले जाते हैं। हाल में किए गए एक अध्ययन के अनुसार, एम्स में पढ़ाई करने वाले लगभग 53 प्रतिशत मेडिकल के विद्यार्थी देश छोड़कर जा चुके हैं। भारत जैसे अधिक जनसंख्या वाले देश में जहाँ देश का एक बड़ा हिस्सा अनेक प्रकार के रोगों और अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं से परेशान है, वहाँ आज लगभग दो हजार लोगों पर एक डॉक्टर उपलब्ध है। प्लानिंग कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार, हमारे देश में लगभग 6 लाख डॉक्टर, 2 लाख दंत चिकित्सक और 10 लाख नर्सों की कमी है। वहीं आज लगभग साठ हजार से अधिक भारतीय मूल के चिकित्सक अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और ब्रिटेन आदि देशों में जाकर बस चुके हैं। इस तरह जहाँ पहले ही हमारे देश में कुशल चिकित्सकों का अभाव है, वहीं प्रतिभा पलायन से यह समस्या और अधिक बढ़ती जा रही है।

प्रतिभा पलायन के कारण

प्रतिभा पलायन की समस्या दिन प्रतिदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है। प्रतिभा पलायन से एक ओर जहाँ देश का उच्चशिक्षा के क्षेत्र में निवेश की हानि हो रही है वहीं दूसरी ओर हमारे देश के प्रतिभावान छात्र एवम् छात्राएं अपने देश से शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् किसी दूसरे देश की सम्पत्ति बनते जा रहे हैं। यह स्थिति हमारे देश की एक अपूरणीय क्षति बनती जा रही है। वास्तव में किसी भी व्यक्ति के लिए अपने मूल स्थान को छोड़कर किसी अन्य देश जाकर वहाँ की भाषा और संस्कृति को देखकर वहाँ के वातावरण के अनुसार स्वयं को परिवर्तित करना एक बहुत कठिन कार्य है, लेकिन आज हमारे देश की युवा पीढ़ी बेहतर विकल्प की तलाश में बाहर जा रही है। डॉ मार्टिन वोलबर्ग ने प्रतिभा पलायन से सम्बिन्धित एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उन्होंने प्रतिभा पलायन के कारणों पर प्रकाश डाला है। डॉ मार्टिन के अनुसार प्रतिभा पलायन के दो मुख्य कारक हैं, पहला कारक हमारे देश में बेरोजगारी की समस्या, राजनीतिक अस्थिरता और नौकरियों में वेतन का कम होना है, वहीं दूसरा कारक बाहरी देशों में उच्च जीवन शैली एवम् बेहतर विकल्पों का मौजूद होना है। प्रतिभा पलायन के अन्य कई कारण भी हैं, जैसे हमारे देश के अधिकांश युवा अंग्रेजी भाषा को समझ सकते हैं और इसे बोल और लिख सकते हैं, जिसके कारण वे अन्य देशों में जाकर आसानी से रह सकते हैं। हमारे देश में आज भी उच्चस्तरीय शिक्षण संस्थाओं, विश्वविद्यालयों और शोध संस्थाओं का अभाव है। बॉयोटेक्नोलॉजी एवम् नैनोटेक्नोलॉजी के क्षेत्र में शोध के लिए भी हमारे देश में प्रयोगशालाओं और अन्य मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। आज हमारे देश में पढ़ाए जाने वाले विषयों के विकल्प मौजूद नहीं हैं वहीं दूसरी ओर अधिकतर विषय रोजगार परक विषय भी नही हैं। ऐसा भी देखा जाता है कि विदेशी विश्वविद्यालयों से डिग्री लेकर आने वाले छात्रों को हमारे देश में आसानी से उच्च पदों पर नौकरी मिल जाती है, जिससे आज अधिक से अधिक युवा विदेश जाकर पढ़ाई करने की इच्छा रखते हैं। वहीं हमारी वर्तमान शिक्षण प्रणाली में मौजूद अनियमितताओं के कारण आज अनेक योग्य छात्रों को शिक्षा का सीधा लाभ नहीं मिल पर रहा है। डॉ अमर्त्य सेन (1973) ने भी विज्ञान एवम् तकनीकी क्षेत्र में प्रतिभा पलायन के कारणों एवम् प्रभावों का उल्लेख किया है।

प्रतिभा पलायन को रोकने के लिए किए जा रहे प्रयास

पूर्व राष्ट्रपति डॉ ए पी जे अब्दुल कलाम के अनुसार, युवा हमारे देश के विकास का एक मुख्य स्रोत हैं और वे अपनी प्रतिभा के बल पर सम्पूर्ण विश्व को परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं। आज

यदि हम चाहते हैं, कि हमारे देश के युवा विदेशों के लिए पलायन न करें या फिर बाहर जा करके बस चुके प्रतिभावान वैज्ञानिक फिर से अपने देश वापस आएं, तो इसके लिए यह आवश्यक है कि सरकार उन्हें शोध के लिए उचित वातावरण और अन्य मूलभूत सुविधाएं प्रदान करें। इसके अलावा युवा वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित करने के लिए उन्हें उनके कार्य क्षेत्र में अनुकूल वातावरण एवम् उचित वेतन एवम् सुविधाएं प्रदान की जाएं। वास्तव में हर व्यक्ति को अपने घर से प्रेम होता है, और यदि हम युवा प्रतिभावान छात्रों और वैज्ञानिकों को बेहतर अवसर प्रदान करेगें तो वे पुनः अपने देश को अपनी योग्यता से लाभान्वित कर सकेगें।

शिक्षण प्रणाली में सुधार की आवश्यकता

वर्तमान में भारत का उच्च शिक्षा तंत्र, सम्पूर्ण विश्व का सबसे बड़ा शिक्षा तंत्र है, लेकिन सर्वेक्षणों के आधार पर आज ऐसा पाया जा रहा है, कि हमारे देश में लोगों की विज्ञान शिक्षा एवम् शोध के प्रति झुकाव में कमी आई है। नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इक्नोमिक रिसर्च द्वारा जारी की गई रिपोर्ट के अनुसार, हमारे देश में लगभग बारह करोड़ विज्ञान विषय के स्नातक और डिप्लोमा धारी हैं, जिनमें से सबसे अधिक 14 प्रतिशत आन्ध्र प्रदेश, 12 प्रतिशत तमिलनाडु, 11 प्रतिशत महाराष्ट्र, 10 प्रतिशत उत्तर प्रदेश और 8 प्रतिशत कर्नाटक राज्य से हैं। इसी रिपोर्ट के अनुसार आज हमारे देश में रोजगार प्राप्त लोगों में केवल 29 प्रतिशत लोग विज्ञान पृष्ठभूमि के हैं। इस रिपोर्ट में विज्ञान विषय में छात्रों की अरुचि के अनेक कारण भी बताए गए हैं, जैसे विज्ञान को आज भी बहुत क्लिष्ट विषय बताया जाता है और उसे रुचिकर ढ़ग से प्रस्तुत नहीं किया जाता है। कुछ छात्रों के अनुसार उन्हें, किसी ने भी विज्ञान विषय पढ़ने के लिए प्रेरित नहीं किया है। जबकि माता पिता और शिक्षक बच्चों को आरम्भ से ही विज्ञान विषय को सरलता से समझा कर विज्ञान विषय को पढ़ने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

वहीं दूसरी ओर बहुत से स्कूल एवम् कॉलेजों में विज्ञान विषय को पढ़ाए जाने के लिए मूलभूत सुविधाएं जैसे कम्प्यूटर आदि का अभाव है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आज देश में अनेक विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की स्थापना हुई है और सरकार ने उच्च शिक्षा की गुणवत्ता की प्राप्ति के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की, किन्तु उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए जो अधिकार इस आयोग को सौपें जाने थे, वे नहीं दिए गए। आज अनेक डीम्ड विश्वविद्यालय और प्राइवेट विश्वविद्यालय भी खुल गए हैं और ये संस्थाएं आज केवल लाभ कमाने के संस्थान बन गई हैं। समाज में योग्य शिक्षकों का अभाव है, अतः ये आवश्यक है, कि शिक्षकों का चुनाव भी कड़े मापदंडो के आधार पर किया जाए और उन्हें उनकी क्षमता के अनुरूप ही आकर्षक वेतन और सुविधाएं मिलें। विज्ञान के अलावा अन्य कला एवम् वाणिज्य विषयों से भी अनेक बेहतर विकल्प और अवसर प्राप्त किए जा सकते हैं, आवश्यकता इस बात की है कि इन अवसरों का ज्ञान आम जनता तक पहुँचाया जाए। अतः हमारी वर्तमान शिक्षण प्रणाली में अनेक नई नीतियों की आवश्यकता है, जिसका लाभ हमारे युवाओं को मिल सकें।

शोध के क्षेत्र को प्राथमिकता देने की आवश्यकता

आज हमारे देश में अनेक विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में शोध कार्य हो रहे हैं। पिछले कुछ वर्षो में शोध संस्थानों एवम् विश्वविद्यालयों से प्रकाशित होने वाले शोध पत्रों की संख्या भी बढ़ी है, किन्तु शोध का गुणात्मक स्तर अन्य विकसित देशों की तुलना में निम्न स्तर का है। आज देश में अनेक महाविद्यालय और विश्वविद्यालय हैं, और इनकी संख्या भी निरन्तर बढ़ती जा रही है, लेकिन पर्याप्त मात्रा में अनुदान न मिल पाने के कारण यहाँ शोध सम्बन्धी विज्ञान विषय नहीं पढ़ाए जा रहे बल्कि केवल कला और वाणिज्य सम्बन्धी विषय ही पढ़ाए जाते हैं। हाल में किए गए एक अध्ययन के अनुसार हमारे देश में शोध के क्षेत्र में सरकार कुल राष्ट्रीय आय का केवल 0-6 प्रतिशत ही खर्च करती है जो बहुत ही चिन्ता का विषय है। कुछ वर्षों पहले सरकार ने 6 से अधिक वैज्ञानिक संगठन भी बनाए हैं जैसे–

सी एस आई आर, आई सी एम आर, डी एस टी, डी बी टी., डी आर डी ओ और आई सी ए आर और इनमें से सी एस आई आर के अपने 40 से अधिक शोध संस्थान हैं। किन्तु इन सभी संस्थाओं में सरकार द्वारा प्रदान किए जा रहे अनुदान का वितरण एकसमान नहीं है। आज सरकार द्वारा अनुदान की अधिकतम राशि शोध संस्थानों को दी जाती है, और विश्वविद्यालयों की स्थिति पहले जैसी ही बनी हुई है। अनेक विश्वविद्यालयों में केवल एक या दो शिक्षकों के पास ही प्रोजेक्ट हैं, वहीं राज्य स्तरीय विश्वविद्यालयों में शोध छात्रों को किसी प्रकार की छात्रवृत्ति भी नहीं दी जाती है। अतः शोध करने के लिए छात्रों को स्वंय धन खर्च करना पड़ता है और बहुत कम छात्र ऐसा कर पाने में समर्थ होते हैं। शोध कार्य के लिए जरूरी साधन, छात्रवृत्ति और अन्य मूलभूत सुविधाओं के अभाव के कारण आज हमारे युवा विदेश जाकर शोध कार्य करने की इच्छा रखते हैं, जिससे एक ओर जहाँ उन्हें अच्छी फेलोशिप मिलती है, वहीं दूसरी ओर उनके द्वारा किए गए शोध कार्य को उचित सम्मान भी मिलता है।

वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित करके उन्हें अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराना

आज सबसे बड़ी आवश्यकता यह है, कि हमारे देश में जो वैज्ञानिक शोध कार्यों में लगे हुए हैं, उनकी समस्याओं को हल करके, उन्हें उचित सम्मान देकर प्रोत्साहित किया जाए। सरकार द्वारा उनके भविष्य विकास सम्बन्धी योजनाओं पर पुनः अवलोकन की आवश्यकता है। गोवा के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ऑशनोग्राफी में शोध पत्रों के अधिक इम्पैक्ट फैक्टर के शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित होने पर संस्थान द्वारा वैज्ञानिकों को विशेष रूप से सम्मान देकर पुरस्कृत किया जाता है जिससे वैज्ञानिकों में शोध कार्यो के लिए विशेष उत्साह बना रहता है। एक अन्य समस्या यह भी है कि अधिकांश शोध संस्थानों में निदेशक ही शोध एवम् शासन सम्बन्धी कार्यों को देखता है, किन्तु किसी एक व्यक्ति द्वारा संस्थान के शोध एवम् शासन सम्बन्धी कार्यो का प्रबन्धन करना आसान कार्य नही है अतः निदेशक का कार्यभार दो अलग–अलग व्यक्तियों को सौंपा जाना चाहिए, जिससे काम अधिक सुचारु ढंग से चल सके। पिछले कुछ वर्षों में अनेक केन्द्र एवम् राज्य स्तरीय विश्वविद्यालयों में अनेक पद खाली पड़े हुए हैं, वहीं एक शिक्षक दो से अधिक विषय पढ़ा रहे हैं इससे एक से अधिक विषय पढ़ाने वाला शिक्षक, समय के अभाव के कारण न तो अपने शोध छात्रों पर ध्यान दे पाता है और न ही उच्च स्तर का शोध कर पाता है। वहीं छात्र, रात दिन एक करके शोध कार्य पूरा करने में 5 से 6 वर्षो का समय लगाते हैं, लेकिन अधिक परिश्रम करने के बाद भी उन्हें उचित नौकरी नहीं मिल पाती है जिससे छात्रों को बेरोजगार रहना पड़ता है। हाल ही में प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवम् शिक्षाविद् प्रोफेसर यशपाल ने एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें देश के लगभग 1500 उत्कृष्ट कॉलेजों का दर्जा बढ़ाकर उन्हें विश्वविद्यालय का दर्जा दिए जाने का सुझाव दिया गया है और ऐसे कालेजों में शोध के लिए मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने की बात भी कही गई है। इसके अलावा इस रिपोर्ट में बाहर के विश्वविद्यालयों से शिक्षाविदों और अन्य भारतीय मूल के वैज्ञानिकों को भारत लाने पर भी बल दिया गया है, जिससे हमारे देश के शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाया जा सके।

प्रतिभा पलायन की समस्या को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि सरकार कई ऐसी नई योजनाएं बनाए, जिससे अधिक से अधिक युवा अपने देश में रह कर शोध कार्यों को करें। हमारी वर्तमान शिक्षण प्रणाली में भी सुधार की आवयश्यकता है, जिससे स्कूल स्तर के पाठ्यक्रम में अनेक रोजगार परक विषयों को सम्मिलित किया जा सके, जिससे युवाओं को बेरोजगारी का सामना न करना पड़े, यही नही वे स्वंय नये उद्योगों की स्थापना कर अन्य लोगों को भी रोजगार प्रदान कर सकें। शिक्षा, चिकित्सा एवम् शोध के क्षेत्र में प्रतिभा पलायन से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए तत्काल एक योजनाबद्ध रणनीति की आवश्यकता है। उचित नीतियों एवम् नवीन योजनाओं के समावेश से ही प्रतिभा पलायन की समस्या से निपटा जा सकता है और तभी भारतवर्ष पुनः एक वैज्ञानिक राष्ट्र बनकर विश्व में अग्रणी स्थान प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ सूची

1. प्रो. एस. के. मलिक (1998) ब्रेन ड्रेन। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली।
2. अशोक जैन (1998) प्रतिभा पलायन के कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य। ब्रेन ड्रेन। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली। पृष्ठ संख्या 1–6.
3. वीना कालरा, बी डी मोन्टे, के. रामाचन्द्रन और के आर सुन्दरम् (1992) एम्स से स्नातक छात्रों का पलायनः प्रतिभा पलायन का मूल्यांकन, नई दिल्ली। विज्ञान एवम् प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली।
4. अमर्त्य सेन (1973). प्रतिभा पलायन : कारण और इसका विज्ञान एवम् तकनीकी क्षेत्र की आर्थिक प्रगति पर प्रभाव, लंदन, मैकमिलन (संपादक–बी आर विलियम्स)

विश्व की प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के निहितार्थ– भारतीय परिप्रेक्ष्य

आशुतोष जोशी
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान

मनुष्य द्वारा उपयोग करने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी के निहितार्थ के रूप में 2500 ई.पू. या इससे भी बहुत पहले सिंधु घाटी सभ्यता के लोगों को आग और पहिया के बारे में पहली बार पता चला। उसे ऊर्जा के बारे में आग की खोज के प्रौद्योगिकीय नवाचारों का पहला अनुभव हुआ। तब से, आदमी की जिज्ञासा और सावधानीपूर्वक प्रयासों ने उसे नए आविष्कार और खोजों के लिए मदद की है। भारतीय परम्परा को विस्तार से देखें तो पता चलता है कि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हमारी अपनी एक सुदृढ़ परम्परा रही है जो कि वर्तमान विज्ञान की अनेक शाखाओं को एक साथ परिपुष्ट करती नजर आती है। आदि से लेकर अब तक आरम्भ करें कणाद से तो कपिल, भारद्वाज, नागार्जुन, चरक, सुश्रुत, वराहमिहिर, आर्यभट्ट और भास्कराचार्य जैसे वैज्ञानिकों को सम्पूर्ण विश्व विज्ञान के आधार के रूप में स्मरण करता है। शिक्षा के साथ ही साथ आयुर्वेद, रोगशास्त्र, गणित, ज्योतिष, चिकित्सा, रसायन, आकाश से लेकर अंतरिक्ष तक के लिये पर्याप्त अनुसंधान भारतीय वाड्मय में उपलब्ध है।

लेकिन विज्ञान और प्रौद्योगिकी को भारत में ब्रिटिश काल के दौरान अपनी असली पहचान मिली और तत्कालीन सरकार की जरूरत और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इसका विकास किया गया। 19 वीं शताब्दी के दौरान, जब पूरे यूरोप में औद्योगिक क्रांति का काल चला, अंग्रेजों ने भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास पर जोर दिया।

रेलवे प्रणाली की स्थापना, नहरों और मौसम संबंधी स्टेशनों के एक नेटवर्क के विकास को आरंभ किया गया। इस समय के दौरान इस देश का वैज्ञानिक सर्वेक्षण किया गया था। 1784 में कोलकाता में एशियाटिक सोसाइटी के रूप में इस तरह के कई शैक्षणिक संस्थानों, 1876 एडवांसमेंट ऑफ साइंस में और कई दूसरों के लिए इंडियन एसोसिएशन बनाया गया। ये सभी देश में विज्ञान के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से किये गये सार्थक प्रयास थे।

हालांकि, पिछली सदी और वर्तमान तक के साल के अंत में भारत के लिए विज्ञान के पुनर्जागरण के एक परम्परा थी। सर जे सी बोस, सी वी रमन, एस एन बोस, श्रीनिवास रामानुजन, डॉ होमी जहांगीर भाभा, विक्रम साराभाई, डॉ हर गोविंद सिंह खुराना आदि अपनी उल्लेखनीय वैज्ञानिक शोधों के लिए प्रख्यात हैं। विभिन्न क्षेत्रों में इनके योगदान के लिये व देश के वैज्ञानिक व प्रौद्योगिक विकास के लिए इनका नाम सदैव स्मरणीय रहेगा।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की प्राचीनकाल की उपलब्धियों से लेकर इस शताब्दी में प्राप्त महान सफलताओं की एक लंबी और अनूठी परंपरा रही है। स्वतंत्रता पूर्व के 50 वर्षों में ज्यादातर काम विशुद्ध अनुसंधान के क्षेत्र में हुए। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हमारा वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी ढांचा न तो विकसित देशों जैसा मजबूत था और न ही संगठित। इसके फलस्वरूप हम प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अन्य देशों में उपलब्ध हुनर और विशेषज्ञता पर आश्रित थे। पिछले चार दशकों के दौरान राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक आधारभूत ढांचा बना है व सामर्थ्य उत्पन्न कर ली

गई है जिससे अन्य देशों पर भारत की निर्भरता घटी है। वस्तुओं, सेवाओं और उत्पादों के लिए व्यापक पैमाने पर लघु उद्योग से लेकर अत्याधुनिक परिष्कृत उद्योगों तक की स्थापना की जा चुकी है। मूलभूत और अनुप्रयुक्त विज्ञान के क्षेत्र की नवीनतम जानकारी से लैस अनुभवी विशेषज्ञों का समूह अब उपलब्ध है जो प्रौद्योगिकीयों में से विकल्प चुन सकता है, नई प्रौद्योगिकियों का उपयोग कर सकता है और देश के भावी विकास का ढांचा तैयार कर सकता है। स्वतंत्रता अवधि के दौरान पंडित जवाहर लाल नेहरू, तत्कालीन प्रधानमंत्री ने कहा था कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन में तेजी के लिए एक प्रमुख शक्ति के रूप में है। नेहरू भारत के अपने प्रकाशन में स्पष्ट रूप से अपने विचार व्यक्त करते हुये कहते हैं कि विज्ञान अकेले निरक्षरता और भूख व गरीबी की समस्या को हल कर सकता है, अंधविश्वास और जर्जर परंपरा से दूर संसाधनों का अम्बार खडा कर सकता है। हरित क्रांति कार्यक्रम अपने आप में बडा और सफलतम उदाहरण कहा जा सकता है जो देश के विकास में वह बहुत बडा आत्मनिर्भरता का कारण बना।

अंतरिक्ष अनुसंधान, परमाणु ऊर्जा, जैव प्रौद्योगिकी और कृषि के क्षेत्र में भारत ने बहुत कुछ हासिल किया है। धीरे–धीरे नए क्षेत्रों और सूक्ष्म क्षेत्रों का सतत् उद्‌भव और सुपर कम्प्यटर, रोबोट, और रोबोटिक, सूचना प्रौद्योगिकी, ऑप्टिक फाइबर आदि के कारण अनेक विशेष अनुसंधान क्षेत्रो से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में विभिन्न विकास की गतिविधियों चल रही है।

ऊर्जा के क्षेत्र में भारत अभी भी पिछड़ा है, गैर परंपरागत संसाधनों के प्रति उपेक्षा के कारण हम विकास की वह गति नहीं पा सके, पर प्रयास जारी है। दोहन का स्वच्छ, सुरक्षित होना और गैर प्रदूषणकारी ऊर्जा, सौर ऊर्जा, असीम स्रोत (सूर्य) प्रति द्वारा प्रदान को अभी भी बेहतर तररके से काम में लेने के तरिकों की खोज के द्वारा बहुत कुछ हासिल किया जा सकता है। सरकार के लगातार समर्थन अच्छी तरह से निजी संस्थानों के साथ 3000 से अधिक सार्वजनिक और निजी संस्थान बुनियादी मौलिक, अनुप्रयुक्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में शोध और विकास कार्यों में लगे हैं।

भारतीय प्रतिभाओं की नित नई खोज से विकसित सॉटवेयर और कंप्यूटर सेवा उद्योग से भारतीय अर्थव्यवस्था के समृद्धशाली संसाधनों और उनसे आय के स्रोतों में तेजी से बढ़ोतरी सामने आ रही है। यह क्षेत्र तीस फीसदी सालाना से भी ज्यादा तेज दर से बढ़ रहा है। इस उद्योग को सन् दो हजार चार में करीब पचीस बिलियन अमेरिकी डालर से अधिक का राजस्व मिला जिसमें करीब सत्रह से बीस बिलियन डालर की आय अकेले निर्यात से प्राप्त हुई। भारतीयों को यह सुनकर कितना सुखद लगेगा कि इस उद्योग में एक मिलियन से भी अधिक लोग सीधे रोजगार पा रहे हैं जबकि 2.5 मिलियन से ज्यादा लोग अप्रत्यक्ष रूप से इससे जुड़े हैं। इस प्रकार भारत के सकल घरेलू उत्पाद में इस उद्योग का तीन फीसदी से भी ज्यादा योगदान है जबकि कुल निर्यात का बीस प्रतिशत आई टी उद्योग से आता है। पर जिन प्रतिभाओं से भारत को लाभ उठाना था, वे दूसरों की प्रगति का जरिया बन रही हैं। भारत में जिस तरह से कुछ राजनीतिक दल फिर से आरक्षण–आरक्षण की रट लगा रहे हैं, उससे भारतीय प्रतिभाओं का पलायन रोका जाना संभव नहीं हो सकेगा।

एक आर्थिक रिपोर्ट से पता चलता है कि इसका ब्रिटेन जैसे देशों को बहुत फायदा हुआ है। इन फायदों में कंप्यूटर सेवाओं की भारतीय उप महाद्वीप में आउटसोर्सिंग से होने वाली बचत भी शामिल है। भारतीय सॉफ्टवेयर कंपनियां विदेशों में होने वाले निवेश की अगुआई करती रही हैं । जिससे इनमें ज्यादातर निवेश विलय और अधिग्रहण के जरिए होते हैं। देखा जाए तो भारतीय आईटी उद्योग सही मायने में देश का पहला वैश्विक व्यवसाय बनने की दिशा में बढ रहा है। ब्रिटेन में प्रमुख कंप्यूटर प्रदाता कंपनी के रूप में भारत की टाटा कंसलटेंसी को ही ले लीजिए जिसने इस क्षेत्र में बड़ा नाम कमाया है। सूचना प्रोद्योगिकी के लचीले व्यवसायिक नियमों के कारण आज कई कंपनियां ज्यादा कुशलतापूर्वक

अपना काम कर रही हैं। इनमें टाटा ने दुनिया की दस बड़ी कंपनियों में अपने को स्थापित कर लिया है। तीस वर्ष से टाटा कंसलटेंसी भारत और ब्रिटेन के बीच होने वाले व्यवसाय के अनुरूप परिवर्तन की प्रक्रिया अपनाए हुए है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान भारतीय प्रतिभाओं की भारी मांग ने भारत को एशिया प्रशांत क्षेत्र में सबसे तेज गति से विकास करने वाला सूचना प्रौद्योगिकी बाजार बना दिया है।

भारत की अधिकांश कंपनियों ने आई एस ओ, सी एम एम, सिक्स सिगमा जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानकों के साथ अपनी आंतरिक प्रक्रियाओं और व्यवहारों को पहले ही शामिल कर लिया है, जिस कारण भारत को एक भरोसेमंद सोर्सिंग गंतव्य के रूप में स्थापित करने में सहायता मिली है।

सरकार ने अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम में मूलभूत गुणवत्ता सुधार को प्राथमिकता दी है और इस संदर्भ में साधारण जनता के जीवन से जुड़े क्षेत्रों में ई–शासन को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देने का प्रस्ताव किया है। इसके अनुसार एक राष्ट्रीय ई–शासन योजना तैयार की गयी है जिसमें यह विचार मुख्य रूप से प्रस्तुत किया गया है कि इसका उद्देश्य साधारण जनता को सभी सरकारी सेवाएं उसी के इलाके में आजीवन, एकल बिन्दु केन्द्र के माध्यम से उपलब्ध होगी। साधारण जनता की मूलभूत जरूरतों को पूरा करने के लिए ऐसी सेवाओं के लिए कम लागत पर कुशलता, पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित होनी जरूरी है। जिस प्रकार इसके घटक राज्यव्यापी एरिया नेटवर्क सामान्य सेवा केन्द्र, क्षमता निर्माण, इंटरनेट संवर्धन, रूट सरवरों की स्थापना, मीडिया लैब एशिया, सूचना सुरक्षा, अनुंसधान एवं विकास के क्षेत्रों में खूब काम चल रहा है उसके लिए यह बहुत जरूरी है और यह इस बात का प्रमाण कहा जा सकता है कि आईटी के क्षेत्र में भारत ने जो प्रगति की है, उसका संबंध सीधे प्रतिभाओं के उच्च स्तरीय प्रयोग से है।

भारत की औद्योगिक राजधानी की अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों ने भारतीय प्रतिभाओं को काफी आकर्षित किया है। इन कंपनियों ने भारतीय प्रतिभाओं को विदेशों में ही अवसर देने के रास्ते खोल दिए हैं जिससे विदेशी कंपनियों में भारतीय प्रतिभाओं का न केवल महत्व बढ़ गया है अपितु उन्हें दिया जाने वाला पैकेज भी भारी भरकम हो गया है।

यह कटु सत्य है कि आरक्षण के कारण भारत की अखिल भारतीय सेवाओं में प्रतिभाओं का रूझान कम हुआ है पर उन प्रतिभओं के कारण ही आज पूरी दुनिया की नजर भारत की तरफ है। भारत के कुछ अशांत क्षेत्रों में विघटनकारी गतिविधियों और आरक्षण जैसी मांगों का भी सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार पर कोई विपरीत असर नहीं दिखायी पड़ता है। विश्व समुदाय मानता है कि भारत में आईटी के क्षेत्र में प्रतिभाओं की अद्भुत खोज हुई है। एक समय बाद भारतीय प्रतिभाएं दुनिया के लिए बड़ी मजबूरी बन जाएंगी, क्योंकि भारत के पास यही एक दौलत है, जिसके बूते पर प्रतिभाओं के क्षेत्र में भी सदियों से उसका इकबाल कायम है।

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम देश की विविध सामाजिक–आर्थिक विकासात्मक जरूरतें पूरी करने की क्षमता से युक्त एक स्वदेशी प्रयास है। प्रमुख रूप से भारत के लिए प्रासंगिक अंतरिक्ष–प्रौद्योगिकी और अनुप्रयोगों को विकसित करने तथा उन्हें काम में लाने पर बल दिया जाता रहा है। संचार, प्रसारण और मौसम विज्ञान में सेवाएं प्रदान करने के लिए इनसेट प्रणाली की स्थापना की गई है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम इतना परिपक्व हो गया है कि इसका गुणगान राष्ट्र में ही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय जगत में भी हो रहा है। आरंभ से ही अंतरिक्ष संगठन का उद्देश्य समाज की भलाई रहा है । भारत ने बैलगाड़ी युग को बहुत पीछे छोड़ दिया है। आज इनसेट उपग्रह तथा आईआरएस उपग्रह स्वदेशी अंतरिक्ष विज्ञान के प्रतीक बन गए हैं। अंतरिक्ष कार्यक्रमों के लिए भारतीय संस्थानों तथा उद्योगों ने सहयोग किया है।

उपग्रहों के द्वारा हम समन्वित सतत विकास मिशन जैसे कार्यक्रम संचालित कर रहे हैं, जिसके तहत हम स्थानीय स्तर पर योजना बनाकर भू–जल संसाधनों का अधिकतम उपयोग कर रहे हैं। इनके

द्वारा एकत्रित आंकड़ों का इस्तेमाल विभिन्न क्षेत्रों यथा कृषि, फसल अनुमान, भूमिगत जल स्रोतों का पता लगाने, वन सर्वेक्षण, अनुत्पादक भूमि के मानचित्रण, बर्फ पिघलने के अनुमान, सिंचाई, कमान क्षेत्र प्रबंधन, खनिजों का पता लगाने, संभावित मत्स्य क्षेत्र का पता लगाने, शहरी योजना बनाने एवं पर्यावरण पर निगाह रखने जैसे अनेक कार्यों में किया जा रहा है। भारत एकमात्र ऐसा देश है, जो आम आदमी के लाभ के लिए नवीनतम प्रौद्योगिकी का उपयोग कर रहा है। भारतीय प्रक्षेपण राकेटों की विकास लागत ऐसे ही विदेशी प्रक्षेपण राकेटों की विकास लागत का एक–तिहाई है। भारतीय अंतरिक्ष प्रणाली आज राष्ट्रीय अवसंरचना का महत्वपूर्ण अंग बन गई है। दूरसंचार, दूरदर्शन प्रसारण, मौसम विज्ञान, आपदा चेतावनी, दूर चिकित्सा, प्राकृतिक संसाधन सर्वेक्षण और प्रबंधन, दूरवर्ती शिक्षा और खोजबीन तथा बचाव अभियान जैसी महत्वपूर्ण सेवाओं की कल्पना भी अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के हस्तक्षेप के बिना नहीं की जा सकती है। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी ने भारत को विश्व में विशेष स्थान दिलाया है। उपग्रह प्रक्षेपण में भारत कारोबारी छलांग पहले ही लगा चुका है। इस पहले सफल कारोबारी प्रक्षेपण के बाद भारत दुनिया के पांच देशों के विशिष्ट क्लब में शामिल हो गया था।

अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते वर्चस्व को देखते हुए जब अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा भारत के दौरे पर आए तो मुम्बई में सेंट जेवियर्स कॉलेज के छात्रों से उन्होंने कहा कि भारत और अमरीका कई क्षेत्रों में भागीदारी को नए आयाम तक पहुंचा सकते हैं, उनमें से एक अंतरिक्ष का क्षेत्र भी है। भविष्य में इसरो उन सभी ताकतों को और भी कड़ी टक्कर देगा, जो साधनों की बहुलता के चलते प्रगति कर रही हैं। भारत के पास प्रतिभाओं की बहुलता है। भविष्य में अंतरिक्ष में प्रतिस्पर्धा बढेगी। भारत के पास इसमें थोड़ी–बहुत बढ़त पहले से है, इसमें और प्रगति करके इसका बड़े पैमाने पर वाणिज्यिक उपयोग संभव है। कुछ साल पहले तक फ्रांस की एरियन स्पेश कंपनी की मदद से भारत अपने उपग्रह छोड़ता था, पर अब वह ग्राहक के बजाए साझीदार की भूमिका में पहुंच गया है।

स्वतंत्रता के बाद भारत का प्रयास यही रहा है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन लाया जाए। परम्परागत कुशलताओं को समुन्नत करके संगत तथा स्पर्द्धात्मक बनाने और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के अग्र क्षेत्रों में अग्रिम क्षमताओं का विकास करने के प्रयास हो रहे हैं। भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति लाने वाले प्रतिभाओं को विश्वास था कि भारत को आधुनिक, औद्योगिक समाज बनाने में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। अनुभव और परिणाम से यह सिद्ध हो गया है कि उनका विश्वास बिल्कुल ठीक था। आज वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी और नई प्रक्रियाएं और भी संगत प्रतीत होती हैं। वैज्ञानिक ज्ञान और अनुभव, प्रौद्योगिकी, नई प्रक्रियाएं, उच्च प्रौद्योगिक, औद्योगिक संरचना और कुशल कार्यबल इस नए युग की संपत्ति हैं। आज के विश्व में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आर्थिक प्रगति और विकास के महत्वपूर्ण वाहक हैं। भारतीय विज्ञान के लिए वर्तमान स्थिति अति महत्वपूर्ण है और यदि सकारात्मक बड़े और ठोस कदम इस क्षेत्र में उठाएं जाएं तो भविष्य में देश स्थायी और तीव्र प्रगति कर सकता है।

1. सम्पादक–द लॉ स्कॉलर, विधि विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, एल एल एम मानवाधिकार व मूल्य शिक्षा, विधि विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर अंतिम बर्ष में अध्ययनरत व संस्कृत शिक्षा राजस्थान सरकार के अंतर्गत संचालित राजकीय संस्था में सेवारत।

2. विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डी एस टी) ने मई 1971 में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के नए क्षेत्रों को बढ़ावा देने और के आयोजन उसके लिए नोडल विभाग की भूमिका निभाता हैं, समन्वय और देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की गतिविधियों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से स्थापित किया गया था। विभाग विशिष्ट परियोजनाओं और कार्यक्रमों के रूप में नीचे सूचीबद्ध क्रियाकलापों के लिए जिम्मेदारी है।

- विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित नीतियों के निर्माण।

- मंत्रिमंडल की वैज्ञानिक सलाहकार समिति से संबंधित मामले और उभरते क्षेत्रों पर विशेष जोर देने के साथ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के नए क्षेत्रों की प्रोन्नति।
- स्वदेशी जैव ईंधन उत्पादन, प्रसंस्करण, मानकीकरण, और अनुप्रयोगों के संबंधित मंत्रालय या विभाग के साथ समन्वय से संबंधित प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए अनुसंधान संस्थानों या प्रयोगशालाओं के माध्यम से अनुसंधान और विकास गतिविधियों के विकास तथा मूल्ययोजित उत्पादों के उपयोग को बढ़ावा देना।
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में संस्थानों और विभागों के बीच हित और क्षमताओं का समन्वय।
- उपक्रम या आर्थिक रूप से वैज्ञानिक और तकनीकी सर्वेक्षण का प्रयोजन, अनुसंधान, डिजाइन और विकास, जहां आवश्यक हो।
- समर्थन और वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थानों, वैज्ञानिक संघों और निकायों के लिए अनुदान सहायता।

सभी संबंधित मामलों:–

(क) विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसंधान परिषद।

(ख) प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड और अनुसंधान और विकास उपकर अधिनियम, 1986 (1986 का 32) और प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड अधिनियम, 1995 (1995 के 44) के रूप में संबंधित अधिनियमों।

(ग) विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार के लिए राष्ट्रीय परिषद।

(घ) राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी उद्यमिता विकास बोर्ड।

(ड.) अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी सहयोग सहित वैज्ञानिक की नियुक्ति सहित उन्हें विदेश भेजना (इन कार्यों के लिए विदेश मंत्रालय के साथ निकट सहयोग स्थापित किया जाएगा)।

(च) स्वायत्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी विज्ञान और खगोल भौतिकी संस्थान, भू–चुंबकत्व के संस्थान सहित प्रौद्योगिकी विभाग के तहत इस विषय से संबंधित संस्थान।

(छ) व्यावसायिक विज्ञान अकादमियों द्वारा प्रोत्साहन और विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा वित्तपोषित।

(ज) सर्वे ऑफ इंडिया और नेशनल एटलस और विषयक मानचित्रण संगठन, राष्ट्रीय स्थानिक डेटा ढांचा और जी आई एस के संवर्धन, नेशनल इन्नोवेशन फाउंडेशन, अहमदाबाद।

- सामान्यतः वैज्ञानिक और तकनीकी विभागों/संगठनों/संस्थाओं को प्रभावित मामले वित्तीय, कर्मियों, खरीद और आयात नीतियों और प्रथाओं का संचालन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी और समन्वय उसके के लिए प्रबंधन सूचना प्रणाली, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मिशन को विकसित करने के लिए Inter&Agency@Inter&Departmental समन्वय के बारे में मामले, घरेलू प्रौद्योगिकी विशेष रूप में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग के तहत उन लोगों की तुलना में अन्य प्रौद्योगिकी के व्यावसायीकरण से जुड़े उपक्रम के प्रचार से संबंधित मामले, अन्य सभी विज्ञान और प्रौद्योगिकी और देश के विकास और सुरक्षा के लिए उनके अनुप्रयोग को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक उपाय, संस्थागत विज्ञान और प्रौद्योगिकी, नए संस्थानों और संस्थागत ढांचे की स्थापना सहित क्षमता निर्माण से संबंधित मामले, और राज्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषदों और अन्य तंत्रों के माध्यम से आधारभूत विकास के लिए राज्य, जिला और ग्रामीण स्तर पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी की पदोन्नति, और कमजोर वर्गों, महिलाओं और समाज के अन्य पिछड़े वर्गों के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी के महत्वपूर्ण पहल रेलवे टिकट एवं आरक्षण का कम्प्यूटरीकरण, बैंकों का कम्प्यूटरीकरण एवं ए टी एम की सुविधा, इंटरनेट से रेल टिकट, हवाई टिकट का आरक्षण, इंटरनेट से एफ आई आर, न्यायालयों के निर्णय ऑनलाइन उपलब्ध कराये जा रहे हैं, किसानों के भूमि रिकार्डों

का कम्प्यूटरीकरण, इंजीनियरिंग में प्रवेश के लिए आनलाइन आवेदन एवं आनलाइन काउंसिलिंग, आनलाइन परीक्षाएं, कई विभागों के टेंडर ऑनलाइन भरे जा रहे हैं., पासपोर्ट, गाडी चलाने के लाइसेंस आदि भी ऑनलाइन भरे जा रहे हैं, कई विभागों के कांफिडेंसियल रिपोर्ट ऑनलाइन भरे जा रहे हैं शिकायतें ऑनलाइन की जा सकतीं हैं। सभी विभागों द्वारा बहुत सारी जानकारियां ऑनलाइन उपलब्ध हैं।''सूचना का अधिकार'' के तहत भी बहुत सी जानकारी ऑनलाइन दी जा रही है, आयकर की फाइलिंग ऑनलाइन की जा सकती है।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी का विकास पिछले वर्षो मे बडी तेज़ी से हुआ है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत में कई बहुराष्ट्रीय कंपनियां काम कर रही हैं। उनमें से प्रमुख हैं –इंफोसिस, टी सी एस, विप्रो, सत्यम।

पहली कारोबारी छलांग 23 अप्रैल, 2007 को लगाई थी, जब भारत के उपग्रहीय प्रक्षेपण यान ने इटली के खगोल उपग्रह एंजिल का सफलतापूर्वक प्रक्षेपण किया था।

अमरीका, रूस, फ्रांस और चीन।

विस्फोट परिचय

प्रियव्रत शर्मा
अग्नि, विस्फोटक एवं पर्यावरण सुरक्षा केन्द्र, दिल्ली

विस्फोट, यह एक ऐसी घटना है जिसमें उर्जा अचानक से मुक्त होती है एवं जिसके परिणाम स्वरुप संचित उर्जा विस्फोट तरंगों के माध्यम से हिंसक रुप धारण कर लेती है और एक बृहद पैमाने पर संचना का विनाश करती है

विस्फोट निम्न प्रकारों से किसी संचना को प्रभावित करता है

1. हवाई विस्फोट–किसी विस्फोटक में विस्फोट होने से मुक्त उर्जा जब हवा के माध्यम से तीव्र गति करते हुए संरचना का ह्रास करे तो उसे हवाई विस्फोट की संज्ञा दी जाती है।
2. भूमि आघात–भूमि कणों में कंपन द्वारा संरचना विनाश भूमि आघात कहलाता है। यह अपने तीव्र आवेग एवं गति के कारण सर्वाधित महत्ता रखता है अतः इसका अध्ययन आवश्यक हो जाता है।
3. प्राथमिक एवं द्वितीयक विखंडन–जब विस्फोटक लहरें किसी संरचना से टकराती हैं तो प्राथमिक विखंडनों का निर्माण होता है, जैसे विस्फोटक के शैल से उत्पन्न खंड। जब यह प्राथमिक विखण्ड किसी संरचना से टकराते हैं तो द्वितीयक विखण्डों का निर्माण होता है।
4. अग्नि–विस्फोटक में रासायनिक क्रिया होने के कारण अग्नि उत्पन्न होती है जो संरचना की शक्ति को क्षीण कर देती है।

हवाई विस्फोट संरचना के अधिकतम दबाव और आवेग के संयोजन से नियंत्रित होता है। यदि किसी विस्फोट को दबाव एवं विस्फोट के समय नामक अक्षों पर चित्रित करें तो इसमें विस्फोट में नकारात्मक एवं सकारात्मक विशिष्ट आवेग प्राप्त होते हैं जो नीचे चित्र में दर्शाया गया है।

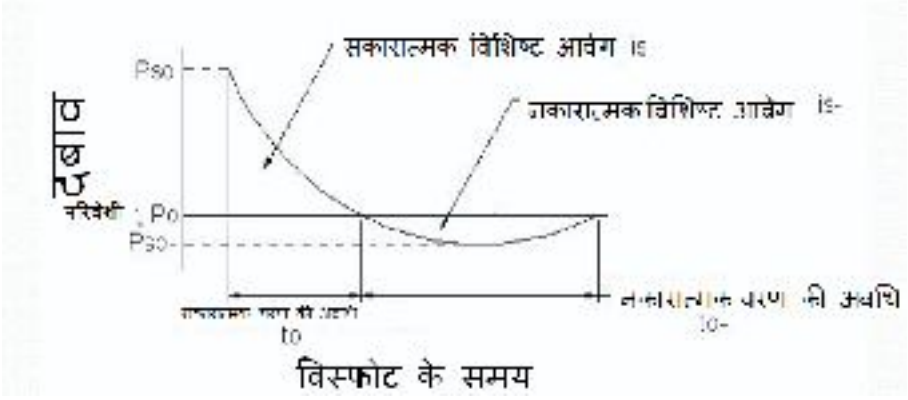

जब कोई विस्फोट किसी उंचाई पर होता है तो उत्पन्न तरंगों को आवर्ती लहरें कहते हैं जब यह लहर जमीन से टकराती है तो परावर्तित लहरों का रुप धारण करती है। परावर्ती लहरों का आवेग आवर्ती लहरों से अधिक होता है परिणामस्वरुप यह अधिक विनाशकारी होती हैं। जिस स्थान पर दोनों लहरें मिलती हैं उसे ट्रिपल बिंदु कहते हैं। जमीन से ट्रिपल बिन्दु तक की दूरी को मैक स्टम कहते हैं। मैक स्टम के अंदर के क्षेत्र में सर्वाधिक आवेग होने के कारण संचना का सर्वाधिक ह्रास होता है।

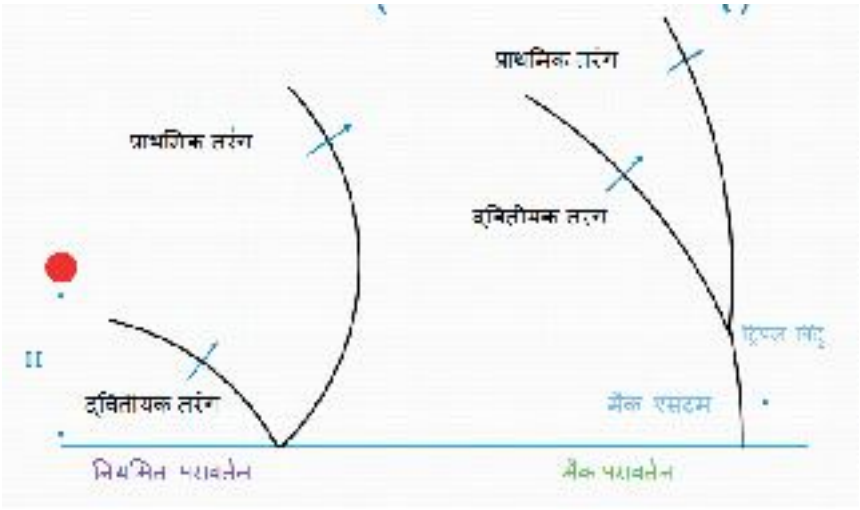

विस्फोट भार का विश्लेषण

इमारतों के ढांचे पर विस्फोट प्रभाव की भविश्यवाणी के लिए निम्न तरीके उपलब्ध हैं:

अनुभवजन्य (या विश्लेषणात्मक) तरीके

- इसमें प्रयोगात्मक डेटा के साथ सहसंबंध स्थापित किया जाता है।
- यह उपलब्ध प्रयोगात्मक डेटाबेस की हद तक सीमित होता है।
- बहुत पास के क्षेत्र में यर्थातता की कमी आती है।

अर्ध अनुभवजन्य तरीके

- यह एक भौतिक घटना का सरलीकृत मॉडल होता है।
- व्यापक डाटा के अध्ययन पर निर्भरता रखता है।
- अनुभवजन्य तरीकों की तुलना में बेहतर सटीकता प्राप्त होती है।

संख्यात्मक तरीके

- यह गणितीय समीकरण है जो कि एक समस्या के वर्णन के लिए बुनियादी भौतिक विज्ञान के सिद्धांतों का प्रयोग करता है।
- द्रव्यमान गति और ऊर्जा का संरक्षण होता है।
- सामग्री के भौतिक व्यवहार विद्यमान संबंधों द्वारा वर्णित होता है।

संरचनाओं पर विस्फोट भार को ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित का अध्ययन जरुरी है।

1. किन मापदंडो का गतिशील विश्लेषण संरचना डिजाइन के लिए उपयोगी है।
2. दबाव समय इतिहास की रुपरेखा।
3. विस्फोट के सकारात्मक चरण का इतिहास।
4. सुदूर क्षेत्र में गतिशील भार पर विचार की आवश्यकता।

वर्तमान समय में जमीन में बढती कमी के कारण आयुध डिपो तथा अन्य विस्फोटक भंडारण केन्द्रों की जरुरत है कि ऐसी संरचनाओं का निर्माण किया जा सके जो ज्यादा आवेग के भार को झेल सके तथा जिसमें कम से कम विखण्डों का निर्माण हो।

ऐसी स्थिति में अभिनव विस्फोट प्रतिरोधी कंक्रीट को बनाने की आवश्यकता है जिसके लिए नियमन की जरुरत है।

1. विस्फोट प्रतिरोधी निर्माण सामग्री की मांग।
2. व्यवहारिक निर्माण करने योग्य विकल्पों की आवश्यकता।
3. सरंचना का ऐसा निर्माण जिससे कम से कम द्वितीयक विखंडन का निर्माण हो।

मानव संसाधनः महत्व व विकास

बी एस यादव

अग्नि, पर्यावरण, तथा विस्फोटक सुरक्षा केन्द्र, दिल्ली

राष्ट्र या किसी भी संगठन का महानतम एवं सर्वाधिक मूल्यवान संसाधन मानव है। इनका ज्ञान, उपाय–कुशलता, निष्ठा, साहस, क्षमता, जीवटता, जिजिविषा किसी भी संगठन या राष्ट्र के भविष्य का निर्धारण करती है।

परिस्थिति चाहे कोई भी हो व्यक्ति (संसाधन) की उपरोक्त विशेषताएं ही परिणाम का निर्धारण करती हैं। चाहे युद्ध हो या शांति, खेल का मैदान हो या कार्यस्थल, निर्माण उधोग हो या सेवा क्षेत्र, मानव संसाधन की उपयोगिता परिणाम का निर्धारण करती है। उदाहरणतया स्वतंत्रता संग्राम में अनेक देशभक्त, युवा, ओजस्वी, साहसी, विचारवान, धैर्यवान, उर्जावान स्वतंत्रता सेनानी बलिदान को तत्पर थे उनके इन गुणों एवं संसाधनों ने राष्ट्र को स्वतंत्रता दिलवाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। स्वतंत्रता सेनानियों के भगीरथ प्रयासों से प्राप्त स्वतंत्रता में हम एक स्वतंत्र लोकतंत्र में प्रसन्नतापूर्वक निवास कर रहे हैं। आज के संदर्भ में हमारे सामने मानव संसाधन के उपयोग व विकास से सम्बन्धित निम्नलिखित चुनौतियां हैं:

1. उपयुक्त चयन।
2. उचित व प्रासंगिक प्रशिक्षण।
3. समुचित स्थानापन्न।
4. रचनात्मकता व जिज्ञासा का विकास।
5. इनकी उचित देखभाल व कल्याण।
6. प्रेरणा के वातावरण का निर्माण तथा कम समय व संसाधनों का उपयोग करके बेहतरीन, शीघ्र तथा लाभदायी परिणाम प्राप्त करना।

संगठन अपनी जरुरत के अनुसार उचित कार्यबल के चयन के लिए सम्भावित स्त्रोतों को रिक्तियों की सूचना विभिन्न माध्यमों प्रैस, इन्टरनेट, इन्टरानेट, शैक्षिक संस्थान तथा उद्योग क्षेत्र में पहुंचा सकता है। अपनी आवश्यकता, कार्यक्षेत्र तथा कार्य प्रणाली के अनुसार पात्र अभ्यर्थियों में से उपयुक्त चुनाव हेतु बातचीत, साक्षात्कार, लिखित परीक्षा, पूर्व अनुभव, कैम्पस साक्षात्कार, लेटरल एन्ट्री, प्रतिनियुक्ति जैसी प्रणाली के प्रयोग द्वारा संगठन की आवश्यकता अनुरुप उत्तम मानव बल का चयन किया जा सकता है। तैनाती से पूर्व उचित चयन एक बेहद जरुरी भविष्य निवेश (फ्यूचर इनवेस्टमेंट) है। चयनित व्यक्ति या कार्यबल को संवारने तथा उनसे बेहतर परिणाम के लिए प्रशिक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। एक कहावत के अनुसार 'करत–करत अभ्यास के जडमति होत सुजान' अर्थात अभ्यास एवं प्रशिक्षण के द्वारा मन्दबुद्धि भी विद्वान बन सकता है। सो प्रशिक्षण की कार्यबल को संवारने, विकसित करने, प्रेरणा देने, अत्याधुनिक तकनीक, अनुसंधान व ज्ञान का उत्तम उपयोग करने के लिए सक्षम बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रशिक्षण पर किया गया समय तथा धन का व्यय कभी व्यर्थ नहीं जाएगा अपितु कई गुणा बढकर संस्थान को बढ़ी हुई उत्पादकता के रूप में प्राप्त होता है।

तथापि चयन के उपरान्त कर्मी को उपयुक्त व उचित कार्य पर नियुक्त करना वांछनीय है। चूंकि मानव सर्वोपरि संसाधन है। यह संसाधन विकल्पहीन है अतः चयनित व्यक्ति को उसकी योग्यता, विशेषज्ञता तथा कुशलता के अनुरूप कार्य पर तैनात करने से उसकी क्षमता तथा प्रतिभा का समुचित उपयोग हो सकेगा व संगठन को आशानुकूल परिणाम प्राप्त होगें। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में मानव का कार्य मशीनों से करना संभव हुआ है तथापि मशीन के संचालन के लिए भी दक्ष कार्यक्रर्मी की आवश्यकता होती है। दक्षता तथा कुशलता का विकास करने के लिए निरन्तर प्रयास तथा प्रयोग आवश्यक है। अपने कार्यबल को प्रशिक्षित करने के साथ–साथ उनकी जिज्ञासा का विकास करना तथा रचनात्मकता को बढावा देना एक सही कदम माना जा सकता है। रचनात्मकता का विकास करने हेतु व्यक्ति के विचार तथा सुझाव को सुनना तथा जहॉ तक उचित हो स्वीकार करना उसको नए विचार सृजन करने में सहायक होगा जिससे रचनात्मकता व नवीनता विकसित होती है।

अपने मानव संसाधन से अधिकतम एवं उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए लीडर या प्रबन्धक को अपने सहकर्मियों को कार्य क्षेत्र में एक भागीदार के रुप में समझना चाहिए। यह सोच कर्मचारी की वफादारी एवं निरन्तरता को बढावा देगी। साथ ही सूचना व ज्ञान का आदान–प्रदान किया जाना भी जरुरी है। जानकारी के अभाव में कर्मचारी की कार्यक्षमता ठिठक जाती है। अतः संवाद का इस तरह से दिशा निर्धारण किया जा सकता है कि वह स्वयं को सम्मानित व मूल्यवान समझें । इससे उन्हें प्रेरणा मिलेगी एवं संगठन को उचित परिणाम प्राप्त होंगे तथा कर्मचारियों को स्वमहता का अहसास होता है।

तदोपरान्त कार्यस्थल की समस्याओं का निवारण एक महत्वपूर्ण स्ट्रैटजी है। जिससे कि कर्मचारी को स्वमहत्ता का अहसास होता है। कार्यस्थल की समस्याओं को अनदेखी करने से कर्मी का न सिर्फ मनोबल कम होता है बल्कि उसकी उत्पादकता घट जाती है जिससे घटिया परिणाम देरी से प्राप्त होते हैं। यह स्थिति समसामयिक चुनौतिपूर्ण एवं प्रतियोगी परिस्थितियों में अवांछनीय ही नहीं बल्कि प्रगतिबाधक भी हैं।

इसके साथ ही कर्मचारियों को समस्या निदान के लिए सक्षम बनाने से समस्याओं का मूल में ही शीघ्र दमन संभव होगा। शीघ्र निदान समस्या को कोनिक या विकराल रूप धारण करने से रोकेगी। कहा भी गया है कि 'ए स्टिच इन टाइम सेव्स नाइन'। इस नीति का अनुपालन सामान्य कार्यबल को विशिष्ट कार्यबल में परिवर्तित कर देगी।

कर्मचारियों के विकास में प्रशिक्षण की अहम भूमिका होती है। उचित व सम्बंद्ध प्रशिक्षण द्वारा औसत संसाधन को एक कार्यकुशल व उत्पादक संसाधन में परिवर्तित किया जाना संभव है। प्रशिक्षण के द्वारा कुशलता की वर्तमान स्थिति व वांछनीय स्थिति के अंतर को पाटा जा सकता है। कौशल पूर्ण कर्मी निश्चित रूप से उत्पादकता बढाने में सहायक होगा। उत्पादकता या उत्पादित वस्तु की कीमत धन क संदर्भ में कम होगी। जिससे दुर्लभ धन राशि की बचत होगी, बेहतर व शीघ्र परिणाम प्राप्त होंगे।

इसके साथ ही अधिकारों का विकेन्द्रीकरण भी वांछनीय है। यह विकेन्द्रीकरण कर्मचारी में उत्तरदायित्व की भावना का विकास करता है तथा निर्णय व कार्य तीव्र गति से हो सकते हैं। उच्च प्रबन्धन को नीति निर्धारण व अन्य गूढ कार्यों के लिए अधिक समय मिल सकता है जिससे नीति व दिशा निर्धारण करने से पूर्व गहन विचार व मन्थन में सहायता प्राप्त होती है।

साथ ही कर्मियों के विकास के लिए उन्हें महत्वपूर्ण होने का आभास करवाना सर्वथा उपयुक्त तथा वांछनीय है। उन्हें बोलने का अवसर प्रदान करना, उनके विचार सुनना तथा उनसे बातचीत करना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इससे नकारात्मक भावनाओं का विनाश होता है तथा विश्वास व भरोसा कायम होता है। आपसी विश्वास तथा भरोसा टीम की सफलता के लिए आवश्यक घटक है। इसका बढ़ना अनिवार्य है।

जहां तक संभव हो सके आपसी संवाद में 'मै' के स्थान पर ग्रुप लीडर द्वारा 'हम' का प्रयोग वांछनीय है जैसे कि–

मेरी यह समस्या है।	हमारी यह समस्या है।
मैं क्या कर सकता हूं।	हम क्या कर सकते हैं।
मैं सफल हो गया।	हम सफल हो गए।

लीडर द्वारा हम का प्रयोग कार्य व परिणाम में सहभागिता की भावनाओं का विकास करेगा। सभी कर्मी स्वयं को टीम का सदस्य मानेगें तथा वे बेहतर कार्य करेंगे।

चूंकि मानव संसाधन ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण संपति है और हमें उनसे बेहतर परिणाम प्राप्त करने हैं इसलिए कार्यस्थल पर प्रेरणा–पूर्ण उद्देश्य का निर्धारण करके इस उद्देश्य को कार्मिकों के साथ जोडना आवश्यक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पुनः इस बात का अहसास करवाया जाना चाहिए कि वे संस्थान के लिए मूल्यवान हैं। सिर्फ कार्य के लिए माध्यम नहीं हैं। प्रतिभा, कुशलता व परिणाम के अनुसार उचित वेतन निर्धारण, संसाधनों के संस्थान में बनाए रखने के लिए तथा उनकी रुचि व अभिप्रेरणा के विकास के लिए आवश्यक है।

इसी क्रम में प्रोत्साहन चाहे व धन के रुप में हो या पारितोषिक के रुप में या पदोन्नति के रूप में बेहतर कार्य कर्मी को दिए जाने से सहकर्मियों में स्वस्थ प्रतियोगिता की भावनाओं का विकास होगा। जिससे की हर कर्मी विशिष्टता प्राप्त करने के लिए अग्रसर होगा जो अन्ततः संस्थान या संगठन को उद्देश्य प्राप्ति में सहायक होगा तथा अन्य संसाधनों की बचत करते हुए बेहतर परिणाम होंगे।

रूचि एवं प्रेरणा बनाए रखने के लिए कार्मिकों के कल्याण एवं उनकी देखरेख भी आवश्यक है। कार्यस्थल या व्यक्तिगत जीवन में समस्या आने पर पुनः उचित सहयोग एवं सहारा या मार्गदर्शन मिलने से वे संगठन के प्रति और अधिक समर्पित होकर कार्य करेंगे। अतः उन्हें यह अहसास करवाना अनिवार्य है कि वे महत्वपूर्ण हैं।

प्रत्येक कर्मी का कार्यालय के साथ–साथ एक निजी जीवन भी होता है। उसकी निजता का सम्मान आवश्यक है। व्यक्तिगत समस्याओं के निवारण हेतु उन्हें समय–समय पर निजी मसलों को निपटाने का अवसर देना सर्वथा उचित रहता है। समय आने पर संगठन की ओर से उन्हें दी गई सपोर्ट एक टानिक या उत्प्रेरक का कार्य करेगा।

अच्छा कार्य करने पर उसकी प्रशंसा करना बहुत प्रेरणादायी सिद्ध होता है। साथ ही आलोचना करते समय सिर्फ निन्दा करना हत्तोसाहित करेगा जबकि सकारात्मक भाव रखकर गलत तरीके से किए गए कार्य को ठीक तरीके से करने का मार्गदर्शन कर्मी को अपनी कमी या गलतियों को सुधारने में सहायक होगा।

इसके साथ ही टीम वर्क में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना भी वाछंनीय है। जिससे की आपसी संवाद के द्वारा तत्काल मौके पर ही समस्या का निराकरण किया जा सकता है। अध्ययनों में यह पाया गया है कि एक टीम या समूह में कार्य करने वाला अकेले में कार्य करने वाले लोगों से बेहतर एवं उत्पादक परिणाम सिद्धहस्तता के साथ प्राप्त करता है।

स्वस्थ एवं प्रेरणादायी आदर्श प्रस्तुत करके टीम का लीडर अपने सहकर्मियों के समक्ष एक उत्तम उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है तथा तदुपरान्त इन आदर्शों का अनुकरण करने की अपेक्षा की जा सकती है। उदाहरणतः सत्य के अनुपालन की अपेक्षा करने से पहले स्वयं का सत्यवादी होना अपेक्षित है।

त्याग की भावना की अपेक्षा तभी उचित है जब त्याग का आदर्श समक्ष प्रस्तुत किया जाए। मानव संसाधन बिना पॉलिस किए हुए हीरे के समान है जिनको गढ़ना, सहेजना, व विकसित करना अनिवार्य

है। ताकि यह एक अनउत्पादक बोझ या भार न बनें अपितु उपयोगी संसाधन में परिवर्तित होकर संगठन को क्षमता, विकास, उत्पादकता, सबलता व सफलता प्राप्त करने में सहायक हो।

हर व्यक्ति में प्रतिभा व गुण विद्यमान रहते हैं बस उन्हें सही तरीके से संचारित करके उनका रचनात्मक उपयोग करना वांछनीय है। नेतृत्व के लिए संसाधनों के रचनात्मक उत्पादक, कौशल पूर्ण प्रयोग की कला विकसित करना अपेक्षित है। ऐसा विकसित कार्यबल कार्य के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन कर कम मैटीरियल संसाधनों का व्यय करके भी अधिकतम तथा बेहतर परिणाम या उत्पाद प्रदान करने में सक्षम होगा जिससे की संगठन उपलिब्ध की उंची बुलन्दियों को प्राप्त करेगा।

हम डी आर डी ओ में कार्यरत अधिकारी तथा कर्मचारी खुशकिस्मत है क्योंकि हमारा संगठन अपने मानव संसाधनों का विशेष ख्याल रखते हुए निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है तथा डी आर डी ओ ने रक्षा विज्ञान व तकनीक के क्षेत्र में राष्ट्र को संसार में अग्रणी राष्ट्रों की श्रेणी में लाकर खडा कर दिया है। हमारा संगठन सभी कार्मिकों को आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करके उन्हें अमूल्य संसाधनों में विकसित करने को विशेष प्रयासरत रहता है। डी आर डी ओ का उच्च प्रबंधन प्रत्येक कर्मचारी व अधिकारी की कैरियर उन्नति को सतत प्रयत्नशील रहता है तथा पदोन्नति के अतुलनीय अवसर प्रदान करवाता है। डी आर डी ओ की अपने मानव संसाधनों का विकास करने उन्हें प्रेरित रखने तथा उन्नति व विकास की असीम सम्भावनाएं प्रदान करने की नीति अनुकरणीय है।

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत व अटल नियम है। तथापि एक बात अपरिवर्तित रहने वाली है और वह है– 'हर युग व हालात में कुशल मानव संसाधन की अपरिहार्यता'।

अनुसंधान तथा विकास संगठनों के लिए भविष्य की मानव संसाधन चुनौतियां

अशोक कुमार, पुनीत कुमार, तथा *चंचल
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली
**चन्दू नगर, मेन करावल नगर रोड़, दिल्ली*

सारांश

संस्थान को चाहिए कि कर्मचारियों के सामर्थ्य तथा कौशल के बीच का अंतर कम करे। मानव संसाधन के विकास और उपयोग के लिए संस्थान की भूमिका अत्यंत आवश्यक होती है जिससे कर्मचारी और प्रबंधन में तनाव न हो। जो कर्मचारी संस्थान के विकास के लिए चिंतित और इच्छित होते हैं वे संस्थान को योगदान दे सकते हैं। इसी कल्पना के साथ जो कार्यभार देने के लिए शुद्ध वातावरण का सर्जन करते हैं वही कर्मचारियों के कार्य करने का सुअवसर प्रदान करते हैं। मानव संसाधन विकास मौलिक, गतिशील, समायोजन संसाधनों का विकास और संचालन का प्रयत्न करने की निरन्तर प्रक्रिया है। संस्थान तभी उन्नति करता है जब कमियों को दूर कर, वृद्धि करने का दबाव उत्पन्न कर संस्थान को विकसित किया जाए और रूढ़िवादी, रुख न अपनाए जाएं। यह प्रबंधन का भी दावा हो सकता है। वर्तमान में नई प्रौद्योगिकी के फैलने एवं वैश्वीकरण के बीच अंतर कम कर नए सुअवसरों को लगातार उत्पन्न करना जिसमें सही समय पर सही उत्पाद और सही कुशलता को प्रभावित कर सकें।

भूमिका

मानव संसाधन विकास एक संरचना है जो संगठन या राष्ट्र के लक्ष्यों को संतोषजनक ढंग से पूरा करने के साथ व्यक्ति विशेष के विकास की अनुमति देता है। व्यक्ति के विकास से व्यक्ति विशेष तथा संगठन दोनों, अथवा राष्ट्र और उसके नागरिकों को लाभ होता है। कापरिट दृष्टिकोण के अनुसार मानव संसाधन ढांचा कर्मचारी को उद्योग की संपति की तरह देखता है जिसकी कीमत विकास के साथ बढ़ती है।

मानव संसाधन चुनौतियों के बगैर किसी संगठन की कल्पना करना बेकार है। सरकारी अथवा गैर सरकारी, किसी भी प्रकार के संगठन का निर्माण किसी खास उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। संगठन हेतु कुछ लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं जिनको सफलतापूर्वक पूरा करना ही उनका एकमात्र उद्देश्य होता है। साथ ही समयानुसार नई–नई योजनाएं बनाकर उद्देश्य प्राप्ति में चार चांद लगाए जा सकते हैं तथा संगठन की साख को और बढाया जा सकता है। एक संगठन का निर्माण इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। अर्थात व्यक्तिगत प्रयासों का समन्वय करने एवं निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में इनका सदुपयोग करने की प्रक्रिया ही संगठन कहलाती है। संगठन के प्रबंधन को प्रशासन को सही अमल में लाने एवं सुचारू रूप से संचालित करने में जिन संगठनात्मक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, उन्हें मानव संसाधन चुनौतियां कहा जाता है।

किसी भी संगठन में कर्मचारियों के रूप में सबसे अधिक महत्वपूर्ण संसाधन है। गतिशील कर्मचारी ही किसी संस्था को प्रावेगिक बना सकते हैं। प्रभावकारी कर्मचारी ही संस्था की प्रभावोत्पादकता को बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सुयोग्य एवं अभिप्रेरक कर्मचारी ही संस्थान को अपने निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। इसलिए संस्थान को अपने कर्मचारियों में गतिशीलता, प्रभावोत्पादकता, अभिप्रेरणा एवं कार्यकुशलता को सदैव उच्च स्तर पद निर्धारित करना चाहिए। इस प्रकार मानव संसाधन विकास एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है जो कर्मचारियों की कार्य क्षमता का विकास, गतिशीलता, अभिप्रेरणा, प्रभावोत्पादकता आदि का निर्धारण नियमबद्ध एवं सुनियोजित ढंग से करता है।

मानव संसाधन चुनौतियां

अनुसंधान तथा विकास संगठन की बात करें तो हम पायेंगे कि एक अनुसंधान तथा विकास संगठन को आने वाले समय में निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है –

- संगठन की प्रतिष्ठा कायम रखना।
- संगठन को एक ब्राडबैंड के रूप में पेश करना।
- नई–नई योजनाएं बनाकर लक्ष्य निर्धारण करना।
- बजट एवं वित्तीय सुविधाओं का बेहतर उपयोग।
- संगठनात्मक ढांचे का विकास।
- प्रोत्साहन/प्रलोभन सुविधाओं में बढ़ोत्तरी।
- आधुनिकतम सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग।
- कार्यालय समय संबंधी।
- तनाव संबंधी।

  व्यवहार संबंधी।

चुनौतियां यदि सामने हैं तो उनका सामना करना भी आवश्यक हो जाता है। किसी भी संगठन के लिए महत्वपूर्ण होता है, उन चुनौतियों से आसानी से निजात पाना। उनका इस प्रकार से सामना करना कि न तो संगठन पर और न ही कार्मिकों पर इनका विपरीत असर पड़े। चुनौतियों से निजात पाने के कुछ उपाय निम्नलिखित हैं –

1. नियुक्ति/भर्ती : नियुक्ति एक संगठन की समर्थ संसाधन जुटाने की योजनाओं का एक प्रमुख हिस्सा है जिसका उद्देश्य संगठन को बनाये रखने के लिए लोगों की पहचान करना तथा लघु अवधि से लेकर मध्यम अवधि तक उन्हें संरक्षण देना है। नियुक्ति की गतिविधियों को हमेशा बढ़ते हुए प्रतियोगी बाजार के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए ताकि सभी स्तरों पर सुयोग्य और सक्षम लोग आसानी से मिल सकें। इन प्रयासों को प्रभावी बनाने के लिए यह जानना जरूरी है कि आंतरिक या बाह्य स्रोतों से योग्य लोग कैसे और कब ढूंढने हैं। सफलता का सूत्र है–एक अच्छी नौकरी की रूपरेखा के साथ सही ढंग से परिभाषित संगठन का ढांचा।

आने वाले समय में, सभी संगठन अच्छी गुणवत्ता के उम्मीदवारों को प्राप्त करने के लिए काफी हद तक बाहरी रोजगार साधनों पर निर्भर होगें, तेजी से बदलते व्यवसायिक तरीके अनुभवी कौशल की चाह रखते हैं। सभी कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए पूरी तरह से रोजगार एजेंसियों अथवा परामर्श केन्द्रों पर निर्भर रहने के नीतिगत लाभ है।

2. बजट का सही उपयोग सुनिश्चित करना।

3. कुशल प्रबंधन : कुशल प्रबंधन का अर्थ कर्मचारियों, कार्य–प्रणालियों, मशीनों तथा सामग्री का इस प्रकार नियोजन व नियंत्रण करना है कि अच्छी से अच्छी किस्म के संभव सर्वश्रेष्ठ परिणाम, कम से कम लागत और प्रयास से, कम से कम समय में और उच्च प्रबंधकों के द्वारा स्वीकृत प्रणालियों के अंदर प्राप्त किए जा सकें। कुशल प्रबंधन ने घाटे पर चलने वाले कारखानों में लाभ दिखाया, जो लाभ पर चल रहे थे उनका लाभ बढाया तथा इस बात के पर्याप्त प्रमाण है कि उसका समाज पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। कुशल प्रबंधन के लिए कार्यालय प्रबंधक में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है, तभी एक कार्यालय प्रगति के पथ पर सवार हो सकता है।

(अ) व्यक्तिगत योग्यताएं या गुणः कार्यालय प्रबंधक को कई गुणों की आवश्यकता पड़ती है, जैसे नेतृत्व का गुण, उत्साह तथा लगन, व्यवहार कुशलता तथा निष्कपटता, नियमानुकूल तथा योजनाबद्ध कार्य करने की आदत, संयम तथा विश्वासोत्पादकता।

(ब) प्रशिक्षण : संगठनात्मक स्तर पर, एक सफल संसाधन विकास कार्यक्रम व्यक्ति विशेष को काम के एक उच्च स्तर पर ले जाने के लिए तैयार करेगा। मानव संसाधन विकास एक ढांचे के रूप मे पहले चरण में संगठनों की दक्षता, प्रशिक्षण तथा उसके बाद संगठनों की लम्बी अवधि की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा के माध्यम से कर्मचारी, उसके व्यवसायिक लक्ष्यों का विकास, कर्मचारी के अपने वर्तमान तथा भविष्य के नियोक्ताओं के प्रति मूल्यों पर ध्यान केन्द्रित करता है। मानव संसाधन विकास को सामान्य रूप से किसी भी व्यवसाय के सबसे महत्वपूर्ण भाग को विकसित करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। एक संगठन में कार्य करने वाले लोग इसके मानव संसाधन है। मानव संसाधन के विकास के लिए राष्ट्रीय स्तर पर योजनाबद्ध ढंग से चिंतन और अधिक उभर रहा है क्योंकि नए स्वतंत्र हुए देश अपने कुशल पेशेवरों के लिए मजबूत प्रतिस्पर्धा और बुद्धिजीवियों के विदेशों में बसने की समस्या से जूझ रहे हैं।

(स) अनुभव : व्यवसाय की बदलती हुई परिस्थितियों का जितना शीघ्र तथा व्यापक प्रभाव कार्यालय पर पड़ता है, इतना कहीं और नहीं पड़ता। फलस्वरूप, कार्यालय प्रबंधक को न केवल कार्यालय में किए जाने वाले कार्यों का विशद तथा व्यापक अनुभव होना चाहिए बल्कि कार्यालय संबंधी सेवाओं की संभावनाओं, उन्हें देने की भिन्न–भिन्न प्रणालियों का पूरा व्यावहारिक ज्ञान तथा अनुभव भी होना चाहिए।

नेतृत्व कुशलता

नेतृत्व के लिए एक नेता के कई गुण हैं, जिसके द्वारा वह अपने दल को एक हार में पिरोकर कार्यनिष्पादन में सृजनात्मकता का परिचय देता है। ये गुण हैं, निष्पक्षता, नेतृत्व, निष्ठा उत्साह, कल्पनाशीलता, कठोर परिश्रम करने की चाह, विश्लेषणात्मक योग्यता, अप्रिय स्थितियों से निपटने की योग्यता, परिवर्तन अनुसार शीघ्रतर अनुकूलन योग्यता, जोखिम उठाने को तैयार आदि। नेतृत्व के लिए प्रमुख तीन लक्ष्य होते हैं–

- उसके दल की वचनबद्धता और सहयोग प्राप्त करना।
- निर्धारित लक्ष्य पाने के लिए अपने को सक्रिय किए रहना।
- दल की कुशलताओं, ऊर्जाओं और प्रतिभाओं का सर्वश्रेठ उपयोग करना।

सम्मान/पुरस्कार

यह एक सर्वमान्य प्रचलित तकनीक है। प्राचीनकाल से ही उत्कृष्ट कार्य हेतु पुरस्कार देने की प्रथा चली आ रही है। संस्था में उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन के लिए कर्मचारियों को सम्मानित किया जाना चाहिए। यह सम्मान वेतन में बढ़ोत्तरी पदोन्नति, बोनस, विशेष सुविधायें, प्रशंसा प्रमाण–पत्र आदि रूपों में हो सकता है। कर्मचारियों को दिए जाने वाले पुरस्कार उनमें कार्य करने के प्रति अभिप्रेरण में वृद्धि करते हैं।

उनमे संस्था के उदेश्यों के प्रति लगाव पैदा करते हैं और उनकी पूर्ति को समय से पूरा करने में मदद करते हैं।

दक्ष कर्मचारियों को संगठन में बनाये रखना

दक्ष कर्मचारियों के निष्पादन कुशलता को प्रोत्साहित करने और संगठन में बनाये रखने के लिए नए प्रकार की योजनाओं को लागू करना। उनके कार्यकुशलता का विकास करने के लिए कार्यक्रम बनाना आदि। इस प्रकार हर निजी या सरकारी संगठन में मानव संसाधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संगठनों के विकास के लिए एक मानव संसाधन प्रबंधक को यह सुनिश्चित करना है कि जिन कर्मचारियों का चयन किया गया है, वे उस संगठन के लिए योग्य है या नहीं। उनके लिए जो कार्य नियत किया गया है उनमें वे सक्षम है या नहीं। उदाहरण के लिए लेखा में सक्षम अधिकारियों का कार्मिक विभाग में नियुक्त नही करना। कर्मचारियों की कमियों को पहचान कर उनको दूर करने के लिए सही प्रशिक्षण दिलाना है। उनके व्यक्तित्व विकास के लिए कार्यक्रम आयोजन करना।

निष्कर्ष

संगठन कर्मचारी वर्ग से अपेक्षा करता है कि कर्मचारी वर्ग कर्मठ एवं कार्यकुशल हो। इसके साथ ही कर्मचारी वर्ग के प्रति भी संगठन का कुछ दायित्व बनता है जिसे हम निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं –

- कर्मचारियों को समय–समय पर होने वाली वेतन वृद्धि को सुलभ करवाना।
- समयानुसार पदोन्नति दिलवाना।
- ग्रुप डी के कर्मचारियों को समय समय पर वर्दी इत्यादि दिलवाना।
- महिला कर्मचारियों के लिए मातृत्व अवकाश का प्रावधान करना।
- अनुसूचित जाति/जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग के कर्मचारियों की आरक्षण सुविधा का सही से कार्यान्वयन करवाना।
- कर्मचारियों को उचित स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करवाना।
- शरीरिक रूप से विकलांग कर्मचारियों के लिए भी अतिरिक्त भत्ते एवं अन्य प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध करवाना।
- कर्मचारियों के रहने के लिए आवासीय परिसर की व्यवस्था करवाना।
- अनुकम्पा के आधार पर भर्ती करना।
- रिक्त पड़े पदों पर जल्द से जल्द भर्ती करना।

इस प्रकार की अन्य कल्याणकारी सेवाओं या सुविधाओं को कर्मचारियों को प्रदान कराना संगठन का दायित्व बनता है। संगठन में आपसी समन्वय अत्यंत आवश्यक है। समन्वय और आपसी सहयोग की भावना से ही संगठन उन्नति के शिखर पर पहुंच सकता है।

जैविक खेतीः समस्याएं और संभावनाएं

अर्चना सेठी
पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

यह बात स्वाभाविक है कि एक अरब 20 करोड़ से भी अधिक जनसंख्या वाले देश में कृषि प्रणाली में बदलाव एक सुविचारित प्रक्रिया द्वारा होनी चाहिए, जिसके लिए काफी सावधानी और सतर्कता बरतने की जरुरत है। खाद्य, रेशा, ईंधन चारा और बढ़ती जनसंख्या के लिए अन्य जरूरतों की पूर्ति के लिए कृषि भूमि की उत्पाद्कता और मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाना जरूरी है। स्वतंत्रता पश्चात् युग में हरित क्रांति ने खाद्य के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए विकासशील देशों को रास्ता दिखाया है, किंतु सीमित प्राकृतिक संसाधन के बल पर कृषि पैदावार कायम रखने के लिए रासायनिक कृषि के स्थान पर जैविक कृषि पर विशेष जोर दिया जा रहा है, क्योंकि रासायनिक कृषि से जहां हमारे संसाधनों की गुणवत्ता घटती है वहीं जैविक कृषि से हमारे संसाधनों का संरक्षण होता है। हरित क्रांति के बाद के समय में कृषि व्यवस्था ने उत्पादन के असंतुलन, मिश्रित रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता, द्वितीयक और सूक्ष्म पोशक की कमियों में वृद्धि, अवैज्ञानिक जल प्रबंधन और वितरण, उत्पाद्कता में कमी के साथ ही उत्पाद की गुणवत्ता में हास, जीन पूल के विनाश, पर्यावरण प्रदूषण और सामाजिक और आर्थिक स्थिति में असंतुलन की समस्या का सामना किया है। फसल उत्पादन को निरंतर कायम रखने के लिए जैविक कृषि एक अच्छी पहल है किंतु भारत में कंपोस्ट की कमी, प्रमाणित प्रौद्योगिकियों के प्रचार के लिए विस्तार की असंगठित प्रणाली, जैविक सामग्री में पोशक तत्वों का अंतर, कचरे से संग्रह करने और प्रसंस्करण करने में जटिलता, विभिन्न फसलों के लागत लाभदायकता अनुपात के साथ जैविक कृषि के व्यवहारों को शामिल करने में पैकेज का अभाव और वित्तीय सहायता के बिना किसानों द्वारा उसे अपनाने में कठिनाई होने के कारण जैविक कृषि को अपनाने मे कठिनाइयाँ हैं।

जैविक खादों से कृषि उत्पादन में वृद्धि

महंगाई की समस्या का एक प्रमुख कारण कृषि उत्पादन में कमी है। जहां कुछ दशक पूर्व भारत में हरित क्रांति आई थी। देश में खाद्यान्नों का भंडार, यहां तक कि हमारे देश से दूसरे देशों को खाद्यान्नों का निर्यात होता था, वहीं अचानक यह समस्या कैसे आई? यह विचार का विषय है। विश्व में खाद्यान्नों के उत्पादन पर विचार किया जाए तो भारत की स्थिति बहुत ही चिंतनीय है। जहां पड़ोसी चीन में प्रति हेक्टेयर उत्पादन 80–100 क्विंटल है, वहीं हमारे देश में मात्र 40–50 क्विंटल है। इस संबंध में प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ स्वामी नाथन ने कहा कि हमारे देश में कृषि भूमि की उपज क्षमता में 100–200 प्रतिशत वृद्धि की संभावना है अर्थात हम चीन से भी अधिक उत्पादन कर सकते हैं।

समस्याएं

जैविक खेती की प्रगति में कई बाधाएं हैं। जागरूकता की कमी विपणन से जुड़ी समस्याएँ, सहायता के लिये अपर्याप्त सुविधाएं, अधिक लागत होना, जैविक कच्चा माल के विपणन की समस्याएँ, वित्तीय समर्थन का अभाव, निर्यात की मांग को पूरा करने में अक्षमता आदि उन बाधाओं में शामिल हैं। इन बाधाओं को दूर करने के लिए केंद्र से लेकर पंचायत स्तरों तक वित्तीय तथा तकनीकी समर्थन की व्यापक तौर पर व्यवस्था करने की जरूरत है।

किसानों के पास कंपोस्ट तैयार करने के लिए आधुनिक तकनीकों के इस्तेमाल की जानकारी के साथ ही उसके प्रयोगों की जानकारी का भी अभाव है। ज्यादा से ज्यादा वे यही करते हैं कि गड्ढा खोदकर उसे कचरे की कम मात्रा से भर देते हैं। अक्सर गड्ढ़ा वर्षा के जल से भर जाता है और उसका परिणाम यह होता है कि कचरे का उपरी हिस्सा पूरी तरह कंपोस्ट नहीं बन पाता और नीचे का हिस्सा कड़ी खल्ली की तरह बन जाता है। जैविक कंपोस्ट तैयार करने के बारे में किसानों को समुचित प्रशिक्षण देने की जरूरत है। कंपोस्ट अथवा जैविक खाद के इस्तेमाल पर भी कम ध्यान दिया जाना है। जैविक पदार्थ उन महीनों में फैले होते हैं जबकि मिट्टी में आवश्यकतानुसार नमी मौजूद नहीं होती है। इस प्रक्रिया में पूरा खाद कचरे में बदल जाता है निश्चित तौर में इस विधि में अधिक श्रम और लागत की जरूरत होती है, किंतु निश्चित परिणाम प्राप्त करना जरूरी होता है।

भारत में जैविक उत्पादों की स्वीकृति और उनके प्रमाणन के लिए नियम और विनियमन

जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक पर्यावरण अनुकूल है। भारतीय किसान हरित क्रांति की शुरूआत से पहले तक खेती के पर्यावरण–हितैशी तरीके का प्रयोग करते रहे हैं, जो पश्चिमी देश में खेती की कृत्रिम विधियों पर आधारित थी। कई कारणों से छोटे और सीमांत किसानों ने अब तक कृत्रिम खेती की पूरी तरह नहीं अपनाया है और वे कमोबेश पर्यावरण–हितैषी पारंपरिक प्रणाली का अनुसरण कर रहे है। वे स्थानीय अथवा अपने खेतों से प्राप्त पुनर्जीवन संसाधनों का इस्तेमाल करते हैं और स्वनिर्मित पारिस्थितिकीय और जैविकीय प्रक्रियाओं का प्रबंधन करते हैं। खेती करने और फसलों, पशुधन तथा मानव के लिए पोशक उत्पादों के स्वीकार्य स्तरों के लिए यह आवश्यक हो गया है और बीमारियों से बचाने के लिए जरूरी है जो जैव–रसायनों और जैव–उर्वरकों के इस्तेमाल से संभव हो सकता है। ऐसी स्थिति में खेती से जुड़े समुदाय को जैविक कृषि की विधियों से अवगत कराने से इस दिशा में कठिनाइयां कम हो सकती हैं।

जैविक खेती के उद्देश्य

जैविक खेती के दो उद्देश्य है। पहला उद्देश्य प्रणाली को टिकाऊ बनाना दुसरा उसे पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाना है। इन दोनो लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए ऐसे मानक तैयार करने की जरूरत है जिनका अनुसरण हो। भारतीय कृषि में शुद्ध जैविक खेती को अपनाकर रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में कमी लाने की संभावना मौजूद है। जैविक खेती को अपनाने के लिए समन्वित पोषण प्रबंधन, समन्वित कीटनाशक प्रबंधन और जैविक नियंत्रण विधियों को सशक्त करने की जरूरत है। ताकि रसायनों की जरूरतों में कमी हो सके। इस संदर्भ में कृषि विशेषज्ञ डॉ एम एस स्वामीनाथन का कहना है कि एक भूखा व्यक्ति एक क्रुद्ध व्यक्ति होता है और यदि संयोग से एक भूखा व्यक्ति एक युवा व्यक्ति होता है तो वह हमारे बीच एक संभावित आतंकवादी होता है। यह बात प्रख्यात वैज्ञानिक प्रो पी के छोकर ने वर्ष 2003 में चन्द्रशेखर महाविद्यालय और प्रौद्योगिकी कानपुर में भारतीय मृदा विज्ञान सोसाइटी के 68वें वार्षिक सम्मेलन के दौरान डॉ आर वी टमहाने स्मारक व्याख्यान देने के दौरान कही थी। भारतीय कृषि ने इको–फार्मिंग जैविक खेती प्राकृतिक खेती, जैव गतिविज्ञान खेती आदि जैसी खेती की अभिनव अवधारणाओं को जन्म दिया। इन परंपराओं के कारण हम प्रकृति के निकट पहुंचते हैं।

जैविक खाद बनाने की विधि

उपर्युक्त संदर्भ में कृषि उत्पादन में परिर्वतन की आवश्यकता है अर्थात रासायनिक खेती की जगह पुनः जैविक खेती पर ध्यान देना अपेक्षित है। जैविक कृषि खेती की पुरानी पद्धति है जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके जैविक खाद तैयार किया जाता है। इसमें विशेष रूप से कृषि

से उत्पादित वैसे पदार्थ, जिनका उपयोग खाद्यान्नों के तौर पर नही होता। उन पदार्थों को प्रकृति समस्त सरल विधि से खाद तैयार किया जाता है। इस संबध में अनंत काल से गांवों में एक कहावत प्रचालित है– केंचुए किसान के मित्र होते हैं। यह अब वर्तमान में कृषि वैज्ञानिकों ने प्रमाणित कर दिया है कि केंचुए खेती की उर्वरता बढ़ाने में जो सहायता करते हैं वह सामान्य यांत्रिक रूप से नहीं की जा सकती है। केंचुए की एक प्रजाति अफ्रीकन नाइट क्राउलर एक घंटे में सौ बार भूमि के अंदर चक्कर लगाती है। इस प्रक्रिया द्वारा भूमि की उर्वरा प्रचुर मात्रा में बढाता है।

केंचुए से जैविक खाद का निर्माण वर्तमान सदी की देन है जिसमें इस जीव को एक उत्प्रेरक की तरह उपयोग किया जाता है। वैसे तो केंचुए की अनेक प्रजातियां उपलब्ध हैं किंतु जैविक खाद निर्माण के लिए अफ्रीकन नाइट क्राउलर (यूड्रिलस यूजीनी) सर्वोत्तम है। यह काले रंग का 6–7 इंच लंबा केंचुआ होता है जो सामान्य से छोटा व रंग में भिन्न होता है। इसका प्रजनन बहुत सरल एवं सुगम है। पहली बार में इसके अंडे (छोटे केंचुएमय मिट्टी) का क्रय करके एक वैज्ञानिक विधि से निर्मित गड्ढे में रखकर प्रजनन कराया जाता है। सामान्यतया इस केंचुए के लिए 20–30 सेंटी ग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। किंतु 2–4 सेंटी ग्रेड कम–ज्यादा तापमान पर भी यह जीवित रह सकता है। इसके प्रजनन में कच्चा गोबर, काली मिट्टी के साथ आधार में रहती है।

जलकुंभी से जैविक खाद

पूरे उत्तर भारत में तालाबों में जलकुंभी ने अपना पड़ाव बना लिया है अर्थात ये जंगली खरपतवार पूरे तालाब से अपने आप में फैल जाती है। जलकुंभी पूरे देश में वैज्ञानिकों के लिए एक चिंता का विषय है क्योंकि दिन–पर–दिन इसका फैलाव एक कोने से दूसरी ओर बढ़ रहा है। ऐसे समय में इस खरपतवार का सदुपयोग खाद बनाने में किया जा सकता है। यहां एक अनुपयोगी जैविक पदार्थ को उपयोगी बनाना है। अंत तक जो खरपतवार समस्या बना हुआ था, उसका सदुपयोग हरी खाद/बनाने में अप्रत्याशित सफलता का सकारात्मक उदाहरण है।

जलकुंभी की खरपतवार/पत्तों को उसकी प्राकृतिक अवस्था में तालाब से काटकर ऐसे छोटे–छोटे टुकड़े में काटकर सुखा लें। फिर आवश्यकतानुसार अर्थात 8×6×4 का खड्डा बनाकर (जिसमे धरातल पक्का अवश्य होना चाहिये) इसकी निचली तह में गोबर की खाद (गीला गोबर) की सतह बना ले फिर छोटे–छोटे जलकुंभी की पत्तीयों को खड्ड में डालें, खड्डे को ऊपर तक भर दें तथा इसके ऊपर गीली काली मिट्टी की सतह बनाएं जिसमें गोबर भी मिला हो तो अच्छा है। इस मिश्रण में केंचुओं को पर्याप्त मात्रा (एक से डेढ़ किग्रा) डाल दें, फिर इस खड्डे को गोबर से लीप दे इस खड्डे को 50–60 दिन इस प्रकार ही रहने दें। गर्मी के समय दो तीन बार पानी छिड़काव करें बरसात मे भारी वर्षा से खड्डे को बचाए रखने के लिए उस पर छप्पर (फूस का अथवा तारपोलिन) डाल दे। जब केंचुए खाद बना लेते है अर्थात जलकुंभी की जैविक खाद बन जाती है तो केंचुए खड्डे के सतह पर आ जाते है खाद का रंग हल्का मटमैला हो जाता है इस खाद के मिश्रण को खड्डे से बाहर निकाल हल्की धूप मे सुखा ले खाद को यदि वाणिज्यिक स्तर पर बनाकर विक्रय करना है तो एक दो सेमी की छलनी में छान और सुखाकर छोटे बड़े थैलों में भर सकते है छलनी में केंचुए इकट्ठे हो जाए तो उन्हें पुनः उपयोग में ला सकते हैं। यहां यह स्पष्ट करना है कि केंचुए की खाद चाय की पत्ती जैसी, (1 सें मी के लगभग आकार की) आ जाए तो उसे पूर्ण रूप से सुखाकर थैलों में भरें (गीली खाद नमी के कारण सड़ सकती है)। शेष खाद को पुनः उपयोग में ला सकते हैं। यदि खाद का उपयोग अपने खेत में करना है तो सीधे खेत में डाली जा सकती है।

केंचुए की खाद में सामान्य कम्पोस्ट की खाद से 40–50 प्रतिशत अधिक पोषक तत्व होते हैं। साथ में एक और विशेषता होती है कि खेत को यह खाद अधिक उपजाऊ बनाती है। व्यावहारिक प्रयोग

से यह सिद्ध हो चुका है कि केंचुए की खाद के द्वारा सामान्य खाद से दुगना उत्पादन होता है। खाद को खेती में रबी की फसल में खरीफ की फसल के कटने के बाद 2–3 जुताई के बाद डालें। यह खेत की निचली सतह में न केवल नमी बनाए रखती है अपितु खेत की उर्वरा बनाए रखती है। (सत्यभान सारस्वत)

संदर्भ

1. सारस्वत, सत्यभान, ''जैविक खादो से कृषि उत्पादन में वृद्धि'', योजना, जनवरी 2011, पृ क्र 51–52.
2. शर्मा, कुलदीप, प्रधान,सुधीर, ''जैविक खेती समस्याएं और संभवनाएं'', योजना, जनवरी 2011, पृ क्र– 31–33.
3. माहेश्वरी, चौहान, ''भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि एवं ग्रामीण विकास'', रिसर्च लिंक–जून 2009, पृ क्र 139–141.

रासायनिक शोध का नया दर्शनः हरित रसायन

अमर श्रीवास्तव एवं प्रान्जल चन्द्रा
डी ए वी कॉलेज, कानपुर, उत्तर प्रदेश
बुसान राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, बुसान, कोरिया गणराज्य, कोरिया

रसायन विज्ञान ने मानव जीवन को अत्यन्त सुखमय बनाया है। उसने अनेक जीवनोपयोगी पदार्थो का निर्माण किया है जिनका उपयोग दवायें एवं स्वास्थ्य–रक्षा, रंग बहुलक, वस्त्र, कृषि रसायन, भोजन में रसायन, सौंदर्य प्रसाधन, साबुन एवं अपमार्जक, स्मार्ट मैटीरियल, प्रोपैलेन्ट आदि के रूप में बहुतायत से होता है।

दवाओं एवं एंटीबायोटिक्स की खोज ने जीवन को दीर्घायु बनाने के साथ–साथ उसे गुणवत्ता पूर्ण भी बनाया है। कृत्रिम रंगों ने जीवन को रंगों से भरा है। इसी प्रकार अनेक कृषि रसायनों, उर्वरकों, कीटनाशकों एवं परिरक्षकों ने भूखे पेट को भरने में मदद की है। वस्त्रों, साबुन एवं अपमार्जकों, सौन्दर्य प्रसाधनों, प्लास्टिक एवं अन्य बहुलकों आदि के बिना जीवन की कल्पना भी मुश्किल है। वास्तव में रसायन विज्ञान ने चमत्कार किया है और इसमें कोई संदेह नहीं है।

विकास की कीमत

अधिकांश रसायनों का उत्पादन वृहद स्तर पर होता है। औद्योगिक घराने जो इन रसायनों का निर्माण करते हैं वे इसे कम मूल्य पर निर्मित करना चाहते हैं। परन्तु इस निर्माण प्रक्रिया में जल, मृदा एवं वायु में उत्सर्जित जहरीले रसायनों का ध्यान नहीं रखा जाता है। फलस्वरूप जल, मृदा एवं वायु प्रदूषण होता है और धरती पर सभी प्रकार का जीवन प्रभावित होता है। कुछ उदाहरण हैं–

- 1960 में जापान में अनेक नवजात शिशुओं में कई जन्मजात बीमारियां पायी गईं जिसका कारण थैलिडोमाइड नामक दवा बताई गयी।
- 1962 में प्रसिद्ध कीटनाशक पर उंगली उठाई गयी।
- 1970 में ओजोन छिद्र के लिये मुख्य रूप से क्लोरो फ्लोरो कार्बन्स को जिम्मेवार बताया गया।
- 1980 में अमेरिका के टाइम्स समुद्रतट के मृदा प्रदूषण के लिये प्रमुख खरपतवार नाशक 2,4–डी एवं 2,4,5–टी को जिम्मेवार माना गया।
- 1984 में भारत में घटी भोपाल गैस त्रासदी के लिये मेथिल आइसोसायनेट खलनायक सिद्ध हुआ।

इस प्रकार की अनेक घटनाओं ने लोगों को कृत्रिम रसायनों के दुष्प्रभाव की तरफ ध्यान आकृष्ट किया। उनके विरोध के फलस्वरूप ही अनेक देशों में क्लीन वाटर एक्ट, रिर्सोस रिकवरी एण्ड कन्जर्वेशन एक्ट, पालुसन प्रिवेंशन एक्ट आदि बने ताकि रासायनिक उद्योगों पर अंकुश लगाया जा सके।

यह सही है कि धरती को काफी नुकसान पहुंचाया जा चुका है। परन्तु स्थिति इतनी निराशाजनक नहीं है कि हम धरती को बचा नहीं सकते। इस विषम परिस्थिति ने सरकार, नीति निर्धारकों के

साथ–साथ वैज्ञानिकों का भी ध्यान आकृष्ट किया एवं इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रासायनिक शोध में एक नए दर्शन का जन्म हुआ। यह था–

हरित रसायन

इस दर्शन का विकास मुख्य रूप से पॉल अनास्टास एवं जॉन वार्नर ने किया था। पॉल अनास्टास को हरित रसायन का पिता कहा जाता है।

हरित रसायन क्या है?

"हरित रसायन उन रासायनिक पदार्थो एवं प्रक्रियाओं के उपयोग एवं विकास पर जोर देती है जिसमें जहरीले प्रदूषण कारक पदार्थो का उपयोग एवं उत्पादन न हो या न्यूनतम हो।"

अतः हरित रसायन प्रदूषण को उसके उद्‌गम स्थल पर ही रोकने या घटाने पर जोर देता है। यह किसी रासायनिक प्रक्रिया की क्षमता बढ़ाने एवं उससे होने वाले नुकसान को घटाने पर जोर देता है। यह पर्यावरण रसायन से भिन्न है जो वातावरण में होने वाले रासायनिक गतिविधियों पर केन्द्रित है।

हरित रसायन कोई नया रसायन विज्ञान नहीं है। यह रसायनों एवं रासायनिक विधियों के दुष्प्रभावों को घटाने की ही विधि है। हरित रसायन रसायन शास्त्र की सभी शाखाओं–कार्बनिक, अकार्बनिक, भौतिक, विश्लेषणात्मक रसायन, जैव कार्बनिक, जैव अकार्बनिक, जैव रसायन, औषधि रसायन, बहुलक रसायन आदि पर लागू होती है।

यह सर्वविदित है कि रासायनिक उद्योगों के द्वारा हमारे वातावरण में सर्वाधिक प्रदूषण फैल रहा है। इनके द्वारा उत्पादित अपशिष्ट पदार्थो के निस्तारण में बहुत सा समय, प्रयास एवं धन व्यय होता है। अतः हरित रसायन में इस बात के प्रयास करे जाते हैं कि निर्माण की ऐसी विधियों को विकसित किया जाए कि इनमें अपशिष्ट पदार्थ न्यूनतम मात्रा में निर्मित हो, वातावरण में इनका प्रभाव न्यूनतम हो तथा इनका निस्तारण भी सुविधाजनक हो। इन विधियों के द्वारा रसायनों के निर्माण की लागत घटती है। अतः हरित रसायन का अपना अर्थशास्त्र भी है।

1980 के पूर्व रसायन वैज्ञानिकों को अधिकांश रसायनों के विषाक्त प्रभावों के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं थी परन्तु अब उन्हें इस संदर्भ में पर्याप्त जानकारी है। जिसके कारण वे निर्माण की ऐसी विधियों का सृजन करते हैं जिसमें विषाक्तता के कारणों का निवारण किया जा सके।

हरित ही क्यों ?

हमें प्रकृति से सीखना चाहिए। प्रकृति हरी है। प्रकृति सुन्दर है। हरे पौधे सर्वसुलभ ऑक्सीजन एवं जल से सर्वाधिक महत्व के उत्पाद–हमारा भोजन (ग्लूकोस) एवं प्राणदायिनी ऑक्सीजन गैस का निर्माण करते हैं।

क्या ऐसा ही प्रयास हमारा नहीं होना चाहिए?

जो जीवधारी हरे नहीं होते हैं वे अपना भोजन निर्मित नहीं कर पाते। साथ ही ऑक्सीजन गैस का भी निर्माण नहीं कर पाते। वे परजीवी या मृतोपजीवी होते हैं। हमें परजीवी या मृतोपजीवी नहीं बनना है!!

हरित रसायन के मूल सिद्धान्त

हरित रसायन को इसके 12 मूल सिद्धान्तों के द्वारा समझा जा सकता है:

1. अपशिष्ट पदार्थो के उत्पादन एवं बाद में उनके निस्तारण के कही बेहतर हैं कि अपशिष्ट पदार्थो का निर्माण ही न हो।

2. निर्माण की ऐसी विधियों का विकास किया जाए जिससे अभिकारकों का अधिकतम भाग उत्पाद में परिवर्तित हो जाए।
3. जहां तक संभव हो निर्माण की ऐसी विधियों का विकास एवं सुरक्षित पदार्थो का उपयोग किया जाए जिससे मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर न्यूनतम दुष्प्रभाव पड़े।
4. ऐसे रासायनिक पदार्थो का निर्माण किया जाए जिनमें वांछित गुण तो हों परन्तु उनमें विषाक्तता न्यूनतम हो।
5. विलायकों, पृथककारी रसायनों एवं अन्य सहायक रसायनों आदि का न्यूनतम उपयोग किया जाए या उन विलायकों का उपयोग किया जाए जो नुकसान रहित हों।
6. अधिकाधिक अभिक्रियाओं को सामान्य तापमान एव दाब पर किया जाना चाहिए जिससे पर्यावरण को क्षति न हो तथा आर्थिक हितों की पूर्ति हो सके।
7. जहां तक संभव हो वहां नवीकरणीय संसाधनों का उपयोग किया जाए।
8. यौगिकों के अनावश्यक व्युतपन्न बनाने से बचना चाहिए (जैसे ब्लॉकिंग समूह को लगाना एवं उसे हटाना) क्योंकि इससे अनावश्यक अपशिष्ट तैयार होता है।
9. उत्प्रेरक (विशेष रूप से जैव उत्प्रेरक) जितने अधिक विशिष्ट हों उतना बेहतर परिणाम होंगे।
10. रासायनिक पदार्थ प्राकृतिक रूप से अपघटित होने चाहिए जो नुकसान रहित पदार्थ में अपघटित हो जाएं।
11. विषाक्त पदार्थो के निर्माण के पूर्व ही उसकी लगातार जांच एवं रोकथाम की व्यवस्था की जानी चाहिए।
12. ऐसे रसायनों का प्रयोग करना चाहिए जिससे आग, विस्फोट, गैसों का रिसाव आदि से बचा जा सके।

हरित रसायन में प्रयोग किये जाने वाले महत्वपूर्ण तकनीक

1. हरित अभिकर्मकों, हरित विलायकों एवं हरित उत्प्रेरकों का रासायनिक निर्माण में उपयोग।
2. सूक्ष्म तरंगों की मदद से निर्माण।
3. पराध्वनि की मदद से निर्माण।
4. प्रावस्था स्थानान्तरण उत्प्रेरण।
5. कार्बनिक निर्माण में जैव उत्प्रेरण।
6. जलीय माध्यम में निर्माण।
7. आयनिक द्रवों का विलायकों के रूप में प्रयोग।
8. ठोस अवस्था में कार्बनिक निर्माण।

हरित रसायन के मूल स्तंभ

1. उत्प्रेरित अभिक्रियाएं

अनेक रासायनिक अभिक्रियाओं को तापमान एवं दाब की सामान्य परिस्थितियों में उत्प्रेरक, विशेषरूप से एन्जाइम उत्प्रेरक की उपस्थिति में कराया जा सकता है। ये अभिक्रियाएं अधिक सक्षम एवं अधिक विशिष्ट होती हैं। साथ ही उत्प्रेरक पुनः चक्रीत हो जाते हैं। चूंकि उत्प्रेरक की उपस्थिति में रासायनिक अभिक्रियाएं कम ताप एवं दाब पर सम्पन्न हो जाते हैं जिससे ऊर्जा की कम खपत होती है तथा आर्थिक लाभ की स्थिति प्राप्त होती है।

अभिक्रियाओं में हेक अभिक्रिया, सुजुकी अभिक्रिया, सोनोगसीरा अभिक्रिया, स्माइल अभिक्रिया आदि अनेक ऐसे उदाहरण है जो सामान्य दशाओं एवं नुकसान रहित विलायकों में आसानी से हो जाते हैं साथ ही उत्प्रेरक पुनः प्राप्त हो जाते हैं। आधुनिक कार्बनिक रसायन शास्त्र के विकास में उक्त अभिक्रियाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

2. कार्बनिक विलायकों के स्थान पर अन्य विलायक

कार्बनिक रासायनिक निर्माण में प्रायः क्लोरीन युक्त विलायकों का प्रयोग होता है जैसे क्लोरोफार्म, कार्बन टेट्राक्लोराइड, डाईक्लोरोमीथेन, एथिलीन क्लोराइड, आदि। परन्तु ये विलायक विषाक्त हैं तथा कोशिकाओं एवं ऊतकों को नुकसान पहुंचाते हैं।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि प्रकृति हमेशा विलायक के रूप में जल को स्वीकार करता है। अतः जल एक सर्वमान्य विलायक है। इसी प्रकार सुपर क्रीटिकल द्रवों का भी प्रयोग बहुतायत से हो रहा है। जल एवं अन्य सुपर क्रीटिकल द्रव अभिक्रिया के दौरान एवं इसके उपरान्त वाष्पन पर नुकसान रहित गैसों का निर्माण करते हैं।

विलायक के रूप में आयनिक द्रवों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

3. नवीकरणीय संसाधनों का उपयोग

गन्ना भी एक उत्कृष्ट नवीकरणीय संसाधन हो सकता है। इससे इथेनॉल बनाया जाता है जो अनेक कार्बनिक पदार्थो के लिये शुरूआती पदार्थ है। इसी प्रकार गन्ने के अपशिष्ट पदार्थ–बेगास से ग्लिसरॉल, ब्यूटेनॉल, साइट्रिक अम्ल, एकोनिटिक अम्ल आदि प्राप्त होता है।

चूंकि कार्बोहाइड्रेट (बायोमास) से प्राप्त होने वाले यौगिक जल में घुलनशील होते हैं अतः उपर्युक्त परिवर्तन जलीय माध्यम में ही सम्पादित होंगे। इसलिये कोयले एवं पैट्रोलियम से होने वाले परिवर्तन विधियों को अब इस नए परिप्रेक्ष्य में परिवर्तित करना होगा।

4. परमाणु मितव्ययता

हरित रसायन में इस बात का प्रयास किया जाता है कि किसी रासायनिक अभिक्रिया में अपशिष्ट पदार्थ न बने या न्यूनतम बनें। दूसरे शब्दों में, सभी अभिकर्मक पूरी तरह से एक ही उत्पाद में परिवर्तित हो जाएं। इससे इन अपशिष्ट पदार्थो के निस्तारण की समस्या से भी बचा जा सकेगा।

हरित रसायन में परमाणु मितव्ययता इसीलिये योगात्मक अभिक्रियाओं, आणविक पुनर्विन्यास अभिक्रियाओं एवं पेरीसाइक्लिक अभिक्रियाओं पर अधिक जोर देता है जिसमें एक ही उत्पाद बनता है। इन अभिक्रियाओं में परमाणु मितव्ययता 100 प्रतिशत होता है। इसके वितरीत प्रतिस्थापन अभिक्रियाओं एवं विलोपन अभिक्रियाओं में यह प्रतिशत काफी कम होता है।

5. उत्पादों का प्राकृतिक अपघटन

पिछले कई दशकों में रसायनविदों ने अनेक नए एवं वांछित गुणों वाले अणुओं का निर्माण किया परन्तु उन्होंने इसका ध्यान नहीं रखा कि वे प्राकृतिक रूप से अपघटित हो सकें तथा पुनः चक्रीत हो सकें। लेकिन सभी प्राकृतिक उत्पाद समय के साथ नष्ट हो जाते हैं तथा वातावरण में पुनः चक्रीत हो जाते हैं।

क्लोरो फ्लोरो कार्बन्स, सामान्य परिस्थितियों में अत्यन्त स्थायी अणु होने के कारण, ओजोन छिद्र के लिये जिम्मेवार माने जाते हैं। इसी प्रकार पॉलीक्लोरो कार्बनिक कीटनाशी जैसे डी डी टी, एल्ड्रिन आदि अणुओं के स्थायी प्रकृति के कारण इसने पूरे खाद्य–जाल को प्रभावित किया है। इसी वजह से इन कीटनाशकों को जीनोबायोटिक कहते हैं। प्रसिद्ध खरपतवारनाशी 2,4–डी एवं 2,4,5–टी आसानी

से अपघटित हो जाते हैं। परन्तु इनके अपघटित उत्पाद कैंसर उत्पन्न करने वाला पदार्थ है। परिणामतः इन सभी को प्रतिबन्धित करना पड़ा। परन्तु ये वातावरण को नुकसान तो पहुंचा ही चुके हैं।

मानव जीवन की जीवन रेखा बन चुके प्लास्टिक, प्राकृतिक रूप से अपघटित न होने के कारण, आज प्रदूषण के सबसे बड़े कारक हैं। इसके विपरीत, साबुन एवं अपमार्जक प्रकृति में आसानी से अपघटित हो जाते हैं। परन्तु जिन सूक्ष्म जीवों के द्वारा जलीय तंत्र में इनका अपघटन होता है वे उस तंत्र के घुलित ऑक्सीजन की मात्रा अत्यन्त घटा देते हैं। अतः प्राकृतिक रूप से अपघटित होने के बावजूद, साबुन एवं अपमार्जक एक गंभीर जल प्रदूषक है।

जब भी कोई नया उत्पाद निर्मित किया जाता है तो इस बात की आशंका सदैव रहती है कि उसमें विषाक्तता हो। लेकिन यदि हमें इस विषाक्तता का कारण पता चल जाए तो आणविक संरचना में उचित परिवर्तन करके विषाक्तता को समाप्त या कम किया जा सकता है।

उदाहरण के लिये डी डी टी की संरचना में परिवर्तन करके मिथाक्सी क्लोर नामक कीटनाशी तैयार किया गया जो डी डी टी की समान ही कीटनाशी क्षमता रखता है परन्तु वातावरण एवं मानव के लिये विषाक्त भी नहीं है एवं आसानी से अपघटित हो जाता है।

6. ऊर्जा दक्ष प्रक्रियाएं

धातुकर्म एवं अन्य रासायनिक उद्योगों में ऊर्जा की अत्यधिक खपत होती है। सम्पूर्ण ऊर्जा का 1/7 भाग इन उद्योगों पर खर्च होता है। हरित रसायन में ऐसी रासायनिक विधियों पर बल दिया जाता है जिसमें ऊर्जा की न्यूनतम खपत हो। इसके लिये सक्षम एवं जैव उत्प्रेरक जो पुनर्प्राप्त हो सके तथा ताप एवं दाब की सामान्य परिस्थितियों पर सम्पन्न हो सके। साथ ही, आसवन, वाष्प आसवन, क्रिस्टलीकरण, उर्द्धपातन आदि से बचना चाहिए एवं सूक्ष्म तरंगो एवं पराध्वनि तरंगो की मदद भी रासायनिक संश्लेषण में ली जानी चाहिए।

हरित रसायन का भविष्य

यह समय की मांग है कि रासायनिक पदार्थो के उपयोग एवं निर्माण में हरित रसायन के मूल सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाए। यदि हम इनका प्रयोग बुद्धिमत्तापूर्ण तरीके से करेंगे तो हम अपने पर्यावरण, अर्थ एवं समाज का भला कर सकेंगे।

अन्त में

वास्तव में हरित रसायन एक वैज्ञानिक सोच, कार्यशैली एवं रासायनिक दर्शन है। अपने पर्यावरण, अर्थ एवं समाज की संरक्षा ही इसका मूल है। संभव है कि कुछ लोगों को एक सूक्ष्म कदम प्रतीत हो परन्तु व्यक्ति, समाज एवं मानवता के लिये यह किसी महान प्रयास से कम नही !

भारतीय वादन, गायन, संस्कार, पनघट एवं प्याऊ परम्परा का सवांहक हरियाणवी बाघ–घड़ा

दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार
रोहतक, हरियाणा
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

विशालतम देश भारत में नाना प्रकार की सभ्यताओं एवं संस्कृतियों का उद्‌भव हुआं कुछेक आज भी इतनी विकसित हैं कि जिनका अधुनातन रूप देखकर कोई उनके हजारों वर्षों पुराने रूप की कल्पना पर भी विश्वास नहीं कर सकता। इनमें से कुछेक का तो केवल नाम मात्र ही शेष रह गया और यदि है भी तो अविकसित रूप में।

हरियाणा प्रदेश किसान प्रदेश के नाम से विख्यात रहा है। सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से अपनी गौरवमयी परम्पराओं के फलस्वरूप यह प्रदेश भारत में अन्य प्रदेशों से अपेक्षाकृत अपना अलग स्थान रखता है। पुरातत्वेताओं का विचार है कि कभी इस प्रदेश के कुरूक्षेत्रा, फतेहाबाद और रोहतक के भागों में हड़प्पा और मोहनजोदडों जैसी ही प्रागैतिहासिक बस्तियां विद्यमान थी। इतिहास में इस प्रदेश में विभिन्न स्थानों का पौराणिकता से जहाँ सम्बन्ध बताया गया है। वहीं दूसरी ओर यहाँ के वीरों के वीरतापूर्वक कृत्यों से भरपूर अनेक गौरवपूर्ण चरित्रा इतिहास में चित्रित किए गए हैं।

ललित कलाएं इस संस्कृति के आंचल में जन्मी पनपीं और विकसित हुई हैं। यही कारण है कि इस प्रदेश की संस्कृति सभी रंगों में रंगी है। जिसमें मानव के लोक जीवन की वास्तविक झांकी प्रतिबिम्बित होती है। इसकी संस्कृति यहाँ के मानव के रक्त में ही जैसे समादिष्ट हो गई है जो आज के हरियाणा के लिये संस्कार बन गई है, जिस की सीमा को वह आसानी से उलांघने में आज भी अपने को या तो असमर्थ पाता है, या वह उसका उल्लंघन करने की सामर्थ्य अभी भी नहीं बटोर पाया है। कहने का तात्पर्य यही है कि जैसे संस्कार ही उसकी धरोहर है, और वह उनका निर्वहन करने में ही अपने जीवन को सार्थक समझता हो। यहां के जीवन में सांस्कृतिक दृष्टि से हर वस्तु अपना विशेष स्थान रखती है और यहां के निवासी उसे संस्कार समझकर परम्परागत उसका प्रयोग करते हैं। घड़ा जिसे प्रदेश में विभिन्न बोलियों में विभिन्न नामों से पुकारा जाता है, यद्यपि एक साधारण सी वस्तु है, पर मानव अपनी प्रारंभिक अवस्था से आज तक इसका प्रयोग करता आ रहा है। यहाँ के सांस्कृतिक जीवन में इसको अनेक अवसरों पर महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। "जन्म" से लेकर मरण तक के सभी संस्कारों में विभिन्न क्रियाओं में इसका उपयोग किया जाता है।

प्रतीक रूप में मंगल घट (कुंभ अथवा कलश) की प्रतिष्ठा हिन्दू धर्म के प्रत्येक सम्प्रदाय में की गई है। सज्जित कलश कला और संस्कृति का ही प्रतिनिधि नहीं, सृष्टि तथा पूर्व व्यक्तित्व का भी प्रतीक है। मंगल घट मंगल–भावना का प्रतीक है। हमारे सभी सांस्कृतिक कृत्यों में सर्वप्रथम मंगल–घट की स्थापना की जाती है।

जल से पूरित कलश में वायु की विद्यमानता भी अनिवार्य है। उसके मुख से जल की प्राप्ति होती है। जल जीवों का प्राण का रक्षक है अतः जलदायी मुख विष्णु (पालनकर्ता) का प्रतीक होने के नाते सप्तद्वीप वसुन्धरा, वेद, सोलह मातृकाओं, मातृशक्ति, सूर्य आदि सब से युक्त है इसी कारण से कलश कभी जलविहीन नहीं रखा जाता। इन सबकी विद्यमानता होने पर भी मूलतः वह जल, वायु तथा सूर्य का प्रतीक ही माना जाता है। जल और वायु के परस्पर मिलन का माध्यम सूर्य है। सूर्य ज्ञान भी है और शक्ति भी।

समस्त मांगलिक कार्यों से पूर्व कलश की स्थापना की जाती है।

पाशपाणे, नमस्तुभ्यं पदि्मनीजीवः नायकः।

प्रधानपूजनं यावतावत्वं सन्निधो भव।।

कलश विधा, ज्ञान, ब्राह्मंड, देवगण, सूर्य चन्द्रमा और जीव आदि सभी का प्रतीक है।

भारत में पूजा से पूर्व कलश स्थापना की जाती है। पूजा स्थान से अलग घर के प्रवेश द्वार पर भी जल से भरा कलश रखना शुभ मानते हैं। विवाह के अवसर पर तो केले और पान से सजा जलयुक्त कलश नारियल से ढककर रखा जाता है। उसकी गर्दन में बन्धा कलावा यों तो कल्याण और शुभ कर्म का सूचक होता है किन्तु कलश की गर्दन में बन्धा वह ऐसा पाश है जो मंगलमय आयोजन में समाज को स्नेह सूत्रा में बांधने का घोतक माना जाता है। कलश को जल, वायु, तथा सूर्य का प्रतीक मानते हैं। सृष्टि की उत्पति के सम्बन्ध में एक रोचक कथा है।

सृष्टि के उद्भव से पूर्व आकाश, पर्वत, नक्षत्रा, लक्ष्मी आदि सब विष्णु के उदरस्थ थे। विष्णु वर्षों तक समुद्र में सोये। अतः सब कुछ समुद्र के भीतर था। विष्णु के पेट में ब्रह्मा ने प्रवेश किया। विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल पर स्वेच्छा से ब्रह्मा प्रकट हुए। उन्होंने पृथ्वी, वायु, पर्वत, वृक्ष, मनुष्य सर्प और समस्त जीवधारियों की रचना की। प्रकाश के लिए ब्रह्मा ने सूर्य का आवाह्न किया। ब्रह्मा के प्रथम मुख से ऋचाएं प्रकट हुई– फिर यजुः, साम तथा आथर्ववेद प्रकट हुए।

प्रत्येक धार्मिक कार्य के प्रारंभ में जल से भरे कलश की स्थापना इन सबके प्रतीक रूप में की जाती है। कलश का जल जलार्णव का प्रतीक है– जिससे धीरे–धीरे सृष्टि का उद्भव हुआ अतः संसार के सभी वैभव, देवी देवता, समुद्र पर्वत, प्राकृतिक तथा वेद और पुराण आदि के उद्भव का प्रतीक कलश का जल माना जाता है।

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रूद्र समाश्रितः।

मूले तस्य स्थिते ब्रह्म मध्ये मातृगणा स्मृतः।

कुक्षां तु सागरास्सप्त सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोथ यजुर्वेदो समावेदो ह्यथर्वण।

अगे च सहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः।।

सामान्यतः जल से पूर्ण कुम्भ का दर्शन शुभ तथा यात्राा आदि कार्यो में सफलता का सूचक माना जाता है। देवताओं और पितरों पर भी जल कलश चढ़ाने को पवित्रा कृत्य माना जाता है। शिव की मूर्तियों पर जल कलश से नित्य अभिषेक कराया जाता है। वर्ष का प्रारंभ नवरात्रा की घट–स्थापना से होता है। जल से भरा घट जीवन की पूर्णता का प्रतीक है। जल से पूर्ण घट की अर्चना इसी सत्य का संकेत है कि जीवन की पूर्णता भारतीय संस्कृति को प्रमुख साधना है।

जल से पूर्ण मिट्टी का घट जीवन की प्रसवधर्मिता और सात्विकता का प्रतीक है। हमारे सभी धार्मिक और सांस्कृतिक कृत्यों में जीवन की सृजनात्मक समृद्धि की कामना की जाती है। मिट्टी और

जल उसके आधारभूत संकेत है। मंगल घट के मुख में पत्ते और पुष्प रखे जाते हैं, जो उत्पादनशीलता के प्रतीक हैं। सांस्कृतिक जीवन में मिट्टी जीवन के प्राकृतिक यथार्थ का प्रतीक है।

मंगलकारी पूर्णघट के उद्भव और अर्थ से सम्बन्धित कुछ समस्याएँ है जिनका अभी निदान होना शेष है। पानी से भरा मिट्टी का एक घट, स्वस्तिक और अन्य अलंकरणों से सज्जित तथा जिसका मुख आम्र, वत, अश्वत्य आदि की पत्तियों से ढका हुआ और इससे ऊपर नारिकेल फल रखा हुआ आज के समय में पूर्णघट के रूप में हमारे दरवाजों पर रखे जाते हैं। हमारे धार्मिक अनुष्ठानों और संस्कारों में इनका उपयोग होता है। ये पूजे जाते हैं। सिंधु संस्कृति की एक सील पर, भरहुत, साँची, नागार्जुनी कोंडा, मथुरा, अमरावती, कपिशा, सारनाथ और अनुराधापुर आदि स्थानों के मूर्ति शिल्प पर हमें इस मंगल घट का चित्रण–उत्कीर्णन मिलता है। पश्चिमी भारत के चैत्य घरों के भीतरी मण्डल का प्रतीक मान कर पूर्णघट की स्थापना की जाती है। अर्थवेवद में धृत और अमृत से भरे पूर्ण कुम्भ का उल्लेख मिलता है–

'एसा परिस्रतुः कुम्भ आ दघ्नः कलशैरगुः।
पूर्णा नारि प्रभर कुम्भमेतं धाराममृतने संमृताम...।।

अर्थात् इसमें पिघलते हुए रस का (कुम्भः) घड़ा (दघ्नः) दही के (कलशैः) कलशों के साथ आए हैं।

हे नर का हित करने वाली गृह पत्नी ! इस पूर्णघट में से अमृत से भरी हुई घी की धारा को भी भली प्रकार ला।

कमल के प्रतीक के साथ अथवा फूल पतियों से समुद्र कलश या कुम्भ सुख–सम्पत्ति और जीवन की पूर्णता का प्रतीक है। इस प्रतीक का पुरातन निरूपण हमे एक बर्तन से निकलते कमलवत् पादप से तथा बाद में पूर्ण पद्म, पद्मपर्ण, पुष्प, कुड्मल आदि के रूप में प्राप्त होता है। क्या हम यह अनुमान नहीं लगा सकते ..... कि सरोवर में पद्म स्वयं अपने आप उत्पन्न होता है, जो कि आदिम मानवों के लिए विस्मयजनक था क्योंकि वे पेड़ और पौधों को जमीन के अन्तर भाग से उगते हुए देखने के अभ्यस्त थे। उन आदिम मानवों ने ईश्वर के हाथों हुए इस चमत्कार को प्रत्यक्ष देखा। एतदनुसार पानी में बिना सत्य आप्लावित इस पद्म की स्थिति से उन आदिम मानवों के रहस्यमय जादूमारा 'विश्वास' को बल मिला।

अतएव उत्पत्ति केन्द्र वरुण की नाभि से जनित पद्म 'जीवन वृक्ष के रूप में', बाद में विष्णु की नाभि से उद्भूत पद्म का सृष्टि के जनक की पादपीठ के रूप में और तब युद्ध की नाभि से पद्म के रूप में वर्णन मिलता है। भारतीय सरोवरों में विपुल राशि में उत्पन्न होने वाला यह पदम् अच्छे सौभाग्य–समृद्धि को देने वाला है। पानी से ऊपर तक भरा हुआ पूर्णघट ईश्वर की उपस्थिति का प्रतीक है।

आदिम मानवों द्वारा यह पद्म अपने पुष्पों, कुड्मलों और पर्णों के साथ विभिन्न रूपो में प्रसतुत होता रहा। सम्भवतः यह प्रसूति के विभिन्न अंगों के प्रतीक रूप थे।

यह भी मानना होगा कि विश्व के सभी आदिम समाज में, गर्भधारिणी माँ जो नई सृष्टि करने जा रही है, उसे अति श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता था। मनुष्य ने अपने जीवन के प्रारम्भिक स्तर में एक नारी को बिना किसी शारीरिक क्षति के नौ मास अपनी कोख में भ्रूण को पालते और फिर उसी के समान एक अन्य मानव को जन्म देते देखा। जो उसके लिए रहस्यपूर्ण और अलौकिक था। इस प्रकार उस आदिम मानव ने, मातृदेवी के रूप में, उस नारी को जिसके द्वारा जीवन का उत्स मिलता है श्रद्धा प्रदान की। इस रूप में जल से ऊपर तक भरे हुए गोल कुम्भ की पूजा 'गर्भ धारिणी' मातृ देवी की पूजा थी।

आगे चल कर कुम्भ के मुख पर आम्र, वत, अश्वत्थ आदि के पत्तों को रख कर, उसके ऊपर नारियल फल–लक्ष्मी के प्रतीक स्वरूप जो ऐश्वर्य की देवी हैं – उसके रूप में विकास हुआ। 'पूर्णघट' के रूप में मातृ देवी की कल्पना, दार्शनिक आधार देकर लक्ष्मी के साथ जोड़ दी गई।

फूलपत्तियों से समृद्ध सुख–सम्पत्ति और जीवन की पूर्णता का प्रतीक है। घड़े में भरा जल जीवन या प्राण का रस है। (सलिलम् ऋतम्, आपः)। उनके मुख पर लहराती हुई पत्तियों और पुष्प जीवन के नानाविध आनन्द और उपभोग हैं। मानव ही पूर्णघट है। उसी प्रकार विश्व भी पूर्णकुम्भ है। ये दोनों ही पूर्णता के सूचक हैं। उस समष्टि पूर्ण से वह व्यष्टि पूर्ण उत्पन्न हुआ है। (पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते) ऋग्वेद में जिस पूर्ण या भद्र क्लश का उल्लेख है, वह सोम से भरा पात्रा है। सोम जीवन का अमर और मीठा रस है। अथर्ववेद में घृत और अमृत से भरे पूर्ण कुम्भ का उल्लेख है (अथर्व 3/1218)। घर को मंगल घट या मंगल क्लश कहा गया है। अथर्ववेद में पूर्णकुम्भ नारी का भी उल्लेख आया है इस अभिप्राय के मूल में ऐसा मांगलिक चिन्ह लिया जाता था जिसमें कोई सौभाग्यवती स्त्री मंगलघट लिये शोभा यात्रा में चलती थी। उसे उदयकुम्भिनी (ऋ 1/191/14 018) भी कहते थे। आज भी यह चिन्ह मांगलिक है। ललित विस्तार में मायादेवी की उद्यानयात्रा के प्रसंग में पूर्णकुम्भ कन्या का उल्लेख है। इसको गणना अष्टकन्याओं में होती थी जो राजकीय शोभा यात्रा का अंग थी। रामायण में रावण के साथ भी अष्टकन्याएं चलती थी। राम के अभिषेक के लिए ऐसी ही आठ कन्याएँ और सुग्रीव के अभिषेक के लिए सोलह कन्याओं को आमन्त्रित किया गया। उनमें एक पूर्णकुम्भ या उदयकुम्भ कन्या अवश्य रहती थी। युधिष्ठिर अपने नित्य आहिक में अष्टकन्याओं के दर्शन करते थे। मथुरा की शिल्पकला में इनका अंकन मिलता है। भारतीय कला में पूर्णकुम्भ का चित्रण भरहुत, साँची, अमरावती, मथुरा, कपिशा, नागार्जुनीकोण्ड, सारनाथ, अनुराधपुर आदि स्थानों में पाया जाता है। भारत के बाहर जावा के बोरोबुपूर स्तूप पर भी पूर्णघट का अंकन मिला है पश्चिमी भारत के चैत्य घरों के भीतरी मण्डल के स्तम्भों पर शीर्षक और अधिष्ठान में भी पूर्णघट दिखाया गया है। जैन हस्तलिखित ग्रन्थों में पूर्णघट की कल्पना मानवाकृति के रूप में जो नेत्रों से सुसाज्जित है और जिसमें फूलपत्तियों की मेखला में भी है, उसे मेखली घट कहते हैं। धार्मिक पूजा में पूर्णघट को ब्रह्मा, विष्णु और शिव का प्रतीक मानकर सबसे पहले उसकी स्थापना की जाती है। भारत की प्रादेशिक विभिन्न भाषाओं में घड़े या घट को कई नामों से पुकारा जाता है। हिन्दी में घड़ा अंग्रेजी में पिचर, पंजाबी में– घड़ा, झज्जर, कहड़ा, उर्दू में– झज्जर, कश्मीरी में– नोटू, सिन्धी में– दिलो, मठ या दिल्लो, मराठी में – कलशी, माठ, गुजराती में घडो, बंगला में – कलसो, कोल्शो असमिया में– कलह, कालाह, उडिया में मठिआ, तेलगू में–कुण्ड, तमिल में– कुड़म, मलयालम में –कुटम, कन्नड़ में मडिगे, गडिके और संस्कृत में कुम्भ नाम से सम्बोधित किया जाता है।

सामाजिक तथा धार्मिक संस्कारों से लेकर कला के क्षेत्रा में भी घड़े का उपयोग होता है। इसे कलश का प्रतीक माना जाता है। बच्चे के जन्म के अवसर पर जच्चा के लिए चरूआ रखा जाता है, जिसके लिए परम्परागत ननद को (पति की बहन को) उसका नेग देना पड़ता है। बच्चे के जन्म के कुछ दिनों बाद कुआं पूजा की जाती है। इस अवसर पर भी कलश के रूप में घड़े का उपयोग किया जाता है।

विवाह अवसर पर हरियाणा की राजस्थान के साथ लगती सीमा पर विवाह संस्कार में तो प्रारंभ से समाप्ति तक घड़े का उपयोग होता है। विवाह प्रारम्भ से पूर्व गणेश न्योतने (आमन्त्राण) की परम्परा अधिकांश परिवारों में है। इस कार्य में भी छोटे धड़े जिसे मांघा कहते हैं का उपयोग होता है।

राजस्थान की कुछ जातियों में तथा हरियाणा के साथ लगते कुछ जिलों में विवाह से पूर्व कन्या पक्ष की ओर से एक भोज दिया जाता है इसे कलसाजान के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस अवसर पर बारातियों को कलश घड़े से स्नान कराया जाता है।

पाणिग्रहण के अवसर पर वधू पक्ष की ओर से मण्डप के चारों कोनों पर घड़े रखे जाते हैं जिसे चेवरी कहते हैं। कुछेक जातियों में बारात के कन्या पक्ष के द्वार पर पहुँचने से पूर्व रंगों से चित्रित छोटे से घड़े में सुहाग का सामान भिजवाया जाता है जिसे बिरौना कहते हैं। इस प्रकार विवाह के अवसर पर अनेक प्रथाओं के निर्वहन में घड़े का उपयोग किया जाता है। इन सभी रीतियों के क्रियान्वन के क्षणों में गाये जाने वाले मंगल गीतों में इसका भी चित्राण सुनने को मिलता है। मण्डप के चारों कोनों पर रखे जाने वाले घड़े नाना प्रकार के बेल–बूटों से चित्रित होते हैं।

मरण संस्कार में भी इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। दाह संस्कार से लेकर गृह–शुद्धि कार्यों तक घड़े का उपयोग किया जाता है। दाह क्रिया के लिए नाई द्वारा इसमें अग्नि ले जाई जाती है। पितृ तृप्ति के लिए शमशान में पानी भरकर घड़े को किसी पेड़ से लटका दिया जाता है। दाह के बाद मृत की अस्थियाँ जिन्हें फूल कहते हैं। चुनकर एक घड़े में बन्द कर, तीर्थ–स्थलों में प्रवाहित करने को भेजी जाती है। इतना ही नहीं मृतात्मा को तृप्त करने के लिए पीपल पर पानी का एक पात्रा भी लटकाया जाता है, जो मिट्टी का बना होता है। यह घड़े के आकार का होता है जिसे धण्ट कहते है। शिवरात्रि के दिन स्त्रियाँ कोरे मिट्टी के कलश में जुल भर सिर पर रखकर शिवजी पर गीत गाती हुए जाती हैं, और जल चढ़ाती है।

पंजाब में विवाह के दिन जिस पानी से लड़के या लड़की को नहलाया जाता है, वो पानी भाभी द्वारा भरा जाता है। भाभी शगुन के रूप में उस समय दो दुपट्टे ले लेती है। जिसे सुब्बर कहा जाता है।। घडौली एक तरह से घड़े को ही कहा जाता है जिसको मौली बांधी जाती है और उसमें पानी भरकर उसमें थोड़े से चावल और केसर शगुन के रूप मे डाल देते हैं। घड़े को ढ़ककर उस पर नारियल चीनी, चावल इत्यादि रखे जाते है, तब औरतें गाती हुई पानी भरने जाती हैं, इसे घडौली कहते हैं।

वाह–वाह घडौली भर आई आं,
शावा घडौली भर आई आं,
वारी घडौली भर आई आं,

यह रस्म दोनों परिवारों में एक तरह ही पूरी की जाती है।

'घंड़ोली' हिमाचल प्रदेश के मण्डी जिले की मंडयाली बोली का शब्द है। घड़ोली घड़े का ही रूप है, जिसके द्वारा हम दही से मक्खन निकालते हैं। घड़ोली मिट्टी की बनी होती हैं। अंदर से इसकी सतह घड़े की तरह साफ नहीं बल्कि थोड़ी खुरदरी होती है। यह इसलिए किया जाता है ताकि छाछ/लस्सी आसानी से तैयार हो सके। घड़ोली को बनाने में एक आम घड़े से ज्यादा समय लगता है। इसकी कीमत भी घड़े से ज्यादा होती है। घड़ोली के ढक्कन को 'पअल' कहते हैं। यह मिट्टी या फिर लकड़ी का बना होता है। इसका आकार शंक्वाकार होता है। घड़ोली को त्रीड़े (बिन्ने) के ऊपर रखा जाता है, ताकि घड़ोली का निचला सिरा घिसे न। घड़ोली द्वारा दही से मक्खन निकालना एक पारंपरिक विधि है। घड़ोली में दही डालकर इसे आगे–पीछे हिलाया जाता है, जिसे यहां की बोली में 'छोलना' कहते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान बीच–बीच में पअल को घड़ोली के मुख से उठाकर देखा जाता है कि मक्खन तैयार हुआ या नहीं। घड़ोली को छोलने का दौर तब तक चलता रहता है जब तक मक्खन पअल पर चिपककर हमें यह संकेत न दे दे कि वह तैयार हो चुका है। इस स्थिति में घड़ोली को छोलने की आवाज में परिवर्तन आ जाता है और यह थोड़ी भारी भी लगने लगती है। इसके बाद घड़ोली के दो–तीन फेरे इस प्रकार दिए जाते हैं ताकि घड़ोली के अंदर फैला मक्खन एक जगह इकट्ठा हो जाए। मिट्टी के इस बर्तन से निकलने वाली लस्सी के तो फिर क्या कहनें। आप बार–बार इस लस्सी को पीना चाहेंगे। इसकी मिठास आपको स्वयं निमंत्रण देगी।

सर्दी के मौसम में घड़ोली द्वारा मक्खन निकालने की प्रक्रिया चूल्हे के पास बैठकर पूरी की जाती है। इस मौसम में दही के ठंडा होने के कारण मक्खन तैयार होने में ज्यादा समय लगता है। मक्खन जल्दी लग सके इसके लिए बीच–बीच में घड़ोली के अंदर गर्म पानी डाला जाता है। सर्दी में मक्खन तैयार होने में लगभग 30 से 45 मिनट का समय ले लेता है। जबकि गर्मी के मौसम में यह प्रक्रिया लगभग 20 से 25 मिनट का समय लती है। यदि समय ज्यादा लग रहा हो तो परिवार वाले इस कार्य को बारी–बारी निपटाते हैं ताकि कोई एक इसमें थके न। लोकगीतों में भी घड़ोली का जिक्र आता है। जिसका प्रमाण 'गुजरी गजरेटिए छाही छोल दिए, तेरे हथडू जो लगी जाणी पीड़' और 'हत्था लँदी लोटकु देवकु, काछा पांदी घड़ोली, चल मुइए नौणा पर जाणा' जैसे लोकगीत हैं।

घड़ोली को मक्खन लगाने के लिए तैयार करने की भी अपनी ही एक विधि है। घड़ोली वाले कोरे (नये) घड़े को सीधे ही मक्खन लगाने के लिए प्रयोग नहीं किया जाता है। कोरे घड़े में सीधे दही डालने पर उसमें बदबू पड़ जाती है। इसलिए पहले इस 'मचेरा' जाता है। मचेरना वह प्रक्रिया हैं जिसमें कोरे घड़े को पानी से पूरा भर कर और उसमें ककड़े वैज्ञानिक नाम–पिसपेसिया इन्टेगेरिमा के पत्ते डालकर धूप में या फिर चूल्हे के पिछले हिस्से में पांच–सात दिन तक रखा जाता है। इस विधि से घड़े को मजबूती मिलती है तथा उसके रंध्र बंद हो जाते हैं। इसके साथ–साथ उसका रंग भी परिवर्तित होकर गहरा भूरा हो जाता है। इसके बाद घड़े को अच्छी तरह से धोकर मक्खन निकालने के लिए प्रयोग किया जाता है।

किसान प्रदेश हरियाणा के संस्कार, जिसका इस अधुनातन युग में भी यहां के निवासी परम्परागत संस्कारों का पालन करते आ रहे हैं। पनघट पर जाती नवबालाओं एवं कुमारियों का चित्राण तो यहां के लोक साहित्य और लोकगीतों में भरा पड़ा है। पनघट शब्द पानी के घाट का अपभ्रंश है। यह शब्द आते ही गांव की स्त्रियों का वह सुन्दर चित्रा आंखों के आगे आ जाता है। जहाँ के सिर पर घड़े रखकर पानी भरने सखियों के साथ कुएं की जगत पर जाती है। प्रत्येक घर के कार्य को करने का श्रेय औरतों को ही जाता है, जब कभी किसी के विवाह में सभी औरतें मिलकर पानी लाती हैं। तब भी गीतों का आयोजन होता है, इन गीतों को पनघट के गीतों का नाम दिया है। पनघट का वैसे भी बड़ा महत्व होता है। स्त्राी समाज का परिचय इसी प्रकार की जगहों पर तो होता है। पानी लाने का कार्य पहले तो बहुत दूर दूर से होता था। किन्तु अब हरियाणा ने धीरे–धीरे इस श्रम को काफी कम कर दिया है। पीने का पानी की सुविधा अन्य प्रांतों से अधिक हरियाणा में जुटाई जा चुकी है। लेकिन पानी चाहे दूर से लाएं चाहे पास से गीत अब भी प्रायः गाये जाते हैं।

सिर पर एक के ऊपर एक और इसी प्रकार एक एक महिला कई–कई घड़े कतारों में आती हुई दीख पड़ती हैं। यह दृश्य बड़ा ही मनमोहक होता है। कहना क्या जो एक पर एक रखे घड़ों से पानी की एक बूंद चुनरिया (ओढ़नी) तक रिस आए। नव नवेली दुल्हन जब सिर पर दोघड़ रखकर पानी लाती थी तो कई बार उसे बड़ी मुश्किल होती थी। वह थक कर कह देती थी–

मेरी नाजुक नरम कलाई रे, पनिया कैसे जाऊँ?
अपने सुसर की मैं ऐसी लाडली,
आंगन में कुई खुदवाई, पनिया कैसे जाऊँ?

दिनचर्या में गीतों में रूनक–रूनक तथा वस्त्राभूषणों की चमक दमक लिए वे युवतियाँ अपनी सखी–सहेलियों के बीच सास–ननद के विरूद्ध अपने गुबार निकालती है। पनघट आदि इस कार्य के लिए बड़े अच्छे अवसर है। कभी–कभी कोई मनचला पानी पीने का बहाना बना के इन युवतियों के पास आ जाता है किन्तु उस पर फटकार भी पड़ जाता है–

तै तो कोन्या नीर का प्यासा।

तै तो भूखा फिरे बरी का।

लेकिन कभी–कभी कृष्ण सा अनाड़ी मिल जाये तो पानी भरते हुए प्रेम रसायन भी कर जाता है। पानी लाते समय अक्सर बहु के साथ उसकी ननद होती है। ननद सास का प्रतिनिधित्व करती है। सभी बातों को जो बहु कहती करती है, आते ही अपनी मां को बता देती है। कई बार इन्हीं बातों से सास–बहु का ऐतिहासिक द्वन्द्व होता है। एक नायिका अभी नई नवेली आई है। उसे समय का अधिक बोध नहीं। उसकी सास का जाई हठीली ननद ने उसे प्रातः ही उठा दिया कि पानी ले आओ। वह नदिया के तीर पानी भरने जाती है। वहाँ मोहन पहले ही बैठा है। दोनों के नैन लड़ जाते हैं। दो बातें होती हैं। पानी भरने की सारी थकान दूर हो जाती है इस घटना का घोतक गीत इस प्रकार है–

खिल रहा चांद लटक रहे तारे चल चन्द्रावल पानी
कैसे भर लाऊं जमना जल झारी
सासड़ की जाई ननद हठीली रात नै खंदा दई पानी।
कैसे भर.....
उरले घाट मेरा घड़ा न डूबे, पर ले किसन मुरारी।
कैसे भर .....
क्या हे की तिरी ईद लो गुजरिया प्यारी क्याहें की जल गगरी,
अन्दन–चन्दन की ईढली कन्हैया प्यारे सोने की जलझारी।
कैसे भर लाऊं जमना जलझरी
अन्दन चन्दन की ईढली कन्हैया प्यारे सोने की जलझरी
कैसे भर लाऊं जमना जलझरी

इस गीत में नायिका का श्री कृष्ण के प्रति प्रेम प्रदर्शित होता है। श्री कृष्ण को हरियाणवीं संस्कृति पर अमिट छाप है। वह हरियाणावासियों का देवता, सखा, प्रतिद्वन्द्वी सब कुछ है। समाज में चहुंमुखी जीवन पर उसकी छाप है।

पनघट पर जाने के लिए पनिहारनों को चाव चढ़ जाता है। महिलाएं घर में चाहे किसी भी तरह के कपड़े क्यों न पहनें, पर पनघट पर जाते समय अच्छी तरह श्रृंगार करके जाती थी।

नई नवेली दुल्हनें घाघरा पहन, सितारों व गोटों से युक्त, चूंदडी ओढ़ पैरों में कढाई की हुई डिजाइनदार जूतियां और नीचे से ऊपर तक सोने–चांदी के गहनों से सज–धज कर पास–पड़ोस की आठ दस या इससे भी अधिक एकत्रित होकर गीत गाती हुई पानी लेने जाती थी।

पनिहारी शब्द पनिहारिन का राजस्थानी रूप है। पनघट का राजस्थान व हरियाणा के जीवन में प्रमुख स्थान है। पानी भरने वाली स्त्री को पणिहारी कहते हैं। राजस्थान के जीवन और संस्कृति का चित्राण पणिहारी गीतों में मिलता है। हरियाणा की लगभग एक तिहाई सीमा राजस्थान से लगती है। अतः राजस्थानी जीवन व संस्कृति का प्रभाव हरियाणा में भी मिलता है। हरियाणा में भी पनघट गीत बहुत मिलते हैं। इसमें राजस्थानी रमणी के पतिव्रता का भी चित्रा मिलता है कोई स्त्री पनघट पर पानी भरने जाती है एक पुरुष वहाँ आता है और उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो उसे अपने साथ चलने के लिए कहता है कि स्त्री रूष्ट हो जाती है और घर आकर अपनी सास से सारा हाल कहती है। इतनें में उसका परदेशी पति घर आ जाता है। यह वही है जो उसे पनघट पर मिला था। इस कथा पर आधारित गीत बिहार में भी पाये जाते हैं।

अहो रामा पानी भरे गइलीं हम पक्का रे इनरवा हो रामा
पनिया मांगे पानी के पियासल बटोहिया ए रामा, पनिया मांगे,

अहो रामा, कइसे कि पनिया पियाई रसिकवा एक रामा
सुनि पइहें, सुनि पइहें सासु रे ननदिया ए रामा, सुनि पइहें
अहो रामा कुइयां से पियासल बटोही चलि जइहें एक रामा
गऊंआ के गंडवा के होई बदननियाँ ए रामा, गंडवा के।

इतना ही नहीं आदिवासियों के बीच भी पनघट गीतों का प्रचलन है। पनघट पर गई गोरी से कान्हा की छेड़छाड़ का वर्णन इन गीतों से होता है ब्रज क्षेत्रा में भी पनघट गीत गाये जाते हैं।

पनघट के लोकगीतों में ननद–भाभी का प्यार और झगड़े का वर्णन हुआ है। वहीं सास–बहु की तकरार का चित्राण भी किया गया है। पनघट पर जाती हुई पनिहारिनें इस गीत को इस प्रकार गाती थी–

सिर पै बंटा टोकणी
मैं तो कुएँ की पणिहार री
रास्ते म्हं सासड़ फेटगी
तेरे मरियो नोओं वीर री
तू किसनै खंदाई एकली
तेरी घर म्हं बूज्झू बात री....।

आम तौर पर पानी मटकियों (घड़ों) से लाया जाता है। पहले पनिहारी ऊपर–नीचे, दो मटके लेकर भी खूब चलती थी ताकि एक बार में ही दो मटकों में पानी आ जाए। ऊपर वाला मटका छोटा आकार का होता था। इस प्रकार एक के ऊपर एक मटका रखकर पानी लाने को दोघड़ कहते हैं। कई पनिहारिनें एक बड़े घट पर दो छोटी मटकियां भी रख लेती थी। मटके की जगह लम्बे व पीतल की टोकणी का भी खूब रिवाज था। नई नवेली दुल्हनें पानी के लिए पीतल की टोकणी का ही प्रयोग करती है। लड़की अपने पानी भरने की टोकणी अक्सर पीहर से लाती है। पानी भरना भी हरियाणवीं युवती के लिए बड़ा गर्व का विषय है। क्योंकि इस अवसर पर वह पूरा श्रृंगार करके लरजती चलती है, तो उसके चाहने वाले एकटक देखते रहते हैं। नीचे दिए गीत में पनघट की साज–सज्जा तथा नायिका के प्रति सास ननद का गुस्सा उल्लेखनीय है–

टोकणी पीतल की रै रोहतक ते मोल मंगाई
ईढवा जाली का मन्नै उस पै दोघड़ जचाई
छैल तरवाइयों हो तेरी हूर लरजदी आई
घर नै मत आइये तेरा आरा सुबे सिंघभाई
इतनी सी सुन कै हो सासड़ नै नणद दौड़ाई
पाणी के म्हारे रिते पड़े तेरा मरियो सुबे सिंध भाई

उक्त गीत में जहाँ सिर पर घड़ों का वर्णन है, वहीं दूसरी और ईढवा का भी चित्राण है। ईदवा कपड़ों की कतरनों या मूंज की जेवड़ियों द्वारा बनाया जाता है। कुछ महिलाएं घड़ा फूटने पर उसके मुहं की किनारी को घिसकर उस पर कातर लपेट कर ईढवा बना लेती थी। ईढी छोटी होती है यह गोल आकार की मोतियों जड़ी हुई होती है। इस पर घड़े सिर पर रखने में आसानी होती है, और जल छल्लक'छल्लक कर नहीं रिस पाता। वह ईढी या ईढवा ही है जिसकी बदौलत पणिहारनें इतनी दूर से पानी लाती हैं परन्तु फिर भी ईढी की बदौलत पानी रिसता नहीं है। ईढी छोटी होती है जिसका प्रयोग ज्यादातर युवतियां करती हैं। ईढवा, चुण्डे यानी जूड़े बाले सिर पर रखा जाता है। पहले महिलाएं सिर पर चूण्डे रखती थी। कुछ अपने ही बालों को तो कुछ रूई, कातरों व नाड़े की सहायता से बना चूण्डा लगाती थी। ईढो पर दोघड़ आराम से जंच जाती थी।

पानी के गीतों में जिस प्रकार का श्रम करना पड़ता है, उसी के चित्राण हम देख सकते हैं। असल में लोकगीतों में लोक पैनी दृष्टि का बोध ही मुख्य बात है। कोई छोटी–बड़ी बात लोक में नहीं घट सकती जिसकी जानकारी लोकमानस को न हो। सभी घटनाओं का बड़ा सहज चित्राण लोकगीतों में उपलब्ध होता है।

हरियाणा समेत पूरे वर्ष में चलते मुसाफिरों को पानी पिलाना बड़ा धर्म माना जाता है। यहाँ पानी को अमृत की तरह माना जाताहै, खासकर गर्मी के दिनों में। हमारे यहाँ गर्मियों में गांवों व शहरों में जगह–जगह पानी के लिए प्याऊ लगाई जाती है। जहाँ राहगीर आकर अपनी प्यास बुझाते है। भीषण गर्मी में मटके व सुराही का पानी शीतलता प्रदान करता है। उपभोक्ता क्रान्ति के विस्तार की बदौलत फ्रिज और बाहर कूलर के बढते, चलन के लिए मटके व सुराही गायब होते जा रहे हैं। ऐसे में भी प्याऊ की परम्परा आज भी कायम है, कहीं प्याऊ पक्के रूप में मिलते हैं ताकि स्थाई रूप से जलापूर्ति होती रहे तो कहीं केवल ग्रीष्म ऋतु के दौरान दो चार माह के लिए स्थापित किये जाते हैं। लोक जीवन में बैसाख और ज्येष्ठ माह में प्याऊ बिठाने के बराबर कोई पुण्य नहीं माना गया है। क्योकि यह इस अर्थ में भी महत्वपूर्ण है कि वहाँ ज्ञात अज्ञात सभी अपनी प्यास बुझाते हैं और उनकी मौन मुखर प्रशंसा करते हैं। मानव ही नहीं पशु–पक्षियों के लिए भी प्याऊ बिठाने की परम्परा विविध रूपों में देखने को मिलती है। कुछ लोग संकल्पबद्ध होकर स्थापित प्याऊओं का पानी भरवाने के इन्तजाम का जिम्मा लेते हैं। जंगलों से लेकर थार के रेगिस्तान तक जहाँ प्रायः मानव कम हो जाते हैं। वहाँ तक लोगों ने प्याऊ बिठाने की परम्परा का निर्वाह किया है। यदि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो पता चलता है कि इस परम्परा के निर्वहन में शासकों, सेठ साहूकारों तथा दरबारियों ने ही नहीं, सन्त महापुरुषों ने भी इस दिशा में अपना योगदान दिया। लेकिन प्याऊ बिठाने में घड़े का अहम् योगदान है। बगैर घड़े के प्याऊ लगाने बेमानी सी लगती है।

गांव–गांव में जनहितार्थ प्याऊ मिलती है। भीड़–भाड़ वाले स्थानों, औषधालयों, चिकित्सालयों तथा अन्य सार्वजनिक महत्व के स्थानों पर प्याऊ स्थाई रूप से तथा अन्यत्रा ग्रीष्मकाल में मिलती है। आज प्लास्टिक अथवा स्टील के गिलासों में पानी पिलाया जाता है। पर पहले ताम्बे की बनी जल की झारी से मिट्टी के मटकों में भरा शीतल नीर ओख (हाथ, मुंह पर लगाकर जलग्रहण करना) से पिलाया जाता था, तब जो तृप्ति मिलती थी, वह भुलाई नहीं जा सकती। कुछ श्रद्धालु इस पानी में खास डाल देते हैं जिससे जल की शीतलता बढ़ जाती है। और वह सुगन्धित भी हो जाता है। गांवों में झारी के अलावा करवा (नलीदार लोटा) तथा मिट्टी की बनी लम्बी नाली पर लोटे से पानी बहाकर भी पिलाया जाता है। इस नाली को पणनाल कहते हैं। हर वर्ग का व्यक्ति, अपनी व्यवस्थानुसार प्याऊ के मार्फत पानी पिलाने के लिए तत्पर रहता है। प्याऊ पर पानी पिलाने वाला तथा भरने वाला (पाणेचा) प्याऊ की अच्छी तरह देखभाल करता है। वह शाम को ही मटकों में पानी भरकर रख देता है, इन मटकों को बजरी या रेत के नीर भीगे कुंडो अथवा मिट्टी के घगड़ों पर रखा जाता है, जिससे पानी सुबह तक ठंडा हो जाता है। रात्रि में ही खस या गुलाबजल भी पानी में डाल दिया जाता है।

पुराने समय में महिलाएं पनघट में मटके भरती या कावंडिया कानड़े भरकर प्याऊ के मटकों को भरते नहीं अघाते थे। पानी भरने तथा दिनभर पानी पिलाने वाले को श्रद्धालु यथोचित पारिश्रमिक भी देते थे। आजकल न्यासों तथा समितियों ने इस तरह के काम हाथ में लेकर प्याऊ द्वारा ठंडा पानी पिलाने की व्यवस्थाएँ कर रखी हैं। पशु मानव के सहचर हैं इनके लिए भी प्याऊ का निर्माण किया जाता है। प्रायः कुएं, बावड़ी अथवा कुडों पर अंकिया बनाकर पशु प्याऊ संचालित किए जाते हैं।

गांवों में सार्वजनिक कुई या कुओं के साथ ऐसी प्याऊ बनी मिल जाएगी जिन्हें ग्रामीण बारी–बारी से भरते हैं। वैसे चौंचधारी निरीह पक्षी कहीं से भी घुंटभर पानी पीकर अपनी प्यास बुझा लेते हैं।

हरियाणा में पानी पिलाना धर्म तो माना ही गया है। पनिहारनें किसी भी यात्राी को पानी पिलाने से मना नहीं करती। पानी पिलाते पिलाते हुए ही कभी कभार प्रेम प्रसंग पनघट पर जन्म ले लेते थे।

मैं तो धुर टांडे तैं आया हूँ री,
तेरी सुण कै धधक बाजे की,
थोड़ा सा नीर पिला दे परी,
मैं तो प्यासा मरूँ सूँ नीर का।
तूं तो कोन्या नीर का प्यासा जले,
तू तो भुक्खा, फिरै से वीर का,
मेरी मुट्ठी मुँह की गुट्ठी परी,
गुट्ठी म्हं गजब नगीना,
मैं तो पाणी रे पीकै जांगा नार,
चाहे हो ज्या एक महीना।

जहाँ हरियाणे में पनघट व प्याऊ परम्परा घडे के बगैर बेमानी है। वहीं घड़े पर कला उभरी देख किसका मन मोहित नहीं होगा। अलग–अलग आकृतियां उन पर बनाए गए मांडने (बेल–बूटे) वास्तव में लोक–जीवन को कलात्मक प्रवृति पर प्रकाश डाले बिना नहीं रहते।

यज्ञ–हवन, यज्ञोपवीत, आदि प्रायः अधिकांशः धार्मिक संस्कारों के अवसर पर घड़े, मटकी, मांघे अथवा मटकों का उपयोग होता है। घड़े का उपयोग मानव ने अपनी प्रारम्भिक अवस्था से सीखा है। जो आज तक अनवरत चलता आ रहा है। पाषाण युग के अनेक अवशेषो में मिट्टी के बने बर्तन खुदायों में मिले हैं। मानव ने इनका उपयोग अपनी आदि अवस्था से ही करना सीखा है।

मिट्टी का घड़ा ऐसा वाध है, जो लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत दोनों में लोकप्रिय है, कहीं–कहीं मिट्टी के मटके के मुहँ को चमड़े से आच्छादित करते हैं। इसके मुहँ के बीचों बीच में एक छेद करते हैं। जिसमें मोर के पंख को जड़ की ओर से डाल देते हैं। पानी से गोले हाथ से मटके के मुहँ के पास से मोर के पंख को ऊपर की ओर सरकाते हैं। इस क्रिया से उसमें से दहाड़ने जैसी आवाज निकलती है। नाहर की दहाड़ जैसी ध्वनि निकलने के कारण कदाचित इसे नाहर धौंकनो कहते हैं। बुन्देलखण्ड में तन्त्रा–मन्त्रा तथा आधि–भौतिक शक्तियों की पूजा–उपासना करने वाले लोग इसे बजाते हैं। इतना ही नहीं एक अन्य वाद्य जो काली मिट्टी से निर्मित होता है, इसका मुहँ अन्य घडों की अपेक्षा छोटा होता है। बुण्देलखण्ड में इस वाद्य का प्रयोग विशेषतः कुम्हार, कहार तथा चमार जाति के लोग अपने जातीय गीतों को गाते समय करते हैं। वादक अपनी बाई हथेली को मटके के मुख पर रखकर थाप देता है तथा दाहिने हाथ से सिक्के या अन्य धातु के टुकड़े से घड़े के मध्य भाग पर आघात करता है। इससे सुन्दर ध्वनि निकलती है इसकी मधुर ध्वनि से प्रभावित होकर आजकल इसे सभी वर्ग के लोग अपनाए हुए हैं।

घड़े और थाली का संयुक्त रूप को घड़याल कहते हैं। गाथाओं के गायन में यह लोक वाद्य चम्बा क्षेत्रा में अधिक प्रचलित है। यह चम्बयाली और घुरेही लोकनृत्य के साथ लय भरने का काम करता है। मिट्टी के घड़े के मुख पर कांसे की थाली रखी जाती है। एक हाथ पतली लकडों से थाली पर प्रहार करके छनन–छनन की ध्वनि उत्पन्न होती है। यह वाद्य प्रायः अवनद्य वाद्यों जैसे नगाड़े, ढोलक के साथ माधुर्य पैदा करने में अहम् भूमिका निभाता है।

इसी प्रकार का एक अन्य वाद्य है, जिसे मदिलरा कहते हैं, जो ब्रज क्षेत्रा का लोक वाद्य है। गांवों में विशेष रूप से होली के दिनों में स्त्रियाँ नाचती हैं तथा पुरूष गाते व बजाते हैं। उस समय बजाने के लिए बम (एक बड़ा अवनद्य वाद्य जो कि एक भैंसे की पूरी खाल से बनता है) को बजाते हैं। साथ

ही मिट्टी के धड़े के ऊपर एक कांसे की थाली उल्टी रख कर उसे बांसों की खपच्चियों से बजाते हैं। ढोलक भी साथ–साथ बजती हैं। वाद्यों के इस सामूहिक रूप को मदिलरा कहते हैं यह जन्मोत्सव मानने पर विशेष रूप से बजाया जाता है। ब्रज के मन्दिरों में बड़े बम की जगह नगाड़ा प्रयोग में लाते हैं। अतः यहाँ मदिलरा का रूप थोड़ा छोटा हो जाता है। कहीं–कहीं घड़े पर थाली रखकर बजाने को ही मदिलरा कहते हैं। मदिलरा शब्द का उल्लेख भारतीय शास्त्रीय संगीत की रचनाओं में अनेक स्थानों पर मिलता है। जैसे राग शुद्ध कल्याण का ख्याल बाजों रेवाजों मदिलरा आदि दरबारी कान्हड़ की ध ामार, "मदिल ढफ बाजन लागे री आयो फागुन मास आदि।

घुड़ला नृत्य राजस्थान में किसी भी मांगलिक अवसर पर किया जाता है। इसमें स्त्रियाँ सिर पर घड़ा रखकर नृत्य करती हैं। इस घड़े के चारों और छेद किये जाते हैं और घड़े के अन्दर दीपक रखा जाता है जो कि मंगल का प्रतीक है। इस नृत्य में अंग संचालन बहुत ही कोमल होता है और लय मध्य लय बरती जाती है। जन श्रुति के अनुसार यह नृत्य किसी ऐतिहासिक घटना की याद को तरोताजा करता है। महिलाओं में आत्मसम्मान और आत्मबल बढ़ाने के लिए किया जाता है। इस नृत्य के साथ गाई जाने वाली पक्ति से स्पष्ट है – "सुहागण बारे आव घुडल्यो घूमेलौंजी घूमलो"

इस पंक्ति से जो आह्वान है उससे स्पष्ट आभास होता है कि भय की समाप्ति हो चुकी है और निर्द्वन्द्व होकर नृत्य करने की सुरक्षा का वातावरण बन गया है।

प्रसिद्ध विद्वान डॉ0 कन्हैया लाल सहल के अनुसार – कहा जाता है कि वि0 स0 1548 में अजमेर के मल्लूखां ने मेडता पर चढ़ाई की। वह पीपाड़ के पास कोसाना ग्राम में गौरी पूजा के लिए आई हुई 141 स्त्रियों को ले भागा। इसकी सूचना जब जोधपूर के राव सातलजीं को लगी तो उन्होंने तत्काल पीछा किया। उक्त स्त्रियों को तो वे छुड़ा ही लाये किन्तु साथ ही अमीर घराने की कुछ स्त्रियों को भी ले आये जिनमें घुड़ला खां की एक सुन्दर कन्या भी थी। प्रवाद प्रचलित है कि घुड़ला खां ने इस अपमान का बदला लेने के लिए वीरतापूर्वक युद्ध किया किन्तु तीरों से छिद कर उसे अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। घुडल्ले खां की याद में उसकी लड़की ने घुड़ल्ले का त्यौहर प्रचलित किया जिसमें बालिकाएं छिद्रों वाले घड़े को सिर पर रखकर अपने सम्बन्धियों के यहाँ गीत गाती हुई जाती है।

श्री कन्हैया लाल के अनुसार ही एक अन्य जनश्रुति है – महाराणा कुम्भा की मृत्यु के पश्चात् (सं0 1525 वि0) मालवा के सुल्तानों ने पूर्वी राजपूताना में अपना प्रसार करके देश के मध्य भाग स्थित अजमेर और सांभार पर भी अपना अधिकार कर लिया था उनकी तरफ से मल्लू खाँ अजमेर का हाकिम था।

किन्तु माखाड़ के वीर राठौर उसे चैन की साँस नहीं लेने दे रहे थे। अजमेर पर लगातार राठौरों के धावों से मल्लूखां चिंतित रहता था और इन सबल शत्रुओं से बदला लेने की फिराक में लगा हुआ था। सं0 1548 वि की चैत सुदी 1 या 2 के दिन मल्लू खाँ ने मारवाड़ के पीपाड़ नगर पर दौड़ की। नगर को लूटकर लौटते समय मुसलमानों ने गौरीपूजन के निमित नगर से बाहर कुओं से दुर्बा लेकर लौटती हुई नगर कन्याओं (तीजणियों) का अपहरण किया।

जोधपुर के तत्सामयिक राव सातंलजी जो राव जोधा जी के पुत्र थे, तत्काल मुसलमान सेना के पीछे चढ़ दौड़े। उनके साथ उनके भाई सूजाजी और मेड़ता के राव दूदाजी भी थे। कोसाणा गांव के पास यवन सेना को जा दबाया। राठौरों और मुसलमानों में जमकर लड़ाई हुई। मल्लू खान की सेना का प्रधान सेना नायक मीर घुड़ला था जिसका असली नाम सिरिया खां था मुठभेंड में मारा गया। मल्लू खां ने भाग कर प्राण बचाये। राव सांतलजो ने नगर कन्याओं (तीजणियों) को छुड़ा लिया किन्तु युद्ध में लगे घावों से वे स्वयं इतने घायल हो गये थे कि चैतुसदि 3 की रात्रि को उनका प्राणान्त हो गया।

कहा जाता है कि मीर घुड़ला का मस्तक काटकर उन तीजणियों को दे दिया गया जिसे थाली में रखकर वे कन्याएं नगर के घर–घर में घूमीं और उस आततायी के काटे हुए मस्तक का प्रदर्शन करके ग्रामीणों में इस भावना का संचार किया कि मारवाड़ में नगर ग्राम कन्याओं के अपहरणकर्ताओं को ऐसा दण्ड मिलता है। इसके पश्चात् हर साल या गणगौर के अवसर पर इस घटना को तरोताजा रखने के लिए कन्याएँ गीत गाती हुई घुमती है और तेल संचय करती हैं।

आज घुड़ला नृत्य राजस्थान के प्रायः सभी भागों में प्रचलित हो गया है। स्कूल कॉलेजों में तथा अन्य अवसरों पर भी घुड़ला नृत्य देखने को मिलता है।

पुष्टिमार्गीय कीर्तनों में भी घड़े का उल्लेख प्रचुर मात्राा में मिलता है यथा कृष्णदास का पद "गिड़गिड़ तां चिता चितां दि मदिलरा बाजै आदि–आदि। ब्रज के कुछ इलाकों में होलिकादहन की रात में महिलाएं चरकला लोकनृत्य करती हैं। किसी महिला के सिर पर एक के बाद एक मिट्टी के कई घड़े होते हैं। उस पर लगी बाँस की चौखटों में दीप जलते हैं। महिला तेजी से नाचती है। उस समय जलते दीपों की शोभा अनोखी होती है।

वाद्य यन्त्राों में घड़े के समकक्ष एक ओर वाद्य है जिसको मटकी कहते हैं। जो साधारण मिट्टी से बनी होती है जिस पर वादन किया जाता है, इस पर खाल नहीं मढ़ी जाती। एक हाथ मटकी के मध्य भाग को तथा दूसरा हाथ उसके मुहँ को बजाता है। मुख्यतया इसका प्रयोग या तो गायन के साथ किया जाता है, या ऐसे ही चित की प्रसन्नता के लिए इसको बजाया जाता है। शास्त्राीय संगीत में इसका प्रयोग कर्नाटक प्रदेश में होता है इसी तरह एक वाद्य काली मटकी भी है, जो अन्य मटकियों से भरपूर मधुर बोलती है इसलिए मथुरा, आगरा की मटकी अधिक उपयुक्त मानी गई है, इसके बजाने की विधि इस प्रकार है– मटके के पेट को दाहिनी हाथ से बजाया जाता है, व मुंह पर हथेली से थाप दी जाती है, इससे बड़ी गम्भीर आवाज निकलती है, दादरा, कहरवा, दीपचन्दी आदि ताल इस पर बजाये जा सकते हैं। राजस्थान में इसे भाट्, भाटों चाडौ भी कहते हैं। कई लोग हाथ में घुंघरू बांधकर भी इसे बजाते हैं।

राजस्थान में मटका वाद्य जो घड़े की आकृति का होता है। मांगनियर जाति के लोग इसे बहुत बजाते हैं बाएं हाथ से मटके के मुहँ पर प्रहार करने से गूंज उत्पन्न होती है। अतः हम कह सकते हैं कि राजस्थान में घन वाद्य में डडियां, चूडियां, करताल, रमझोल, घन्टा, मंजीरा, चिमटा, झाँझ, झालर, घुंघरू, थाली, श्रीमंडल मटका आदि का वादन किया जाता है। इनका प्रयोग वहाँ के त्यौहार, उत्सव आदि के अवसर पर जाति विशेष के लोगों द्वारा किया जाता है। जैसे करताल का प्रयोग लंगा व मांगनियर जाति के लोगों द्वारा किया जाता है। वहीं चिमटा का मीणा व जाट जाति के लोगों द्वारा किया जाता है एवं मटके का प्रयोग मांगणियर जाति के लोग कामायचा की संगति हेतु करते हैं। इसी प्रकार घुमर एवं गरबा नृत्य में डंडिया बजाई जाती है। तो राजस्थानी लोक नृत्य में स्त्रियाँ चूड़ियों का प्रयोग करती है। रमझोल झीलों के चक्करकार नृत्य में प्रयोग होता है एवं मंजीरा का तेरह ताली नृत्य में प्रयोग किया जाता है अतः प्रत्येक वाद्य का प्रयोग भिन्न–भिन्न लोगों द्वारा भिन्न लोक गीतों की संगति हेतु किया जाता है। वादक घड़े में फूंक द्वारा हवा भरता है। जिससे एक विशिष्ट ध्वनि उत्पन्न होती है। यह घड़ा सामान्य मिट्टी का पका हुआ होता है।

गुजरात में तांबे का बड़ा घड़ा होता है। जिसका मुहँ बहुत संकरा, लेकिन पेट का भाग चौड़ा होता है, इसको माण भट्ट कहते हैं। इसको गुजरात के कथाकार हाथ की उंगलियों पर अंगूठियां पहनकर बजाते हैं। महाभारत की कथा मे वीरासन में बैठकर इसको बजाया जाता है।

दक्षिण भारत का घटम उत्तर भारत में घड़ा या घट, मटकी नोट् आदि नामों से प्रसिद्ध है। दक्षिण भारत में बहुत सम्मान का स्थान प्राप्त है। क्योंकि वहाँ इसका प्रयोग शास्त्राीय संगीत सभाओं में किया जाता है तथा ताल कचहरों में इसका प्रयोग अत्यधिक होने लगा है।

यह दक्षिणी वाद्य घड़े के आकार में ही मिट्टी का बना होता है अति प्राचीन इस वाद्य का प्रयोग रामायण तथा उपनिषदों में उल्लेखित है। यह देखने में सामान्य घट के तुल्य ही होता है। परन्तु फिर भी इसमें तथा सामान्य घट में अन्तर होता है। इसकी मिट्टी की तह बहुत मोटी होती है। इसलिए यह साधारण घटों से अधिक मजबूत होती है। यह मनमदुरई तथा पणरूति में पाई जाने वाली एक विशेष प्रकार की मिट्टी से तैयार किया जाता है। इसकी मिट्टी में लौहचूर्ण भी मिलाया जाता है। इसका मुख साधारण घट से अपेक्षाकृत छोटा तथा अच्छी प्रकार पकाया हुआ होता है।

इसके वादन में दोनों हाथों, कलाइयों, दसों उंगलियों तथा नाखूनों का प्रयोग किया जाता है। बजाते समय इसको इस प्रकार रखा जाता है कि इसका मुख वादक के पेट से चिपका रहे। घटम् वादक इसके मुख को अपने पेट से बन्द करता और खोलता है। इसकी गर्दन (ऊपरी भाग) पेट (मध्य भाग) तथा तलों (नीचे के भाग) पर किये आघात भिन्न प्रकार की सुन्दर तथा मान्य ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं।

पेट से मुख के दब जाने के कारण ध्वनि में बड़ी गहराई आ जाती है। घटम् के स्कन्ध, मध्य भाग, तल भाग अथवा अन्यान्य भागों से आघात की भिन्नता के कारण भिन्न–भिन्न सांगीतिक नाद् उत्पन्न होते हैं। दूसरे आघात से बजाने वाले वाद्यों के समान इसे एक ही ढंग से रखकर नहीं बजाया जाता। वादक अपनी कुशलता एवं योग्यता के अनुसार इस वाद्य को इधर–उधर धुमाते रहते हैं।

घड़े से मिलता जुलता वाद्य जो कि मिट्टी के दो बरतनों से बनता है, जिसको पाबुजी के माटे कहते हैं। इन बरतनों के मुहँ पर खाल मढ़ी होती है। यह खाल चमड़े को लहरदार बद्धियों में छोटी लकड़ियों के टुकड़े डालकर कसी जाती है। इन दोनों वाद्यों को अलग–अलग दो व्यक्ति बजाते हैं। किन्तु उनकी लय या ताल समान रहती है। ये दोनों व्यक्ति अपने दोनों हाथों से उसको बजाते हैं एक वाद्य जो नीचे स्वर में मिला रहता है, नर कहलाता है तथा दूसरा जो ऊँचे स्वर में मिला रहता है, मादा कहलाता है। मुख्य रूप से यह पश्चिमी राजस्थान की थोरी तथा नायक (भील) जातियों द्वारा बजाया जाता है।

कर्नाटकीय संगीत में प्रयुक्त होने वाले आधुनिक घटम् का मुख चमड़े से मढ़ा नहीं जाता। यह सामान्य घट होता है, जिसका मुख छोटा तथा अच्छी प्रकार पका हुआ होता है। इसका संगीत में प्रयोग होने के कारण कुम्हार इसे अन्य घटो का अपेक्षा कुछ अधिक ध्यान रखकर बनाता है। कभी–कभी वादक, कुम्हार के यहाँ बने हुए अनेक घटों को ठोक–ठोक कर देखता है और जिसकी ध्वनि उसे पसन्द आती है, उसे ले लेता है। इसमें प्रायः मृदंगम के बोल ही बजाये जाते हैं।

करचक्र, दायरा, खंजरी आदि के समान ही बने हुए वाद्य को कर्नाटकीय संगीत में गंजीरा कहते हैं। इसमें भी मृदंगम के बोल बजाये जाते हैं। जो वादक मृदंगम के बोलों को जितनी सफाई से निकाल लेता है, उसकी उतनी ही प्रशंसा की जाती है।

दक्षिणी संगीत की गोष्ठियों में कभी–कभी ताल–वाद्य गोष्ठी का आयोजन होता है, जिसमें मृदगम, गंजीरा, खंजरी तथा घटम्(घट) तीनों के वादक क्रमशः एक दूसरे के बाद वादन करते हैं तथा कठिन एवं द्रुत गति के बोलों का चमत्कार दिखाते हैं। दक्षिण शास्त्रीय कण्ठ संगीत के साथ संगति में भी प्रायः घट का प्रयोग होता है।

घड़ा वाद्यों में बहुत प्राचीन वाद्य है, लय व ताल को दर्शाने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। घड़े की ऊँचाई एक फुट से कुछ अधिक एवं गोलाई दो फीट के करीब होती है। नाट्य शास्त्रा में दर्दुर नामक वाद्य का भी उल्लेख प्राप्त होता है उसके अनुसार–

दर्दर घटाकारो नवागुलमुस्तथा।
विधानं चास्य कर्तव्य घटस्य सदृशं बुधै।

अर्थात् मिट्टी का बना यह वाद्य घटाकृति का होता था। इसका मुख नौ अंगुल का होता था जिसके ऊपर चमड़े की पुड़ी का विस्तार बारह अंगुल का होता था।

महर्षि भरत ने इसे अंग वाद्य मानकर पूर्ण महता प्रदान की परन्तु कुछ काल पश्चात् घटाकर दर्दुर घट कहा जाने लगा। संगीत रत्नाकर में इसका वर्णन प्राप्त होता है।

पाणिभ्यां वाद्यते तज्जैश्चर्मनद्धाननो घटः।

कथिताः पाटवर्णा ये मर्दले ते घटा मताः।

धीरे–धीरे घट के स्वरूप में परिवर्तन आया। नये स्वरूप में घटाकृति तो वही रही लेकिन उसका मुख चमड़े से नहीं मढ़ा गया। इस प्रकार घट के दो रूप हो गये।

1. चर्माच्छादित मुख वाला घट।

2. चर्माच्छादन रहित मुख वाला घट।

वर्तमान में घट के दोनों स्वरूप प्रचलन में है। चमड़े से मढ़े जाने वाले घट का विकास त्रिमुखी तथा पंचमुखी के रूप में भी हुआ। जिसमें घट के एक मुख के स्थान पर तीन मुख अथवा पाँच मुख बनाये जाते थे। बीच का मुख बड़ा तथा शेष मुख उससे कुछ छोटे आकार के होते थे। पाँच मुख वाले घट को पंचमुख वाद्यम भी कहा जाता है। इसका प्रयोग दक्षिण भारत में किया जाता है। आज चर्म रहित मुख वाले घट का प्रयोग अधिक किया जाता है जिसे उत्तर भारत में घड़ा तथा दक्षिण भारत में घट्म कहते हैं।

विश्व का स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर में घट को नोट कहा जाता है, जो वस्तुतः कलश या घट का ही एक रूपान्तर स्वरूप है, यह मृण्मय पात्रा साधारण घड़े के समान ही होता है, जो कुम्हार की रौंदी मिट्टी से चाक कर निर्मित होता है। साधारण रूप से गृहस्थ पात्रा के घट और इसमें यह अन्तर होता है कि इसको मिट्टी स्नेह सिक्त हुआ करती है। जो प्रायः पर्वत को तलहटी के मृण्मय खण्डों की दूसरी तीसरी परत से खोद कर उपलब्ध होती है और कुम्हार इस मिट्टी को कूटकर तथा छानकर लम्बे समय तक भिगो कर रखता है। जब सफेद फूँफ उग आती है तब ही इस मिट्टी को रौंदकर चाक पर चढ़ाया जाता है और इसको आँच की अधिकता के लिए भट्टी (आँच) के ताप के मुँह के पास रखा जाता है और पकने पर इसको लाल रंग से अधिक भड़कीला बनाया जाता है और पकने पर कुम्हार ठोक–ठोक कर इसकी हर दिशा का परीक्षण करता है।

कश्मीरी भाषा में नट के द्वारा अधिक प्रयोग में लाने के कारण इसका मूल घट या कलश शब्द में अर्थ परिवर्तन और शब्द परिवर्तन इस प्रकार संकरित हुआ कि नट–घट (अर्थात् नट का घड़ा) समास पद में नट जीवित रहा है और घट प्रयत्न लाघव के कारण मिट ही गया। दक्षिण भारत के घटम्, राजस्थान के मटकी, कश्मीरी के नोट में यद्यपि विश्लेषणात्मक अन्तर नहीं है क्योंकि तीनों का भौगोलिक स्वरूप और आकार किए बिना ही इस तथ्य का सहज समाधान होता है कि तीनों की यात्राा एक ही सांस्कृतिक परम्परा से अद्भुत हुए हैं। अन्तर केवल वादन के शिल्प और पद्धति का निश्चय ही अपनी प्रादेशिक प्रथा के अनुकूल रहा है।

दक्षिण भारत में घटम् के टाँगों की चौखट पर बिठाकर बजाया जाता है, जबकि कश्मीर में प्रायः इसके नीचे गोलाकार आसन रखा जाता है। नीलमत पुराण के आधार पर सनातन कश्मीर में तप्त मृण्मय भाण्डों की एक लम्बी सूची हुआ करती थी।

मृण्मय वाद्य भाण्डानि वात्यति।

(तप्त मिट्टी के विविध बजाने वाले वाद्य–भाण्ड)

मिट्टी के घड़े का उल्लेख कल्हण की राजतरंगिणी में भी बहुधा मिलता है।

क)ते कुम्भवादनै (ते घट वादनों से।

ख)कुम्भ कास्यादिवादमन (घट और कास्य आदि वादन)

कश्मीरी लोक वाद्यों में नोट वादन अथवा घट–वादन का एक प्रभूत महत्व है। आज भी कश्मीर के सुदुर गांवों में जहाँ अभी यातायात के साधन नहीं पहुँचे है, सन्ध्या की ढलती बेला पर घट–वादन की स्वर–साधना विशद रूप से चलती है।

कश्मीर के लोक संगीत की दिशा में 'कश्मीरी घट वादन' के लोक अनुरंजन का महत्वपूर्ण इतिहास श्रीमोहनलाल ऐमा की भावुक कल्पना और सतत् साधना में परिचलित है। इन्होंने स्वयं इन विस्मृत लोक तत्वों का गम्भीर अन्वेषण करके कश्मीरी 'घट–वादन' की सनातनता को फिर से सजीव किया जो अपने में अद्भुत योगदान है। नोट सिंध व विशेष रूप से कश्मीर की घाटियों का वाद्य है, और कश्मीर के छकरी, रोफ सुफियाना कलाम आदि खास किस्म की सामूहिक संगीत–शैलियों का अभिन्न अंग माना जाता है।

कश्मीर में सनातन लोक संगीत में छक्कूर का अपना अक्षुण्ण महत्व है। कश्मीरी जनमानस में इस गायन–शैली का प्रभावपूर्ण एवं सांस्कृतिक तत्व की शालीनता पूरे समाज में परिव्याप्त है। कश्मीरी लोक–वाद्य में छक्कूर का उद्भव वस्तुतः मृतमाण्ड के घट अथवा घड़े से अधिक सम्बन्धित है। कश्मीरी संगीत के संगीत शास्त्री तथा प्रख्यात घट–वादक श्री मोहनलाल ऐमा का निजी अन्वेषण यह है कि मृतमाण्ड के घड़े ने ही कश्मीरी लोक संगीत छक्कूर को जन्म दिया है। छक्कूर लोक संगीत में घट वादक और घट वाद्य का एक महत्वपूर्ण स्थान है। घट वादन के सरगम से इसका स्वर–तालमेल मिलाया जाता है। घट वादक बाएँ हाथ से घड़े की ग्रीवा और इसके मुहँ के आसपास सस्वर ठोकता है, और दाएं हाथ से इसके निचले गोलाकार भाग को थपकियाँ भरकर नत, उन्नत, द्रुत और अतिद्रुत गति से बजाकर लोकगीत की धुन का तालमेल बिठाता है। बहुधा घट–वादक छक्कूर लोक–संगीत को अति मधुर बनाने के लिए दोनों हाथों की कलाइयों से घुघरूं बांधकर धुनक से सस्वर ठोक देकर बजाता है। घट–स्वर और घुंघरू या पायलों का स्वर युगपात् बजाने से मोहक नाद उत्पन्न करके उल्लासपूर्ण मादक संगीत का समारोह आयोजित होता है। घट–वादन अथवा कुम्भ वादन का सशक्त प्रमाण कश्मीर के विश्व प्रसिद्ध इतिहासकार कल्हण की राजतरंगिणी में ईसा को ग्यारहवीं शतीं के कशमीर नरेश महाराज उचल के समय उपलब्ध होता है– हे कुम्भवादनै मुण्डमण्डनैश्चाकतमिया अर्थात् वे अपना मुंडा हुआ सिर कुम्भ वादन या घट वादन के समान बजाते रहे।

छक्कूर के साथ एक ओर उल्लेखनीय वाद्य कश्मीर तुम्बक नार है वैदिक भाषा में तुम्बा एक लम्बी पुष्ट लौकी को कहते हैं। ;। ापदक व्ूिसस कमअमसवचमक सवदह हंनतकद्ध और तुम्बक या तुम्बरम् एक प्रकार के वाद्य यन्त्रा को कहते हैं। कश्मीरी तुम्बक नॅर (वैदिक तुम्बक–नाडा) का वाद्य यन्त्रा आकार में लौकी के समान लम्बा होता है। इसका उन्मुक्त पिछला भाग हुआ खुला हुआ होता है, और बजने वाला आमुख ढोलक के आकार का वृताकार होता है। जिस पर बिल्ली आदि की खाल गोंद से चिपकायी होती है। मिट्टी की बनी हुई यह तुम्बक नाडी कश्मीरी तुम्बक नॉट अनुमानतः पूर्व ऋग्वैदिक युग के पर्यटक आर्यों का ही एक लोक वाद्य रहा हुआ है। जो वाद्य अभी भी कश्मीर के लोक जीवन में छाया हुआ तथा सुरक्षित है। इस तथ्य का संकेत प्रस्तुत करना आवश्यक बनता है कि घट वादन कश्मीरी नॉट वायुन(घड़े का बजाना) यदि पुरुष परक वाद्य रहा है तो निश्चय ही तुम्बक नार का वादन स्त्रीपरक रहा है। पक्की मिट्टी के बने हुए इस तुम्बक नार वाद्य यन्त्रा को महिलाएँ आलथी–पालथी मारकर अपनी बाई जाँध पर बिठाकर बजाती है।

सम्भवतः बाई जांघ के मांसल स्थल पर बिठाने पर यह भी कारण है कि कहीं यह पक्की मिट्टी का वाद्य यन्त्रा टूट न जाए। वादक महिलाएं बाई बाह की कोहनी के सहारे इस वाद्य यन्त्रा को आराम

से पकड़ बाएँ हाथ से प्रथमतः विलम्बित और दाएं हाथ से निरन्तर द्रुत थपकियों को लेकर धुन के अनुकूल बजाती है।

कश्मीर के सुदुर जनपदों और गांवों के खोज–पर्यटकों में कुछ एक तथ्यों का सही रूप उपलब्ध हुआ जिसके आधार पर यह स्वीकारना तर्कसंगत बनता है कि इस आदिम एवं सनातन युगों से ही छक्कूर वादन का आरम्भ घट वादन से ही हुआ करता था। इस तथ्य का लोक परिवेश अभी भी कश्मीर के सुदूर गांवों और आधुनिक कोलाहल से अनछुए जनपदों में सुरक्षित है। इस छक्कर वादन के व्यवसाय–परक वादन छक्कर गायन के प्रारम्भ में पुरूष नर्तक के द्वारा इसको शुरू करते हैं। पुरुष नर्तक विलम्बित लय में गेय पद का उच्चार करता है और अपनी आंगिक एवं वाचिक भाव मुद्राओं का प्रदर्शन करके इस लोक–भाव में मोहकता उभारता है। गायक–टोली के छः सात साथी नट द्वारा उच्चारित गेय पदों का अनुसरण करते हैं। धीरे–धीरे यह लय उन्नत होकर दुत लय को पकड़कर अपने नृत्य हाव–भावों के साथ तथा गोलाकार स्थल के दायरे में नाचकर इसका समापन करता है। पर कश्मीर के सुदूर प्रान्तों में इस समय भी छुक्कर वादन के आरम्भ में घट–वादन का महत्व अनिवार्य है। घट–वादक घड़े पर सस्वर थपकियों से अलाप देकर आरम्भ करता है। वादक की उंगलियों से छल्लेदार अंगूठियाँ लगी होती है। और कभी कभार पायल या घुंघरू भी कलाइयों में जुड़े हुए होते हैं। शुरूआत विलम्बित लय से होती है और टोली के गायक इसका अनुसरण करते हैं। धीरे–धीरे यह विलम्बित लय उन्नत होकर द्रुत लय में परिसरण करती है और गायन के पूर्ण उत्कर्ष की स्थिति पर इसका विराम होता है। इसके उपरान्त पुनः गायन की कड़ी आरम्भ होती है।

कश्मीरी हिन्दू समाज में जब भी यज्ञोपवीत संस्कार या विवाह संस्कार का आयोजन होता है तो इस लोक संगीत अर्थात् छूक्कर वादक का अस्तित्व विशेष बनता है। यहाँ तक कि जिस दिन तुम्बक नॉर (वैदिक तुम्बक नाड़ी) अथवा वाद्य के लिए घट को खरीदना होता है प्रथमतः पंचाग की देखकर शुभ मुहुर्त के दिन घट और तुम्बक नॉर की खरीददारी की जाती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दू समाज में घट और तुम्बक नॉर का कितना महत्व है। कश्मीर के हिन्दू समाज में यज्ञोपवीत या विवाह के अवसर पर छॅक्कर वादक का आरम्भ लेपन के दिन से ही होता है जो निरन्तर चार–पांच दिन तक बना रहता है।

इस वादन की परम्परा मेंहदी रात तक बनी रहती है। यदि विवाह का उत्सव होता है तो उस स्थिति में छूक्कर वादन की परिपाटी बहु के आगमन तक बनी रहती है। कश्मीरी हिन्दू समाज में छूक्कर वादन की दो विभिन्न विधाएँ रहा करती है। लेपन से मेहंदी रात तक प्रायः घर और सम्बन्धियों को महिलाएँ तथा अडोस–पड़ोस की महिलाएँ ही इसमें अधिकांश रूप से इस लोक वादन में सक्रिय भाग लेती है। किन्तु घर–वादन के लिए या तो घर का कोई पुरूष साथ देता है या किसी को पैसे देकर जुटाया जाता है। मेहंदी की गायन–रात के लिए व्यवसायपरक टोली का आयोजन किया जाता है। इसमें हारमोनियम थाली, घट, तुम्बकनीर, छनका कांसे की प्याली, चुमुटा और भी स्थानीय वाद्यों का प्रयोग होता है। अधिकांश रूप से गेय–पत लीलाएँ अथवा कश्मीरी भाषा के गीत ही इसमें गाये जाते हैं।

जहाँ पूरे देश में घड़ा लोक वाद्य के रूप में प्रसिद्ध है। विभिन्न प्रान्तों में इसे अलग अलग नामों से जाना जाता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हरियाणा प्रदेश के लोक संगीत वाद्य वादक लय तथा ताल के लिए वाद्यों पर अधिक निर्भर करते, ठीक उसी प्रकार जैसे कुछ लोक गायक डंडे बजाकर, कुछ ताली बजाकर, भड़भुजा जाति के लोकगायक सूप बजाकर, कुम्हार जाति के घड़े बजाकर, लौहार जाति लोहे की छड़ से ही लय का पूर्ण आनन्द लेते हैं। इसका कारण पुत्रों के समय पर जो भी उपकरण वाद्योचित उपलब्ध होता है ये उसी का उपयोग कर लेते हैं। इस प्रदेश का घड़वा वादन इस कला का जीता–जागता उदाहरण है। पंजाब की महिलायें तो कभी–कभी ढोलक के अभाव में घड़े को उल्टा

रखकर (मुहँ नीचे की ओर पृथ्वी पर टिकाकर) उस पर पत्थर के टुकड़े से आघात कर अपने गीतों के साथ बजाकर इसका प्रयोग करती है। इस प्रकार घड़ा लय व ताल का सुन्दरतापूर्वक प्रदर्शन करने वाला भारत का एक उपयोगों धन वाद्य है।

लोक संगीत में ढोलक, मंजीरा, झाँझ, घंटी, लोकताल वाद्य है। लोक संगीत में लयात्मकता का ऐसा उदाहरण देखने को मिलता है जब उनके द्वारा ऐसी लय संगतियों की सृजना की जाती है कि बड़े–बड़े तबला और पखावज वादक स्तब्ध रह जाते हैं। इस प्रदेश के कुछ गीत आफबीट से शुरू किए जाते हैं। इन गीतों को अपनी ही विशिष्ट लय है।

रागिनी हरियाणा की खास लोक गायकी है। प्रारंभ में इसके स्वतन्त्रा गायन का प्रचलन नहीं था। फिर ज्यों ज्यों साँग (स्वांग) की लोकप्रियता बढी, साँग में मुख्य रूप से प्रयुक्त की जाने वाली गायन शैली रागनी ने जनमानस को ऐसा प्रभावित किया, इतना मुग्ध किया कि वे रागनी के दीवाने होकर उससे गहरे जुड़ते चले गये। बीसवीं शती के द्वितीय दशक के आस–पास मटके का प्रयोग रागनी के समय लयबद्धता के लिए किया जाने लगा। धीरे–धीरे यह एक रिवाज ही बन गया। हरियाणा में मटके को घड़वा कहते हैं। सुर देने के लिए घड़वे के साथ, हरियाणा में सारंगी की बजाय बैंजों का उपयोग किया जाता है। हारमोनियम तो रहता ही है, किसी विशेष तैयारी तथा तड़क–भड़क व माइक के बिना, खुले मंच पर, घड़वा बैंजों वाली रागिनियों का कार्यक्रम मनोरंजन का सबसे सरल व सुलभ साधन है।

रागनी की घड़वा बैंजों शैली में मिट्टी से बने खाली मटके को हाथों से या फिर कंकर पत्थर के टुकड़े से बजाया जाता था। बाद में मटके के मुँह पर खड़ का मोटा मजबूत टुकड़ा कसकर बाँधा जाने लगा। वादक मटके के मुहँ पर कसी हुई रबड़ की झिल्ली पर एक हाथ से थाप मारता है और दूसरे हाथ से वह मटके के पेट (शरीर) पर ताल देता है, किन्तु इस प्रकार देर तक बजाने से हाथ में दर्द होने लगता था, अतः ऐसी वस्तु की तलाश थी जो आसानी से सुलभ हो और मजबूत भी।

रबड़ के मोटे मजबूत टुकड़े की तलाश में हवाई चप्पल की तली को आवश्यकतानुसार आकार देकर प्रयोग किया जाने लगा। सबसे पहले पालियूरेथिन जैसे हल्के पदार्थ से बनी हुई चप्पल की तली का प्रयोग सम्भवतः 1970 के दशक में शुरू हुआ था। इससे पूर्व इसका उपयोग व्यक्तिगत या छोटे मोटे साधारण और सामूहिक मनोरंजनार्थ पाली (ग्वाले) तथा खेत के रखवाले के द्वारा ही किया जाता रहा होगा।

धीरे–धीरे घड़वा वादन के लिए हवाई चप्पल के तले के टुकड़े को नकार दिया गया। अब इसका स्थान किसी मजबूत और अपेक्षाकृत मोटे चौड़े रबड़ के पट्टे के टुकड़े ने ले लिया है।

गायन में तंग मुहँ वाले सामान्य आकार के मटके का प्रयोग किया जाता है जो पकी मिट्टी का मजबूत पात्रा हो। कम पके मटके से एक तो खोटी खनक वाली ध्वनि निकलती है, फिर वह जल्दी टूट जाता है। वैसे जब रागनी गायन की प्रतियोगिता छिड़ी हो, तो घड़वा वादक को उसे तोड़ने में भी मजा आता है। पुख्ता –से –पुख्ता मटका भी जोशीले वादक के उत्साह के समक्ष हार मानकर दो–चार रागनियों में साथ निभाकर अन्ततः टूट जाता है। मटका टूट जाने से गायन प्रभावित या बाधित न हो और लय व ताल कायम रहे, इसलिए एक–एक गायक के साथ कभी–कभी पाँच–छह घड़वा–वादक होते हैं। वादन करने के साथ–साथ वे 'टेक' भी बोलते जाते है। प्रतियोगिता के समय तीन–चार मजबूत मटके पहले से तैयार रखे जाते हैं ताकि एक टूटे तो दूसरा तुरन्त उसको जगह ले सके।

यह भी एक रोचक तथ्य है कि ढोलक, हारमोनियम, सारंगी तथा नक्कारे जैसे पारम्परिक वाद्यों के साथ गाई जाने वाली रागनी की अपेक्षा, घड़वा, बैंजों के तालमेल से गाये जाने वाली रागनी हरियाणा में अधिक लोकप्रिय है और अधिकतर ठेठ ग्रामीण किस्म के हरियाणवीं जन, सुरीले वाद्यों के संगीत से अधिक मटका जैसे साज और बैंजों पर गाई जाने वाली रागनी के दीवाने हैं हालत यह है कि गंभीर

आलोचना और स्थापित कलाकारों का जमकर विरोध करने के बावजूद घडवा बैंजों वाली रागनी मंचों पर अपनी सफलता और लोकप्रियता का परचम लहराने के साथ साथ रेडियो, टी0वी0 तथा आडियो–विडियो कैसेट तक में शान से प्रवेश कर चुकी है और हरियाणा को इस लोक गायकीं को अन्य प्रदेशों में भी रूचिपूर्वक सुना जाने लगा है।

हरियाणवीं गीत–संगीत की अच्छी समझ रखने वाले श्री अविनाश सैनी के अनुसार, घड़वे–बैंजों की इस लोकगायन शैली को यदि जीवित रखना है तो कलाकारों को परिश्रम करने की आवश्यकता है। फिल्मी धुनों व अश्लील रागनियों की बैशाखी छोड़कर उन्हें परम्परागत लोक धुनों का प्रयोग करना होगा और अपने गायन में कशिश उत्पन्न करते हुए वर्तमान समय के कथानकों से जुड़ी रागनियाँ गानी होंगी। समसामयिक विषयवस्तु वाली रागनियां ही लोगों को आकर्षित कर सकती हैं। मटकावादकों को पर्याप्त श्रम और वादन में विविधता लाने की दरकार है। इसके लिए उन्हें कुछ नए प्रयोग भी करने होंगे।

बदलते समय के अनुसार स्वयं को न ढाल पाने, नवीनता के अभाव, अत्यन्त महंगे होंगे तथा प्रदर्शन में अश्लीलता आ जाने के कारण सांग की लोकप्रियता दिनो दिन घटती गई और इसी के साथ घड़वा–बैंजों की रागनियों का प्रचलन बढ़ने लगा। किन्तु अब रागनियों का भी स्तर और गुणवता वह नहीं रही जो उनकी परम्परागत ज्ञान और बुजुर्ग कलाकारों के तथा स्थापित गायकों के समय में थी।

वाद्य यन्त्रा के रूप में इस पर लोक गीतों की ताल सुन पड़ती है तो कहीं रंग–बिरंगी तूलिका से इन पर ऐसी मनमोहक चित्राकारी होती है कि देखते ही बन पड़ता है। छोटे–बड़े घडों को एक दूसरे पर रख कर लोक–वेशभूषा में हरियाणवीं स्त्राी पुरुषों के मण्डल तैयार किए जाते हैं। जिन्हें विभिन्न अवसरों पर लगने वाली प्रदर्शनियों में देखने का अवसर प्राप्त होता रहा है। रंग–बिरंगे मांडनों में चित्रिात गोल गोल छिद्र निकाल कर अन्दर दीपक रखे घड़े सिर पर रख लोक–नृत्य करती हुई झूमती–बलखाती लोक वेशभूषा में महिलाओं का प्रदर्शन दर्शकों को लौटते हुए यही अनुभूति लेकर जाने को बाध्य करत है कि जैसे किसान–संस्कृति में विविध रंगीनी है, वैसे ही है यहां के लोग।

खास स्थल तो यहां के अधिकांश निवासियों का उनका खेत है। उनके इस खेत में भी घड़े को बड़ा महत्वपूर्ण कार्य मिल जाएगा। काला घड़ा खेत के बीच में किसी लकड़ी पर उल्टा टंगा दीख पड़ता है इसके पीछे प्रयोजन यही है कि पशु–पक्षियों को खेत में किसी व्यक्ति के होने का आभास मिलता है, और वे फसल को हानि नहीं पहुँचा पाते।

हरियाणवीं श्रम–जीवी हैं। जनसंख्या का अधिकांश भाग ग्रामों में निवास करता है। पारिवारिक जीवन में खास तौर पर गांवों में आज भी सामान रखने, सब्जियां आदि पकाने और दही मथने आदि कार्यों में घडों का ही प्रयोग किया जाता है।

इस प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में भी किसान प्रदेश कहलाने वाले हरियाणा का निवासी अपने प्रदेश की माटी के बने घड़े का उपयोग करने में ही गौरव अनुभव करता है। अपेक्षाकृत कांच, पीतल और घड़े अपनी आकृति, कलात्मकता, मजबूती और विविधता के लिए प्रसिद्ध है। यहां की एक जाति विशेष का तो यही जीवन यापन का एक मात्रा साधन भी है।

सन्दर्भ

1. भारतीय मिथकों में प्रतीकात्मकता डॉ उषापुरी विद्यावाचस्पति, सार्थक प्रकाशन नई दिल्ली–1997
2. कश्मीरी लोक संगीत– डॉ उषा बागाती, निर्मल पब्लिकेशंस दिल्ली–1998
3. हरियाणा के सांगों में सौन्दर्य निरूपण – डॉ विजयेन्द्र सिंह हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़ 1988

4. पंजाब की संगीत परम्परा – गीता पैन्तल, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली 1988
5. ब्रज संस्कृति में संगीत – अन्जू शर्मा, राधा पब्लिकेशन्स दिल्ली 1996
6. ब्रज की लोक संस्कृति, गिरीश कुमार चतुर्वेदी कल्पतरू दिल्ली 1998
7. Musical Instrument B.C. Deva, National Book Trust नई दिल्ली 1995
8. भारतीय संगीत वाद्य डॉ लालमणि मिश्र, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली– 19
9. राजस्थान का लोक संगीत– शन्नो खुराना सिद्धार्थ पब्लिकेशन्स नई दिल्ली – 19
10. हरियाणा संस्कृति एवं कला – डॉ संतराम देशवाल, हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकूला।
11. हरियाणा– साहित्य और संस्कृति डॉ पूर्णचन्द शर्मा हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़
12. हरियाणवीं लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ गुणपाल सांगवान हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़ 1989
13. लोक साहित्य और सांस्कृतिक दिग्दर्शन–डॉ जयभगवान कौशिक अविराम प्रकाशन दिल्ली–2008
14. हरियाणवीं लोकगीतों का पारम्परिक सम्बन्ध रीत तथा गीत, डॉ रमाकान्त, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 2008
15. पंजाब के संस्कारगत लोकगीतों का विश्लेषण, डॉ सुखविन्दर कौर, बाढ़ शिवहरि प्रकाशन, दिल्ली–2002

भारतीय संस्कृति में मृत्यु सम्बन्धी संस्कार हरियाणवी मृत्युसम्बन्धी संस्कार पर होने वाली रीत एवं नाट्य का अध्ययन।

दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार
रोहतक, हरियाणा
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

मृत्यु हो जाने पर मृतक शरीर के लिए जो सस्कार किये जाते है। उनको अन्त्येष्टि–संस्कार नाम दिया गया है। हिन्दू परम्पराओं के अनुसार इस अन्तिम संस्कार में मृत शरीर को अग्नि में जला दिया जाता है। शवदाह की प्रथा वैदिक युग से चली आ रही है। वेदों में शव को जला देने का विधान है यजुर्वेद का वचन है कि शरीर का अन्त भस्म होना ही है।

मानव जीवन का यह अन्तिम संस्कार है जो मृत्यु के पश्चात् किया जाता है। अथर्ववेद में अन्त्येष्टि संस्कार अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट रूप में वर्णित है। इस पर पूरा काण्ड ही दिया गया है। इसके अनुसार शव को घर से निकाल कर गांव से बाहर ले जाया जाता था इस प्रयोजन के लिए विनियोज्य मंत्र में कहा गया है कि तुम्हारे जीवन के वहन के लिए मैं इन (दो बैलों) को जोतता हूँ। जिससे तुम यमलोक को जा सको, जहां पुण्यकर्मा लोग जाते है। मृतक का पैर सुतली से बाँध दिया जाता था। जिससे वह भाग न जाए। मृतक के साथ बाल बिखराये हुए रूदन करती हुई स्त्रियां जाती थी तथा उसके दाह के पश्चात् अस्त–व्यस्त केसों वाली स्त्रियॉ दोनो हाथों से छाती पीट–पीटकर चिल्लाती हुई नृत्य करती थी।

पत्नी का चिंता पर लेटना

मृतक की पत्नी प्राचीन परम्पराओं (धर्मपुराणम) का पालन करते हुए उसकी बगल में चिता पर लेटती थी। क्योंकि दूसरे मंत्र से स्पष्ट होता है कि वह अपने प्रियजनों द्वारा चिंता पर से पुनर्विवाहित जीवन बिताने के लिए उठा ली जाती थी। 'हे नारी' उठो, इस जीवलोक में आओ, तुम निष्प्राण व्यक्ति के साथ सोयी हो, इसे छोड़ दो। तुम्हारा हाथ पकड़ने वाला यह तुम्हारा पति है (दयिषु) तुम अब पति–पत्नि के सम्बन्ध से मुक्त हो। मैंने मृतक के लिए जीवित लेटी हुई पत्नी को देखा। यानी वह गहरे अंधकार में आवृत थी तब मैंने उसे बाहर निकाला। इन उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि पत्नी का पति के चिता पर लेटना केवल परम्परा का पालन मात्र था स्त्रियां पति के मरने पर देवर इत्यादि से दूसरा विवाह कर लेती थी। दूसरा पति वरण करने का अन्यत्र भी स्पष्ट उल्लेख है।

अगले मंत्र में कथन है कि यह गोपति तुम्हारा है इससे तुम प्रेम करो। इससे प्रतीत होता है कि चिता पर लेटी हुई स्त्री गोपति के घर की थी और गोपतियों में विधवा विवाह का प्रचलन रहा होगा।

मृतक के लिए पाथेय

मृतक को नहला कर वस्त्र पहनाया जाता था। इसके पश्चात् उनके हाथ में आने वाले संकटों से सुरक्षा के लिए दण्ड ओर धनुष दिया जाता था। परन्तु पुनः उसे ले लिया जाता था। चिंता के पास बकरे की बलि भी दी जाती थी और अग्निदेव से प्रार्थना की जाती थी 'हे अग्नि तुम्हारी ज्वाला का भाग यह बकरा है, उसे तुम जलाओ इस प्रकार इसे पुण्य लोक में ले जाओ।

चिता पर अग्नियों का आवाहन

चिता को जलाने के लिए अग्नि का आवाहन किया जाता था और प्रार्थना की जाती थी कि हे अग्नि, इस मृतक को आगे, पीछे सब और से सम्यग् रूप में जलाकर अच्छे लोक में ले जाओ। मृतक के प्रत्येक अंग को जलाकर चिंता की अग्नियां उसे सूर्य में मिल जाती थी। तथा आत्मा वायु में। अच्छे कर्मो से (धर्ममिः) वह पृथ्वी लोक ओर स्वर्ग लोक दोनों में व्याप्त हो जाता था। यदि तुम्हारे शरीर का कल्याण हो तो वह औषधियों में या पवित्र जल में जाए। उल्लेखनीय है कि आत्मा को वायु से सगीकृत किया गया है। अन्यत्र भी वायु को प्राण कहा गया है। इस प्रकार दाहक्रिया सर्वश्रेष्ठ समझी जाती थी, जिसमें मृतक के सभी अंग भस्म होकर पंचतत्वों में मिल जाते थे।

शव दाह के पश्चात् शमशान भूमि पर उपस्थित लोगों के कुशल क्षेम की कामना की जाती थी। यह प्रार्थना की जाती थी कि प्रेत कुल की नारियां बैधव्य रहित हो तथा सर्पिस और अंजन से युक्त रहें, अश्रु रहित, रोगरहित और आभूषणों से युक्त हो तथा अच्छी सन्तानों को देने वाली हों। मृतक को अन्तिम विदा दी जाती थी। उसको सम्बोधित करके कहा जाता था कि अपने संयम ओर सुकृत्यों (इष्टापूर्त) से संचलित हो पितरों के साथ स्वर्गलोक में जाओं। स्वर्ग लोक के शासक सम्राट से प्रार्थना की जाती थी कि जो हमारे पिता ओर पितामह पितरों के स्वर्गवासी है सम्राट उनके शरीर को यथेष्ठ रूप में बनायें। इस प्रकार मृतक की सुख–सुविधा के लिये यह अन्त्येष्टि संस्कार किया जाता है।

शवविसर्जन की अन्य विधियाँ

पहली का अध्ययन हमने कर लिया है जिसके अनुसार मृतक व्यक्ति को चिंता पर रखकर जला दिया जाता था। परन्तु एक मन्त्र में दग्ध करने के अतिरिक्त अन्य तीन विधियों का भी विवरण प्राप्त होता है। उसके अनुसार मृतक को समाधिस्थ (निखात) किया जाता था। तीसरी विधि में मृतक को परित्याग कर दिया जाता था। जब उसके मांस पशु–पक्षी आदि जीव खा लेते थे तो उसकी हड्डियां को समाधिस्थ किया जाता था। " जो समाधिस्थ है, जो दग्ध है और जिन्हें खुले स्थान में छोड़ दिया गया (उद्विता) था, हे अग्नि, उन सभी पितरों को हविष खाने को बुलाओं। उस काल में ये चारों विधियाँ श्लाधनीय थी ओर चाहे दग्ध पितर हो या अन्य विधियों वाले (अदग्ध) पितर हो, सभी स्वर्ग में स्वधा के द्वारा मुदित हुए समझे जाते थे। दग्ध ओर अदग्ध विधियों में कौन प्राचीनतम् है कहना कठिन है। सच में तो ये विधियाँ सभी आर्य देशों में प्रचलित थी। शवनिखात का प्रचलन सम्भवतः पहाड़ी जातियों ने किया होगा।

शवनिखात

व्यक्ति की मृत्यु होने पर उसे घर से निकाल दिया जाता था। मृतक को ढोने के लिए किसी शवयान का उल्लेख नहीं है। यह साधारणतया बैलगाड़ी पर रखकर ले जाया जाता था। एक मन्त्र में शव को गाड़ी पर रखने का संकेत है। मृतकों की समाधियां गांव के समीप ही कहीं बनाई जाती थी क्योंकि मंत्र में परिग्रामादित पद इसी आशय का द्योतक है। समाधि बनाने के लिए सम्भवतः कुछ नियम थे। गड्ढे की लम्बाई–चौड़ाई और गहराई के सम्बन्ध में कुछ विवरण प्राप्त होता है। एक मन्त्र से ज्ञात होता है कि समाधि की लम्बाई चार पग की, चौड़ाई तीन पग और गहराई नाभि पर्यन्त होती थी। अन्त्येष्टी सूक्त के कुछ मंत्रों में इमां मात्रा स्पष्ट रूप से समाधि के परिमाण का सूचक है। सायण ने इमां मात्रां का अर्थ एतावती, शमशान देशस्य परिमाणम् क्रिया है। अर्थववेद के सूत्रकार कौशिक ने भी चार मन्त्रों का प्रयोग समाधि परिमाण के लिए किया है। शतपथ ब्राहमण में समाधि को मृतक के परिमाण का बनाने का उल्लेख है पुरूषमात्रमेव समाधि को चारों ओर से इतना सुदृढ़ बना दिया जाता था कि सौ वर्ष तक स्थिर रहे।

समाधि स्थ करने के पूर्व शव सरंक्षण के लिए पृथिवी से प्रार्थना की जाती थी। पृथिवी इसके लिए शरण दो। इन्द्रजाल का प्रयोग शमशान पर भी किया जाता था जिससे दस्यु लोग प्रविष्ट न हो। ये दस्यु लोग सम्बन्धियों की भांति पितरों में मिल जाते है। मृतक की शरीर को समाधि में रख देने पर उनके साथ उसकी पत्नी भी लेटती थी। ऐसा वह प्राचीन परम्पराओं के अनुपालनार्थ करती थी। परन्तु इसके बाद वाले मन्त्र से ज्ञात होता है कि वह अपने प्रियजनों द्वारा हाथ पकड़ कर उठा ली जाती थी इससे ज्ञात होता है कि कभी–स्त्रियां स्वेच्छा से पति के साथ समाधिस्य हो जाती थी। यह प्रथा भारत में विधमान थी। लोथल के उत्खनन से तीन समाधियां प्राप्त हुई है जिनमें प्रत्येक में दो अस्थि पंजर मिले है। ये सम्भवतः स्त्री और पुरूष के थे।

समाधि में मृतक के साथ भोजन की सामग्रियां रख दी जाती थी। इसके पश्चात् समाधि को पार दिया जाता था। हे पृथ्वी तुम इसे उसी प्रकार ढक लो जैसे माता पुत्र को तथा स्त्री अपने वस्त्र से पति को माता पृथ्वी के वस्त्र से तुम्हें आच्छादित करता हूँ जीवों में जो कल्याणकारी हो वह मुझ में आये और पितरों में स्वधा तुम्हें मिलें। इस प्रकार समाधि को पाट दिया जाता था और प्रतीक के रूप में स्तम्भ गाड़ दिया जाता था। मृतकों के सम्मान में निर्मित ये स्तम्भ आदि प्रतीक मनुष्यों के उस मूल प्रकृति के द्योतक है जिसका अवसान मिस्त्र के पिरामिडों ओर भारत के ताजमहल में होता है।

अस्थि निखात

प्रारम्भ में मृतकों के शरीर को खुले मैदान में छोड़ दिया जाता था या पेड़ों के खोखले में रख दिया जाता था। उसके मांस को कौवे (कृष्ण शकुन), चीटियां, सर्प या कुत्ते आदि खा लेते थे उसके पश्चात् पेड़ों के खोखलों से हड्डियों का चयन किया जाता था। अस्थि संचयन में सावधानी बरती जाती थी जिससे कोई अंग छूट न जाये। अस्थि संचयन का कार्य ज्येष्ठ पुत्र करता था। इस प्रकार अस्थियों को एकत्रकर वह पुरूषाकृति बनाता था। इस प्रकार अस्थि पन्चर को सैकड़ों छेद वाले घी के घड़े से नहलाया जाता था। तुम्हारे वे पितर लोग जो पहले के है और जो बाद के है उनके लिए सैकड़ों स्त्रोत वाला घृत का झरना प्राप्त हो। इस प्रकार नहलाई गई अस्थियों को उसके समबन्धी देखते थे ओर उसके लिए घर बनाते थे जिससे वह अमरता को प्राप्त हो। मृतक के पाथेय के लिए दूध और औषधियां और तिल मिला हुआ धान दिया जाता था। मृतकों को बकरा भी बलि रूप में दिया जाता था 'मरूत गण बकरे से उन्हें शीतल करते है। इसके पश्चात समाधि को पाट दिया जाता था। तथा प्रतीक स्तम्भ गाड़ दिया जाता था।

अस्थि क्लश को समाधिस्य करना

अर्थववेद के एक मन्त्र से अस्थि कलश को समाधिस्य करने की विधि पर प्रकाश पड़ता है– तुम्हारे जिस अंग को जातबेदश अग्नि ने छोड़ दिया है जबकि वे (अग्नि) तुम्हें स्वर्ग पहुचा रहे थे उसी को मैं पुनः आप्यामित करता हूँ। हे पितृगण आप लोग सभी अंगो सहित स्वर्ग में मुदित हो। अथर्ववेद के सूत्रकार कौशिक शवदाह के पश्चात् अस्थि सन्चयन का वर्णन करते हैं। उन्होंने इस क्रिया को पिण्डपितृ यज्ञ कहा है। अथर्ववेद में इसे प्राजापत्यमेध्य कृत्य कहा गया है ओर जिसे सायण ने पितृ में धारव्य के रूप में व्याख्या किया है। यद्यपि कौशिक सूत्र में इस क्रिया का स्पष्ट वर्णन हैं परन्तु अथर्ववेद में यह वर्णन अक्रमबद्ध है, तथापि महत्वपूर्ण है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि अथर्ववैदिक काल में मृतकों के अन्त्येष्टि के लिए विभिन्न विधियां थी। कुछ को चिता पर रखकर जला दिया जाता था। परन्तु कुछ लोगों में शवनिखात की प्रथा थी। समाज के कतिपय जनसमूह ऐसे थे जो मृतको के अस्थि को ही समाध्स्थि करते थे और कुछ लोग अर्धजलित हड्डियों को भी उन सम्पूर्ण क्रियाओं के पीछे एक आधारभूत विश्वास था। उन लोगों की धारणा थी कि इन संस्कारों के करने से उनके पितर स्वर्ग या पितृलोक में जाते

है। अतः यह धारणा कि इनके मृतकों के लिए कोई क्रमबद्ध व्यवस्था नहीं थी असंगत है। यम का शासन ज्योतिर्मय और अनन्त ऐश्वर्य वाला था। मृतकों के साथ उनकी वृद्ध पत्नियां दी जाती थी।

मरणोंतर जीवन

पितरों के लोकत्तर जीवन यापन के लिए स्वधा दी जाती थी। क्षत्रिय लोग अपने पित्तरों को स्वधा देते हुए प्रदर्शित है। वर्तमान समय में गया में नदी के किनारें पितरों को पिण्डदान दिया जाता है। अथर्वन काल में यह कर्म–काण्ड सरस्वती नदी के तट पर होता था। सरस्वती नदी को देवों का मुख कहा गया है जो लोग उसे धृत का हव्य प्रदान करते थे वह पितरों को मिलता था। उन लोगों का विश्वास था कि पितरों को श्रद्धापूर्वक पंचौदन देने से पितरों के मार्ग में निहित अन्धकार दूर हो जाता है। पितरों का मार्ग कठिन था। वहां पहुंचने से उन्हें आधा महीना (अधामसि) यानी 15 दिन लग जाते थे। इस प्रसंग में आधुनिक श्राद्ध प्रथा के अनुकूल प्रकाश नहीं पड़ता। हिन्दू समाज में चौदहवें और सौलहवे दिन श्राद्ध प्रथा है। परन्तु उपर्युक्त पन्द्रह दिन का आशय स्पष्ट नहीं है। फिर भी उन लोगों में पितरों के प्रति वही श्रद्धा वर्तमान थी जो आज है। उनके लोकोतर जीवन के लिए पिण्डदान और स्वधा दान दिया जाता था। धान (अन्न) में तिल मिलाकर स्वधा बनती थी। स्वधा से पितर लोग मुदित होते थे। ये वस्तुएं अग्नि में दी जाती थी।

पितृलोक

पितरों के लोक को पितृलोक कहा गया है। वहां का राजा यम है। पितृगण स्वधा देने से स्वर्ग (दिव) के मध्य में प्रसन्न होते थे। यह स्वर्ग आकाश (परमेध्योमन) ओर अन्तरिक्ष में था। मैक्समूलर महोदय ने पिता, पितामह और प्रपितामह के लिए पृथक–पृथक तीन लोकों का निर्देश किया है। परन्तु अथर्ववेद में एक स्थान पर पिता, पितामह प्रपितामह सबको अन्तरिक्षवासी कहा गया है। देवों के पिता और पुत्र स्वर्ग में साथ रहते थे। पितृलोक ओर स्वर्गलोक एक ही कहे गये है जिसे पितरो ने मर्त्यो के लिए बनायां पितरों के मार्ग का नाम पितृयाना था। जिससे सुकर्मा लोग जाते थे। पितरों को देवता ही कहा गया है। दोनों धुतिमान है।

स्वर्गलोक

यह अच्छे लोगों का लोक था। इसे उच्चतम प्रकाशमान लोक, अन्तरिवक्ष का पृष्ठ, द्वितीय अन्तविक्ष और तृतीय आकाश कहा गया है। तृतीय स्वर्ग से एक अश्वत्थ वृक्ष की कल्पना की गई है। जिसे देवों का घर कहा गया है। स्वर्ग में पहुंचकर मृत व्यक्ति माता–पिता और पुत्रों को देखते है। और अपनी पत्नियों तथा सन्तान से मिल जाते है। यहां का जीवन अपूणताओं ओर शारीरिक कष्टों से सर्वथा मुक्त समझा जाता था। व्याधियां पीछे छूट जाती थी ओर हाथ–पैर लूले या लंगड़े नहीं होते थें। स्वर्ग ऐन्द्रिय सुख के पर्याप्त साधन वर्तमान समझे जाते थे। वहां धृत से भरे सरोवर तथा दुग्ध, मधु ओर मदिरा की नदियां बहती थी। वहां उज्जवल विविध रगों वाली गायें थी जो सभी कामनाओं को पूर्ण करती थी। वहां न तो कोई निर्धन है ओर न तो धनवान, न शक्तिशाली ओर न शोषित।

नरक लोक

अथर्ववेद यम के लोक के विपरीत नरक लोक का राक्षसियों ओर अभिचारकों के आवास तथा एक अधो–गृह के रूप में चर्चा करता है। इसे अथर्ववेद में अनेक बार अधम अन्धकार और अन्ध अन्धकार कहा गया है तथा काला अन्धकार भी एक स्थान में कहा गया है। नारकीय यातनाओं का भी वर्णन किया गया है।

पितरों का महत्व

अथर्व्रकालिन समाज पितरों को देवों के तुल्य मानता था। उनकी समाज में बड़ी प्रतिष्ठा थी। पितृगण मनुष्य के प्रत्येक कार्य की देखभाल करते हुए प्रदर्शित किए गए है। उससे अपने किये गये

पापों की शान्ति के लिए क्षमा मांगी जाती थी यदि माता–पिता, भ्राता और पुत्र कोई अशुभ कार्य करता है। उसके प्रति हमारे सभी पितृगणों का क्रोध (मन्यु) शान्त हो। मनुष्य जो भोजन करता है और हवन करता है। वह पितरों का दिया है। इस प्रकार मनुष्यों का जीवन पितरों पर निर्भर समझा जाता था। सायण के मत में मनुष्य पुत्र पौत्रादि की उत्पति के लिए पितरों का ऋणी होता था। पिण्डदान देने से पितर लोग प्रसन्न होते थे तथा औषधि उनकी कृपा से क्लेशों को दूर करती थी। यज्ञ यज्ञादि और सुकुत्यों (इष्टापूर्त) से पितरों की रक्षा समझी जाती थी। पितरों की दिशा दक्षिण दिशा (जो अब भी मानी जाती थी) मानी जाती थी और उस समय कहा जाता था कि दक्षिण दिशा को पितरों के बाण रक्षा करते हैं। इसी सरंकार की प्रक्रिया हरियाणा प्रदेश में भी विद्यमान है। हरियाणा प्रदेश में अन्तिम सामाजिक मान्यता प्राप्त अन्त्येष्टि संस्कार है। वैसे तो लोक प्रतिभा को अपनी सृजन शक्ति का प्रदर्शन जन्म एवं विवाह संस्कार से सम्बद्ध भी प्राप्त है। मृत्यु के गीत शोक, करूणा तथा विलाप से युक्त होते है। इन गीतों में मृत स्त्री की मृत्यु के उपरान्त नाट्य किये जाते थे या पुरूष के गुणों को लेकर दिवंगत के अभाव में उत्पन्न कष्टों का उल्लेख रहता है।

अन्त्येष्टि संस्कार मानव जीवन के शोडस सस्कारों में से अन्तिम और महत्वपूर्ण है। अन्त्येष्टि कर्म उसको कहते है कि जो शरीर के अन्त का संस्कार है जिसके आगे उस शरीर के लिए कोई भी अन्य संस्कार नहीं है। इसी को नरमेध नरयाग, पुरूषयाग भी कहते है। इसे हरियाणा में मृत्यु संस्कार भी कह दिया जाता है। इस संस्कार की पुष्टि ऋग्वेद युर्जुवेद तथा मनुस्मृति ने भी की है। कालिदास ने भी कुमारसम्भव में कामदेव के भस्म हो जाने पर रति के विलाप का वर्णन किया है तथा इससे पूर्व रामायण ओर महाभारत में भी मृतात्माओं के प्रति शोकाभिव्यक्ति की बात मिलती हे। इसी प्रकार का विलाप–वर्णन कृष्ण द्वारा कंस के सहरोपरान्त उसकी रानियां भी करती हैं।

उर्दू साहित्य में मृत्यु सम्बन्धी शोक गीतों की बहुत प्रथा है। इन गीतों को मर्सिया कहते है जिनमें करूणा ओर शौक का मार्मिक वर्णन होता है। अंग्रेजी साहित्य में भी मृत्यु–सम्बन्धी शोक गीतों की काफी चर्चा है जिन्हें एलेजी कहते है। इन गीतों में दुःखानुभूतियों एवं शोक–सवेदनाओं की अभिव्यजंना बड़े मार्मिक ढंग से होती है।

यूरोप में किसी व्यक्ति की मृत्यु पर कुछ पेशेवर स्त्रियां बुलाई जाती है, जो मृत व्यक्ति के गुणों का वर्णन करती हुई विलाप करती है। यह विलाप एक विशेष प्रकार की लय में बद्ध होता है। इटली के दक्षिण भाग में भी इस इस प्रकार को प्रथा प्रचलित है।वहाँ भी मृत्यु के समय रोने के लिए किराये पर स्त्रिंया आती है। वे विशेष छन्द में शोक गीत गाती है।

इसी विश्व की सर्वमान्य प्रथा जिसे हम सोलहवां संस्कार कहते है को हरियाणावासियों ने भी मान्यता दी है। संसार में अपने प्रिय–जन के वियोग से बढ़कर छोटे–छोटे शिशुओं से छीनकर रूलाती है। कभी बहन से दुलारे भाई को छीनकर, कभी मां से इकलौते पुत्र को छीनकर, कभी पिता वियोग पुत्र को तो कभी पुत्र वियोग पिता को। इसी वियोग में कभी–कभी समाज डूबा सा नजर आता।

हरियाणा के सीधे–सादे लोग जीवन में अधिक जटिलताओं एवं कर्म–काण्डों पर तो विश्वास नहीं करते किन्तु कुछ लोक विश्वासों एवं मान्यताओं की मनौती करते हुए इस संस्कार का निर्वाह अवश्य करते है।

मृत्यु संस्कार का उपक्रम तभी आरम्भ हो जाता है। जब यह मान लिया जाता है कि अमुक व्यक्ति स्त्री या पुरूष को जीवन ज्योति बुझने को है। मृत्यु शैया पर पड़े व्यक्ति के प्राण पखेरू उड़ते ही उसे सामान्यतः तुरून्त नीचे उतार दिया जाता है। पहले तो चौका आदि लगाकर स्थान विशेष को स्वच्छ कर लिया जाता था तथा गंगा जल भी इस स्थान पर छिड़का जाता था। किन्तु अब यह प्रथा कुछ क्षीण हो गई हैं। लेकिन धरती माता की गोंद में सभी को सुलाया जाता है। इसके पीछे भाव यही है कि मिट्टी

का पुतला मानव आखिर मिट्टी की ही शरण लेता है। मृतक शरीर अरथी पर रखने से पूर्व उसका सिर दक्षिण की ओर करके रखा जाता है।

अरथी

अरथी आमतौर पर बांस की लकड़ियों की होती है। या फिर जो भी उपलब्ध हो तथा इस पर सरकण्डे या कहीं–कहीं कुश बिछाया जाता है। अर्थी बनती है इसी दौरान मृतक के शरीर को अन्तिम बार स्नान करके शुद्ध एवं स्वच्छ कर दिया जाता है। वह स्नान पुरूष का पुरूषों द्वारा तथा स्त्री का स्त्रियों द्वारा होता है। स्नान करवा कर मृतक को कफन जो आमतौर पर सफेद लट्ठे का होता है, दिया जाता है। अन्य मृतक शरीर से उतरे वस्त्र भी अर्थी के अन्दर ही बांध दिये जाते है। श्री देवीशंकर प्रभाकर ने शव के कफन की चर्चा में पुरूष हो तो सफेद कपड़ों की बात कही है। तथा स्त्री हो, तो रंगीन कपड़ों की बात कही है। किन्तु कफन अमीर–गरीब सभी को मिलता है।

मृतक की सूचना गली–मोहल्ले में, तो वैसे ही फैल जाती है किन्तु गाँव में प्रायः गांव को चौकीदार सूचना देता है। सभी लोग एक–एक लकड़ी कम–से–कम अपने हाथ में लेकर दाह संस्कार में शामिल होने के लिए चल देते हैं। उधर से अरथी को उठाया जाता है। यह काम स्वजनों में मृतक के बेटे या भाई करते है। अरथी वाहक चारों व्यक्ति बीच में स्थान परिवर्तन करते हैं। जो शव को आगे कन्धा दिये होते हैं, वे पीछे आ जाते है तथा जो पीछे कन्धा दिये होते हैं, वे आगे चले जाते है। यह स्थान प्रत्येक गांव में निर्धारित होता है। इसे बिचला वासा या कन्धा बदलने की रस्म कहा जाता है। बिरादी के लोग जो अरथी लेकर चलते है राम नाम सत् है, सत् बोले गत् है कहकर अपने आराध्य देव पुरूष राम को याद करते है तथा उसी के नाम में गत्य गति या कल्याण समझते हैं।

चिता

शव शमशान भूमि में पहुचंता है। वहां पहले से ही बिरादरी के लोग लकड़ियों के ढेर से चिता का निर्माण कर रहे होते है। शव के पहुंचते ही तेजी से चिता बनाकर उसके बीच में मृतक के शव को रख दिया जाता है। चिता पूर्ण होते ही घी आदि से लुथे हुए शव को आग देने का काम किया जाता है। यह काम भी अगर मृतक किसी का पिता है तो उसका सबसे बड़ा लड़का या भाई करता है। अगर स्त्री है तो उसका बड़ा बेटा या पति आग देता है। अगर इनमें से कोई नहीं, तब कोई नजदीक परिवार का व्यक्ति आग देता है। आग देते समय मृतक का नाम लेकर जोर से आवाज दी जाती है 'भई फलाणे आवै से आग'' यह आवाज समभवतः इसीलिए दी जाती है कि कहीं किसी देवी कारण से मृत देह में जीवन लौट आए तो उसे चेताया जाता है।

जब शव अधजला हो जाता है तो अरथी का एक बाजू तोड़कर उससे मृतक की खोपड़ी फोड़ी जाती है। इसे कपाल क्रिया भी कहा जाता है। इसका अभिप्रायः यही होता है कि खोपड़ी जो शरीर का कठोर भाग है कहीं जले बिना रह जाये और उसको शमशानों में ठोकरे लगती फिरें। इसके बाद सब लोग किसी पड़ोस के तालाब या कुएं पर स्नान आदि या फिर हाथ–पैर धोते है तथा कपड़े घर आकर साफ किये जाते हैं।

फूल ठाणा

जिस स्थान पर शमशान में मृतक के शरीर को जलाया जाता है उसका तीन दिन तक बराबर ध्यान रखा जाता है तथा तीसरे दिन उसकी अस्थियाँ उठाई जाती है। इसे फूल ठाणा कहते है। अस्थियाँ चुनकर उस स्थान पर सूत पूरने की बात श्री देवीशंकर प्रभाकर ने कही है, किन्तु हमने यह नहीं देखा है। अस्थियों को उठाने के दिन या अगले दिन उनको कोई व्यक्ति जो मृतक के स्वजनों में हो उसे गंगा में गढ़मुक्तेश्वर के स्थान पर विसर्जित कर देता है। लेकिन हरियाणा के लोगों को जो कुरूक्षेत्र की 40 कोस की धरती में बसते है कहीं जाने की आवश्यकता नहीं। यहां की पावन धरती का तो

कण–कण पवित्र है। गंगा में अस्थियों को पण्ड़े द्वारा वंश परम्परा कराया जाता है। वहीं पर पण्डो द्वारा वंश परम्परा का लेखा–जोखा भी रखा जाता है। जो बड़ उपयोगी है। अतः आर्थिक दृष्टि से विपन होने पर प्रत्येक पुत्र या प्रत्येक व्यक्ति अपने माता–पिता का या रिश्ते के मृतक की अस्थियाँ पावन देवसरिता गंगा में प्रवाहित करना अपना धार्मिक कृत्य मानता है।

तेरहवीं

भारतीय परम्परा के अनुरूप अन्त्येष्टि संस्कार पर हरियाणा प्रदेश में भी इस अवसर पर करूण गीत गाये जाने की परम्परा है। किन्तु अन्य संस्कारों पर गाये जाने वाले गीतों की भान्ति इस शोकावसर पर गाए जाने वाले गीतों में प्रसन्नता अथवा उछाह नहीं मिलती। विषाद की गहरी रेखा तथा कहीं–कहीं पर लोकोत्तर आश्वासन के संकेत भी प्राप्त होते है। मृत्यु के तेरह दिनों तक शोक मनाया जाता है।

पुरूष का तेरहवां (तेहरामी) तेरहवें दिन ओर स्त्रियों का बारहवे दिन होता है। इन दिनों में ब्राहमणों तथा महाजनों में तो केश मुंडाकर एक व्यक्ति क्रिया पर भी बैठता है किन्तु अन्य जातियों में ऐसा नहीं देखा जाता। इस प्रकार के शोक तथा मातम के वातावरण में तेहरामी वाले दिन यज्ञ होता है। ब्राहमणों को भोजन दिया जाता है। कहीं–कहीं दान–दक्षिणा तथा पाचों कपड़े देने की प्रथा भी है। अगर बड़े–बूढ़े की मृत्यु हुई हो तो इस दिन बड़े लड़के के सिर पर 'पगड़ी' बांधने की रस्म भी पूरी होती है। यह पगड़ी जिसके सिर पर बांधी जाती है उसी की ससुराल से आती है।

तेंहरामी के विषय में सोहनदास चारण का मत है कि लोकमानस के विचार से मृतक किसी न किसी रूप में समाज के मध्य अंवस्थित रहता हैं "पितर हो गया है और पंथ में आये हुए व्यक्ति की आत्मा को घर में होने वाले किसी विशिष्ट अनुष्ठान पर निमन्त्रित न किया जाए तो घर में अनिष्ट एवं उपद्रव होने लगते हैं इसलिए मृत्यु से बारह दिन तक विभिन्न प्रकार के गीतों और भजनों का रात्रि समय में आयोजन किया जाता है।

हरियाणा प्रदेश में मृत्यु संस्कार के शोकावसर पर गीत गाये जाने की किसी विशेष प्रथा का आयोजन नहीं है। प्रायः स्त्रियाँ मृत व्यक्ति के निकट बैठकर जोर–शौर से विलाप करती हैं और ह्रदय विदारक रूदन में ही अनेक बातों को दोहराती हैं। तेरहवीं के दिन स्त्रियाँ विलाप करती हुई अनेक गीत गाती है जिनमें निवेद भाव की प्रधानता होती है।

मृत व्यक्ति के तेरह दिन तक स्त्रियाँ निकटवर्ती रिश्तेदारियों से मुंहकाण (शोक प्रकट करने) को आती हैं। मुंहकाण पर आने वाली स्त्रियाँ गांव के बाहर से ही विलाप आरम्भ कर देती है। पुरूष की मृत्यु पर प्रायः निम्नंकित शब्दों को बार–बार दोहराया जाता है।

हाय–हाय बनड़ा पेच्ची आला
हाय–हाय बनड़ा सेहरे आला।

हरियाणा प्रदेश की प्राचीन परम्परा के अनुसार अतीतकाल में मुंह काण देने वाली स्त्रियों के साथ शोक गीत गाने में प्रवीण पेशेवर नाइन जाया करती थी। वे नाइनें लम्बे–लम्बे शोक–गीत विलाप करते हुए गाया करती थी ओर नाइन के पीछे–पीछे उन्हीं शोक गीतों के साथ अन्य स्त्रियां भी विलाप करते–करते गाया करती थी, फिर भी इन शोक गीतों में लयात्मकता और काव्य–तत्व रहते थे। शोक गीतों को नाइन द्वारा गवाये जाने की यह प्रथा अब प्रायः लुप्त होती जा रही है। परन्तु धनाढय व सम्पन्न परिवारों में अब भी कहीं–कहीं पर यह प्रथा देखने को कभी–कभी मिल जाती है। इसके अतिरिक्त हरियाणा प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में इन शोक गीतों का काफी प्रचलन है जिनमें मृत्यु की शोक संवेदना व्याप्त है। इन शोक गीतों को विलाप गान भी कहा जा सकता है।

हरियाणा प्रदेश के प्रत्येक नगर एवं गांव में मृत्यु के उपरान्त विलापाचार का प्रचलन है इस समूह विलाप–गान में नगर या गांव की बहुत सी स्त्रियां सम्मिलित होती है। ये स्त्रियां मृतक के परिवार के

प्रति संवेदना व्यक्त करने के लिए शव–यात्रा के समय सामूहिक विलाप गीत गाती है और नाइन या डुमनी आगे–आगे चलती हुई विलाप गीत गाती है और नाइन या डुमनी के द्वारा विलाप गीत के शब्दों को विलाप करती हुई स्त्रियां उन शब्दों को दोहराती है।

इसके अतिरिक्त मृतक के निकटवर्ती सम्बन्धी शोक अभिव्यक्त करने हेतु टोलियों में आते हैं ओर इन टोलियों में सम्मिलित महिलांए मृतक के गांव के गोरे से ही विलाप गान आरम्भ कर देती हैं।

हरियाणा प्रदेश में जामाता की मृत्यु बहुत दुःखदायी तथा मर्मस्पर्शी होती है। इस शोकपूर्ण अवसर पर गाया जाने वाला हृदय विदारक गीत निम्न प्रकार से हैः–

जब तौ घर तैं लीकडया गभरू सेर जवान,
हो गया सौण कसौण गभरू सेर जवान,
हाय–हाय गभरू सेर जवान–जवान
बाम्मैं बोल्ली कोतरी दहणै बोल्या काग,
गभरू सेर जवान, हाय–हाय गभरू सेर जवान
मारी क्यों ना कोतरी तन्नै मारया क्यों न काग
हाय–हाय बनड़ा पेच्ची आला।
कनऊ तेरी बांधी पालकी कनऊ तेरा करया सिंगार
हाय–हाय.....
भइयां बांधी पालकी, भइयां ने कर्या सिंगार,
हाय–हाय गभरू सेर जवान।
सुसरा का प्यारा हाय–हाय, सालां का प्यारा हाय–हाय,
चुडला की सोभ्या हाय–हाय, नाथ की सोभ्या हाय–हाय,
मेरी बेसर टूटी हाय–हाय सासड़ का प्यारा हाय–हाय।

कैसी व्यथा। जो समस्त श्रृंगार का आश्रय था, वह उठ गया इस शोक गीत में लोक गीत में मान्यता प्राप्त अपशकुनों की भी चर्चा है जैसे बाई ओर कोतरी जो एक जानवर होता है, बोल जाये तो अपशकुन होता है। इसी प्रकार दायीं ओर कांग (कौवां) बोल जाये तो अपशकुन होता है। यह लोक विश्वास है कि कोतरी और कौवें के बायें–दायें बोलने से मृत्यु भी हो जाती है। कितना भोला समाज। इसी प्रकार गीतों में आगे अर्थी को पालकी कहा है। क्या पता मृत्यु के पश्चात् सचमुच अच्छी जगह मिलती है। शरीर ही मरता है आत्मा तो अमर है। इसलिए पालकी में जाने वाला सम्भव है भाग्यशाली हो किन्तु शोकाकुल परिवार की युवा बेवा या विधवा का जीवन तो वास्तव में नरक बन कर रह जाता है।

विधवा–विलाप के बोलों में शोकाकुल परिवार में व्याप्त की यहीं रेखाएं उभरी है। गहन विषाद को कौन कहे। अश्रु प्रक्षलित मुख से निकलने वाली हुक कितनी हृदय–विदारक होती है। इसे कह पाना कठिन है।

अरे मेरे करम के खारे जल गये, अरू मोमी दूदाभ।
अरे मेरे करम के सुनरा मर गये रूठ गये मनिहार
बहू री मेरी मत रोवै मुझे लगा री लाल का दाग।
मां अरी धोले–धोले पहर कपड़े रांडा भेष भरावै।
अरी चले सुनरा के मेरी नाथ उतरवाने
अरी बिच्छू ने मांरा डंक लहर क्यूं ना आवै
अरी अपणा मन समझावण लागी, दो नैना में भर आया पाणी,
ए सास्सु जब धूसूं महल में दरी बिछौना सूना।

कुछ एक दिना की ना है मुझे सारे जन्म का रोना।
अरे याणी थी जब रही बाप कै मुझे सोच कुछ ना था
इब क्यूं कटैं दिन रात मुझ को एक दिना की ना सै।

ये गीत आधोपान्त शोक के ताने–बाने से बुने होते है। सच्चाई तो यह है कि गीतों में दुःख ही दुःख होता है ओर व्याकुलतावश निकलने वाला प्रत्येक शब्द हृदय को भेदता चला जाता है। कई–कई गीतों में तो मृतक के अंग–प्रत्यंग को स्मरण कर रोया जाता है। विवाहित पुत्री को मृत्यु पर हरियाणा के खादर के इलाके में निम्न गीत भी गाया जाता है।

मूंगफली सी आंगुली, हाय–हाय बच्ची सोने की चिड़िया।
नाक सुए की चोंच, हाय–हाय बच्ची सोने की चिड़िया।
होंठ पीपी के पात से हाय–हाय बच्ची सोने की चिड़िया।

गीत काफी लम्बा है तथा गीत की अन्तिम पक्तियां इस प्रकार हैः–

अरी तेरा बावल फिरै उदास, तेरी अम्मा जोहे बाट
भैया तेरा लेने आया, एक बार नैहर जाय।
चाची ताई तेरी रोवे उनको रोकन जाय
गहनों का डिब्बा भरा धरा है, एक बार पहन दिखाय।

लेकिन दिवंगत की ये स्मृतियां अब सदा के लिए यों ही भटकती रहेगी। विवाहित पुत्री को कहीं बागों की कोयल कहा है तो कही मोरनी लेकिन फिर भी इन गीतों की संख्या अधिक नहीं है। छोटें बच्चों की मृत्यु पर कोई गीत नहीं गाये जाते। इसी तरह कुंवारी लड़कियों की मृत्यु पर भी गीतों का आयोजन नहीं होता। बूढ़ों की मृत्यु पर भी गीतों का आयोजन नहीं होता। बूढ़ों की मृत्यु तो अक्सर इतनी दुःखदायी नहीं होती किन्तु युवक–युवतियों की मौत के घाव तो जीवन भर नहीं भरते। अतएव स्थान–स्थान के गीतों में विभिन्नता का होना भी स्वाभाविक है। असल में गीतों की सुध अन्य औरतों को ही होती है। जिसको वास्तव मे चोट लगती है। वह तो रोने के सिवाय कुछ सोच ही नहीं सकता या सकती।

उर्दू के मशहूर शायर इकबाल की ये पक्तियां भी इस अवसर पर बड़ी उपयुक्त हैः–

इश्क कभी महबूब के मरने से मर जाता नहीं
रूह में भ्रम बनके रहता है मगर जाता नहीं।।

खेड्डा–मृत्युलोकनाट्य

हरियाणा में खेड्डा लोकनाट्य मृत्यु के उत्सव के रूप में आयोजित किया जाता है। यह विवाहोत्सव की तरह धूमधाम से प्रदर्शित किया जाता है। इस पर व्यय भी वैसे ही दिल खोलकर करना पड़ता है।

इसी से हरियाणवी भाषा का मुहावरा 'खेड्डा करना' (जिसका अर्थ है ऐसा कार्य करना जिस पर अत्यधिक व्यय करना पड़े) बना है। यह नाट्य केवल उन्ही बूढ़े बडेरे व्यक्तियों के निधन पर खेला जाता है। जो सब प्रकार के सुखों एवं स्मृद्धियों का उपभोग करके अपने बेटे–पोतों को हॅसते–हॅसते छोड़कर स्वर्गगारोहण करते हैं। ऐसे सुखी एवं सौभाग्यशाली व्यक्ति के निधन पर सभी सगे–सम्बन्धी एवं मित्र–प्यारे एकत्र होकर आनन्द मनाते है। इस नाट्य के होने की सूचना महायात्राा के समय ही मिल जाती है। तात्पर्य यह है कि मृतक का परिवार खेड्डा मंगवाने पर खर्च करने का इच्छुक हो तो महायात्रा बड़ी शानोशोकत से बाजे–गाजों के साथ विमान के रूप में निकाली जाती है। जिसकी सूचना सभी रिश्तेदारों को दे दी जाती है।

मृत्युनाट्य खेड्डा की परम्परा चाहे वह भिन्न रूपों में हो रही हो आदिम काल से जुड़ी हुई है। डॉ रिजवे ने इसे नाट्योत्पति का मूल कारण माना है। उनका कथन है कि भारत, ग्रीक और यहॉ तक समस्त विश्व में नाटक की उत्पति मृतात्माओं की स्मृति में किए जाने वाले श्रद्धा–सम्पन्न अभिनयपूर्ण सामूहिक प्रदर्शनों से हुई। भारत के आदिम नाट्यों में अभिनेता मृतात्माओं का अभिनय करते थें, जिसका तात्पर्य दिवंगत आत्माओं को प्रसन्न करना होता था। लोगों की धारणा रही है कि ऐसे प्रदर्शनों से मृतक की आत्मा को स्वर्ग में शान्ति या मोक्ष मिलती है। डॉ मनमोहन शर्मा उक्त मत का समर्थन करते हुए लिखते है कि धार्मिक वाद के अन्तर्गत डॉ रिवजे के विचारों से हम सहमति प्रकट करते है कि समस्त विश्व में नाटकों की उत्पति मृतात्माओं के प्रति प्रकट की हुई श्रद्धा द्वारा ही हुई है। नाटकों का अभिनय मृतात्माओं के प्रति प्रीति प्रदर्शनार्थ होता था, शनै–शनै मृतक पूजा में अधिक आदर प्रदर्शित करने के लिए नृत्य–गान ओर अभिनय भी प्रारम्भ हुए। इस भांति नाटक–निर्माण में योगदान भी हुआ। यात्राओं (धार्मिक महात्सवों) के सुअवसर मनोविनोद तथा मनोरजंन के लिए खुले हुए लम्बे–चौंड़े मैदान में इस भाँन्ति की लीलाओं का प्रचलन प्रथम रहा है।

उल्लास सूचक नृत्यों के अतिरिक्त पूर्ण आयु प्राप्त करने वाले मृत–व्यक्ति के शव को संस्कार के लिए ले जाते समय भी अनेक देशों में नृत्य की प्रथा थी। ई0 पू0 पाचवीं शबाब्दी से थेसियस जाति में यह प्रथा पाई जाती थी। रोमन जाति में मृतक को दफनाने के लिए ले जाते समय पूर्वजों की आकृति के मुखोटे पहनकर जुलुस के साथ नृत्य करने की प्रथा थी। बर्मा के नाट, जापान के कंगूरा, इम्यूसिनियस के रहस्य ओर मिश्र के ओसिरिस जातियों में मृत व्यक्तियों की उपासना और तत्सम्बन्धी नृत्य प्रचलित थे।

नाट्याचार्य डॉ प्रभुनारायण शर्मा मृत्युनाट्य के प्राक्ट्य में भय का भाव मानते है। उसका मत है कि मानव की इस भयवृति ने ही उसे मृतक–पूजा की कल्पना करने के लिए विवश कर दिया था। इन्ही अति भौतिक तत्वों को प्रसन्न करने के लिए प्रकृति के अनुकरण पर की गई भौडी पर लयात्मक उछलकूद, अस्फूट ध्वनि, गीत और सामूहिक हुल्लड़ आदि के रूप में ताली वाध ही आधुनिक लोकनाट्य के प्राक रूप के चिन्ह थे। और आगे भी ये ही रहे।

मृत्यु के भय से मुक्त होने के लिए मेक्सिकों में प्रतिवर्ष 2 नवम्बर को मृतक दिवस का उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। उतरी अमरीका या यूरोप की तुलना में जहां बन्द दांतों के बीच मूर्च्छित चीख के अतिरिक्त कुछ नहीं, मेक्सिकों में विधमान मृत्युधर्मिता इतनी हूसड़ और हसोड़ है कि भारत के अतिरिक्त अन्य किसी भूमि का वासी इसे समझ नहीं पाता क्योंकि चार्वाकों ने मृत्यु की धज्जियाँ इसी देश में उड़ाई थी और नचिकेता जैसे दृढप्रतिज्ञ ने यमराज के द्वार पर धरना दे दिया था।

जो हो आज मेक्सिकों में यह प्रथा विधमान है, वह मृत्यु पर एक दहशत भर प्रहार है जो सामान्य जनजीवन से लेकर संगीत कला और विचारों तक पर प्रतिबिम्बित हो रहा है। इस दिन के आने से पूर्व मेक्सिको के बाजारों में कंकाल लटकाने लगते। दुकानों में चीनी से बनाए गए मुंड बिकने शुरू हो जाते हैं, जिन पर हर सम्भव नाम लिखा जाता है। डबल रोटी की तरह मृत्यु रोटी के पहाड़ नानबाई की दुकान पर देखे जा सकते है। हर कोई अपने नाम का मुंह खोजना शुरू करता है ताकि वह उसे खा सकें।

इस दिन सारे अखबारों में दीवारों पर जलसाघरों और संग्रहालयों में मृत्यु के बहुरंगी रूप प्रदर्शित किए जाते हैं। कहीं–कहीं मृत्यु के नाटक खेले जाते हैं। जहां मृत्यु के वैयक्तिक और सार्वजनित, सार्वकालिक रूप धुल–मिलकर एक हो जाते है।

अगर परिवार का कोई सदस्य हत्या का शिकार हुआ तो इस दिन हत्या का पूरा नाटक खेला जाता है। इसके बाद शुरू होता है विलाप, जो हास्यास्पद अधिक और गम्भीर कम होता है। यह एक

विचित्र बात है कि कई परिवार पेशेवर विलाप करने वालों को भी न्योता देते है ताकि विलाप प्रभावोत्पादक हो सके ओर मृतक की आत्मा आश्वस्त हो कि पीछे, छूट गए लोगो को आज तक मृतक का अभाव खटकता है। पंजाब के कुछ गावों में पेशेवर विलापियों को आमंत्रित करने की यह प्रथा (सियापा) आज भी प्रचलित है।

बोहीमिया के गावों में बच्चे मृत्यु का पुतला बनाकर उसे प्रदर्शित करते फिरते है तथा साभिन्य गाते भी है।

अब हम मृत्यु को गांव से बाहर भगाएंगे।
गांव के चप्पे–चप्पे में बसन्त सुनहला लाएंगे।

रूस जर्मनी एवं आस्ट्रेलिया में भी मृत्युनाट्यों का प्रचलन पाया जाता है। ऐसे प्रदर्शन बर्तानिया में भी प्रचलित थे। प्राचीन आयरलैण्ड में 'सामहैन की शाम' को अग्नि जलाकर मृतात्माओं का स्वॉग किया जाता था। वेल्स में यह प्रथा 'कोएएल–कोए नाम से प्रसिद्ध थी। जबकि स्काटलैण्ड में साम्हनगन नाम से।

उत्तरी भारत में मृत्यु के समय सामूहिक रूप से नृत्य–गान की परम्परा सदियों से चली आ रही है। पूर्ण वयप्राप्त पुरूषों तथा स्त्रियों के मरण पर शवयात्रा के समय मृदंग की भापों के प्रदर्शन की प्रथा बहुत प्राचीन है। ऐसी मृत्यु को तो गोरखवाणी में भी मधुर माना गया है।–मरो वे जोगी मरो मरण है मीठ।

बालक–बालिकाओं एवं युवक–युवतियों की मृत्यु दुखद होती है। अतः ऐसी मौतों पर इस प्रकार के विनोदात्मक आयोजनों का प्रश्न ही नही उठता क्योंकि वे तो केवल आनन्दतिरेक के सूचक हैं।

भारत में मृत्युनाट्य का प्राचीनतम् उल्लेख महाभारत के मौसलपर्व में वृष्णि ओर अन्धकों के महाप्रस्थान पर यादवों द्वारा आयोजित उत्सव वर्णन में मिलता है। जिसमें सैकड़ो प्रकार के बाजे बजे। सब और नटों और नर्तकों का नृत्य होने लगा। इस प्रकार प्रभास क्षेत्र में तेजस्वी यादवों का वह महापान आरम्भ हुआ। ए0वी कीथ ने इस उत्सव को मृत्युनाट्य का आयोजन माना है। इसके अतिरिक्त श्री कृष्ण के परमधाम गमन के अवसर पर भी आलोच्य नाट्य–उत्सव के संकेत मिलते है।

ततो देवैऋषिभिश्चापि कृष्णः समागतश्चारणैश्चैव राजन।
गन्धर्वाग्रैप्सरोधिर्वराभिः सिद्धै साध्यैश्चाततै पूज्यमान।।

अर्थात् हे राजनः तदन्तर भगवान श्री कृष्ण श्रेष्ठ गन्धर्वो सुन्दरी अप्सराओं सिद्धों और साध्यों द्वारा विनीत भाव से पूजित हो देवताओं ऋषियों तथा चारणों से मिलें।

भारत से अपने दिंवगत पूर्वजों के प्रति श्रद्धा–समर्पण की प्राप्ति सम्भवतः इसी उत्सव के उपरान्त प्रचलित हुई होगी। श्रद्धदापूर्वक लिए गए कृत्य को 'श्राद्ध की संज्ञा दिया जाना भी संगत है, पितृपक्ष में तर्पण आदि करके पितर–दृष्टि की धारणा से भी इस मत की पुष्टि होती है। खेड्डा प्रदर्शन में यह भावना कोतुक क्रीडाओं के साथ अभिव्यंजित की जाती है। मृतक की तेहरवीं या सत्तरहवीं की पूर्व सन्ध्या पर उनके रिश्तेदार, पोती की ससुराल वाले, बेटी–बेटे ओर पोतों की ससुराल वाले कुछ विचित्र ढंग से टोलियों में आते है। परन्तु दादा या दादी की मृत्यु पर केवल मृतक की पोती या पौत्री ही अपनी ससुराल से खेड्डा–मण्डली को लाती है। उसके साथ आने वाले सभी व्यक्ति बारातियों की तरह सज धज के चलते है।

रंगमच

इसका रंगमच चलता–फिरता होता है। गांव के बाहर से ही इसका अभिनय आरम्भ कर दिया जाता है। चलते है तो साथ आई नाइन के हाथ में एक थाली होती है, जिसमें खोए की भेल्ली एक प्रकार की बड़ी केक रखी होती है। उस भेल्ली के उपर अनेक सीखों में पिरोकर किशमिश एवं अन्य

मेवे रखे जाते है। एक महिला के हाथ में जो पार्टी का नेतृत्व करती है, लकड़ी का बना पुतला या गुड्डा रहता है, जिसे स्त्री की वेशभूषा पहनाई जाती है। पुतलें के माथे मे से डोरी कुछ ऐसे ढंग से निकाली हुई होती है कि ज्यों ही डोरी को खीचां जाता है गुड्डे के दोनों हाथ एक साथ उसके माथे पर पड़ते है।

जैसा कि संकेत किया जा चुका है, खेड्डा–प्रदर्शन गली–गलियारों में होता चलता है। दर्शक भी साथ–साथ हंसते चलते है। आगुन्तक अतिथि एवं खेड्डा पार्टी के लोग खुब गुलाल बिखेरते है। जिससे इसका रंगमच बहुरंगा हो जाता है। जब मृतक के घर पहुंचते है तो उसके सामने किसी चबूतरे पर या तख्तें लगाकर बनाए गए अस्थाई रंगमंच पर इसका रंग जमता है।

हास

परिहासात्मक संवादो की श्रंखला टूटती ही नहीं (फबतियों के साथ गुड्डे को भी निरन्तर नचाया जाता है। रंगोभंग से भरपूर होने के कारण अभिन्य इतना साधारणीकृत हो जाता है कि दर्शको में से भी कुछ लोग खेड्डा–पार्टी के पात्रों का साथ देने लग जाते हैं।

कथानक

खेड्डा को कथानकमुक्त नाट्य कहें तो असंगत नहीं होगा क्योंकि इसमें किसी घटना या कहानी को अभिनीत नहीं किया जाता। मृतक के बेटे–पोतों के नाम ले–लेकर संवादात्मक नाच–गान चलता रहता है। नामों में परिर्वतन करके अधिकतर संवादों की पुनरावृति की जाती है।

पात्र

यदि गावों की ही अभिनेत्रियों से खेड्डा पार्टी का गठन किया गया हो तो इसमें 8–10 पात्र होते हैं। इनमें से कला–निपुण तो बस एक या दो ही होती है, शेंष तो उनका अनुकरण मात्र करती है। प्रत्येक गावों में खेड्डा कलाविद महिलाएं नहीं मिलती और कुछ गॉव में जहाँ ये मिलती है वहाँ भी इक्का–दुक्का ही होती है। प्रमुख भूमिका निभाने वाली प्रायः नाइन होती है। यह स्वतः स्पष्ट है कि इस नाट्य में केवल स्त्रियॉ ही अभिनय करती है। दर्शकों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता, वृद्ध स्त्री–पुरूष सभी इस प्रदर्शन का आनन्द लेते हैं खेड्डा नाट्य के कलाकार शर्म एवं संकोच को ताक पर रखकर जब ये अपना अभिनय प्रस्तुत करते है। तो बात–बात पर दर्शकों के ठहाके पड़ते है। उनका आंगिक एवं वाचिक अभिनय दोनों ही हास्योत्पादक होते हैं।

संवाद

इस नाट्य में संवाद तत्व की प्रधानता रहती है। संवाद चुटीले, रोचक, संक्षिप्त एवं व्यग्यांत्मक होते है। गम्भीरता इनके पास फटकने नहीं पती। अवसर के अनुसार तुरन्त बनाए गए संवादों को आशु–संवाद कहा जा सकता है जो इस प्रकार चलते है।

पहिला महिलाः–	हाय–हाय बुढ़िया क्यूं मरवाई?
दूसरी महिलाः–	बुढ़िया नै पी ली लासी। उसके पोते नै दे दी फांसी।
	बुढ़िया न्यूं मरवाई। हाय–हाय बुढ़िया क्यूं मरवाई?
पहली महिलाः–	बुढ़िया नै खाए अनार। उसने फूकण गए चमार।
	बुढ़िया न्यूं मरवाई। हाय–हाय बुढ़िया क्यूं मरवाई?
दूसरी महिलाः–	बुढ़िया नै खाए पुड़े उसनै रोवें सारे चूड़े।
	बुढ़िया न्यूं मरवाई। हाय–हाय बुढ़िया क्यूं मरवाई?
पहली महिलाः–	बुढ़िया नै खाई जलेबी। उसने पकड ले गई देवी

बुढ़िया न्यूं मरवाई। हाय–हाय बुढ़िया क्यूं मरवाई?

दूसरी महिलाः– छत पै धरे अनार। बुढ़िया नै रोवैं उसके यार।

बुढ़िया किसने मरवाई। हाय–हाय बुढ़िया किसने मरवाई?

इस प्रकार की नोंक झोंक चलती ही रहती है। बीच–बीच में अभिनेत्रियों घूघंट निकालकर किसी भी आदमी को चिपट कर उसके मुहॅ पर घूंघट डालकर खूब रूपये प्राप्त करती है। जैसे–जैसे प्रदर्शन में तेजी आती रहती है, वैसे–वैसे इनामों की झड़ी भी तेज हो जाती है। ये प्रदर्शन रात–रात भर चलते रहते है।

समापन

अगले दिन सवेरे जब खेड्डा पार्टी लौटने लगती है तो आए हुए सभी मेहमानों को नेग के तौर पर उपहार–स्वरूप रूपये दिए जाते है। इस समय भी खेड्डा प्रदर्शन होता है, जिसमें प्रदर्शक इस प्रकार का साभिनय गायन करते चले जाते है।

त्यारै बुढ़िया मरै रोज। उसनै पीटण आंवा रोज हमनै मिलै मिठाई।

विदाई के समय प्रत्युतर में मेजबान पक्ष की महिलांए भी गाती हुई सीठणें देती है।

आज खाई पूरी सी, तडकै खाइयो सूरी सी।

आज खाए मण्डे से, तड़के खाइयों डण्डें से।

अब ज्यों–ज्यों दोनों पार्टिया में वाद–प्रतिवाद आगे बढ़ता रहता है।, त्यों–त्यों दोनों की दूरी भी बढ़ती रहती है। इस प्रकार समारोह के समापन के साथ ही यह प्रदर्शन भी समाप्त हो जाता है।

बरसोधी

कहीं–कही हरियाणा प्रान्त में बाहर महीनों तक जिस दिन मृत्यु हुई हो उस दिन यज्ञादि के बाद ब्रहामणों को भोजन दिया जाता है। छ0 मास के पश्वात् छमाही का आयोजन होता है और फिर बरसोधी पर सभी सगें सम्बन्धी इक्ट्ठे होते हैं तथा वही पुरानी यादें ताजा हो उठती है। पहले इस अवसर पर बड़े–बड़े भोजों का भी आयोजन होता था। इनको हरयाणे में काज कहते है। लेकिन अब यह प्रथा लुप्त प्रायः सी हो गई हैं इसी दिन अगर कोई युवती बेवा हुई है तो लता उढ़ाने की प्रथा का निर्वाह भी होता है। इसे करेवा भी कहते है अर्थात यदि किसी के घर में कोई नौजवान बहु विधवा हो जाये तो उसका करेवा मृतक के छोटे भाई के साथ कर दिया जाता है। कभी–कभी अभाव की स्थिति में चाचा–ताऊ या परिवार के अन्य सदस्य को भी करेवा कर दिया जाता है। इस अवसर पर वधू–पक्ष के लोग मृतक के घर आकर बरसौधी पर विधिपूर्वक लत्ता उढाते है। हरियाणा प्रदेश की यह प्रथा बहुत ही उपयोगी ओर प्रशंसनीय है। क्योंकि इस प्रथा से उस नवयुवती के जीवन को पुनः हरा–भरा कर दिया जाता है। जिसका हरा–भरा जीवन संसार पति मृत्यु के कारण एक वर्ष पूर्व काल के क्रूर पंजो ने उससे छीन लिया था।

श्राद्धदर्पण

हरियाणा में मृतक की आत्मा को शान्ति देने के लिए श्राद्ध–तर्पण पर भी सदैव ध्यान दिया जाता है। यह श्राद्ध आश्विन काल मास में होते है। जिस दिन मृतक व्यक्ति की पुण्य तिथि होती है उसी दिन खीर आदि बनाकर दिवंगत व्यक्ति को शान्ति देने हेतु उपक्रम होते है। इन दिनों को कनागत भी कहते है जो महीने के प्रथम 16 दिन में बनाए जाते है। ब्राहमणों को भोजन करवाया जाता है। तथा कोवों को भी छिककर भोजन करवाया जाता है।

डा0 पूर्ण चन्द शर्मा के मतानुसार श्राद्ध श्रदापूर्वक किए गए कृत्य को श्राद्ध की संज्ञा दिया जाना भी संगत है, पितृपक्ष में तर्पण आदि करके पितर–दृष्टि की धारणा से भी इस मत की पुष्टि होती है।

देवीशंकर प्रभाकर के कथानानुसार ''हरियाणा में पितरों की चिर–शान्ति के लिए सदैव श्राद्ध–तर्पण को विशेष महत्व दिया जाता रहा है। हरियाणा के ही कुरूक्षेत्र, फल्गु, पेहवा और पिण्डतारक में देश के कोने–कोने से आकर लोग पिण्डदान करवाते है। प्राचीन काल में पृथूदयक तीर्थ पर सरस्वती के जल में खड़े होकर महाराज पृथु ने अपने पिता महाराज वेन का श्राद्ध– दर्पण करवाया था। इसलिए कि स्वर्गवासी की गति हो सके।

यहाँ के लोक–विश्वास के अनुसार कोओं को भोजन कराने से हमारे पितरों की दिवंगत आत्मा को शान्ति मिलेगी। ऐसा लोगों का दृढ़ विश्वास है।

हरियाणा प्रदेश में भारत के अन्य प्रदेशों की भाँति इस प्रदेश मे। लोक प्रतिभा ने अपनी शक्ति का प्रकाश जन्म और विवाह के गीतों के रूप में अधिक किया है। इन दो मुख्य संस्कारो के गीतों के पश्चात् बहुत थोड़े ही गीत रह जाते है। मृत्यु जो मानव का अन्तिम और आवश्यक संस्कार है यहॉ के लोकजीवन में अभी भी साधारण विषय नही है परन्तु अन्य संस्कारों के विपरीत मृत्यु शोक और विषाद का समय होता है। अतः इस शोकावसर पर भी शोका भाव से परिपूर्ण गीत गाए जाते है।

मानव का भौतिक शरीर भले ही नष्ट हो जाए परन्तु उसके द्वारा आत्मा का परमात्मा से मिलन अवश्य होता है। डॉ श्याम परमार के विचारानुसार यद्यपि मृत्यु का आध्यात्मिक सौन्दर्य मनुष्य के लिए (रागों से ऊपर उठकर) जानना कठिन है। फिर भी जीवन की निरसरता के साथ मुक्ति की भावना का स्मरण बराबर इनमें दिलाया जाता है। गोरख वाणी ने इसीलिए मरना मीठा बताया है मरो वे जोगी मरो मरण है मीठा।

यह मरना जिस से मानव समस्त जीवन दूर भागता रहता है और डरता रहता है कि मृत्यु न आ जाये, साधारण मृत्यु नहीं है इसमें मानव जीवन मुक्त होता है।

नेपाल का गाई जात्रा या आच्छा लुई केशु उत्सव हरियाणा के खेड्डा से मिलता–जुलता है। काठमाडू उपन्यका में श्रावणी पूर्णिमा के दिन यह पर्व बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है। दिवंगत परिजनों की स्मृति में नाना प्रकार के मनोविनोदात्मक आयोजन किए जाते है। वयस्क लोग लम्बे–लम्बें बांसो का चौखटा बनाकर उसे चारों तरफ कपड़े से ढकते है। उसके सिरहाने गोमुख बनाकर सींग ओर बंदर की पूंछ बनाते है और छाता ओढकर चार आदमी उसे खीचंते हुए चलते है। जुलूस में जाने से पहले गायों का ब्राहमण, पुरोहितों द्वारा पूजन किया जाता है। इन जुलूसों के साथ–साथ जोकर का रूप धारण किए हुए लोग, जोगी का वेश बनाए लोग, परम्परागत बाजा बजाते हुए गायक, नृत्य दल साथ–साथ चलते हैं वे सब व्यग्य उपहार के गीत गाते हुए चलते हैं, लोकनर्तक भी साथ चलते है। यहॉ के लोग पद्म–पुराण का हवाला देकर कहते है कि परिवार के मृतक व्यक्ति की मुक्ति के लिए गाई जात्रा करना अनिवार्य होता है। इसीलिए यहॉ के लोग मृतक व्यक्तियों के नाम पर विधि स्वांगो सहित गाई जात्रा करवाते है।

यह नाट्य रूप कुछ भिन्नता के साथ मथुरा में भी प्रचलित है वहां इसे ढोला कहा जाता है। तथा इसका आयोजन वृद्ध की मृत्यु के उपरान्त एक मास के अन्दर–अन्दर किया जाता है। इसमें चार–पॉच पात्र होते है। जो पुरूष होते है। इनकी वेशभूषा सफेद धोती–कुर्ता रहती है। ढोलक–खजरी (खाल की बनी हुई) सांरगी ओर चिमटा इसके बाद रहते है। गॉव के बीच में जहॉ खाली स्थान की बनी हुई सांरगी के तख्तों में इसका रंगमच बना लिया जाता है। जिसके चारों ओर दर्शक बैठते है। इसमें सांग की तरह ही इनाम आदि दिए जाते हैं।

संदर्भ

01. भारतीय सस्कृति के मूल आधार–कमलेश भारद्वाज पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर 2002

02.	भारतीय सस्कृति का स्वरूप	–रघुबीर सिंह बोकन पराग प्रकाशन गुड़गाव 1984
03.	मानव और संस्कृति	–यामचरण दूबे राजकमल प्रकाशन 1993
04.	प्राचीन भारतीय संस्कृति	–डॉ राजछत्र मिश्र अनुराग प्रकाशन इलाहाबाद 1984
05.	भारतीय धर्म एवं संस्कृति	–बुद्ध प्रकाश मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ
06.	हरियाणा के सांगो में सौन्दर्य निरूपण	–डॉ विजेन्द्र सिंह हरियाणा साहित्य अकादमी चन्डीगढ़ 1988
07.	हरियाणा की लोकधर्मी नाट्य परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन	–डॉ पूर्णचन्द शर्मा, हरियाणा साहित्य अकादमी चन्ड़ीगढ़ 1983
08.	हरियाणवी लोकगीतों का अध्ययन	–डॉ गुणपाल सांगवान हरियाणा साहित्य सांस्कृतिक अकादमी, चन्ड़ीगढ़ 1989
09.	हरियाणा लोकगीतों का पारम्परिक सम्बन्ध रीत तथा गीत	–ड़ॉ रमाकान्ता सत्यम पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 2008
10.	भारतीय लोकगीतों में हरियाणा का योगदान	–ड़ॉ रमाकान्ता सत्यम पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 2005
11.	हरियाणा संस्कार गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि	–डॉ हरिसरन वर्मा, हरियाणा साहित्य अकादमी पंचकुला 2003
12.	हरियाणा प्रदेश के लोकगीतों सामाजिक पक्ष	–जगदीश नारायण भोलानाथ शर्मा हरियाणा का साहित्य अकादमी चन्ड़ीगढ़ 1989

आदिवासियों का प्रकृति प्रेम

दीपक राठी एवं फूलदीप कुमार
रोहतक, हरियाणा
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

संस्कृति और सभ्यता के जिस बिंदु पर आकर भारतीय आदिवासियों का संगीत अथवा उनकी नृत्य शैलियां स्थिर हुई उसी बिंदु पर सभ्यता का एक दूसरा स्तर उनके प्रति अधिक प्रश्न–गर्भित हुआ है। इस स्तर की सभ्यता ने स्थूल रूप से भारतीय आदिवासियों को निग्रिटों, प्रोटाआस्ट्रलाइड और मंगोल प्रजातियों में बाँटा है, जबकि उसके द्वारा अभी तक यह निर्णय नहीं किया जा सका है कि नीलगिरी पर्वत के टोडा एवं कुछ अन्य जातियाँ किस रक्त की हैं अथवा उनकी संस्कृति में किस स्थान का प्रभाव है, या यह कि स्वयं उस सभ्यता में ही आदिवासियों का रक्त किस मात्रा में प्रवाहित है।

संस्कृति और जीवन–पद्धति की दृष्टि से भारत के उत्तर–पूर्वी पहाड़ों और उनकी ऊँचाइयों में लेपचा, डफला, मिश्ती, गारो, खासी तथा नगा जातियों का प्राधान्य है। मध्यवर्ती भारत की गोंड और भील जातियों से यह उत्तर–पूर्वी वर्ग नितांत भिन्न है। मगर बस्तर के सींग माड़िया एवं मुड़िया निश्चय ही कुछ बातों में बिहार के संथाल, उराँव, मुंडा और हो आदिवासियों के कहीं निकट पड़ते हैं। उड़ीसा के कंध, गदबा, बोंडा और परजा आदिवासी भी इनके अधिक दूर नहीं हैं। दूरी कितनी ही कम या अधिक हो, पर गीतों और नृत्यरूपों में इन जातियों की उल्लेखनीय विशेषताएँ हमेशा इतिहास के अलग–अलग स्तरों पर ही उद्घाटित होती दिखाई देती है। दक्षिण भारत के परियन, कादर और चेंचू भी उसी प्रकार अलग लगते हैं जैसे उत्तर–पूर्वी क्षेत्र की जातियाँ। इनके जीवनयापन के तरीकों और इनकी बोलियों में जितना अधिक अन्तर होता है, उतना ही अधिक वैभिन्न ध्वनि सम्बन्धी व्यवहारों और शारीरिक अभिव्यक्तियों में नजर आता हैं। बोलियों में बँटकर आदिवासी जातियाँ अपने उसी बिंदु पर पहुँच जाती है, जहाँ विकास की संभावनाएँ कुंठित हो गई होती है। इसी कारण इन्हें समझने के लिए हमें इनके बीच से वह दृष्टि नहीं मिल पाती जो सही तथ्यों से परिचित करा सके। सभ्यता की पराई नजर से जो देखा–समझा जाता है, वह वस्तुतः एकांगी होता है। अध्ययन की निस्संगता, इस माने में, वह नहीं खोज पाती जो इन्हीं के बीच किसी जीवंत दृष्टि द्वारा सम्भव हो सकती है।

आदिवासियों से इतर सभ्यता ने कला के जिन मूल्यों का निर्माण किया, उनके परिप्रेक्ष्य में आदिवासी नृत्य और संगीत दोनों ही लोकपरक अभिव्यक्तियाँ हैं। जीवनयापन के ढंग और संस्कृति की रोमानी अनघड़ताओं की दृष्टि से आदिवासियों की कलाएँ, उन्नत सभ्यता की अर्जित कलाओं और उनके अभिजात्य मूल्यों की तुलना में, बहुत पीछे हैं – शायद यह कहना अधिक उचित होगा कि वे बहुत अलग हैं। शास्त्रीय ढंग से सोचने वालों के लिए उनमें अनेपक्षित वैचित्रय है। अर्जित मूल्यों से विकासकुंठित एवं रूकी हुई आदिम सभ्यता के कलारूपों का परीक्षण एक तरह से विसंगत प्रतीत होता है। क्योंकि उन्नत सभ्यता की कलाएँ परिश्रम–साध्य हैं जबकि आदिवासियों के कला–रूप सामूहिक चेतना के सहज रूपान्तरण हैं।

संगीत और नृत्य ऐसे माध्यम है जो प्रत्येक आदिवासी के निजीपन को रंगीन बनाते हैं। कालांतर में उसके वास्तविक गुण और प्रकृत आकांक्षाएँ इन्हीं कलारूपों में समाहत होकर जातीय अभिव्यक्ति में

ढले हैं। यह प्रक्रिया शताब्दियों में कभी–कभार चैतन्य होती है और किसी गुण या आकांक्षा को अपने में अंकित कर उसको पोषण करने लगती है। आदिवासियों के नृत्य और गीत दोनों ही मिले–जुले संबन्धों में खुले वातावरण के साधन हैं। इनके लिए ये कलाएँ व्यवहार–स्वरूप हैं : अपने संयुक्त रूप में जीवन–यापन की पद्धति है जो उन्हें आपस में जोड़ती है एवं व्यक्तिगत प्रेम–प्रसंगों और उनकी पीड़ाओं को इन्हीं माध्यमों से अभिसिचित करती हैं।

जब ऋतुएँ अनुकूल होती हैं तब आदिवासियों के जीवन में उत्सवों और पर्वो के अवसर बहुत महत्वपूर्ण हो उठते हैं। बसंत आते ही मुंडाओं का सरहुल पर्व 'जदुर' और 'गेना' शैली के गीतों का ध्वनि–वैभव उजागर करता है। इन्हीं दिनो विध्यश्रेणियों के जंगलों में भीलों के 'भगोरिया' उत्सव की धूम होती हैं। समूचा नर्मदा काँठल मांदल की थाप से गूंज उठता है। भादों लगते ही राँची के आदिवासी क्षेत्रों में 'करमा' की धुनें उठने लगती हैं। 'झूमर' और 'लहसुआ' जैसे नृत्यों के अनेक अवसर आते हैं। फसल पक जाने के बाद इन्हीं इलाकों में 'जरगा' या शिकार संबन्धी गीतों की धुनें छिड़ती हैं। मुंडाओं के 'जापी' नामक गीत, मेलों में सम्मिलित होने के लिए जाते समय गाए जानेवाले 'जतरा' या अन्य गीत इन आदिवासियों के प्रायः इन्हीं पक्षों को अधिक अनावृत्त करते हैं जिनमें अभाव और गरीबी है। ..... मगर तब भी जीने के लिए आदिवासी व्यक्ति के पास और भी बहुत आस्थाएँ होती हैं। उसकी एकरसता प्रायः इसी तरह के अवसरों के बहाने कुछ समय के लिए भंग होती है। गीतों की धुनों और नृत्यों की ऊष्मा में तब वह स्वयं को खुला छोड़ देता है। उत्सवों का कोलाहल, नृत्य–शृंगार की नैसर्गिक प्रवृत्ति, छेड़–छाड़ और परस्पर प्रतिस्पर्द्धा–भाव, निजी अभावों के होते हुए भी, उसे सुखद क्षणों से भरपूर सामग्री दे जाते हैं। संथाल या उरावं 'हड़िया' पीकर प्रसन्न होता है, भील 'मद' से गले की खुश्की मिटाता है। माड़िया 'पेज' या 'छिंद' से शरीर और मन को अवसर–अनुकूल बनाता है। नाम या निमित्त कोई भी हो, यह पेय उसके पैरों में जादू भर देता है, और तब उसका संपूर्ण व्यक्तित्व जातीय नृत्य के तालक्रम से बँध जाता है। गीतों की इनी–गिनी पंक्तियाँ देर तक तालों में रिसती रहती हैं।

आदिवासियों के गीतों को हम उनकी अलिखित रचनाएँ कह सकते हैं, क्योंकि उनमें स्पष्ट रूप से मनुष्य की प्रतिभा का एक महत्वपूर्ण पक्ष अंकित हुआ है। जंगल के रहस्य, परस्पर आरोप–प्रत्यारोप, आस–पास की चीजों के उल्लेख, शिकार की स्मृतियाँ, किसी पर्व में मिलने के वादे या फिर छोटे–छोटे प्रश्न और उनके छोटे–छोटे उत्तर, बहुत स्वाभाविक ढंग से गीतों में जगह बनाए हुए होते हैं। इनमें हर बात निसर्ग की तरह मुक्त और आदिम मन को सकून देने वाली खूबियों से जुड़ी होती है : मुंडाओं का एक गीत है :

'हरी और लाल कोपलें चमक रही हैं।
तुमने कौन–सा तेल लगा लिया है?
जंगल के सुन्दर फूलों की सुगंध
मेरी छाती में घूम रही है।'

अभिव्यंजना का एक और उदाहरण :

'इस घने जंगल में तुम मुझे छोड़कर मत भागों
इस कंटक भरे मैदान में मुझे छोड़कर मत भागो
क्या तुमने मुझे नहीं देखा था जब मैं आग के
समान चमक रही थी
क्या तुमने मुझे नहीं पहचाना था जब मैं
पानी की तरह उमड़ रही थी।'

..... मगर बोल के प्रकट अर्थ से अलग नाचते समय जो गूँज उभरती है अथ्वा वाद्यों की ताल जिस वातावरण को बनाती है, उसके मिले–जुले प्रभावों में उस आस्था की झलक मिल जाती है जो शब्दों की सादगी के बाद भी प्रायः भय और रोमांच का आभास देती है। उनमें अनजाने ही पूजा का भाव आ मिलता है। अबूझमाड़ (बस्तर के घने इलाकों में पाए जाने वाले सामूहिक नृत्यों) में यह प्रभाव बहुत स्पष्ट है। नेफा के आदी और मिश्मी आदिवासियों के गीतों से यह अनुभूति भय को देर करने का यह संगीतात्मक सामाजिक व्यवहार उड़ीसा के बोंडा और बैगाओं के कुछ गीतों में भी लक्ष्य किया गया है। यहाँ यह बात स्पष्ट है कि किसे संगीत कहा जाए या किसे नृत्य, इसका निर्णय आदिवासी जातियों ने स्वयं किया है। उदात्त सभ्यता के निर्णय से इनका कोई सरोकार नहीं।

गीतों के निरन्तर प्रयोग से गीतों की एक अलग दुनिया ही आदिवासी मन की गहराई में जड़े जमा लेती है। मनोव्यवहार में कुछ मोटिफ या अभिप्राय निश्चित हो जाते हैं। प्रतीकों की स्थायी सहजता से उसका आंतरिक रिश्ता बन जाता है। आधुनिक प्रसंगों के संदर्भ में वही रिश्ता बाधक होता है। इसलिए किसी नई बात को कहने के लिए आदिवासी जब तत्पर होता है तब वह उन्हीं सूत्रों और मुहावरों का उपयोग करता है जो गीतों की धुनों से बँधे होते हैं। पूर्वजों से उपलब्ध संगीत और नृत्य की पद्धतियों में प्रक्षेव यकायक दिखाई नहीं देते। जो जुड़ता है वह तब तक टिका रहता है जब तक उससे आदिवासी स्वभाव का लगाव बना रहता है। जिस प्रकार वह निश्चित अभिप्रायों अथवा 'मोटिस' को सहेजता है उसी प्रकार अनावश्क संदर्भो को भुलाते चले जाने की प्रवृत्ति भी उसके आदि–मन की आवश्यक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत शब्दों में ही तनिक हेर–फेर की संभावना होती है, धुनों का मुहावरा या नृत्य की मुद्रा नहीं बदलती।

दोनों विधाओं में आदिवासी मन की संवेदनाओं और उनकी परस्परताओं को आश्रय मिलता है। आदिम संस्कृति से यदि इन दोनों कलारूपों को निकाल दिया जाय तो उसका शेष अंश खोखल मात्र रह जाएगा। नृत्य और संगीत आदिवासी के मानसिक अभाव को भरते हैं।

'करम' नामक महोत्सव भारतीय आदिवासियों के एक बड़े अंश को उनके अतीत–संबन्धों से संपृक्त करता है। 'करमा' नृत्य और गीत इसी उत्सव के पूरक हैं। छोटा नागपुर के उरांवों, मुंडाओं और संथालों में करमा बहुत प्रचलित है। यह नृत्य उड़ीसा के गदबा और परजा आदिवासियों में भी मिलता है। करमा नृत्य को हम मध्यप्रदेश के गोंड आदिवासियों में भी पाते हैं। गया के कुछ भागों में बसे हुए उरांव उसे अपनी आदि भूमि छोड़ते समय साथ ले गए। असम के चाय बागानों में पहुँच कर उरांव या संथाल उसे भूले नहीं। जंगल से बाहर निकलने के बाद तथा दूसरी सभ्यता के निकट आकर एवं मजदूर का जीवन ग्रहण कर लेने के पश्चात् भी इन आदिवासियों ने अपने गीत और नृत्य संपूर्ण रूप से विस्मृत नहीं किए।

बिहार और मध्यप्रदेश के आदिवासियों की दष्टि में 'करम' पर्वों का राजा है। संथाल इसे 'काराम' कहते हैं। 'करम' की तरह भीलों में 'इंदल' पर्व होता है, जो वस्तुतः इन्द्रपूजा का अवशिष्ट है। इस अवसर पर भीलों की मांदर बज उठती है। पुरुषों की सामूहिक आवाज़ें नारी के प्रति चिरंतन पुकार की प्रतीति कराती हैं। नारी के नृत्य बार–बार पुरुष की ओर झुकते हैं।

करमा की व्यापकता का कदाचित् एक कारण यह है कि अतीत में कुछ आदिवासियों की टोलियों को एक स्थान से हटकर कहीं और जाना पड़ता था। मार्ग के जंगलों में जहाँ भी इन टोलियों से छिटक कर जो अंश बचे, उन्होंने अन्य कई बातों के साथ करमा को भी प्रश्रय दिया। कहते हैं, किसी समय गोंडों के आदि दल दक्षिण से चले और बस्तर के घने बनों से, गोदावरी के किनारे होते हुए मध्यवर्ती देश के जंगलों में आकर ठहर गए। उरांवों का भी एक काफ़िला इसी रास्ते से होकर बिहार की ओर गुजरा। बिहार के सिंहभूमि और उड़ीसा के मयूरभंज, तालचर तथा केयोंझर में बसे 'हो' आदिवासी भी इसी प्रकार अन्य स्थानों से आए। अनुमान है कि कोल और मुंडाओं के पारस्परिक झगड़ों के कारण

ये अपनी मूल भूमि से, जो कदाचित् मंडला और छत्तीसगढ़ के कुछ स्थानों में रही होगी, बिहार की ओर निकल आए। स्थान बदलने के साथ इन्होंने अपनी जाति का पूर्व नाम त्याग कर 'हो' रख लिया। अतीत में बहुत कुछ हुआ है। चौदहवीं शताब्दी के लगभग बैतूल, छिदवाड़ा, मण्डला और चांदा में गोंड आदिवासियों के समृद्ध आधिपत्य के अनेक प्रमाण मिलते हैं। इस जाति के पुरुषों में युद्ध कला का अभाव रहा। इसी कारण अठारहवीं शताब्दी तक पहुँचते–पहुँचते इनका आधिपत्य नष्ट हो गया और समूची जाति बिखर कर जगलों में आ बसी। इन्हीं गोंडों की कई उपजातियाँ बनीं।

आलस्य, भय और बुद्धि के अभाव में विनष्ट होने के बाद भी गोंड स्वभाव से साहसी, ईमानदार, संतोषी और सरल है। अपनी गरीबी को इस जाति ने सहज प्रसत्रता से जीता है। यही विशेषता गोंडों के सहयोगी बेगा आदिवासियों में है। संस्कृति का एक नैसगिक पक्ष इन जातियों के गीतों में उघड़ता है। मगर कथ्य–पक्ष साहित्यिक आभिजात्य से बहुत अलग है। इनमें धरती, आकाश, पहाड़, नदी, ऋतुएँ प्रेम–प्रसंग आखेट और खुले घात–प्रतिघातों का संसार है। मिलजुल कर गाया जाने वाला गीत, एक गोंड पहेली की भाषा में, असंख्य जीवित वृक्षों की पुकार है। ढोलक पर बजने वाली निरंतर ताल–ध्वनि क्रमशः आवाज़ करने वाली टहनियाँ हैं। काले शीशम में तराशे शरीर वाली गोंड लड़की इन आदिगीतों में वृक्ष की तरह है जो प्रकृति के संकेत पर थिरकता है। साज वृक्ष पर एक मौन पक्षी सोया हुआ होता है। साज के तने को तनिक हिलाते ही पक्षी जाग उठता है और गाने लगता है। इन्हीं गोंडों और बैगाओं का करमा नृत्य उराँवों और संथालों के करमा से बहुत मिलता है। गोंडों में कहीं–कहीं 'सैला' नृत्य प्रचलित है जो सर्प–नृत्य की कोटि में आता है क्योंकि 'सैला' की कुछ भंगिमाएँ इसी स्थिति का आभास देती हैं। वास्तव में 'सैला' गुजरात के डांडिया रास के बहुत निकट है, मगर प्रभाव में मुक्त और वन्य है। गोंड युवतियों का 'रीना' बैगाओं में 'तपाड़ी' कहलाता है। मुंडा स्त्रियाँ 'डोमकच' और 'माथा' नाचती हैं। भीलनियों के 'पानी', 'नेवताली' और 'जोड़ी' नृत्यों में जंगल की उत्फुल्ल होती हैं।

आदिवासियों के नृत्य प्रायः मण्डलाकार होते हैं। भील अपने 'भगोरिया' नृत्य में गोलाई के अन्तर्गत ही मुक्त भाव से उछलते है और चीखें निकाल कर तीर कमानों की हवा में हिलाते हैं। संथाल युवतियों की नाचती हुई टोली कटी हुई गोलाई में अपनी पंक्ति बना कर घूमती हैं। असम का बीहू छोटे वृत्तो में नाचा जाता है। गोलाई में नाचने की प्रवृत्ति संसार व्यापी है। दूसरी शैली पंक्तियों में रचाव करने की है। कहीं कहीं नृत्य का रूप पंक्तियों में ऐसा भासित होता है मानों जुलूस का प्रभाव पैदा किया जा रहा हो। उड़ीसा के शवर मैदान में इसी अन्दाज से प्रविष्ट होते हैं। और बार बार नाच की गति को जुलूस की शक्ल में बदल देते हैं।

युवक–युवतियों में जोड़ी बनाने के ढंग बहुत आकर्षक है। साधारणतय दो लड़कों के बीच एक लड़की होती है। साथी नर्तकों के कंधे पकड़ने के तरीके भी बहुत हैं। कमर में हाथ डालने की कई शैलियाँ हैं। कभी हाथ की गुंथन अलग से नजर आती है तो कभी हाथों की पकड़ में लहर का दृष्य बन जाता है। जैंतिया पहाड़ी के नगाओं के नृत्यों का रचाव बहुत जटिल है। हाथ बाँधने का ढंग भी उनमें सरल नहीं है। बिहार के उराँव नाचते हुए पंक्तियों में सरकते हैं। तब ऐसा लगता है मानों असंख्य पैरों वाली कांतर चलती हो। आओ नगाओं के कदम झटके से पड़ते हैं। तुएंसांग क्षेत्र के नगा फसल की खुशी में इस तरह नाचते हैं मानों उन्होंने युद्ध जीता हो। नेफा के गेंलाग आदिवासियों के कुछ नृत्यों में शत्रुओं पर टूट पड़ने का भाव और बाद में विजय के उल्लास का आभस मिलता है। पहाड़ी नर्तकों के कदम छोटे होते हैं। इसलिए उनके नृत्यों में उछल कूद का अभाव होता है। स्त्रियों के कई नृत्यों में बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। असम की लुशाई पहाड़ियों की लड़कियाँ एक तरह का बाँस नृत्य करती हैं जिसमें लम्बे लम्बे बाँस जमीन पर बिछा दिए जाते हैं। इन्हीं बाँसों के सिरे कुछ लड़कियाँ पकड़े रहती है और उन्हें आपस में टकरा कर ताल पैदा करती हैं। नृत्य करती हुई लड़कियाँ अपने पैरों का संचालन इस सावधानी से करती हैं कि बाँसों के आपस में टकराए जाने पर उनके पैर बाँसों के बीच में न फंस जाएँ।

अवसर के अनुसार आदिवासियों के नृत्य बहुत कम बदलते हैं। उनकी आन्तरिक गठन मूलतः वही रहती हैं। कुछ बाह्य रूप रेखाएँ बदलने से नृत्य की संज्ञा बदल जाती है। इस बदलाव में गीत और ताल का योग बहुत आवश्यक है। यह बात स्पष्ट है कि विशिष्ट मुद्राओं से सांकेतिकता प्रदान करने की प्रवृत्ति आदिवासियों के नृत्यों में नहीं होती। कुलीन नृत्यों की तरह इनमें आँखों, उंगलियों और चेहरों की भंगिमाओं से संकेत प्रदान नहीं किये जाते। स्थूल संकेत ही इनमें होते हैं, अर्थात् पैर, कमर, हाथ, सिर या धड़ की भंगिमाएँ ही हमारी दृष्टि में आती है। समूह की मुद्राएँ एक जैसी होती हैं। इन नृत्यों में ढोलक बजाने वाले या बड़ी बड़ी मंदिरों पर थाप देते हुए बजैयों का कार्य मुख्य होता है। ढोलाकिए या स्वयं नाचते हुए बजैए पूरे समूह को अपने आस–पास नचाते हैं। यानी हर नाच की निजी व्यवस्था बजैयों की ताल से बद्ध होती है।

संसार की प्रायः सभी आदिवासी जातियाँ गोला बनाकर नाचती हैं। यह आदिम प्रवृत्ति हैं। हाथ से हाथ बाँधकर आसानी से गोला बना लिया जाता है। 'सरहुल' हो या 'करमा' नाचने वाली युवतियों के अर्द्ध वृत्त नाचते समय वे गोलाई में ही सरकते हैं। 'डोमकच' या 'माथा' में भी नागपुरिया उराँव यही करते हैं। मुहाँमुंही में नृत्य करने वाली टोलियों की गति भी गोलाई से नियोजित होती हैं। उराँव का 'धुरिया' नृत्य इस संदर्भ में तनिक अलग है। उसमें केन्द्र से परिधि तक पंक्ति बनाई जाती है जो घड़ी के काँटे की तरह घूमती है। केन्द्रस्थ नर्तक अपनी ही जगह घूमता है।

आदिवासी गीतों की दुनिया नृत्य से पृथक नहीं हैं। नृत्य के संदर्भ में, विचार करते समय गीतों का उल्लेख बहुत आवश्यक होता है। आदिवासियों के गीत धुनों से जुड़े हैं। धुनों से ही गीत की पहचान होती है। गीतों के शब्दों में बहुत मामूली सा परिवर्तन वर्षो के बाद नजर आता है, मगर धुन नहीं बदलती। उनमें नया स्पर्श संयोग से ही आता है। संगीत के अध्ययनकर्ताओं के लिए आदिवासी संगीत तथा उसका ताल वैविध्य बहुत उपयोगी सामग्री है। शब्दों को अर्थगत संदर्भ में देखा जाना यहाँ जरूरी नहीं लगता, क्योंकि एक ही बात एक ही धुन के सहारे दुहराई जाती हैं। धुनों की स्वर रचना बहुत साधारण होती है, मगर उसमें भी आदिवासी मस्तिष्क की अभिव्यक्ति, शैली और ध्वनि की क्षमता को स्थायित्व देने की प्रवृत्ति लक्ष्य की जा सकती है। नृतत्व विज्ञान के आदिवासियों का अध्ययन स्थूल आधारों पर किया है। उनके गीतों का अध्ययन तथा संगीत और विविध नृत्य–रूपों में उनके कलाबोध का परिचय तभी संभव है जब अभिजात्य कलामूल्यों के सहारे उनका अध्ययन करने की बजाए हमारी दृष्टि मानवीय संवेदनाओं के परिप्रेक्ष्य में उन्हें देखे और उन्हें जातीय आधारों के बजाये गीतों में निहित रचना जग के माध्यम से पहचानने का प्रयास करें।

संदर्भ

1. Imperial Gazetteer of Central India
2. आदि निवासी भील (श्री जोधसिंह मेहता)
3. आदिवासियों की लोककथाएँ (प्रो0 श्रीचन्द्र जैन)
4. बघेलखण्ड के आदिवासियों के लोकगीत (प्रो0 श्रीचन्द्र जैन)
5. Khan G Ahmad, The Bhils of Khandesh, Man in India, Vol. XIV, Nos. 2 & 3, 1935
6. Kurup, A. M., Bhagoriah, Bulleten of the Tribal Research Institute, Chhindwara. M.P. Vol. II. No. 2, Chhindwara, 1958.
7. Russell, R.V. and Hiralal, Tribes and Castes of Central Provinces of India, London, 1916.
8. Walter Yust and Others, (Ed) Encyclopaedia Britanica, Vol. III, London, 1951.

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में संस्कृत एवं प्रान्तीय भाषा का योगदान

देवराज शर्मा
महाराजा अग्रसेन तकनीकी संस्थान, दिल्ली

परिचय

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विश्व की प्राचीनतम उपलब्धियों से लेकर इस शताब्दी में प्राप्त महान सफलताओं की एक लम्बी और अनूठी परम्परा रही है। किसी भी विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्राचीन एवं नूतन शोधों एवं खोज की जानकारी हेतु उस देश की, भौगोलिक स्थिति, काल, वातावरण एवं इतिहास की जानकारी होना अति आवश्यक है।

भारतीय आधुनिक विद्वानों एवं आधुनिक शिक्षा पद्धति की मान्यता के परिणामस्वरूप यह धारणा बनी हुई है कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पश्चिमी देशों के वैज्ञानिक ही उन्नत विज्ञान के जनक हैं। इस अवधारणा के फलस्वरूप हमारे अपने ही देश के बौद्धिक संस्थानों और प्रचार माध्यमों ने हमारे समृद्ध वैदिक विज्ञानमय साहित्येतिहास को ग्लानि और आत्मनिन्दा की दृष्टि से ही देखने को विवश कर दिया हैं।

जब भारत में कोई ग्रामीण व्यक्ति हेलीकॉप्टर का प्रयोग कर दिखाता है, तो उसका मनोबल बढ़ाने के लिए सरकारी प्रयास तक नहीं किये जाते अपितु सुरक्षा कारणों से एवं जुगाड़ टेक्नोलोजी की संज्ञा से उपेक्षित करते हुए उनका मनोबल तोड़ दिया जाता है। इसे "जुगाड़ टेक्नोलोजी" का नाम दिया जाता है। ज्ञातव्य है कि कालका शिमला रेल मार्ग के निर्माण हेतु अंग्रेज इंजीनियरों को भी एक अशिक्षित चरवाहे से प्रमाणरहित मार्गदर्शन लेना पड़ा तभी वे वहाँ रेल मार्ग बना पाने में सफल हुए।

अभी हाल में इण्डिया टीवी पर हमारे शोधकर्ताओं द्वारा किये गये नवीन शोध से सम्बन्धित खबरें प्रसारित की गई हैं । ऐसे शोधकर्ताओं को राजकीय सहयोग से प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। यहाँ पर यह विशेष उल्लेखनीय है कि हमारे देश के मनीषीगण अपने ज्ञान एवं विज्ञान का प्रसारण गुरु–शिष्य परम्परा के अनुसार परोपकारी भावना को आत्मसात् करते रहे हैं। प्राचीन मनीषियों का शिक्षा प्रसार का मूल उद्देश्य केवल योग्य पात्रों के लिए ही था, ताकि ज्ञान–विज्ञान का सदुपयोग मानवीय हित में हो , न कि अहित में। इस ज्ञान प्रसार परम्परा के कारण भारतीय ज्ञान केवल गुरुओं एवं सुयोग्य शिष्यों तक सीमित रह गया। जो ज्ञान हमारे उन अप्राप्य एवं कुछ प्राप्य ग्रन्थों में समाहित है, वह समय के कुचक्र के अनुसार विदेशी आक्रमण एवं उसकी संस्कृति के प्रभाव के कारण विलुप्त होता चला गया। ज्ञातव्य है कि वर्त्तमान में अनाधिकारी शिष्यों को विज्ञान के रहस्य का ज्ञान कराये जाने के कारण विश्व पटल पर विध्वंस एवं भय व्याप्त हो चुका है।

भारतीय वैदिक संस्कृति का महाविज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के सूत्रों का मूल आधार हमारे मूल संस्कृत ग्रन्थ हैं जिनका प्रभाव आज भी भारतीय साहित्य एवं समाज में, कहावतों, लोक–कथाओं एवं लोक–रचना व गीतों में स्पष्ट मिलता है। लेकिन स्वदेशी भाषा ज्ञान के अभाव के कारण उनमें छुपे रहस्य उपेक्षित

बने हुए हैं। भारत में लोग स्वर्ण निर्माण कला में दक्ष थे । जिसका उल्लेख नाथ सम्प्रदाय के "रसायन रामायण" में मिलता है। यथा :–

1. वन तुलसी वन में बसै मिले साँवणी मण ।
   चर पर चाँदी सेर चाहे कर ले मण ।।
2. चींटी मरती बहुत सी, नीचें चींटकर होय ।
   कर मछिन्दर सुण रँगरी चांदी कर ब्योर ।।
3. रोमाबासी मूसाकानी, ज़गल में है वासा ।
   रंग में थोड़ा भंग मिला दे, गोरख देख तमासा ।।
4. तीन पान की रूखडी, जानत हैं सब कोय ।
   रंग में भंग मिलाय के कनक कंचन होय ।।

यदि हम अपने वेद पुराणों, उपनिषदों एवं तन्त्र मन्त्र से सम्बन्धित ग्रन्थों का मनन उनमें निहित विज्ञान को वर्तमान जनोपयोगी बनाकर व्यवहार में लायें तो निसन्देह भारत के अस्त गौरव को पुनः तेजोमय कर पाने में समर्थ हो सकेंगे। लेकिन यहाँ संस्कृत एवं स्वदेशी / प्रान्तीय भाषा के ज्ञान की परम आवश्यकता है जिससे विज्ञानमय सूत्रों के गूढ़ रहस्य का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

हमारे भारतीय वैज्ञानिक ऋषिगण पारस से स्वर्ण बनाने की कला में दक्ष थे । उनके सूत्रों के अनुसार अठारह संस्कार करने से पारा शुद्ध होता है। पूर्णरुप से शुद्ध पारा से स्वर्ण का निर्माण होता है । पारद सिद्धि हेतु 18 संस्कार निम्नलिखित हैं :– 1. स्वेदन संस्कार, 2.मर्दन, 3. मूर्च्छन, 4. उत्थापन, 5. पात्तन, 6. रोधन (बोधन), 7. नियम, 8. दीपन संस्कार।

उपरोक्त 8 प्रकार के संस्कारों द्वारा अशुद्ध पारद निर्मल सुसंस्कृत तथा पारे के सात दोष कचुलियाँ दूर हो जाती है। इसके उपरान्त अन्य 10 संस्कारों द्वारा पारद सिद्ध किया जाता है जो निम्नलिखित है :– 1. अभ्रक भक्षण , 2. चारण संस्कार 3. गर्भदुति संस्कार , 4. ब्राह्य दुति , 5. जारण, 6. रंजन , 7. सारण , 8. क्रामण , 9. वैध संस्कार। उक्त संस्कारों का उल्लेख "शक्ति सन्देश" नामक पत्रिका के पृष्ठ संख्या 9 –17 में स्पष्ट रूप से किया गया है।

आज भी ऐसे कई रसायन वैज्ञानिक हैं जो शुद्ध पारे से स्वर्ण बना सकते हैं और इसका प्रमाण है– अमेरिका के मिस्टर ब्रूच द्वारा लिखित पुस्तक "चेन्ज टू गोल्ड़"। इसमें लेखक ने भारतीय योगियों के फोटों तथा उनका संक्षिप्त विवरण, निवास स्थान और उनसे प्राप्त कूट उक्तियों का विवरण दिया है और बताया है कि इन कूट उक्तियों के अनुसार प्रयत्न करने पर धातु परिवर्तन में सफलता प्राप्त हो सकती है। उन्हें स्वर्ण निर्माण कला में दक्षता प्राप्त थी। उनकी पुस्तक में दिये कतिपय श्लोक निम्नवत् हैं :

रक्तचित्रकमूलं तु कांजिकं शुद्ध पारदम्
कंगुणी तेल संयुक्तं सर्वे कल्पं मलेपयेत्।
ताम्रपत्राणि तप्तानि तस्मिन् सिंचेत्रिसप्तघा
एवं त्रिसप्तघा कुर्याद् दिव्यं भवति कांचनं।।

भावार्थ

लाल चित्रक की जड़ को लेकर नीले थोथे में उसको घोटें और इस प्रकार छः घण्टे के बाद उस रस को शुद्ध ताँबे के टुकड़े पर लेप कर दें , इसके बाद नीला थोथा, सेन्धा नमक व कुंकुम बराबर मात्रा में लेकर इस ताम्बे के टुकड़े पर डालकर कढ़ाई में रख दें और इसे बीस किलो पानी में पकाएं, जब एक किलो रह जाये तो ताम्बे का टुकड़ा निश्चय ही स्वर्ण बन जायेगा ।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग– 2

क्षीरकंदभवं क्षीरे तप्तं ताम्र निषेचयेत्

शतवारं प्रयत्नेन तत्ताम्रं काचनं भवेत्।।

भावार्थ

गन्धक, रक्त चन्दन और रुद्रवन्ती बराबर मात्रा में लेकर ताम्बे में डाल दें और दस किलो पानी में पकाएं। जब पानी एक किलो रह जाये तो उस ताम्बे के टुकड़े को बाहर निकाल दें। इस प्रकार सात बार करें तो वह ताम्बे का टुकड़ा निश्चय ही सोने में बदल जाता है।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग– 3

पारदं पलमेकं च हरिताल च तत्समं

गंधकं च तयोः तुव्यं मर्दनीयं विशेषतः

पूर्ववद् द्रावितं क त्वा दिव्यं भवति कांचनं ।।

भावार्थ

एक भाग पारा, एक भाग हरताल तथा दो भाग गन्धक लेकर आक के दूध में दिन भर मर्दन करें। फिर इसे बीस किलो पानी में पकायें, पकाने के बाद इसे बाहर निकाल दें और दो भाग ताम्बे को पानी की तरह पिघला कर इस पर डाले तो यह ताम्बा तुरन्त स्वर्ण में बदल जाता है ।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग– 4

तापकस्य त्रयो भागा शिला भागा द्वयं तथा

म्लेच्छभागो भदेको पारदम्य तथा परः ।

कुमारी रसयोगेन भवयित्वा यथाविधि ,

दीपाग्नि तत्र कर्त्तव्यो दिव्य रुपं हि कांचनं ।।

भावार्थ

तीन भाग हरताल, दो भाग मेनसिल तथा एक भाग हिंगुल को एक भाग पारे में घोटें, फिर गवार पाठे के रस में मर्दन कर रात्रि को बीस किलोपानी में ताम्बे के साथ पकाएं तो वह ताम्बा निश्चय ही स्वर्ण में बदल जाता है।

इसके अलावा भी ब्रूच ने अपने ग्रन्थ में और भी कई प्रयोग दिये हैं और उसने सफलता पाने का दावा भी किया है। दिनांक 04–10–12 को प्रकाशित अमर उजाला पृ ठ 16 के अतिरिक्त अन्य प्रामाणिक ग्रन्थ निम्न है :– 1. ऋगवेदोक्त श्रीसूक्त, 2. लक्ष्मी तन्त्र, 3. रूद्रयामल तन्त्र, 4. काकचण्डीश्वरी कल्प तन्त्र, 5. रसहृदय तन्त्र (गोविंदपादाचार्यकृत), 6. गोरसा संहिता (गोरक्षानाथ रचित), 7. रससव्यय (कंकालयोगी कृत), 8. रस रत्नाकर रसायन खण्ड (नित्यनाथ सिद्ध), 9. रस रत्नाकर ऋद्धिखण्ड व शुद्धिखण्ड (नित्यनाथ सिद्ध), 10. रसार्णव (भैरवानन्द योगीकृत), 11. आनन्द कन्द (मंथान–भैरव), 12. रस पद्धति– श्री विंदुनाथ, 13. रसोपनिषद्– राजामंदनरथकृत 14. रसेन्द्र चूडामणि– सोमदेव, 15. रस प्रकाश सुधाकर– यशोधर, 16. रसकौमुदी– ज्ञानचन्द, 17. सिद्ध रसायन– व. कृ. मोरे, 18. पारद संहिता– संकलित।

इसके अतिरिक्त समृद्ध वैदिक साहित्य में अस्त्र शस्त्र एवं वैमानिकी विद्या पर भी समृद्ध ज्ञान उपलब्ध है। डॉ एच ए सर्किला ने इतालवी वैज्ञानिक राबर्टो पिनौती के मत से सहमति व्यक्त करते हुए कहा था कि "समरांगण सूत्रधार" नामक ग्रन्थ के 230 पदों में विमान निर्माण सम्बन्धी सिद्धान्त तथा युद्ध एवं शान्ति काल में उनके प्रयोगों के बारे में विशद् वर्णन किया गया है।

वैदिक एवं लोक कथाओं की कूटभाषा शैली में अनुवाद सन् 1950 में "कल्याण" के हिन्दू संस्कृति अंक में श्री दामोदर जी साहित्याचार्य ने "हमारी प्राचीन वैज्ञानिक कला" नामक लेख में भरद्वाज कृत विमानशास्त्र के बारे में विस्तार से उल्लेख किया गया है। महर्षि भरद्वाज ने यंत्रसर्वस्व नामक ग्रन्थ लिखा था, उसका एक भाग वैज्ञानिक शास्त्र है। इस पर बोधानन्द ने टीका लिखी थी। इस ग्रन्थ के पहले प्रकरण में प्राचीन विज्ञान विषय के पच्चीस ग्रन्थों की एक सूची है, जिनमें प्रमुख हैं : अगस्त्यकृत– शक्तिसूत्र, ईश्वरकृत– सौदामिनी कला आदि।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि हमारे वैदिक ज्ञान साहित्य को जानने के लिए विदेशी विद्वान तो शोध कार्य में पूर्ण मनोयोग से प्रयासरत हैं ,लेकिन हमारे यहाँ नवीन शोध एवं अनुसंधान प्रयास कर दिखाने वालों को विदेशी मानसिकता के कारण स्वदेशी भाषा की उपेक्षा एवं पाश्चात्य जगत के विद्वानों को ही प्रमाणिक–समृद्ध मानने की विवशता तथा प्रशासकीय सहयोग के अभाव के कारण एक असहाय की तरह उपेक्षित होना पड़ता है । जिसके कारण सफल परिणाम के अन्तिम चरण तक पहुँचने से पूर्व ही अन्धकार के गर्त्त में समाने हेतु विवश होना पड़ता है।

सुझाव

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत के वैदिक ज्ञान को जनोपयोगी बनाने हेतु एवं जन–जन तक पहुँचाने हेतु निम्न कदम उठाने चाहिए :

1. संस्कृतनिष्ठ विद्वानों, आयुर्वेदाचार्य एवं रसायनविदों, यान्त्रिक विद्या के मर्मज्ञों के मध्य आपसी समन्वय स्थापित करने के लिये सुप्रयास किया जाना चाहिए।
2. वैदिक विज्ञान की भाषा एवं स्वदेशी–क्षेत्रीय भाषा के मर्मज्ञ तैयार किये जायें।
3. संस्कृत विषय को तकनीकी शिक्षा में शामिल किया जाये ताकि विद्यार्थी संस्कृत भाषा एवं साहित्य विज्ञान से परिचित होकर लाभान्वित हो सकें।
4. हमारे उन विलुप्त ज्ञान भण्ड़ार के ग्रन्थों की खोज की जाए। उनके सिद्धान्तों को समझने–समझाने का ज्ञान प्राप्त हेतु आवश्यक प्रयास किये जाएं और वर्तमान की भाषा शैली में उनका सरल अनुवाद किया जाये।
5. जुगाड़ टेक्नोलोजी से सम्बन्धित नवीन शोध एवं अनुसंधान प्रयास कर दिखाने वालों का मनोबल बढ़ाने के लिए सरकारी सुप्रयास किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ

1. स्वर्णकार, रामनरेश. दुलर्भ रसराज (पारद) सिद्धि, सुधानिधि, सितम्बर 2005, अलीगढ़, सुधानिधि कार्यालय, पृष्ठः 19 – 21
2. शक्ति सन्देश, दिसम्बर 1990, "रस तन्त्र", पृष्ठ संख्या 9 से 17, शक्ति अनुसन्धान केन्द्र, दुर्गा कॉलोनी, सुभाष नगर, रुड़की ।
3. मंत्र–तन्त्र–यन्त्र विज्ञान, मई 1987, अरविन्द प्रकाशन, जोधपुर (राज.)"स्वर्ण सिद्धि",पृ संख्या 23–26
4. मंत्र–तन्त्र–यन्त्र विज्ञान, अरविन्द प्रकाशन, जोधपुर (राज.), दिसम्बर 1986, "स्वर्ण प्रयोग", पृ 30.
5. मंत्र–तन्त्र–यन्त्र विज्ञान, अरविन्द प्रकाशन, जोधपुर (राज.), दिसम्बर 1986, "अमृत की खोज में भटकते हुए मानव पुत्र", पृष्ठ संख्या 37 – 40 .

विश्व की प्रगति में प्राचीन भारतीय विज्ञान–प्रौद्योगिकी का योगदान

विश्व मोहन तिवारी
एयर वाइस मार्शल (सेवानिवृत्त)

टैरैसी[1] लिखते हैं, 'साइंस जैसी पत्रिका ने 14.1.2000 के विशेषांक में विश्व की सर्वश्रेष्ठ 96 खोजों का वर्णन किया है, उनमें मात्र दो ही अ–गौरवर्णों की है–भारत की शून्य की खोज तथा भारत एवं 'माया' सभ्यता के नक्षत्रीय अवलोकन। इनमें भी शून्य की खोज के महत्त्व को छोटा कर दिया गया। मुझे टैरैसी के समान गैर–पश्चिमी सभ्यताओं से सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति में भी ऐसे पक्षपात की झलक दिखी, जब वे[2] ऋग्वेद को मात्र 2000 ई पू की रचना मानते है तथा भारत पर आर्यों के आक्रमण को सही मानते लगते है। अंग्रेजों ने एक और षडयंत्र प्रचारित किया था कि आर्यों ने भारत पर ई पू 500 में आक्रमण किया और यहां के मूल निवासियों को हराकर उन्हें दास बना लिया था। अनेकों[3] विद्वानों ने प्रमाणित किया है कि आर्य एवं द्रविड़ यहां के मूल निवासी हैं; तथा सर्वप्रथम वेद–ऋग्वेद–का काल[4] ई.पू. 6000 के भी पहले से प्रारंभ होता है। कुछ पक्षपातों से जिनके बीज बचपन में ही पड़ चुके हों, छूटकारा पाना वैज्ञानिक सोच वाले व्यक्तियों के लिये भी कठिन होता है। हमें ऐसे दुष्प्रचारों से बच कर अपना आत्मविश्वास बनाए रखना है, जो किसी भी रचनाशील सभ्यता के लिये अत्यावश्यक है, तथा जिसके बिना अविष्कार भी नहीं हो सकते और जिनके बिना आज के विश्व मे सामान्य देशों के लिये सम्मानित स्थान बनाना संभव नही है।

सांस्कृतिक प्रदूषण हानिकारक होता है, जिसके कारण हम हीनग्रंथि से पीड़ित होकर, श्री अरविंद के शब्दों में भूरे नकलची बंदर बन सकते हैं। क्या आश्चर्य कि विजेता विजित देश का इतिहास नष्ट या भ्रष्ट करते हैं। विजित देशों को सच्चे इतिहास की खोज करना आवश्यक ह। उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि पाइथागोरस प्रमेय की खोज का श्रेय बौद्धायन[5] (ई पू 800) का, तथा 'सौर मंडल का केन्द्र सूर्य है' का श्रेय आर्यभटट् का (499 ई) है। गणित तथा विज्ञान के विकास का औद्योगिक क्रांति में बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान है। विश्व में सर्वप्रथम पिंगलाचार्य ने (500 से 300 ई पू) छंद शास्त्र[6] में शून्य की अवधारणा को स्पष्ट किया है। आर्यभटट् ने दाशमलव स्थानमान की परिभाषा की और उसका उपयोग किया। गणितज्ञ ब्रह्मगुप (598–670) ने शून्य के व्यवहार के गणितीय नियम वैज्ञानिक पद्धति में लिखे।

सौभाग्य से, (इसीलिये कि हमारे बहुमूल्य ग्रंथों तथा पुरातात्त्विक स्रोतों को आक्रमणकारियों ने नष्ट किया है, पुस्तकालयों को जलाया है) गणित के एक बहुमूल्य ग्रंथ 'बख्शाली पाण्डुलिपि' के भोज पत्र पर लिखे 70 पन्ने अचानक मिले। विद्वान इन्हें ईसा पूर्व 200 से ईस्वी 300 के बीच का मानते हैं। बख्शाली पाण्डुलिपि में गणित की 'सन्निकटन विधि' है, जिसमें शून्य, ऋणात्मक संख्याओं आदि का उपयोग हुआ है। शून्य, गणित की विधाएं तथा विज्ञान का ज्ञान भारत से आठवीं सदी से फारस और अरब गया, और उनका विज्ञान का स्वर्णयुग प्रारंभ हुआ। आइंसटाइन[7] ने घोषणा की कि ''हम भारतीयों के प्रति कृतज्ञ हैं कि उन्होंने विश्व को गिनना सिखाया, जिसके बिना विज्ञान बढ़ ही नहीं सकता था'', यद्यपि अनेक[8, 9,10, 11] पाश्चात्य इतिहासकार भारत को यह श्रेय नहीं देते।

प्राचीन भारतीय भौतिकी[12] मे गति (तर्कसंग्रह–18 वीं सदी ई), इलैस्टिसिटी (न्यायकण्डली–991 ई), चुंबक (रसार्णवम्–1200 ई), प्रकाशिकी (न्याय दर्शनम् 800 ई पू) आदि पर वर्णन है। नोबेल सम्मानित हाइज़ैनबर्ग[13] ने लिखा है, ''वेदान्त पर विचार–विमर्श के बाद क्वान्टम यांत्रिकी की कुछ अवधारणाएं जो पहले पागलों–सी लग रही थीं, अचानक समझ में आने लगी।''

प्राचीन भारतीय ब्रह्माण्डिकी में कुछ अद्भुत खोजें हैं जैसे– प्रकाश के वेग[14] का निर्धारण ब्रह्माण्ड की आयु[15] 8.64 बिलियन वर्ष है; पृथ्वी की आयु[16] 4 बिलियन वर्षों से अधिक है आदि। ऋग्वेद[17] में मेढ़कों की स्तुति[18] है क्योंकि वे हमारा धन तथा स्वास्थ्य बढ़ाते है। यह पारिस्थिकी विज्ञान का उत्तम उदाहरण है, जिसका प्रारंभ पश्चिम में उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में हम्बोल्ट से माना जाता है। ऋग्वेद का कुपचार किया जाता है कि वह केवल कृषकों का गीत है। 100 डॉडो वाले जल जहाजों के विद्यमान होने की चर्चा ऋग्वेद[19] में है। धात्विकी[20] में तो भारत की विरासत[21] अद्वितीय है। सिन्धु सभ्यता के नगर निर्माण योजनाबद्ध शैली में किये जाते थे। विश्व में सर्वप्रथम सिन्धु सभ्यता के नगरों में मल निकास तंत्र का उपयोग था, प्रत्येक घर में एक नहानघर होता था। नगर की व्यवस्था के लिये अवश्य ही नगरपालिका रही होगी (ए एल बाशम[22])।

अरब विद्वान एड्रिसि[23] (12वीं शदी) ने लिखा है, ''हिन्दू लोहे के शस्त्र बनाने में सर्वोत्कृष्ट हैं, भारतीय इस्पात की तलवार की धार को मात करना असंभव है। पहली सदी से 18वीं सदी[24] तक भारत लौह धातु का आयात कर उनसे निर्मित उपकरणों का निर्यात करता रहा है। कुतुबमीनार के निकट का लौह स्तंभ तो विश्व प्रसिद्ध है। धात्विकी में यह ऊँचाई प्राप्त करने में भारद्वाज मुनि के विमान शास्त्र ([25]700 से 600 ई पू) की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसमें दिये ज्ञान से विमान का निर्माण तो नही हो सकता किन्तु यह विश्व में सर्वप्रथम धात्विकी और यंत्र निर्माण को वैज्ञानिक आधार देता है, तथा विमान जैसे क्रांतिकारी नए यंत्र के निर्माण हेतु अनुसंधान तथा विकास करने के लिये महत्त्वपूर्ण 'सूत्र' अर्थात 'ब्रेन स्टॉर्मिंग' देता है।

शुद्ध जस्ते[26] (जिंक) का उत्पादन बहुत ही कठिन प्रक्रिया है। भारत में जस्ते का उपयोग ई पू तीसरी सहस्राब्दि से मिलता है। शुद्ध जस्ते को प्राप्त करने की प्रक्रिया अत्यंत कठिन रही है जिसे भारत ने लगभग 2000 वर्ष पहले हल किया। यह प्रक्रिया यहां से बारहवीं सदी में चीन गई और वहां से 1543 में इंग्लैंड।

'आयुर्वेद' (लगभग 4000 ई पू से) के बाद 'चरक संहिता' 700 ई पू का ग्रंथ है, जिसमें विश्व की प्रथम वैज्ञानिक संगोष्ठी का वर्णन[27] है। इसकी स्वास्थ्य की परिभाषा में शरीर के साथ मन के भी स्वस्थ होने को अनिवार्य माना है, जोकि एलोपैथी में पिछली सदी के उत्तरार्ध में सम्मिलित किया।

शरीर विज्ञान तथा शल्य चिकित्सा का ग्रंथ 'सुश्रुत संहिता' भी प्राचीन भारत (600 ई पू) की बहुमूल्य देन है। इसमें हृदय विज्ञान[28] का जो वर्णन है वह पश्चिम में सोलहवीं सदी में मिलता है। इसमें मस्तिष्क की शल्य चिकित्सा, 'प्लास्टिक अर्थात अंग जोड़ने की चिकित्सा आदि का भी वर्णन है।

रसायनिकी में सिद्धांतों के साथ ही उसमें पूरी रासायनिक प्रयोगशाला[29] तथा यंत्रों और भट्टियों, रसशालाओं तथा औद्योगिकी की उपलब्धियां भी है। भारत में 'विद्युत सैल' के आविष्कार का तथा उसके निर्माण का वर्णन अगस्त्य[30, 31] संहिता (चौदहवीं सदी) में मिलता है।

प्राचीन भारत के छः शस्त्रों में से सांख्य (~ 3000 ई पू) वैज्ञानिकों[32] के समान ज्ञानेंद्रियों तथा संख्याओं को आधार बनाता है। इसमें 'पदार्थ संरक्षण' का नियम है। वैशेषिक[33] शास्त्र (~2500 ई पू) का विषय है– 'प्रकृति–दर्शन' जो वैज्ञानिक शास्त्र हैं। इसमें 'पदार्थ का सिद्धांत' है कि पदार्थ चार मूल तत्वों के परमाणुओं से बना है। लगभग यही सिद्धांत ग्रीस में डैमाक्रिटस (460 ई पू) ने प्रस्तुत किया था। 600 ई पू के पहले विश्व में घटनाएं अवलोकन, 'जादू' तथा धार्मिक विश्वासों के आधार पर समझाई

जाती थीं' ('साइंस' पत्रिका–14.1.00)। वैज्ञानिक आविष्कार बहुत महत्त्वपूर्ण है, किंतु वैज्ञानिक सोच उससे भी अधिक, इसके फलस्वरूप बारहवीं सदी तक भारत विज्ञान तथा समृद्धि में प्रथम[34] था।

सूर्य सिद्धांत (ईसा पूर्व तीसरी सदी) की कुछ अद्भुत खोजें: इसमें प्रलय की अवधि का निर्धारण जो बहुत गलत नही है; चाक्रिक ब्रह्माण्ड; नक्षत्र वर्ष की लम्बाई 365.2563627 जो आज के मान के छः दशमलव स्थान तक सही[35] है; बुध तथा शनि ग्रहों के व्यास[36, 37] के मान परिशुद्ध आते है।

सूर्य सिद्धांत पर भारत शासन की कैलेंडर संशोधन समिति[38] (1953–1955) ने जो निष्कर्ष दिये उनमें से एक था कि निचित ही भारतीय खगोलज्ञों को भूअक्षीय 'पुरस्सरण' (प्रिसेशन) के विषय में कोई ज्ञान नही था', जो गलत है। यह पुरस्सरण (लट्टू का डोलना) काल 26000 वर्ष है और ध्रुव 13000 वर्ष ही राज्य करते हैं और दूसरे 13000 वर्ष 'वेगा' तारा करता है। हमारे पुराणों में वैज्ञानिक ज्ञान को कहानियां बनाकर विज्ञान प्रसार करने की उच्च कोटि की परम्परा रही है। सन् 499[39] में आर्यभट्ट ने दर्शाया कि पृथ्वी अपने अक्ष पर प्रचक्रण करती है, और कहा कि आकाश मे ऊँचाई पर कोई विशेष प्रवाह है जो ऐसा करता है अर्थात गुरुत्वाकर्षण[40] दैवीय न होकर भौतिक बल है। उन्होंने प्रमाणित किया कि सूर्य सौरमंडल का केंद्र है। किन्तु इस विषय में भी पाश्चात्य विद्वानों में (अनावश्यक या कहें षडयंत्र के तहत) मतभेद है जो तर्कसंगत नहीं है। आर्यभट्ट ने दर्शाया कि ग्रह अपनी अंडाकार कक्षा मे परिक्रमा (कैप्लर के 1200 वर्ष पहले) करते हैं[41]। आर्यभट्ट ने विभिन्न ग्रहों की कक्षाओं के व्यास का मान[42] निकाला था; नक्षत्र दिन की गणना की जिसमें कुल 9 मिलि सेकंड की त्रुटि है; नक्षत्र वर्ष की गणना भी की, जिसमें 3 मिनट 20 सेकेंड की त्रुटि है। पंचांग में तिथियों आदि की गणनाओं के लिये आर्यभट्ट तथा परवर्ती भारतीय गणितज्ञों द्वारा निर्धारित विधियों का उपयोग तब से लगातार हो रहा है। 1073 ई. में निर्मित (अरबी) जलाली कैलेंडर में उनका उपयोग हुआ। आर्यभट्ट का ज्ञान ऋषि याज्ञवल्क्य आदि के औपनिषदिक ज्ञान की तरह सूर्यदेव आदि द्वारा प्रदत्त ज्ञान नही है।

बारहवीं सदी में श्रेष्ठतम[43] गणितज्ञ तथा वैज्ञानिक भास्कराचार्य द्वितीय ने गुरुत्वाकर्षण[44] की अवधारणा और ग्रहों के अपनी कक्षा पर संतुलन को स्पष्ट किया था, 'आकाश स्थित विशाल पदार्थों को पृथ्वी अपनी ओर आकर्षित करती है। ऐसा लगता है कि वह गिर रही है, किन्तु आकाश मे संतुलित बलों के कायम रहते हुए वे कहां गिरेंगे। यहां वे चंद्र के पृथ्वी पर गिरने और संतुलित रहने की ओर संकेत कर रहे है। उन्होंने अवकलन विधि का भी आविष्कार कर लिया था।

अधिकांश भारतीय यह मानते है कि उन्हें पश्चिम का अनुकरण करना है। सत्य यह है कि आज विज्ञान में हम चाहे पिछड़े हों किन्तु सामाजिक संरचना तथा जीवन मूल्यों में बिल्कुल पिछड़े नहीं हैं, जैसा कि राष्ट्रपति क्लिंटन ने घोषित किया था। दूसरा यह कि ए पी जे अब्दुल कलाम ने सिद्ध कर दिया है कि यदि हम पूरे आत्मविश्वास के साथ राष्ट्रप्रेम की भावना से अनुसंधान एवं विकास करना ठान लें तो हम विज्ञान के क्षेत्र में विश्व की अगली पंक्ति में आ सकते हैं। हम यदि, पश्चिम के भोगवाद में न फँसे, अंग्रेजी तो सीखें किन्तु अपनी भाषाओं की कीमत पर नहीं, तब हम विश्व में ज्ञान–विज्ञान में अग्रणी पंक्ति में आ सकते हैं और सम्मानपूर्वक विकास कर सकते है।

संदर्भ

1. 'लास्ट डिस्कवरीज' डिक टैरैसी, पृष्ठ 12, 13.
2. वही–पृष्ठ 130, 237.
3. कंटैपरी व्यूज ऑन इंडियन सिविलिज़ेशन पृष्ठ 70–94; 136–202, 272–279.
4. 'प्राइड ऑफ इंडिया' पुस्तक, संस्कृति भारती पृष्ठ 82–85.
5. 'लास्ट डिस्कवरीज' डिक टैरैसी, पृष्ठ 61.

6. (डॉ एन गोपालकृष्णन इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस हैरिटैज, www. iish.org).
7. इग्नाइटैड माइन्ड–ए पी जे अब्दुल कलाम।
8. पाथवेज़ आफ डिस्कवरीज़–साइंस का जनवरी 2000 अंक।
9. 'लास्ट डिसकवरीज़' डिक टैरैसी, पृष्ठ 12, 13.
10. न्यू पर्सपेक्टिव्ज़ ऑन वैदिक एंड एन्सिएंट इंडियन सिविलाइज़ेशन (न प वै ए इं सि); सदानन्द– पृष्ठ 196.
11. न्यू पर्सपेक्टिव्ज़ ऑन वैदिक एंड एन्सिएंट इंडियन सिविलाइज़ेशन (न प वै ए इं सि); सदानन्द– पृष्ठ 196.
12. 'प्राइड ऑफ इंडिया' पुस्तक, संस्कृति भारती पृष्ठ 55–58.
13. उनका लेख 'सीक फॉर द रोड', 1925.
14. (ऋग्वेद, मण्डल1, सूक्त 50, मंत्र 4; 6000 ई.पू),''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती पृष्ठ 67.
15. 'लास्ट डिसकवरीज़' डिक टैरैसी, पृष्ठ 174.
16. 'लास्ट डिसकवरीज़' डिक टैरैसी, पृष्ठ 159.
17. के 7.103 सूक्त (ई.पू. 6000)।
18. ''मेंढ़क टर्र....'' ''विज्ञान का आनंद''–विश्वमोहन तिवारी, आलेख प्रकाशन।
19. ऋगवेद–10 मण्डल 143 सूक्त में 100 डाँडों वाली नाव का वर्णन है।
20. ऋग्वेद–9.112.2 में तामकार की भट्टी का वर्णन है।
21. ''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती पृष्ठ 112–119.
22. ए एल बाशम–''द वंडर दैट वाज़ इंडिया'', तृतीय संस्करण पृष्ठ 16.
23. विकिपीडिया।
24. ''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती, पृष्ठ 112.
25. लहरों के शिलालेख–संपादक कन्हैया लाल नंदन, लेख–भारद्वाज मुनि का विमान शास्त्र।
26. ''ज़िंक प्रोडकशन इन एन्सिएंट इंडिया''–जे एस खड़कवाल (प्रकाशक–इन्फ़िनिटी फ़ाउंडेशन)।
27. इस पर अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं, मुझे श्री रमेश बेदी की पुस्तक बहुत उपयोगी लगी।
28. ''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती, पृष्ठ 171.
29. ''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती, पृष्ठ 124.
30. ''प्राइड ऑफ इंडिया'' पुस्तक, संस्कृति भारती, पृष्ठ 127.
31. हिन्दी वेबसाइट–''इलैक्ट्रिक बैटरी और अगसत्य संहिता''।
32. ''लास्ट डिस्कवरीज़'' डिक टैरैसी, पृष्ठ 212.
33. ''साइंस एंड टैक्नोलॉजी इन एन्सिएंट इंडियन टैक्स्ट्स'' का वैशेषिक साइन्स अध्याय पृष्ठ 25–44.
34. ए एल बाशम–''द वंडर दैट वाज़ इंडिया'', तृतीय संस्करण पृष्ठ 16.
35. विकिपीडिया–सूर्य सिद्धांत, टाइम साइकिल्स।
36. विकिपीडिया–सूर्य सिद्धांत, प्लैनेटरी डायमीटर्स।

37. जनरल आफ़ साइंटिफिक एक्सप्लोरेशन, वाल्यूम 11, नं. 2. 1997.
38. चंद्र हरि, द ट्रू रैशियोनेली ऑफ सूर्य सिद्धांत–जनरल ऑफ हिस्ट्री ऑफ साइंस; 32 (3), 1997।
39. आर्यभतीयम में ही लिखा है कि उसकी रचना कलियुग के 3630वें वर्ष में हुई थी।
40. ''लास्ट डिस्कवरीज़'' डिक टैरैसी, पृष्ठ 131.
41. आर्यभतीयम अध्याय 3, श्लोक 17; ई 499.
42. ''लास्ट डिस्कवरीज़'' डिक टैरैसी, पृष्ठ 133.
43. भास्कर 2 बायोग्राफ़ी–मक् टयूट्र।
44. सिद्धांत शिरोमणि, भुवन्कोशः 6–भास्कराचार्य 2; 1150 ई.

''महाशक्ति बनते भारत की तस्वीर''

विजन कुमार पाण्डेय
गाजीपुर, उत्तर प्रदेश

हमारे देश में बिजली संकट लगातार गहराता जा रहा है। पिछले दिनों देश के उत्तरी क्षेत्र में ही ब्लैक आउट ने कई सवाल खड़े कर दिये हैं। तीन ग्रिड फेल होना सचमुच दुनिया का अब तक का सबसे बड़ा ब्लैक आउट है। यह उभरते हुए भारत के लिए खतरनाक संकेत है। जब उत्तरी ग्रिड फेल हुई थी तो बीबीसी ने इस ब्लैक आउट की तुलना अमेरिका एवं कनाडा में हुए दो ब्लैक आउट से की थी। इन दोनों देशों की आबादी पचास करोड़ से भी कम है। दूसरे दिन हुए ब्लैक आउट से देश की करीब 70 करोड़ जनता प्रभावित हुई। दुनिया में किसी भी ब्लैक आउट में अब तक इतने लोग प्रभावित नहीं हुए। वास्तव में अगर इस बिजली संकट को गम्भीरता से नहीं लिया गया तो यह भारत के विकास के लिए सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध हो सकता है क्योंकि तरक्की का रास्ता ऊर्जा से ही होकर जाता है। दरअसल ब्लैक आउट की स्थिति में कहीं भी वैकल्पिक इंतजाम नहीं होते हैं। ऐसी स्थिति में वह बिजली काम आती है जो ग्रिड को सप्लाई नहीं देती है। वैसे इस मामले में भारत की स्थिति थोड़ी बेहतर इसलिए है, क्योंकि जहां विकसित देशों में ग्रिड की बिजली 80 प्रतिशत या इससे अधिक है, वहीं भारत में यह अभी भी 50 प्रतिशत है। इसलिए ब्लैक आउट के बावजूद बिना ग्रिड वाली बिजली की आपूर्ति जारी रही। लेकिन विकास के साथ–साथ भारत में ग्रिड पर निर्भरता बढ़ रही है। अगर हम भारत और विश्व में हुए ब्लैक आउटों की बात करें तो कई बातें काबिलेगौर हैं। मसलन अमेरिका में जब 2001 में ग्रिड फेल हुआ था तो उसके बाद उसने विश्व के सभी प्रमुख देशों के विशेषज्ञों को बुलाकर बैठक की थी। यहां तक कि पावर ग्रिड कारपोरेशन के विशेषज्ञ भी वहां गए थे और सुझाव दिए थे। उसके बाद उसने ऐसे इंतजाम किए कि भविश्य में ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं हो। हालांकि अमेरिका में ग्रिड फेल होने की वजह अधिक लोड नहीं, बल्कि अन्य तकनीकी खामियां थी। यह भी ध्यान देने योग्य है कि अमेरिका और यूरोपीय देशों में तय सीमा से ज्यादा बिजली आहरित नहीं होती है। फिर उनके पास स्मार्ट ग्रिड भी है। तकनीकी रूप से भी वे ऐसा नहीं कर पाते। चीन में सख्ती है। इसलिए राज्य ऐसा नहीं कर पाते। अलबत्ता ब्राजील विकासशील देश है। हाँ वहां की हालात हमारे जैसी है। ब्राजील में ओवरलोडिंग से ही ग्रिड फेल हुआ था। अमेरिका और यूरोपीय देशों में हालांकि बड़े ग्रिड हैं। लेकिन हमारे देश में आबादी ज्यादा है। इसलिए ग्रिड फेल होने का प्रभाव कहीं ज्यादा व्यापक है।

स्मार्ट ग्रिड की जरूरत

यदि अर्थव्यवस्था के हिसाब से इसके नुकसान देखें तो हमारी दो अरब डॉलर की अर्थव्यवस्था है। इसमें दो दिन का नुकसान निकाले तो वह एक अरब डॉलर से भी अधिक बैठता है। अब समय आ गया है कि भविष्य में इस तरह की घटनाओं की रोकथाम के लिए कुछ उपाय करने होंगे। सबसे पहले तो बिजली उत्पादन बढ़ाना होगा। दूसरे, हमारी ग्रिड तकनीक अभी विकसित देशों से करीब 15–20 साल पुरानी है। अब स्मार्ट ग्रिड का जमाना है। इस सिस्टम में कोई भी राज्य हिस्से से ज्यादा

बिजली नहीं ले सकता है। ग्रिड में संभावित खराबी आने के संकेत पहले ही मिल जाते हैं। हमारे यहां केवल ग्रिड ही नहीं हाई वोल्टेज ट्रांसमिशन टावर भी पुराने हैं। इन्हें भी अपग्रेड किए जाने की जरूरत है। हमारा दक्षिणी ग्रिड अलग है, वहां बिजली भी अधिक है। लेकिन बाकी चार ग्रिडों में बिजली की कमी है और मांग भी ज्यादा है। इन चार ग्रिडों कौ स्मार्ट ग्रिड बनाने और लाइनों के आधुनिकीकरण के लिए तत्काल एक लाख करोड़ रूपये के निवेश की जरूरत है। इसके लिए एक ऊर्जा सुरक्षा परिषद बनानी चाहिए जो स्वतंत्र रूप से काम करे और कार्य पर निगरानी भी रखे। दरअसल देश में ऊर्जा संकट की मुख्य वजह बिजली की मांग एवं आपूर्ती के अन्तर को लेकर है। लेकिन पिछले दिनों करीब पूरे देश में एक साथ बिजली आपूर्ति बन्द होने का प्रमुख कारण देश के अधिकांश राज्यों द्वारा तय सीमा से अधिक बिजली उपयोग करने को लेकर है। इसकी वजह से ग्रिड फेल हो गए। देश का नेशनल ग्रिड पांच क्षेत्रीय जोन में बंटा हुआ है। इस बटवारे का मकसद बिजली के असमान वितरण पर अंकुश लगाना है। क्योंकि ग्रिड में से कौन राज्य कितनी बिजली लेगा, इसका कोटा तय होता है। कई बार कई राज्य अपने कोटे से ज्यादा बिजली खींचने की कोशिश करते हैं, जिसके कारण ग्रिड में समस्या आती है। किसी पावर सिस्टम में जब ग्रिड फेल होती है तो ज्यादातर या सभी हाई–वोल्टेज ट्रांसमिशन ग्रिड काम कर देना बन्द कर देती है। इसका नतीजा यह होता है कि वह आमतौर पर उठाया जाने वाला लोड वहन नहीं कर पाती। इस स्थिति से निकलने का एक रास्ता है कि पूरे बिजली क्षेत्र में जबरदस्त सुधार की प्रक्रिया शुरू की जाये।

भविष्य में इस तरह की घटनाएं दोबारा न हो इसके लिए सरकार को दो काम तुरन्त करने चाहिए। पहला, बिजली प्लाण्टों को कोयले की आपूर्ति सुनिश्चित करवाये। दूसरा, राज्यों के बिजली वितरण निकायों को सुधारे। विशेषज्ञों का कहना है कि देश के आधे हिस्से में एक साथ बिजली कटौती होने से नकारात्मक संदेश जाएगा। यह न सिर्फ पावर क्षेत्र में निवेश करने की योजना बना रही कम्पनियों को डरा सकता है, बल्कि अन्य उद्योगों में पैसा लगाने वाले उद्यमी दोबारा सोचने पर मजबूर हो सकते हैं। भारत में 22 हजार मेगावाट बिजली इसलिए नहीं बन पा रही है, क्योंकि उसके लिए पर्याप्त मात्रा में ईधन नहीं है। वहीं, देश के अधिकांश हिस्से बिजली की भारी कमी से दो–चार हैं। पूरा बिजली क्षेत्र जबरदस्त संकट से गुजर रहा है। नयी बिजली परियोजनाओं को कोयला लिंकेज नहीं मिल रहा है। जिन बिजली प्लांट को लिंकेज मिले भी हैं तो उन्हें पर्याप्त कोयला नहीं मिल रहा है। देश में 86 बिजली घरों में कोयले को ईधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। उद्योग संगठन फिक्की के अनुसार कोयला आपूर्ति में बाधा नहीं दूर की गयी तो देश की बिजली इकाइयों के सामने बन्दी का संकट पैदा हो सकता है। यह जल्दी ही आनेवाले बिजली संकट का संकेत है, जो कि देश के विकास को सीधे–सीधे प्रभावित करेगा। इसलिए अब हमें वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों पर गम्भीरता से विचार करना होगा। ऊर्जा के बिना आर्थिक सुधार कार्यक्रमों को भी जारी रखना सम्भव नहीं हो सकेगा।

इसलिए यह भारत के लिए सबसे बड़ा संकट है। आज हमारे देश के अधिकांश बिजलीघर अपनी उत्पादन क्षमता का पूरा उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। इनमें निर्धारित क्षमता का पचास फीसदी उत्पादन भी नहीं होता है। देश में उत्पादित एक तिहाई से अधिक बिजली की चोरी की जाती है। बड़े–बड़े बकायेदारों के खिलाफ कारवाई नहीं की जाती है। इससे लोगों का और भी मन बढ़ जाता है। फिर चोरी का सिलसिला चल निकलता है। देश की आबादी बढ़ रही है। बढ़ती आबादी के उपयोग के लिए और विकास को गति देने के लिए हमारी ऊर्जा की मांग भी बढ़ रही है। लेकिन उत्पादन में आशातीत बढ़ोतरी नहीं हो पा रही है। पुरानी बिजली परियोजनाएं कभी पूरा उत्पादन कर नहीं पायीं, नयी परियोजनाओं के लिए स्थितियां दूभर हैं। यहां खतरा देश की तरक्की की रफ्तार के प्रभावित होने का

है। बिजली के इस संकट को अगर अभी दूर नहीं किया गया तो भविष्य में देश के लिए सबसे बड़ा संकट साबित होगा।

ग्रिड कैसे काम करता है

ग्रिड अमूमन एक छोटे से फ्रीक्वेंसी बैंड में काम करता है, जो कि 49.5 से 50.2 हर्टज के करीब होता है। उत्पादन में कमी की वजह से जब ग्रिड को कम बिजली है, या किसी इलाके में ज्यादा बिजली खींची जाने लगती है, तो यह फ्रींक्वेंसी नीचे चली जाती है। इस तरह सप्लाई बढ़ने या मांग में कमी होने पर फ्रीक्वेंसी ऊपर चली जाती है। बिजली के दौरान जब किसी प्वाइंट से तयशुदा कोटे से ज्यादा बिजली लेने की कोशिश होती है, तो सिस्टम पर दबाव बनता है तब वह लाइन ट्रिप हो जाती है। किसी एक ट्रांसफार्मर के ट्रिप हो जाने पर भी यह संकट आ सकता है। इस सिस्टम का लोड ग्रिड के दूसरे हिस्सों पर शिफ्ट हो जाता है। अगर वे सिस्टम भी पूरी तरह लोडेड है, तो भी ट्रिप होने लगता है और लोड शिफ्ट हो जाता है। यह सिलसिला पूरी नार्दन ग्रिड को ठप कर देता है। पिछली बार 2001 में उत्तर प्रदेश में एक सब स्टेशन के ठप हाने से पूरा नादर्न ग्रिड ठप पड़ गया था। उस समय स्थिति को सामान्य बनाने में करीब 18 घण्टे का वक्त लग गया था। किसी पावर सिस्टम में जब ग्रिड फेल होती है, तो ज्यादातर या सभी हाई–वोल्टेज ट्रांशमीशन ग्रिड काम करना बंद कर देती हैं। इसका नतीजा यह होता है कि वह आम तौर पर उठाया जानेवाला लोड वहन नहीं कर पाती। इस स्थिति से निकलने का एक ही रास्ता है कि इस क्षेत्र में जबरदस्त सुधार किया जाए।

आर्थिक महाशक्ति बनने का सपना

आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरते हुए भारत जैसे विशाल देश में 24 घण्टों में दो बार केन्द्रीय ग्रिड का फेल होना केन्द्र तथा राज्य सरकारों को भी बहुत कुछ सोचने पर मजबूर करता है। हमारा देश संघीय पूंजी का पन्द्रह प्रतिशत से भी अधिक धन विद्युत उत्पादन पर खर्च करता है। इसके बावजूद आज भी हमारे देश में अधिकांश राज्य ऐसे हैं, जिनका अभीतक पूरी तरह विद्युतीकरण नहीं हो सका है। पूर्ण रूप से विद्युतीकरण होनेवाले राज्यों में अभी केवल नौ राज्यों की ही गिनती होती है। इनमें तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, हरियाणा, गुजरात, कर्नाटक, पंजाब, दिल्ली, गोआ एवं केरल राज्य शामिल है। दरअसल हमारे देश में बिजली की खपत उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्रों की तुलना में घरेलू एवं कृषि उत्पाद के क्षेत्रों में कहीं अधिक होती है। दूसरी तरफ अगर भविष्य में विद्युत की मांग एवं आपूर्ति के मध्य का फासला इसी प्रकार बढ़ता गया तो ऐसे हादसे हमारे मुल्क के लिए कहीं शर्मनाक घटना न बन जाये। अगर हम आंकड़ो पर गौर करें तो 1947 में विद्युत उत्पादन मात्र 1362 मेगावाट था, जो कि अब बढ़कर एक लाख सत्तर हजार मेगावाट हो गया है। हालांकि भारतीय विद्युत उत्पादन केन्द्रों में इस समय 205,340.26 मेगावाट विद्युत उत्पादन की क्षमता है। लेकिन कोयले की कमी के कारण इतना विद्युत उत्पादन सम्भव नहीं हो पा रहा है। भारत में प्रति व्यक्ति बिजली की खपत भी दुनिया के तमाम प्रगतिशील देशों की तुलना में काफी कम है। उदाहरण के तौर पर जहां कनाडा में प्रति व्यक्ति की खपत 18347 यूनिट है, वहीं अमेरिका में 13647 यूनिट प्रति व्यक्ति है। इसी प्रकार चीन में 2456 यूनिट प्रति व्यक्ति खपत है। जबकि भारत में 734 यूनिट प्रति व्यक्ति के हिसाब से खपत होती है। हमारे देश में प्रत्येक वर्ष विद्युत आपूर्ति की मांग में सात प्रतिशत की वृद्धि भी होती है।

आज तेजी से शहरीकरण हो रहा है। यह भी बिजली की खपत पर काफी प्रभाव डाल रहा है। दूसरी तरफ गांवों में हो रहा निरन्तर विकास भी बिजली की खपत को बढ़ा रहा है। छोटे कल–कारखाने एवं घरेलू उद्योग भी आये दिन बढ़ रहा है। यदि देश सूखे की चपेट में आ जाये तो ऐसे में विद्युत संकट और अधिक गहरा जाता है। दूसरी तरफ विद्युत उत्पादन के तीस फीसदी भाग

का विद्युत के उत्पादन से लेकर केन्द्रीय ग्रिड तक जाने एवं केन्द्रीय ग्रिड से राज्यों को वापस बिजली दिये जाने तथा वहां से लेकर बिजलीघरों से होते हुए उपभोक्ताओं के घरों तक पहुंचने के रास्ते में ही क्षरण हो जाता है। यह समस्या भी बिजली की कमी के संकट में भागीदार रहती है। फिलहाल आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरते हुए भारत जैसे विशाल देश में 24 घण्टों में दो बार केन्द्रीय ग्रिड का फेल होना केन्द्रीय विद्युत मन्त्रालय तथा राज्य सरकारों को भी बहुत कुछ सोचने के लिए मजबूर करता है। ऐसे में केन्द्रीय ग्रिड अथारिटी को चाहिए कि वह ग्रिड में आने तथा वहां से सप्लाई की जानेवाली विद्युत की मात्रा तथा इसके अनुसार ग्रिड के रखरखाव पर पूरी चौकस नजर रखे। ऐसे उपाय भी किये जाने चाहिए कि राज्य अपने निर्धारित कोटे से अधिक विद्युत का दोहन न कर सकें।

कुछ महीने पहले पूर्व पाकिस्तान से यह समाचार आया था कि वहां बिजली और कोयले की कमी के चलते और बदहाल एवं कमजोर अर्थव्यवस्था के कारण दर्जनों रेलगाड़ियों को निलंम्बित कर दिया गया था। यह खबर न केवल चौंकानेवाली थी, बल्कि ऐसी खबर से यह अहसास भी होता था कि पाकिस्तान वास्तव में खस्ताहाली के दौर से गुजर रहा है। लेकिन भारत जैसे आर्थिक रूप से उभरते हुए देश में भी कभी ऐसा होगा इस बात की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। पिछले दिनों स्वतन्त्र भारत के इतिहास में भी यह देखने को मिला जबकि उत्तरी, उत्तर–पूर्व एवं पूर्वी–भारत के करीब 24 राज्य पूरी तरह अन्धकार में समा गये। परिणामस्वरूप इन सभी राज्यों में बिजली से चलने वाली रेलगाड़ियां पूरी तरह ठप्प हो गयीं। मेट्रो रेल सेवाएं ठप्प हो गयी। बंगाल, झारखण्ड एवं बिहार की कई कोयला खदानों में सैकड़ों मजदूर अचानक बिजली फेल हो जाने के कारण खदानों में फंसे रह गये। जिन्हें बाद में सुरक्षित निकाला गया। पूरे आधे भारत में अंधकार सा छा गया। ट्रैफिक सिग्नल बन्द हो गये, जिसके कारण यातायात ठप्प हो गया और तो और दिल्ली एवं राष्ट्रपति भवन, संसद भवन, प्रधान मन्त्री निवास, कार्यालय, साऊथ ब्लाक एवं नार्थ ब्लाक जैसे अत्यन्त प्रमुख एवं अतिसंवेदनशील स्थान सभी अन्धकारमय हो गये। आधिकारिक तौरपर इस गड़बड़ी का कारण उत्तरी, पूर्वी एवं पूर्वी–उत्तर पावर ग्रिड का एक–एक कर फेल हो जाना बताया गया है। इसी तरह 2002 में भी उत्तर भारत इसी प्रकार की पावर ग्रिड फेल होने की समस्या का सामना कर चुका है। इस बार सबसे पहले उत्तरी ग्रिड में गड़बड़ी पैदा हुई जिसके कारण हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, जम्मू कश्मीर, उत्तर प्रदेश और चण्डीगढ़ राज्य अन्धेरे में डूब गये। अभी इस पर नियंत्रण हुआ ही था कि इतने में पूर्वी ग्रिड में भी खराबी आ गयी, जिसके चलते पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा और सिक्किम में अन्धेरा छा गया। ग्रिड फेल होने का तकनीकी कारण यह बताया गया है कि पावर ग्रिड की फ्रिक्वेंसी पर राज्यों द्वारा अधिक विद्युत दोहन किये जाने के परिणामस्वरूप पावर ग्रिड फेल हो गया।

देश के अधिकांश राज्यों में अन्धेरा छा जाने जैसी असाधारण घटनापर चिन्ता जताते हुए तत्कालीन केन्द्रीय विद्युतमन्त्री सुशील कुमार शिंदे ने यह कहा भी था कि कोटे से अधिक विद्युत का दोहन करनेवाले राज्यों को न केवल इसका जुर्माना भरना पड़ेगा, बल्कि उनका कोटा भी घटा दिया जाएगा। वैसे भी किसी राज्य द्वारा निर्धारित कोटे से अधिक विद्युत का दोहन किये जाने पर राज्यों को 20 रूपये प्रति यूनिट के हिसाब से जुर्माना लगाये जाने का कानून है। फिर भी इसका पालन नहीं होता। वास्तव में भारत जैसे आर्थिक महाशक्ति की ओर आगे बढ़ने वाले देश के लिए यह अत्यन्त चिन्ता का विशय है। अब जरा सोचिए जहां कुल पांच ग्रिड हो जो पूरे देश में विद्युत का संचालन कर रहे हों। उसमें से भी अगर तीन ग्रिड फेल हो जाए तो क्या स्थिति होगी। यह सोचने वाली बात है। जाहिर है ऐसे में देश की करीब 70 करोड़ आबादी इस विद्युत त्रासदी से प्रभावित होते हुए अन्धकार में समा जाएगी।

विद्युत उत्पादन और आपूर्ति के नियम

इस नियम के तहत सबसे पहले राज्यों द्वारा विद्युत का उत्पादन किया जाता है। इसके बाद वह राज्य अपनी उत्पादित बिजली को केन्द्रीय ग्रिड के हवाले कर देता है। तत्पश्चात केन्द्रीय ग्रिड अथारिटी नियम एवं कोटे के अनुसार प्रत्येक राज्य को निर्धारित मात्रा में बिजली आपूर्ति वापस देती है। स्वतंत्रता के समय देश का साठ प्रतिशत विद्युत उत्पादन निजी कम्पनियों के हाथों में था। लेकिन आज 80 फीसदी विद्युत उत्पादन सरकारी क्षेत्रों द्वारा किया जा रहा है। केवल 12 प्रतिशत बिजली निजी कम्पनियों द्वारा पैदा की जा रही है। दूसरी तरफ देश के कई राज्यों के विद्युत बोर्ड आर्थिक रूप से बुरी तरह घाटे में चल रहे हैं। कई राज्यों के तो बिजली बोर्ड कंगाल हो चुके हैं। सबसे बड़ी परेशानी तो कोयले की है। बिजली घरों को इस समय कोयले की भी भारी कमी का सामना करना पड़ रहा है। इतना ही नहीं विद्युत विभाग को उत्पादन के साथ विद्युत वितरण के क्षेत्र में भी भारी परेशानी का सामना करना पड़ रहा है। हमें इन सभी समस्याओं को ठीक करना होगा।

वृक्षायुर्वेद मे वर्णित तरल उर्वरक का धान के विकास पर प्रभाव

प्रशान्त कुमार मिश्र
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड

भारत में खाद्यान्न की बढ़ती मांग, खाद्यान्न सुरक्षा के प्रति लोगों का बढ़ता ध्यान तथा पर्यावरण सुरक्षा कुछ ऐसे बिन्दु हैं जिनसे आज देश का लगभग हर वर्ग संवेदनशील है। खाद्यान्न के विषय में आत्मनिर्भरता अतिआवश्यक है और कृषि उत्पादन से समझौता नहीं किया जा सकता है। शहरीकरण मरुस्थलीकरण, भूस्वरूप परिवर्तन, मृदाक्षरण एवं जलवायु परिवर्तन कुछ ऐसी समस्याएं हैं जिनसे हमारा कृषि–क्षेत्र लगातार जूझ रहा है। निश्चित तौर पर खाद्यान्न उत्पादन के घटते कृषि क्षेत्र पर बनाए रखने एवं बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार के उर्वरकों एवं कीट नाशकों का प्रयोग लगभग अनिवार्य हो गया है। परन्तु पिछले कुछ दशकों में हुए शोध तथा अनुभवों ने कृषकों की समस्या बढ़ा दी है। कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए संश्लेषित रसायनों के प्रयोग का दुष्प्रभाव पर्यावरण तथा मनुष्य के स्वास्थ्य पर पड़ता है जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। अध्ययन से स्पष्ट हो चुका है कि हानिकारक रसायन खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर मनुष्य में विभिन्न प्रकार के विकार एवं रोग ग्रस्त कर देते हैं। रसायनों का रिसाव जलाशयों एवं भूगर्भ जल को प्रदूषित कर देते हैं। लगातार रसायनों के उपयोग से खेत की उर्वरकता भी घटती जा रही है। इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए आज "पर्या हितैषी" कृषि अथवा "दूसरी हरित क्रांति" की वकालत जोर–शोर से की जा रही है। दूसरी हरित–क्रांति के अंतर्गत विभिन्न आयामों के साथ–साथ पौधों के द्वारा तैयार किए गए उर्वरक एवं कीट नाशकों के उपयोग की सिफारिश की जाती है। आज जैव उर्वरक के कई प्रकार किसानों के द्वारा प्रयोग में लाए जा रहें है। उदाहरण के रूप में "नील–हरित शैवाल", माईकोराईजा तथा विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवों का उपयोग खेतों में किया जा रहा है। परन्तु इस दिशा में और भी अधिक शोध किए जाने की आवश्यकता है। आज भी लगभग 89 प्रतिशत उर्वरक संश्लेषित रसायनों से ही प्राप्त हो रहा है। इस संदर्भ में वृक्षायुर्वेद नाम का एक अत्यंत दुर्लभ पाण्डुलिपि का प्रकाश में आना एक बड़ी उपलब्धि है। इस पाण्डुलिपि में पौधों एवं मृत पशुओं के अंग से तरल उर्वरक बनाने की विधि का वर्णन प्राप्त होता है।

वृक्षायुर्वेद एक परिचय

पौधों और उनसे जुड़ी विभिन्न जानकारियाँ भारत की कई प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध हैं। ऋग्वेद, विभिन्न पुराणों तथा अनेकों में ऐसे कई संदर्भ प्राप्त होते हैं जिनमें पेड़–पौधों से संबंधित जानकारियाँ प्राप्त होती है तथा उन्हें आधुनिक वनस्पति विज्ञान के सिद्धांतों पर भी सही पाया गया है। परन्तु वृक्षायुर्वेद एक ऐसा पुस्तक है जिसे पर्याप्त प्रसिद्धी नहीं मिल पाई है। यह अति कौतुहल एवं दुख का विषय है कि वर्तमान में वृक्षायुर्वेद का मात्र एक मूल पाण्डुलिपि उपलब्ध है तथा वह ऑक्सफोर्ड के बॉडलियन पुस्तकालय में पड़ा है। आज इस अति प्राचीन पादप विज्ञान के पुस्तक के बारे में हमारी जानकारी विभिन्न विद्वानों के द्वारा किए गए उसके अनुवाद के आधार पर ही है। इनके वी बार शास्त्री (1928), ए लक्ष्मीपति (1960), श्रीकान्त जुगनू (2004) एवं नलिनी सधाले (1994) के द्वारा किया गया अनुवाद उल्लेखनीय है।

प्राचीन काल के विद्वानों के द्वारा लिखित पाण्डूलिपियों में सामान्य तौर पर लेखक का नाम एवं लिखने का काल एवं स्थान का वर्णन प्रायः नहीं होता था। अतः इन विषयों के बारे में कोई प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त नहीं है। परन्तु पुस्तक की भाषा, विषय एवं प्रस्तुत श्लोकों से प्राप्त अप्रत्यक्ष सूत्रों के आधार पर विद्वानों के मतानुसार सुरपाल इसके लेखक थे। सुरपाल चालुक्य वंश के राजा के प्रमुख विद्वान थे तथा उन्हें वैद्यविद्यावरेण्य की उपाधि दी गई थी। इस पुस्तक की रचना दसवीं सदी के आस–पास हुई थी। इस पुस्तक की भाषा संस्कृत एवं हिन्दी का सम्मिश्रण है। वृक्षायुर्वेद की मूल प्रति में साठ पृष्ठ हैं तथा कुल 325 श्लोक पाए जाते हैं।

वृक्षायुर्वेद का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रासंगिक खण्ड कुणप जलम् के बनाने की विधियों एवं उनका प्रयोग है। कुणप जलम् एक प्रकार का तरल उर्वरक है जिसका निर्माण विभिन्न प्रकार के पौधों एवं मृत जानवरों के अंश से किया जा सकता है। सुरपाल ने ऐसे अनेकों उर्वरकों का वर्णन सूक्त संख्या 101–202 किया है। सबसे महत्पूर्ण तथ्य यह है कि इस दुर्लभ पुस्तक हैं अलग पौधों के लिए विशेष विधि से तैयार किए गए कुणप जलम् के प्रयोग का सुझाव दिया गया है। सुरपाल के मतानुसार–

वहाहविड्वसामांसा–मस्तिष्कं–मज्जवां शोषितां।
पक्षस्थं सजलं भूमौ कुणवं परिकीर्तिक।।

अर्थात् मृत पशुओं के अवशिष्ट को पानी में मिश्रित कर उचित विधि से यदि उपचारित किया जाए तो कुणप जलम् अर्थात् तरल खाद बन जाता है। लेखक स्वयं कहते हैं कि विभिन्न सामाग्रियों की मात्रा अथवा मिलाने के क्रम का कोई निश्चित विधान नहीं है। ज्ञानी व्यक्ति अपने अनुभवों से उचित मात्रा का निर्णय कर कुणव जलम् को बना सके है। तत्पश्चात मिट्टी के पात्र में इसे भरकर गर्म स्थान पर रख देना चाहिए।

उक्तवतसुक्षिपेत्तात्र मात्रानास्तीह कष्यचित्।
एकैकं स्थाप्ये भाण्डे कोणस्थाने मनीषिणाम्।।

सुरपाल विशेष तौर पर अंगूर की लताओं के लिए द्राक्षालतार्थ प्रयोग का वर्णन सूक्त संख्या–122 में करते हैं।

ताम्रचूडश कृच्चूर्ण मूले दत्वानिषेचिताः।
मत्स्यमांसोदकैद्रक्षानता पुष्पैः फलैर्भवेत।।

अर्थात् यदि अंगूर के लताओं को मुर्गियों के बीट एवं मछली के धोवन से सिंचित किया जाए तो उसमें फलों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि होती है।

सितसिद्वार्थकतोयं यव तुष पिण्याकधारणम् च तथा।
खज्जूरी–कमला–द्वमल–कुचानावं पुष्टए भवति।।

अर्थात् सफेद सरसों जौ, तुष, खजूर कमल, अद्वमल एवं कुच को पानी में मिलाकर बनाए जाए तरल खाद से सिंचित करने से पौधों में तेज गति से विकास होता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण सुझाव में चावल एवं उड़द से कुणप जलम् बनाकर तथा उससे सींचने से तेन्दू के वृक्ष का विस्तार तेज गति से होता है।

त्रीहि–माषजलैस्त प्राः संति तिन्दुकपादपाः।
निवुलछदतोयैश्च फलैः संति तिन्दुकपादपाः।
निकुलछदतोयैश्च फलैः पारावता।।

इसी प्रकार नारियल, नारंगी, कटहल, खजूर, सब्जियों इत्यादि विभिन्न प्रकार के पौधों के लिए सुरपाल ने विभिन्न प्रकार के कुणप जलम् के बनाने एवं उपयोग में लाने की विधि को सुझाया है।

शोध सामग्री एवं विधि

प्रस्तुत अध्ययन के लिए धान के 'वन्दना" किस्म के बीज के केन्द्रीय शुष्क, हजारीबाग से प्राप्त किया गया। तरल उर्वरक (कुणप जलम्) के बनाने के लिए मछली के मांस को पानी से धोया गया तथा इस जल में 100 ग्राम प्रति लीटर के मात्रा से तिल का चूर्ण डाला गया। इस मिश्रण को आधा घंटा उबालने के बाद, अंधेरे में ठंढ़ा होने के लिए रखा गया। साता दिनों तक इसी प्रकार छोड़ देने के बाद तरल उर्वरक तैयार था। 5 मीटर X 2 मीटर के पाँच परीक्षण खेतों को तैयार किया गया। सभी खेतों में एक समान मिट्टी रखा गया। एक खेत को "नियंत्रण" खेत में सिर्फ पानी डाला गया। परीक्षण–1 में सामानय मात्रा में नाईट्रोजन : फास्फोरस : पोटाश उर्वरक डाला गया। जबकि परीक्षण–2, 3 और 4 खेत में तैयार किए गए तरल उर्वरक, एक लीटर को दस लीटर पानी में मिलाकर 5, 7 और 10 दिनों के अंतराल पर सिंचित किया गया। 90 दिनों के पश्चात पौधे की वृद्धि से संबंधित विभिन्न आंकड़े लिए गए तथा उनका सांख्यिकी परीक्षण किया गया।

परिणाम

इस शोध के पश्चात् प्राप्त परिणाम को तालिका–1 में प्रस्तुत किया गया है। नियंत्रण अवस्था में धान के पौधे की औसत ऊँचाई 82.1 सेमी पाया गया जबकि सामान्य उर्वरक दिए गए खेत में पौधे की ऊँचाई 89.2 सेमी पाया गया। पाँच दिन, सात दिन एवं दस दिनों के अन्तराल पर कुणप जलम् से सिंचित खेत में पौधे की ऊँचाई क्रमशः 9.3 सेमी, 9.6 सेमी एवं 9.7 सेमी मापा गया। धान का जड़ नियंत्रण अवस्था में 8.6 सेमी तथा सामान्य उर्वरक डाले गए खेत में धान के जड़ की लम्बाई 9.9 सेमी पाया गया। कुणप जलम् से सिंचित तीनों खेतों में धान के जड़ की लम्बाई क्रमशः 9.3 सेमी, 9.6 सेमी और 9.7 सेमी मापा गया। पत्तियों की औसत लम्बाई नियंत्रण अवस्था में 32.5 सेमी था जबकि सामान्य ऊर्वरक डाले गए खेत में पत्तियों की औसत लम्बाई 36.2 सेमी पाया गया। पाँच, सात और दस दिनों के अंतराल पर कुणप जलम् से सींचने के बाद धान के पत्तियों की औसत लम्बाई क्रमशः 36.0 सेमी, 36.2 सेमी और 36.2 सेमी पाया गया। प्रति पौधे पत्तियों की संख्या नियंत्रण में 4 जबकि अन्य सभी खेतों में 5 पाया गया। बाली की लम्बाई नियंत्रण अवस्था में 18.6 सेमी पाया गया जबकि अन्य सभी खेतों में लगभग 19.9 सेमी पाया गया। इसी प्रकार प्रति बाली दानों की संख्या नियंत्रण खेत में 42 पाया गया। सामान्य उर्वरक तथा पाँच दिनों के अंतराल पर कुणप जलम् डालने पर दानों की संख्या 48 पाई गई। इसी प्रकार कुणप जलम् सात एवं दस दिनों के अंतराल पर डालने पर दानों की संख्या 49 पाई गई। पत्तियों की संख्या को छोड़ शेष सभी गुणों में पाया गया अंतर सांख्यिकी के दृष्टिकोण पर महत्त्वपूर्ण पाया गया।

निष्कर्ष

प्राप्त परिणाम के विश्लेषण से यह सिद्ध हो जाता है कि तरल उर्वरक कुणप जलम् के प्रयोग से धान के पौधे का विकास बिना उर्वरक वाले अवस्था के तुलना में काफी अच्छा होता है। कुणप जलम् से सिंचित खेत की तुलना सामान्य नाईट्रोजन–फास्फोरस–पोटाश डाले हुए खेत के लगभग बराबर पाई गई। धान के पौधे का विकास सात दिनों के अंतराल पर सर्वोत्तम पाया गया। अतः वृक्षायुर्वेद में वर्णित कुणप जलम् का उपयोग रासायनिक उर्वरक के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। इस शोध का परिणाम पूर्व प्रकाशित शोध पत्र मिश्र (2007, 2010क, 2010ख) के अनुरूप है। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक होगा कि कुणप जलम् रासायनिक उर्वरक की तुलना में हानि रहित एवं पर्या हितैषी होता है। इस तरल उर्वरक को बनाने में लगने वाले सामग्री सामान्य पौधों एवं मृत पशु से प्राप्त होता

है। अतः इसका लागत भी कम होता है और किसान इसका उपयोग आसानी से कर सकते हैं। कुणप जलम् का निर्माण विधि तथा उपयोग विधि भी अत्यंत सरल है। इस प्रकार वृक्षायुर्वेद में सुझाए गए तरल उर्वरक के उपयोग से कृषि में क्रांति आ सकता है।

तालिका–1 तरल उर्वरक (कुणप जलम्) का धान के विकास पर प्रभाव।

अवस्था	पौधे की ऊँचाई (से०मी०)	जड़ की लम्बाई (से०मी०)	पत्ती की लम्बाई (से०मी०)	पत्ती प्रति पौधा	बली की लम्बाई (से०मी०)	दाने प्रति बाली
	1	2	3	4	5	6
नियंत्रण	82.1 ± 1.1	8.6±0.7	32.5 ± 0.8	4 ± 0.3	18.6 ± 1.1	42 ± 2
परीक्षण–1 (एनपीके)	89.2 ± 0.91	9.9 ± 0.9	36.2 ± 0.5	5 ± 0.2	19.9 ± 1.3	48 ± 3
परीक्षण–2 (कुणप जलम्/5दिन)	86.3 ± 1.6	9.3 ± 0.7	36.0 ± 0.9	5 ± 0.2	19.7 ± 1.6	48 ± 2
परीक्षण–3 (कुणप जलम्/7दिन)	88.6 ± 1.12	9.6 ± 0.8	36.2 ± 0.6	5 ± 0.3	19.9 ± 1.4	49 ± 1
परीक्षण–4 (कुणप जलम्/10दिन)	88.9 ± 1.4	9.7 ± 0.8	36.2 ± 0.8	5 ± 0.4	19.9 ± 1.2	49 ± 1

1 = þ <0.03
2 = þ <0.01
3 = þ <0.01
4 = þ <0.05
5x6 = þ <0.01

मानव जीवन में विज्ञान का योगदान

दीप भार्गव एवं पवन कुमार राकेश
आई टी एम विश्वविद्यालय, ग्वालियर

प्रास्तावना

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विश्व की प्रगति में बहुत बड़ा योगदान रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की राष्ट्रीय समिति एक शीर्षस्थ परामर्श संगठन है जिसका मुख्य उद्देश्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी और विज्ञान के विकास के लिए राष्ट्रीय योजनाओं को तैयार करना है। ये राष्ट्रीय योजनाऐं विश्व की प्रगति में बहुत बड़ा योगदान दे रहीं हैं जिससे विश्व की प्रगति तो हो रही है और साथ ही साथ मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है ये बात बिल्कुल सही है कि अगर कोई चीज या वस्तु अपना काम कर रही है तो उसके हानि और लाभ तो निश्चित है बस अन्तर इतना रहता है कि किसी की ज्यादा हानि या किसी का ज्यादा लाभ होता है इस प्रक्रिया में जब हम किसी वस्तु की कसौटी कसते हैं तभी उसके स्वरूप का यर्थाथ ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। जब किसी वस्तु विशेष के एक पक्ष को जब हम देखते हैं तो उसके अन्तर्गत बसंत कलित क्रीड़ा करता हुआ दृष्टिगोचर होता है लेकिन जब उसके दूसरे पक्ष को देखते है तो उसकी काली छाया मंड़राती रहती है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उद्देश्य

1 विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उद्देश्य विश्व को स्वावलम्बी बनाने की दृष्टि से एकीकृत और व्यवस्थित नियोजन कार्य शुरू करना है तब से लेकर यह विभाग निरन्तर वर्तमान संगठनों के प्रति सहयोग बढ़ाकर तथा बहुआंगिक और अर्न्तसंस्थागत अनुसन्धान कार्यक्रमों को समर्थन देने के लिए जहां आवश्यक हो वहां नये संगठनों को स्थापित करके सीमा विस्तार करने तथा विज्ञान प्रौद्योगिकी के उभरते हुए क्षेत्रों को प्रोत्साहन देने के काम में लगा हुआ है।

2 विश्व की प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की समिति को सहयोग दिलाना।

3 विश्व के अनेक आंतरिक विभागों के अतिरिक्त विश्व के हर कोने हर देश, प्रदेश, जिला, शहर, छोटे कस्बे, गांव को अपने अन्तर्गत लेना।

4 विश्व के विकास के प्रयत्न के अंग के रूप विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उचित कार्यक्रम तय करने में और प्राथमिकताएं निर्धारित करने में सहायता करना।

विश्व की प्रगति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की देन

विज्ञान ने मानव को सुख मनोरंजन तथा अन्य साधन प्रदत्त किये है वे अनगिनत है जिनका मानव के साथ–साथ विश्व की प्रगति में भी काफी योगदान रहा है आज विज्ञान की ही देन है कि सारा विश्व ज्यादातर अपना काम बड़ी सरलता से कर लेता है ऐसे कई क्षेत्र है जिनमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी का अपना अलग–अलग महत्व रहा है और विश्व की प्रगति में भी काफी हद तक सुधार हुआ है।

- चिकित्सा के क्षेत्र में
- कृषि के क्षेत्र में
- परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में
- रोबोटिक्स के क्षेत्र में

- सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आदि।

इन क्षेत्रों के अलावा और भी ऐसे कई क्षेत्र है जिन्होंने विश्व की प्रगति में बहुत बड़ा योगदान दिया है।

चिकित्सा के क्षेत्र में

कुछ वर्षों में चिकित्सा के क्षेत्र में विश्व की प्रगति में उल्लेखनीय सफलतायें हासिल की हैं और करता जा रहा है।

- संचारी रोगों के नियंत्रण के रूप में बड़ी सफलता हासिल की।
- विश्व से चेचक जैसे संचारी रोगों की समाप्ति की।
- विश्व में मेडिकल कॉलेज और संस्थानों में तुरन्त संगति वाली समस्याओं का अधिकतम अनुसंधान आर्युवेदिक और हौम्योपैथिक चिकित्सा प्रणालियों को मान्यता दे दी गई।

कृषि के क्षेत्र में

कृषि के क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने उत्पादन शिक्षण अनुसंधान और विस्तार में एक अभिनव का कीर्तिमान स्थापित किया हुआ है इस कारण विश्व में कृषि जन्य पदार्थो का रिकार्ड और उत्पादन निर्यात हुआ है कृषि में बीजों की अधिक उपज देने वाली किस्मों की बुआई, मिट्टी और जल प्रबंधन, कई फसलें काटना, पौध संरक्षण उपाय, किसानों का प्रशिक्षण, गोबर संयत्रों की कार्य क्षमता जैसे कार्यों में अपना योगदान दिया।

परमाणु के क्षेत्र में

यह विज्ञान के इतिहास में कीर्तिमान और हमारे विश्व के लिए गौरव की बात है कि परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में विश्व की प्रगति के लिए अलग–अलग देशों के वैज्ञानिकों का बड़ा योगदान रहा है जैसे भारत देश के वैज्ञानिक रावत भाटा ने राजस्थान में एक कीर्तिमान स्थापित किया कि राजस्थान परमाणु बिजली घर की दूसरी इकाई जटिल 306 फ्यूल कम कूलेंट चैनल बदलने का काम पूरा किया।

भारत में परमाणु ऊर्जा आयोग (ऑटोमिक एनर्जी कमीशन) का गठन 1948 ई में डॉ होमी जहांगीर भाभा की अध्यक्षता में किया गया था भारत का परमाणु अनुसंधान तब शुरू किया जब 1945 ई में टी आई एफ आर (टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फन्डामेन्टल रिचर्स) की स्थापना हुई।

रोबोटिक्स के क्षेत्र में

रोबोटिक्स के क्षेत्र में विश्व के कई वैज्ञानिकों ने इस प्रकार के रोबोट बनाये जिन्हें मानव के द्वारा संचालित किया जाता है और मानव के अनुसार वो अपना काम करते हैं जो मानव उससे चाहता है इस काम को विश्व के कई देशों के वैज्ञानिकों और इंजीनियर्स ने अपने दिमाग का सद्उपयोग करके किया है।

निष्कर्ष

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने विश्व की प्रगति में अपना योगदान देकर मानव और मानव के कल्याण के लिए कई उपलब्धि दी हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर दोषारोपण करना उसी प्रकार निरर्थक है जिस प्रकार छलनी में दूध धोना और कर्मों को दोष देना, भगवान मानव को सद्बुद्धि प्रदान करे जिससे वह विज्ञान को मानव कल्याण के लिए प्रयुक्त करे क्योंकि विज्ञान ने कई ऐसे क्षेत्रों में प्रगति की है जो मानव जाति के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण रही है चाहे वह क्षेत्र कृषि हो या चिकित्सा का क्षेत्र हो या फिर सूचना प्रौद्योगिकी का क्षेत्र हो या कम्प्यूटर का क्षेत्र हो। इनके अलावा कई और भी ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें विज्ञान ने प्रगति की है और मानव का जीवन सरल और सहज बनाया है।

विज्ञान को चाहिए अध्यात्म का सहचर्य

कमलेश गोगिया
पं रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

पूरा विश्व जानता है अगस्त 1945 का वह दिन जब, परमाणु बम की विभीषिका ने विज्ञान का अमानवीय चेहरा प्रस्तुत किया था। यदि विज्ञान को अध्यात्म का सहचर्य मिल गया होता तो अल्बर्ट आईन्सटाइन के परमाणु बम के सिद्धांत का गलत इस्तेमाल नहीं किया जाता। हिरोशिमा और नागासाकी की भयावह त्रासदी ने महात्मा गांधी को अपना आदर्श मानने वाले अल्बर्ट आईन्सटाइन का हृदय परिवर्तन कर दिया था। उन्होंने बच्चों, किशोरों और युवाओं के लिए ऐसा स्कूल खोला जिसमें विज्ञान के साथ अध्यात्म की भी शिक्षा दी जा सके। वे कहते थे कि भारत ही विज्ञान और अध्याम के समन्वय को भविष्य में सिद्ध कर सकता है। जाहिर है कि विज्ञान के बिना अध्यात्म का प्रयोजन पूरा नहीं हो सकता तो अध्यात्म के बिना विज्ञान का और जब इन दोनों के समन्वय की बात आती है तो भारत का नाम अग्रणी पंक्ति में आता है।

इस देश की परम्पराएं हों या वैदिक कर्मकांड, विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय के दर्शन तो लोगों की दिन–प्रतिदिन की धार्मिक क्रियाओं में भी दिख जाते हैं। भारत में तिलक प्रथा को इतना ज्यादा महत्व दिया गया है कि राज्याभिषेक का नाम ही राज्य तिलक पड़ गया है। शास्त्रों में तिलक की महिमा का काफी वर्णन किया गया है। विज्ञान की दृष्टि से मस्तिष्क के रसायन सेराटोमीन तथा बीटाएण्डोरकीन की कमी से उदासीनता आती है व मनोभाव प्रभावित होते हैं लेकिन तिलक लगाने से इन रसायनों के स्त्राव संतुलित हो जाता है।

भारत में मांग में सिंदूर लगाना सुहागिनों का प्रतीक है। जिस स्थान पर सिंदूर लगाया जाता है वह ब्रह्म्रांध और अघ्मि नामक मर्म के बीच ऊपर का भाग है जो पुरुषों के शरीर की तुलना में काफी कोमल होता है। इसकी सुरक्षा के लिए शास्त्रकारों ने तिलक का वर्णन किया है। सिंदूर में मौजूद पारा मर्मस्थान को बाह्रय दुष्प्रभाव से बचाता भी है। इस देश की जनश्रुतियां भी अध्यात्म और विज्ञान के बेहतर समन्वय का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। जनश्रुति है कि तुलसी (पौधा) विष्णु भगवान की पत्नी है, इसलिए इसे चबाकर नहीं खाना चाहिए। वैज्ञानिकों का कहना है कि तुलसी के पौधों में पारा ज्यादा होता है जिससे दांत गिर जाते हैं।

शास्त्र कहते हैं– "अस्नायी समलं भुक्ते" यानी बिना स्नान भोजन खाना मल खाने के तुल्य है। शरीर विज्ञानियों का कहना है कि स्नान से शीतलता आती है और नई स्फूर्ति आती है जिससे स्वाभाविक क्षुदा जागृत होती है। स्नान के पूर्व कोई भी वस्तु खा लें तो हमारी जठराग्नि उसे पचाने में लग जाती है। इसके बाद स्नान करने पर शरीर को मिलने वाली शीतलता से पाचन शक्ति मंद हो जाती है जिससे आंत्रशोध व कब्ज होता है और फिर इससे कई बीमारियां। हिंदू धर्म में पीपल के वृक्ष को भगवान विष्णु माना जाता है। श्रीमदभगवत्गीता के 10वें अध्याय के 26वें श्लोक के अनुसार भगवान श्री कृष्ण स्वयं कहते हैं– "मैं सब वृक्षों में पीपल का वृक्ष हूं।" यह सभी जानते हैं कि एकमात्र पीपल का ही वृक्ष ऐसा है जो दिन–रात ऑक्सीजन का विर्सजन करता रहता है। भारत में विज्ञान और धार्मिक क्रियाओं के समन्वय का अनोखा मिलन जनेऊ संस्कार से लेकर यज्ञ (ऋषियों की प्रयोगशाला) करने तक और

रात्रि को पूर्व दिशा की तरफ सिर रखकर सोने से लेकर सुबह उठकर प्राणायाम करने व सूर्योदय के दौरान जल अर्पित करने तक देखने को मिलता है।

भारतीय कहावतों के संबंध में सर्वविदित है कि जब रेडियो–टीवी और मौसम विभाग नहीं था तब घाघ की कविताएं मौसम की सटीक भविष्यवाणी करती थीं। मौसम विभाग के अनुमान गलत साबित हो सकते हैं लेकिन घाघ की कवाहतें नहीं। कहते हैं कि ये आज भी सटीक बैठती हैं। घाघ की एक कविता है

"सोम सुक्र सुरगुरु दिवस, पौष अमावस होय।
घर घर बजे बधावनो, दुखी न दीखै कोय।।"

मसलन पूस की अमावस्या को सोमवार, शुक्रवार बृहस्पतिवार पड़े तो घर घर बधाई बजेगी–कोई दुखी न दिखाई पड़ेगा।

इसी तरह–

"सावन पहिले पाख में, दसमी रोहिनी होय।
महंगा नाज अरु स्वल्प जल, विरला विलसै कोय।।"

इसका मतलब है कि यदि श्रावण कृष्ण पक्ष में दशमी तिथि को रोहिणी हो तो समझ लेना चाहिए अनाज महंगा होगा और वर्षा स्वल्प होगी, विरले ही लोग सुखी रहेंगे। ऐसी कई कहावतें हैं जो आज भी सटीक बैठती हैं। मौसम विज्ञानी भले ही मौसम की सटीक भविष्यवाणी न कर सकें लेकिन प्रकृति के सानिध्य में रहने वाला किसान मौसम की सटीक भविष्यवाणी करता है। यहां तक की चींटी भी जब अपना सामान दीवार पर ऊपर की ओर लेकर चलती है तो अनुभवी इस बात का अनुमान लगा लेते हैं कि बारिश होने वाली है। आदिमानव पेड़–पौधों की पूजा करते थे और आज विज्ञान भी यह साबित कर रहा है कि वृक्ष बात भी करते हैं। यह प्रयोग भी किया जा चुका है कि संगीत से न केवल लोगों के रोग ठीक होते हैं बल्कि उन्नत खेती भी होती है और यह भी प्रयोग किया जा चुका है कि पेड़–पौधे अपराधी भी पकड़ सकते हैं।

ऋषि–मनिषियों ने संगीत की महत्ता को काफी पहले उजाकर दिया था। ऋग्वेद (9–85–3) में एक श्लोक आता है– "अभि स्वरन्ति बहवो मनीषिणो राजानमस्य भुवनस्य निंसते।" अर्थात अनेक मनीषी विश्व के महाराजाधिकार भगवान की ओर संगीतमय स्वर लगाते हैं और उसी के द्वारा उसे प्राप्त करते हैं। भक्ति–भावनाओं के विकास में संगीत का योगदान असाधारण है और संगीत से होने वाले चमत्कारों से पूरा इतिहास भरा पड़ा है।

टोड़ी राग गाकर तानसेन ने जंगल में मृगों का झुंड खड़ा कर दिया था। बैजूबावरा ने "मृग–रंजनी टोड़ी राग" का अलाप किया तो एक मृग दौड़ता हुआ राजसभा तक पहुंच गया था। बैजू बावरा ने "राग पूरिया" गाकर राजा राजसिंह की अनिद्रा की बीमारी ठीक कर दी थी। "दीपक राग" का दीपक जला देने, "श्री राग" का क्षय रोग निवारण में, "भैरवी राग" प्रजा की सुख–शांति और युद्ध के लिए प्रस्थान करने वाले सैनिकों के लिए "शकरा राग" का प्रयोग आदिकाल से होता रहा है। वर्षा ऋतु में गांव–गांव में मेघ–मल्हार गीत गया जाता है। अमेरिका के दंत चिकित्सक एक विशिष्ट संगीत लहरी विद्युत वाद्य यंत्र से बजाकर दांत उखाड़ते हैं। इससे लोगों को कष्ट नहीं होता। देश के कई राज्यों के कृषि अनुसंधान केंद्रों में संगीत की स्वर लहरियों से उत्पादन में वृद्धि के सफल प्रयोग किए जा चुके हैं। कनाड़ा के किसान अपने खेतों के चारों ओर लाउडस्पीकर लगाकर रखते हैं। नारद संहिता में एक श्लोक है–

"खगाः भृंगाः पतंगाश्च कुरश्चाद्यापिजन्तवः सर्व एव प्रगायन्ते गीतव्याप्तिर्दिगन्तरे"

अर्थात–हे नारद, पक्षी, भौरे, पतंगे, हिरण आदि जीव–जंतुओं को भी संगीत से प्रेम होता है। संगीत से संसार का कोई भी स्थान रिक्त नहीं, अर्थात् संगीत एक सर्वव्यापी ईश्वरीय तत्व है और वह परमात्मा के समान ही संपूर्ण संसार को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक आरोग्य प्रदान करता है। स्पष्ट है कि संगीत प्रभावों को विज्ञान आज प्रमाणित कर रहा है लेकिन भारतीय मनीषियों ने इसकी महत्ता का वर्णन आदिकाल में ही कर दिया था।

महर्षि रमण, ऋषि याज्ञवल्क्य, अगस्त्य, अर्चन और विश्वामित्र से लेकर स्वामी विवेकानंद, रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, महर्षि अरविंद, संत विनोबा भावे और वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा आचार्य तक हमारा भारत देश उन अनगिनत महान ऋषियों की कर्मभूमि रहा है जिन्होंने अध्यात्म और विज्ञान के सहचर्य को ही देश व विश्व की शांति, समृद्धि और प्रगति–उन्नति का कारण बताया है। उन्होंने ऊर्जा एवं शक्ति के बहुआयामी प्रवाहों की सूक्ष्म अनुभूति की थी। हमें इस बात पर गर्व होना चाहिए कि हम भारतीय हैं क्योंकि यह देश वैज्ञानिक अध्यात्म का प्रणेता है और इस देश ने विश्व के कई महान वैज्ञानिकों को प्रगति के पथ पर अग्रसर किया है। दशमलव का अविष्कार भारत में हुआ यह कहें कि डॉट भारत ने ही दिया और पूरी दुनिया इसी डॉट पर आज ऑनलाइन है। जर्मनी के महान वैज्ञानिक सर हाईजेनबर्ग ने भारत के ही अद्वैत वेदान्त से प्रभावित होकर अनिश्चितता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। 1920 में उन्होंने पदार्थ के कण की प्रकृति पर शोध कार्य शुरू किया था। 1929 में वे भारत में शांति निकेतन आए थे।

महाकवि रविंद्रनाथ टैगौर की प्रेरणा और महान आचार्य आदिगुरु शंकराचार्य के ग्रंथ विवेक चूड़ामणि के श्लोकों की बदौलत हाईजेनबर्ग अपना सिद्धांत प्रतिपादित कर पाए थे। 11 अप्रैल 1972 को जर्मनी के म्यूनिख शहर में प्रसिद्ध भौतिकविद् फ्रिटजॉफ क्रापा से उन्होंने कहा था–भारत देश द्वारा प्रवर्तित अध्यात्म का वैज्ञानिक अध्ययन आज के युग की आवश्यकता है। उनकी यह प्रेरणा ही भौतिक विज्ञान के शास्त्री क्रापा की रचना द ताओ ऑफ फिजीक्स की रचना का आधार बनी। अपनी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व हाईजेनवर्ग ने कहा था–"विश्व के तमाम वैज्ञानिकों को भारत के अध्यात्मवेत्ताओं को विशेषतः स्वामी विवेकानंद को पढ़ना चाहिए। वह भारत के ऐसे वैज्ञानिक ऋषि हैं, जिनके विचार आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान का आधार बन सकते हैं।"

अल्बर्ट आईंस्टाइन की महानता यह थी कि उनके अविष्कार कल्पनाओं में होते थे, या कहें पहले विचार आता था और फिर वे वैज्ञानिक परीक्षण में सटीक बैठते थे। रामायण, महाभारत से लेकर स्वामी विवेकानंद और वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने भी विचारों (ऊर्जा) की फ्रिक्वेंसी और इसके परिणाम तथा वैज्ञानिक आधारों को काफी पहले ही स्पष्ट कर दिया था। आचार्य ने तो कल्पना और विचारों को अध्यात्म की नींव माना है। रॉन्डा बर्न की द सीक्रेट (रहस्य) और पॉवर (शक्ति) नामक पुस्तकों ने विश्व में खासी लोकप्रियता हासिल कर ली है जिसमें विश्व के तमाम भौतिकविदों से लेकर वैज्ञानिकों और विचारकों ने विचारों या कल्पना को ब्रह्मांड के आकर्षण के नियम के सिद्धांत से जोड़ा है। स्वामी विवेकानंद काफी पहले विचारों की शक्ति को प्रतिपादित कर चुके हैं। वैज्ञानिक अध्यात्म के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा आचार्य के अनुसार एकमात्र विज्ञान की दृष्टि से वैज्ञानिक यह मानते हैं कि अविष्कार प्रयोगशालाओं की देन है अथवा वे बुद्धिमता के कारण उपलब्ध हुए हैं पर, प्रत्येक अविष्कार की संभावना का आरंभिक विचार अंतःस्फूरणा से उठता है। न्यूटन से पहले भी चिरकाल से पेड़ों पर से फल जमीन पर गिरते हुए मूर्खों से लेकर विद्वान तक देखते रहे हैं, पर इतने से पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का आभास पाना और अंततः उसे खोज पाना बुद्धिमता का नहीं अंतःस्फूरणा का आधार है। बीसवीं सदी के महामानव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय करते हुए नई विधा "वैज्ञानिक अध्यात्मवाद" को जन्म दिया। उन्होंने गायत्री और यज्ञ की वैज्ञानिकता

के सत्य का उद्‌घाटन करने से लेकर ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान जैसी वैज्ञानिक अनुसंधान प्रयोगशाला के निर्माण के साथ 'युग निर्माण योजना' जैसे महत्त्वाकांक्षी आन्दोलन के माध्यम से प्रमाणित कर दिखाया कि विज्ञान और दर्शन का समन्वय ही विश्व को शांति, प्रगति और समृद्धि के रास्ते पर खड़ा करेगा।

भारत के ज्योतिषशास्त्र की विश्वसनियता आज ढोंगियों ने गिरा जरूर दी है लेकिन परमाणु शक्ति आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष और विश्वविख्यात भौतिकविद् डॉ साराभाई मानते थे कि यदि ज्योर्तिविज्ञान के सूत्रों को ढूंढा जा सके और अंतरिक्षीय ज्ञान में प्रयुक्त किया जा सके तो अनेकों महत्वपूर्ण जानकारियां हाथ लग सकती है। रूसी वैज्ञानिक ब्लादीमोर देस्यातोब के अनुसार पृथ्वी पर समय–समय पर आने वाले चुंबकीय तूफानों से धरती के निवासियों में स्नायविक एवं मनोरोग की बहुलता देखी जाती है। अपनी आरंभिक खोजों में ब्लादीमोर ने यह पाया था कि सूर्य पर एक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप (लेयर) फूटते हैं तो धरती पर प्रचंड चुंबकीय तूफान आते हैं जिनसे प्रभावित तो सभी होते हैं, पर कमजोर मनः स्थिति वाले व्यक्तियों पर उनकी प्रतिक्रिया अत्याधिक दिखाई पड़ती है। आत्महत्याएं, हत्याएं एवं असंतुलन के कारण सड़कों पर दुर्घटनाएं अधिक होती हैं। स्वामी विशुद्धानंद परमहंस देव के अनसुार ज्योतिर्विज्ञान में गणित व अध्यात्म विद्या दोनों का समावेश होता है। व्यक्ति यदि सूर्य की परिक्रमा कर रही और अपनी धूरी पर घूम रही धरती की परिभ्रमण अवस्थाओं को जान ले तो वह धरती की विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले ऋतुओं व मौसम के बारे में जान सकता है।

फ्रांस के प्रख्यात गणितज्ञ पियर साइमन डी लाप्लास ने सेलेशियल मैकेनिक्स में न्यूटन के नियमों का हवाला देते हुए कहा है कि यदि कोई व्यक्ति ब्रह्माण्ड के सभी कणों की स्थिति और वेग को जान सके तो उसके लिए कुछ भी अनिश्चित नहीं रह जाएगा और उसकी आंखों के सामने भविष्य उसी तरह उपस्थित हो जाएगा जैसा कि भूतकाल। विज्ञान और प्रद्यौगिकी के इस युग में कम्प्यूटर और आधुनिक संचार तंत्रों ने पूरी दुनिया का ही कायाकल्प कर दिया है। ऋग्वेद में मंत्र आता है "विश्व पुष्ट ग्रामे अस्मिन अनातुरम" अर्थात मेरे गाँव में परिपुष्ट विश्व का दर्शन होना चाहिए। आज यह मंत्र साकार हो रहा है क्योंकि सूचना और संचार क्रांति ने विश्व को एक गांव में परिवर्तित कर दिया है। क्या इस बात पर आश्चर्य नहीं होता कि जिस दौर में लोगों को दुनिया के बारे में जानकारी भी नहीं थी, उस दौर में ही पूरे विश्व को एक गांव में बसाने की भविष्यवाणी की जा चुकी थी।

हमारे शास्त्र, इतिहास के पन्ने इस बात की गवाही देते हैं कि विज्ञान और अध्यात्म परस्पर विरोधी होते हुए भी एक–दूसरे के पूरक हैं। यह प्रसिद्ध वैज्ञानिक ब्रायल का सिद्धांत "ब्रायल लॉ" है। इसके कई प्रमाण हैं। गीता को ही ले लीजिए। गीता में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि कश्मकश के मार्ग में बाधा आने पर क्रोध का जन्म होता है जो मन के संवेगों का प्रवाह है। यदि इस पर बांध न बनाया जाए तो यह पतन की ओर ले जाता है। वैज्ञानिक शोध भी बताते हैं कि 60 सेकेंड का क्रोध व्यक्ति के शरीर को 600 सेकेंड तक कंपित करता है, क्योंकि क्रोध से जुड़े तथ्य व्यक्ति को 600 सेकंड तक व्यथित करते रहते हैं। कैलिफोर्निया में एक शोध में पाया गया है कि क्रोध के लिए मानव मस्तिष्क का एंजाइम जिम्मेदार है। यही एंजाइम गुस्से का रिसेप्टर है। जिसे मोनोएमीन ऑक्सीडेस का नाम दिया है। ऐसी कई बातें जो हमारे प्राचीन ग्रंथों में वर्णित हैं शोध में प्रमाणित हो रही हैं। महाभारत में वेदव्यास ने कहा है कि महानिशा की रात्रि (रात्रि 9–10 बजे से सुबह 4 बजे तक) में सोने–उठने से व्यक्ति की आयु में वृद्धि होती है। छत्तीसगढ़ के जगदलपुर की डॉ. चयनिका नाग ने नींद के प्रभावों पर अध्ययन किया तो पाया कि जिस गांव में बिजली नहीं है वहां के ग्रामीणों की दिनचर्या प्राकृतिक है और उनकी आयु में भी वृद्धि हो रही है। इस गांव में ग्रामीण न तो ज्यादा बीमार पड़ते हैं और न ही उनके बाल सफेद हो रहे हैं। पड़ोसी गांव जहां बिजली की व्यवस्था है, वहां पूरी स्थिति उलट है। ऐसे कई शोध निरंतर हो रहे हैं और इस बात की ओर ही संकेत कर रहे हैं कि विज्ञान को अध्यात्म

का सहचर्य चाहिए जिससे इसका सकारात्मक और सृजनात्मक उपयोग हो सके। ऐसा तभी संभव है जब विज्ञान अध्यात्म की सृजन संवेदना से ओत–प्रोत हो। जरूरत इस बात की है कि जिन्हें विज्ञान पढ़ाया जा रहा है उन्हें अध्यात्म भी पढ़ाया जाए।

आईन्सटाइन, गैलीलियो, न्यूटन से लेकर भारत के महान भौतिकविदों तक ने स्वीकार किया है कि सब कुछ पदार्थ ही नहीं है कुछ मानसिक और भावनात्मक सत्य भी संसार में है। सर आइजेक न्यूटन ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'प्रिन्सपिया' में लिखा है कि परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की और इसे एक संवेग प्रदान किया, जिसके कारण वह गतिशील है। उन्होंने यह भी लिखा कि ब्रह्माण्डरूपी नाटक के मंच पर जब कोई विपत्ति पैदा होती है, तो परमात्मा स्वयं उसे ठीक करता है। वैज्ञानिक भी परमात्मा पर यकीन करते हैं, फिर चाहे इसे प्रमाणित करने के लिए उन्होंने गार्ड पार्टिकल की खोज करने जैसा कदम ही क्यों न उठाया हो। हिग्स बोसोन की खोज आज की गई लेकिन सदियों पहले गुरुनानक देव ने इसे कुछ इस तरह बयां किया था–

"अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कुदरत के सब बंदे।
एक नूर ते सब जग उपजेआ, कौन भले कौन मंदे।।"

निष्कर्ष

वस्तुतः अध्यात्म हमें कण–कण में भगवान का संदेश देता है। अध्यात्म के समन्वय के साथ विज्ञान के प्रयोगों में मानवता निहित हो तो यह दुनिया स्वर्ग बन जाएगी। भारत के प्रख्यात् वैज्ञानिक एवं नोबेल फरस्कार विजेता प्रो सी वी रमन के शब्दों में निष्कर्ष निहित है ''विज्ञान का प्रयोग मानव हित में हो, यह चुनौती न केवल समूचे विज्ञान के सामने, बल्कि समूची मानवता के सामने है। वैज्ञानिकता, विज्ञान एवं वैज्ञानिकों को हृदयहीन व संवेदनहीन नहीं होना चाहिए। वे हृदयवान हों, संवेदनशील हों, इसके लिए उन्हें अध्यात्म का सहचर्य चाहिए''। ''बीसवीं सदी भले ही विज्ञान की सदी हो पर इक्कीसवीं सदी वैज्ञानिक आध्यात्मवाद की सदी होगी।''

संदर्भ

1. आचार्य, पं. श्रीराम भार्मा, पंड्या, डॉ प्रणव, "ज्ञान और विज्ञान एक दूसरे के सहोदर" युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा, 1991.
2. द्विवेदी, डॉ भोजराज, हिन्दू मान्यताओं का वैज्ञानिक आधार, डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा.) लि. नई दिल्ली, 2000.
3. पंड्या, डॉ प्रणव, वैज्ञानिक अध्यात्म के क्रांति दीप, श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, शान्तिकुंज, हरिद्वार, उत्तराखंड, 2009.
4. आचार्य, पं श्रीराम शर्मा, शब्द ब्रह्मा–नाद ब्रह्मा, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा, 2009.
5. आचार्य, पं श्रीराम शर्मा, अध्यात्मवादी भौतिकता अपनाई जाए, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा, 2009.

वेबसाइट्स

1. www.dharmchakra.in
2. www.prabhatkhabar.com
3. www.samaylive.com
4. www.navbharattimes.com

चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान

गीतांजलि एवं फूलदीप कुमार
गंगा प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान, झज्जर, हरियाणा
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली

सारांश

चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान तेजी से बढ़ता चल जा रहा है। जहां पहले से लोगों के पास बिमारी से बचाव के लिए सीमित साधन होते थे, लेकिन अब चुंकि विज्ञान और प्रौद्योगिकी का तेजी से चिकित्सा की ओर विकास हसे रहा है, तो आज मनुष्य ने इस की सहायता से लाइलाज बिमारियों को ठीक कर बिमारियों पर भी विजय पा ली है। इन सब में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का बहुत बड़ा योगदान है। इससे लोगों को सस्ता और घर बैठे बिमारियों का पता लगा सकते है। जिससे उन पर आसानी से नियंत्रण भी किया जा सकता है। रोबोट जैसी तकनीकी ने चिकित्सा के क्षेत्र में ऐसे बदलाव ही ला दिया है। यदि डॉक्टर उपलब्ध न हो तो रोबोट मशीन ही मरीज का ऑपरेशन व उसकी देखभाल कर सकता है और यह सब विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास की वजह से संभव हो पाया है।

भूमिका

विज्ञान और प्रौद्योगिकी का आज हर जगह बोलबाला है। आज ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जहां विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रयोग ना हो रहा हो। चाहे शिक्षा व्यवसाय था फिर चिकित्सा का क्षेत्र हो, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का हर जगह उपयोग हो रहा है। जैसा कि हम नई सहस्राब्दी में कदम रख रहे हैं। यह स्पष्ट होता जा रहा है कि चिकित्सा विज्ञान विकास सबसे रोमांचक दौर में प्रवेश कर रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में यह बहुत ही प्रभावशील है ओर बड़े पैमाने पर उपलब्ध है। आवश्यक तकनीकी के बिना बहुत से लोगों को अपने स्वास्थ्य से संघर्ष करना पड़ता था। इसके होने से न बल्कि लोगों का जीवन सरल हो रहा है बल्कि लोगों भ्रूण और अंग प्रत्यारोपण भी सरलता से कर पा रहे हैं। आजकल आधुनिक मशीनों का प्रयोग किया जात रहा है जिससे डॉक्टरों के लिए ऑपरेशन बहुत ही सरल हो रहा है। आज आधुनिक युग में रोबोट का प्रयोग किया जा रहा है। नई–नई दवाईयों का विकास किया जा रहा है जिससे कई नई रोगों का आसानी से ईलाज हो पा रहा है। प्रौद्योगिकी की वजह से लोगों को घर बैठे कुछ आम बीमारी की जानकारी प्राप्त हो पा रही है जिससे वे घर बैठे ही उन बीमारियों पर नियंत्रित कर सकते है। चिकित्सा का योगदान मानवीय शरीर स्वास्थ्य की दिशा में विज्ञान ने अपूर्व खोज कार्य किया है। असाध्य मानी जाने वाली बीमारियों की सफल एवं अचूक दवाईयां खोज ली गई है। शरीर के भीतर की बीमारियों के निदान एवं ईलाज के लिए अनेक प्रकार के यंत्रों का प्रयोग किया जाने लगा है। और यह सब प्रौद्योगिकी की वजह से संभव हो पाया है। अल्ट्रा साउंड, ई.ई.जी., एम.आर.आई., और ई.सी.जी. के द्वारा शरीर की सारी भीतरी बीमारियों के बारे में जाना जा सकता है। कैंसर के ईलाज के लिए रेडियो सक्रिय किरणों का प्रयोग किया जाने लगा है। हृदय, मस्तिष्क, गुर्दों, फेफड़ों आदि अंगों की शल्य चिकित्सा तो अब अनेक अस्पतालों में

उपलब्ध है। अनेक कृत्रिम अंगों का प्रयोग किया जाने लगा है। और अब शीघ्र ही बाजार में कृत्रिम रक्त आ जाने की भी आशा है। कृत्रिम हृदय तो रोगियों को लगाया भी जाने लगा है। टांगों–बाजुओं आदि के कह जाने पर नकली अंग लगाये जा रहे हैं। डायलिसिस की मशीन रक्त को साफ कर गुर्दे का कार्य कर रही है। यह डायलिसिस डायबिटिज के लोगों के लिए बहुत ही लाभकारी है। आज जब विज्ञान के काफी उन्नति करती है लेकिन डायबीटिज जैसे बीमारियां काफी विकसित हो गई है? इसलिए लोगों को चाहिए कि वो दिन प्रतिदिन डायबिटिज को देख सके। इसके आज बाजार छोटी मशीन या यंत्र उपलब्ध है जिससे कि लोग घर बैठे अपेनी डायबिटिज को देख सकते हैं और आसानी से उस पर नियंत्रण भी कर सकते हैं। ब्लड प्रेशर जैसी बीमारियों के लिए बाजार में यंत्र उपलब्ध है जिससे रोगी घर बैठे ही उससे नियंत्रण कर सकते हैं तथा उसका सफल ईलाज भी कर सकते हैं। आजकल विज्ञान कई नई बीमारियों का ईलाज कर रहा है।

आज कुछ यंत्र ऐसा बन रहे हैं, जो मनुष्य से भी अधिक अच्छी तरह ऑपरेशन कर सकती है। शल्य चिकित्सा ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी में कुछ नई आयाम जुड़े हैं।

कृत्रिम बुद्धिमता विज्ञान की सहायता से अनेक मशीनी यंत्र बनाए गए हैं। जिन्हें हम रोबोट बोलते हैं। वैसे तो रोबोट हर क्षेत्र में बहुत अधिक प्रयोग हो रहा है। क्योंकि ये किसी भी कार्य सरलता, निपुणता, Accurate करते हैं।

निष्कर्ष

विज्ञान प्रौद्योगिकी ने चिकित्सा के क्षेत्र में हर वो सुविधाएं प्रदान की है जिनके द्वारा बीमारियों की जांच एवम् उनके ईलाज भी सुलभ हो गया है। विज्ञान ओर प्रौद्योगिकी ने बीमारियों का सफल ईलाज किया है बल्कि आजकल आधुनिक मशीनों के द्वारा ईलाज और अधिक सरल बना दिया है। विज्ञान ने सूचना प्रसारण के द्वारा आम लोगों को सब बीमारियो की जानकारी भी उपलब्ध कराई है जो उनकी पहुंच से दूर भी जैसे– AIDS Tuberculosis आजकल आधुनिक मशीनों की सहायता से घर बैठे ही भयानक बीमारियों का सफलतापूर्वक जांच की जा सकती है जैसे Blood Pressure (रक्तचाप) मधुमेह। इससे लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति और अधिक जागरूक हो गए हैं। इससे हम कह सकते हैं। विज्ञान, चिकित्सा के क्षेत्र में चमत्कार साबित हुआ है।

विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में मानव की संवेदनाएं

अमित कुमार
उपाधि पी जी महाविद्यालय, पीलीभीत, उत्तर प्रदेश

विज्ञान और प्रौद्योगिकी का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है और इसके क्षितिज में नित नए आयाम का समावेश होता जा रहा है। आज मानव महासागर की गहराईयों से लेकर अंतरिक्ष तक व्याप्त अनगिनत रहस्यों को सुलझाने में सक्षम हो चुका है। साथ ही क्लोनिंग जैसी उच्च तकनीक के प्रयोग से समरूप जीवों की उत्पत्ति करके तथा मानव क्लोनिंग की तरफ कदम बढ़ा कर वैज्ञानिकों ने जीवन के संबध में प्राकृतिक प्रक्रिया में भी अपना हस्तक्षेप किया है। 21वीं सदी एक संचार युग का संकेत दे रहीं है, नैनो प्रौद्योगिकी की क्रातिंकारी सम्भावनाओं को देखते हुए पूरे विश्व में इसके अनुसंधान व विकास पर बल दिया जा रहा है। उनके अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य दूसरी प्रौद्योगिकियों के साथ नैनों का समन्वय है। इसके अतिरिक्त परमाणु ऊर्जा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, जैव प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष, महासागरीय विकास कार्यक्रम, पर्यावरण तथा प्रतिरक्षा कार्यक्रम पर भी पूरा विश्व नित नये आयामों की उपस्थित दर्ज कराने का प्रयास कर रहा है।

विज्ञान प्रौद्यागिकी शब्द सुनते ही सुविधाओं से भरी दुनियां हमारी आंखों के सामने आ जाती है, जिसमें सर्दी–गर्मी से बचने के लिए एयर कंडीशनर है; परिवहन के लिए कारें, रेलगाड़ी, हवाई जहाज इत्यादि है; उंची अट्टालिकाऐं, मॉल्स है; संचार के लिए मोबाइल फोन, इन्टरनेट आदि है; विभिन्न बीमारियों, समस्याओं के समाधान उपलब्ध है तथा भविष्य में भी नई–नई सुविधाओं तथा विभिन्न समस्याओं के समाधान होने की आशा जगती है। आज विज्ञान–प्रौद्योगिकी के बिना जीवन की कल्पना भी मुश्किल लगती है। कितुं क्या विज्ञान प्रौद्योगिकी ने हमें सिर्फ सुविधाएं दी है? क्या उसके नकारात्मक परिणाम नहीं है? क्या इसने कई मनुष्यों का जीवन दुरूह नहीं बनाया है? क्या इसने असमानता को बढ़ाने में मदद नहीं की है? क्या इसने आंतकवाद व युद्ध की भयावहता को बढ़ा नहीं दिया है? क्या इसने मानवीय संवेदनाओं को कमजोर नहीं किया है? इन्हीं जटिल प्रश्नों के आलोक में विज्ञान प्रौद्योगिकी के मानवीय संवेदनाओं पर पड़े प्रभाव को देखने की प्रयास कर सकते है।

सर्वप्रथम विज्ञान प्रौद्योगिकी द्वारा उपलब्ध कराये गये विभिन्न उपकरणों पर विचार कर सकते है। जैसे– मोबाइल फोन, आईपॉड, आदि उपकरणों ने मनुष्य को अपने आप में ही मस्त बना दिया है। वे संगीत सुनते हुए ही सार्वजनिक स्थानों पर देखे जा सकते है। इससे सामाजिक अन्तःक्रिया की संभावना कम हुई है तथा दूसरों के प्रति संवेदना में कमी आयी है। टेलीविजन, इन्टरनेट आदि सुविधाओं ने व्यक्ति के खाली समय को अपनी ओर खींच लिया है जिसमें पहले लोग सामूहिक अन्तःक्रिया करते थे, पड़ोसी से मिलते थे आदि परंतु अब इन्हीं उपकरणों पर समय बीतता है। इसने तो परिवार के सदस्यों तक को दूर कर दिया है। इन्टरनेट पर अधिक समय बिताने वाले पतियों की पत्नियों के लिए इन्टरनेट विधवा शब्द प्रयुक्त होने लगा है। बच्चे भी अब बाहर दूसरे बच्चों के साथ खेलने या दादा–दादी, नाना नानी से कहानियों इत्यादि सुनने के बजाय कम्प्युटर गेम्स खेलना अधिक पसन्द करते हैं।

विज्ञान–प्रौद्योगिकी ने विभिन्न सुख–सुविधा के उपकरणों का निर्माण करके व्यक्ति को आरामतलब बनाया है तथा इन सुविधाओं के उपभोग की प्रवृत्ति को बढ़ा दिया है। इसने सुविधाओं की प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा को बढ़ाकर सामाजिक तनाव व संवेदनहीनता को बढ़ाया है। इनकी प्राप्ति के लिए व्यक्ति किसी भी हद तक जाने को तैयार है, दूसरे व्यक्ति की कीमत पर भी वह इसे प्राप्त करने को तैयार है। विज्ञान–प्रौद्योगिकी के प्रभाव में वैज्ञानिक मूल्यों को बढ़ावा मिला है जिन्होंने हर चीज को तार्किकता की कसौटी पर कसने को प्रेरित किया है। इससे मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं का महत्व कम हुआ है।

व्यक्ति तार्किकता का दास बनता जा रहा है। इस स्थिति को प्रसिद्ध समाज शास्त्रीय मैक्स वेबर ने इसे 'तार्किकता के लौह पिंजड़े' के रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रसिद्ध आधुनिकतावादी चिंतक जिंग्गुंट ब्राडमैंन ने विज्ञान–प्रौद्योगिकी के विकास को व्यापक हिंसा को संभव बनाने के सहायक कारण के रूप में भी प्रस्तुत किया है। इनके अनुसार हिटलर द्धारा लाखों यहूदियों का जनसंहार, विज्ञान–प्रौद्योगिकी के माध्यम से ही संभव हुआ। गैस चैम्बर में एक साथ बड़ी संख्या में लोगों को मार सकने में विज्ञान की भूमिका स्पष्ट है। तलवार इत्यादि से जनसंहार की तुलना में विज्ञान–प्रौद्योगिकी के उपयोग द्वारा व्यक्तियों को मारना तुलनात्मक रूप से आसान होता है। विज्ञान–प्रौद्योगिकी के कारण ही व्यापक जनसंहार के हथियार विकसित हुए है तथा युद्ध की भयावहता बढ़ी है इसी के कारण आंतकवाद जैसी समस्या अधिक जटिल व खतरनाक हुई है। अब तो मानवरहित बमवर्शक विमान भी बन गए है जो कहीं भी व्यापक जनसंहार कर सकते है। ये सभी मानवीय संवेदनशीलता की कमी के ही परिचायक है।

विज्ञान–प्रौद्योगिकी के कारण मशीनीकरण व स्वचालनीकरण ने मनुष्य के श्रम के महत्व में कमी लाई है। भविष्य में कम्प्यूटर रोबोट आदि का प्रयोग बढ़ने से इसमें और कमी आ सकती है। हेनरी ब्रेवरमैन ने इसे 'डीस्किलिंग' की संबा दी है। दूसरी ओर मशीनों व उपकरणों की संख्या बढ़ने से मनुष्य में अलगाव भी उत्पन्न हुआ है। मशीनीकरण से उत्पन्न अलगाव के इस पक्ष को कार्ल मार्क्स ने बखूबी उठाया है तथा अच्छा विवेचन किया है। इससे मनुष्य प्रकृति और दूसरे मनुष्यों यहां तक कि स्वयं से भी दूर हो जाता है। यह मानवीय संवेदनाओं की कमी की चरम अभिव्यक्ति कही जा सकती है। इसके अलावा विज्ञान–प्रौद्योगिकी के प्रसार ने विकास की होड़ को तेज कर दिया है। आज सभी देश विकास के लिए प्रकृति का दोहन करना चाहते है तथा अधिक से अधिक वस्तुओं, सेवाओं को उपलब्ध कराना चाहते है। इस होड़ ने मनुष्य की पर्यावरण के प्रति संवेदनाओं को कम किया है तथा पर्यावरण संकट को उत्पन्न किया है।

आज वैज्ञानिक व तकनीकी विकास के ही उत्पाद मीडिया ने समाज को भीड़ समाज में बदल दिया है जिसमें सभी लोग भेड़ की तरह एक ही दिशा में बिना सोचे–विचारे चले जा रहे है। मीडिया ने उपभोक्ता वादी संस्कृति को सभी लोगो में विकसित करके समरूपता उत्पन्न की है। इससे लोगों के अलग व्यक्तित्व, संवेदनाओं, सोच आदि में कमी आयी है। जिस कारण से मानव संवेदनहीन हो गया है। विभिन्न संचार उपकरणो ने मानवीय संबधों में पायी जाने वाली संवेदनशीलता व मर्माहट को कम किया है तथा औपचारिकता व फूहड़ता को बढ़ावा दिया है। विभिन्न विज्ञापनों, मीडिया ने स्त्री का वस्तुकरण करके उसके व्यक्तित्व व संवेदनाओं के महत्व को कम कर दिया हैं

किंतु यह सिक्के का एक ही पहलू है, अभी सिक्के का दूसरा पहलू देखा जाना बाकी है अर्थात् विज्ञान–प्रौद्योगिकी ने मानवीय संवेदनाओ में केवल कमी ही नहीं लाई है, कई क्षेत्रों/मामलों में इसे मानवीय संवेदनशीलता को बढ़ाया भी है। विज्ञान प्रौद्योगिकी के द्वारा विकसित विभिन्न संचार उपकरणों ने मनुष्य को अपनी संवेदनाएं व्यक्त करने का अवसर भी दिया है। इसने दूरी व समय की बाध्यता को भी बेमानी बना दिया है। मॉ, बेटे के दूर होने पर भी उससे जब चाहे बात कर सकती है। अब तो

3जी प्रौद्योगिकी आने से मोबाइल फोन पर तस्वीर भी देखी जा सकती है। इसे पति–पत्नी, प्रेमी–प्रेमिका, दोस्तों आदि को पास ला दिया है तथा अपनी संवेदनाऐं कभी भी किसी से भी व्यक्त करने की सुविधा प्रदान की है।

आज इन्टरनेट ने तो ब्लॉग रूपी ऐसी सुविधा प्रदान की है कि व्यक्ति अपनी ऐसी संवेदनाओं को भी प्रकट कर सकता है जिन्हें पहले वह किसी के सामने व्यक्त नहीं कर सकता है। किसी भी विषय पर अपनी विचारों को ब्लॉग के माध्यम से रखा जा सकता है। यह विज्ञान–प्रौद्योगिकी के द्वारा ही संभव हो सका है। विभिन्न किचिन उपकरणों जैसे–मिक्सर, ओवन इत्यादि ने महिलाओं के काम को आसान कर दिया है। वाशिंग मशीन ने महिलाओं के श्रम व समय दोनों की बचत की है। इससे महिलाओं को खाली समय मिला है ताकि वे अपने व्यक्तित्व विकास पर भी ध्यान दे सके। समाज में अन्तःक्रिया कर सकें वरना पहले तो सारा समय विभिन्न घरेलू कार्यों में ही खर्च हो जाता था। इससे महिलाओं को भी समाज का सक्रिय सदस्य बनने का मौका मिला तथा उनकी संवेदनाओं को व्यक्त हाने का अवसर मिल सका है।

आज मनुष्य अपने सुखद व भावात्मक पलों को कैमरे या डिजिटल कैमकार्डर में रिकार्ड कर सकता है। चित्र या चलचित्र किसी भी माध्यम में अपनी यादों को सुरक्षित किया जा सकता है। इससे व्यक्ति अपनी यादों को सहेजकर रख सकता है तथा तनाव के समय इन्हें देखकर भावात्मक संतुष्टि प्राप्त कर सकता है। यह मानवीय संवेदना के क्षेत्र में विज्ञान–प्रौद्योगिकी का बहुत बढ़ा उपहार है। पहले दलित या अछूत लोगों का साफ सफाई के कार्य, मैला ढ़ोना आदि कार्य स्वयं करने पड़ते थे। इससे इनकी गरिमा का ह्रास होता था। आज विज्ञान–प्रौद्योगिकी ने कृत्रिम शौचालय प्रदान करके मैला ढोने की बाध्यता को खत्म कर दिया है। विभिन्न सफाई उपकरण भी विज्ञान की देन है। शहरों में सीवर की सफाई के लिए मशीनें आ गई हैं। इन्होंने इस काम को आसान करके मानवीय गारिमा में वृद्धि की है।

मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति मं बाधक कारको को दूर करने में भी विज्ञान–प्रौद्योगिकी का महत्व है। अंधे व्यक्ति में आंखों का प्रत्यारोपण करके, अपंग व्यक्ति में कृत्रिम पैर लगाकर, कम सुनने वाले व्यक्ति की क्षमता बढ़ाकर संवेदनाओं के व्यक्तीकरण को संभव बनाया हैं। ऐसे उपकरण भी बन रहे है जिनके माध्यम से मस्तिष्क की तरंगो को पढ़कर विभिन्न कार्य संभव हो सकेगें। इन्टरनेट पर कार्य करना हाथविहीन, लकवाग्रस्त आदि लोगों के लिए भी संभव होगां इसका एक उदाहरण स्टीफन हाकिंग जैसे वैज्ञानिक जिनका शरीर लगभग पूर्णतः लकवाग्रस्त है द्वारा प्रयुक्त उपकरणों के रूप में देखा जा सकता है।

मीडिया ने विभिन्न समस्याओं, सामाजिक कुरीतियों, अपराधी आदि के प्रति लोगों को संवेदनशील भी बनाया है हालांकि इसके कम उदाहरण है परंतु प्रयास जारी है। 'कलर्स' नामक एक चैनल ने बाल विवाह और कन्या भ्रूण हत्या जैसी सामाजिक कुरीतियों पर आधारित धारावाहिक बनाकर समाज के लोगों को इन समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रयास किया है जो कि सराहनीय हैं। पोलियो अभियान को सफल बनाने के लिए विज्ञापन 'दो बूंद जिदंगी की', 'शिक्षा के प्रति प्रेरित करने के लिए 'स्कूल चले हम', 'पढ़ना लिखना सीखो...' मतदान प्रतिशत बढ़ाने के लिए चलाया गया 'पप्पू अभियान' आदि समाज में सवेंदनशीलता बढ़ाने के लिए ही चलाये गये है यह सब भी विज्ञान–प्रौद्योगिकी का ही परिणाम हैं।

विज्ञान–प्रौद्योगिकी ने ही विश्व के विभिन्न देशों को जोड़कर वैश्विक समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता बढ़ायी है। लोगों के विचारों को पूरे विश्व स्तर पर फैलने का मौका दिया है यह सब कुछ विज्ञान–प्रौद्योगिकी के विकास के कारण ही संभव हो सका है उक्त अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि विज्ञान–प्रौद्योगिकी ने निःसंदेह मानव की संवेदनाओं को कमजोर किया

है तथा विभिन्न समस्याओं को उत्पन्न किया है। परंतु इसके नकारात्मक पक्षों को दृष्टिगत रखते हुए सकारात्मक पक्ष का भी स्मरण करना अनिवार्य हो जाता है। इसके सकारात्मक पक्षों को देखते हुए आशा जगती है कि विज्ञान–प्रौद्योगिकी में संवेदनाओं को बढ़ाने की भी शक्ति मौजूद है। हमारा कर्तव्य सिर्फ यह है कि इसके सकारात्मक पक्ष को और अधिक मजबूत करें तथा नकारात्मक पक्ष को कम करने का प्रयास करें। वरना कहीं ऐसा न हो कि विज्ञान–प्रौद्योगिकी का अंधाधुध विकास मानवीय समाज को ऐसी स्थिति में ले जाकर खड़ा कर दे जहॉ मानव मशीनों की दुनिया के सामने मजबूर खड़ा हो, जहां मानवीय संवेदनाओं का महत्व ही न रहे।

सन्दर्भ

1. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, डॉ एस आर गुप्ता।
2. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, श्री विजय कुमार राय।
3. आधुनिक भारत की संस्कृति, अमित कुमार गुप्ता।
4. सूचना तकनीकी एवं इसके उपयोग, डॉ ए के मिश्रा।
6. दैनिक समाचार पत्र– अमर उजाला, दैनिक जागरण।
7. मासिक पत्रिका– इण्डिया टूडे, आउटलुक, योजना, प्रतियोगिता दर्पण, प्रतियोगिता साहित्य।

भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी

सुरेन्द्र कुमार
लेजर विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी केन्द्र, दिल्ली

किसी भी देश की विकास प्रक्रिया में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विशेष महत्व होता है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की प्राचीन काल की उपलब्धियों से लेकर इस शताब्दी में प्राप्त महान सफलताओं की एक लंबी और अनूठी परंपरा रही है। यह कहना उचित है कि भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विकास प्राचीन काल में ही हो चुका था। श्री राम का 'पुष्पक' विमान द्वारा अयोध्या आना क्या हमें त्रेता युग में ही वायुयान की उपस्थिति का एहसास नही कराता। विशेष रूप से गणित, खगोल और चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण विकास सबसे पहले भारत में ही हुआ था। 23 वर्ष की अल्पआयु में गणित और ज्योतिष पर ग्रंथ लिखने वाले आर्यभट्ट का योगदान तो सर्वत्र ज्ञात हैं। यह आर्यभट्ट ही थे। जिन्होंने निष्कर्ष निकाला की पृथ्वी गोल है और वह अपनी कला में सूर्य के चारों ओर घूमती हुई दिन और रात का सृजन करती है। उन्होंने ही घोषणा की कि चन्द्रमा सूर्य की रोशनी से चमकता है तथा सूर्य व चन्द्र ग्रहण पृथ्वी और चन्द्र की छाया पड़ने के कारण होते हैं। भारत की विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी की विकास यात्रा ऐतिहासिक काल से आरंभ हुई थी। सबसे प्राचीन वैज्ञानिक एवं तकनीकी मानवीय क्रिया कलाप मेहरगढ़ में पाए गए है जो अब पाकिस्तान में है।

सिंधु घाटी की सभ्यता से होते हुए यह यात्रा राज्यों एवं साम्राज्यों तक पहुंची। यह यात्रा मध्यकालीन भारत में भी आगे बढ़ती रही। यद्यपि मनुष्य प्राचीन समय से ही प्रकृति संबंधी ज्ञान प्राप्त करता रहा है। फिर भी विज्ञान अर्वाचीन काल की ही देन है। अर्वाचीन विज्ञान का आरंभ लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व हुआ था। इसी युग में इनका आरंभ हुआ और थोड़े समय में ही इसने बड़ी उन्नति कर ली। इस प्रकार संसार में एक बहुत बड़ी क्रांति हुई और एक नई सभ्यता का जो विज्ञान पर आधारित है का निर्माण हुआ। फिर मशीनी युग का उदय हुआ और दुनिया में मशीनों और सुविधाओं की आशा की एक नई किरण सामने आई। अल्पकाल में ही विज्ञान एवं प्रौद्यिगिकी ने बड़ी उन्नति की और इसका श्रेय प्रयोग विधि को है, जिसका उपयोग प्राचीन समय में कम किया गया था। चक्र (पहिया) का आविष्कार 400 ईसवीं पूर्व हुआ और यह संसार की सबसे अधिक उपयोगी प्रौद्योगिकी सिद्ध हुई।

ब्रिटिश राज में भी भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की पर्याप्त प्रगति हुई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हमारा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी ढांचा न तो विकसित देशों जैसा मजबूत था और न ही संगठित। जिसके फलस्वरूप हम विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अन्य देशों में उपलब्ध हुनर और विशेषज्ञता पर आश्रित थे। स्वतंत्रता के पश्चात भारत का प्रयास यही रहा है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन लाया जाए जिसके लिए भारत विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सभी क्षेत्रों में तेजी से प्रगति कर रहा है। सन 2009 में चन्द्रमा पर यान (चन्द्रयान) भेजकर एवं वहां पानी की प्राप्ति की नई खोज करके इस क्षेत्र में भारत ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज की है।

भारत द्वारा परम्परागत कुशलताओं को समुन्नत कर तर्कसंगत तथा स्पर्द्धात्यक बनाने और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अग्रिम क्षमताओं का विकास करने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारत में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति लाने वाले वैज्ञानिकों का विश्वास था कि भारत को आधुनिक और

औद्योगिक समाज बनाने में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। अनुभव व परिणाम से यह सिद्ध हो गया है कि उनका विश्वास बिल्कुल ठीक था। आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी की नई प्रक्रियाए और भी तर्कसंगत प्रतीत होती है। वैज्ञानिक ज्ञान और अनुभव, प्रौद्योगिकी नई प्रक्रियाएँ, उच्च प्रौद्योगिकी, औद्योगिक सरंचना और कुशल कार्यबल इस नए युग की संपत्ति है। आज के विश्व में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आर्थिक प्रगति और विकास के महत्वपूर्ण वाहक है।

एक तरफ प्रौद्योगिक वस्तुएँ अर्थव्यवस्था की उपज है तो दूसरी तरफ वे आर्थिक प्रगति के साधन (कारक) भी हैं। प्रौद्योगिक नवाचार समाज के सांस्कृतिक परंपराओं से प्रभावित होता है और इसे प्रभावित भी करता है। वैज्ञानिक नवाचार से सैनिक शक्ति के विकास में मदद मिलती है। देश की मूलभूत समस्याओं जैसे जनसंख्या बेरोजगारी, स्वास्थ्य, पर्यावरण, ऊर्जा एवं खाद्यय इत्यादि के निवारण में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रही है।

विज्ञान

विज्ञान वह व्यवस्थित ज्ञान या विद्या है जो विचार, अवलोकन, अध्ययन और प्रयोग से मिलती है, जो कि किसी भी अध्ययन के विषय की प्रकृति जानने के लिए किए जाते है। विज्ञान शब्द का प्रयोग ज्ञान की ऐसी शाखा के लिए किया जाता है जो तथ्य सिद्धान्त और तरीकों को प्रयोग और परिकल्पना से स्थापित और व्यवस्थित करती है। विज्ञान अर्थात अंग्रेजी के शब्द SCIENCE की उत्पत्ति लेटिन के शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है बौध (Knowledge)। भौतिक संसार कैसे कार्य करता है, को अवलोकन योग्य भौतिक तथ्यों के साथ खोजन, समझने या बेहतर रूप से समझने का प्रयास ही विज्ञान है। ऐसा कहा जाता है कि विज्ञान के ''ज्ञान भण्डार'' के बजाए वैज्ञानिक विधि विज्ञान की असली कसौटी है। किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त या परिकल्पना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसे ''असत्य'' सिद्ध करने की गुंजाइश होनी चाहिए।

प्रौद्यौगिकी

प्रौद्योगिकी व्यावहरिक और औद्योगिक कलाओं और प्रयुक्त विज्ञानों से सम्बन्धित अध्ययन या विज्ञान का समूह है। आदिकाल से ही मानव प्रौद्योगिकी का प्रयोग करता आ रहा है और आधुनिक सभ्यता के विकास में भी प्रौद्योगिकी का बहुत बड़ा हाथ है। प्रौद्योगिकी का आरंभ सैनिक अभियांत्रिकी से ही हुआ था। इसके बाद सड़कें, घर, किले, पुल अदि के निमार्ण सम्बन्धी आवश्यकताओं और समस्याओं को हल करने के लिए सिविल अभियांत्रिकी का आगमन हुआ। भारत द्वारा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अपनी उच्च प्रौद्योगिक प्रगति का प्रदर्शन 11 मई 1998 में पोखरण में दूसरा सफल परमाणु परीक्षण करके किया गया था, तभी से हर साल इस दिन (11 मई) को राष्ट्रीय प्रौद्योगिक दिवस के रूप में मनाया जाता है।

भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का बुनियादी ढांचा

भारत में वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक गतिविधयाँ केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, उच्चतर शैक्षणिक क्षेत्र, सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के उद्योगों और बिना लाभ के काम करने वाले संस्थानों, संधो समेत एक विस्तृत ढांचे के अंतर्गत संचालित की जाती है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक उपक्रमों की अपनी लगभग 1200 अनुसंधान और विकास इकाईयाँ है जो अपने–अपने क्षेत्र में अनुसंधान करती है। अनेक भारतीय विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के समकक्ष मान्यता प्राप्त संस्थानों में भी अनुसंधान और विकास का काफी काम होता है।

देश के विकास में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का विशेष महत्व है। विज्ञान के क्षेत्र में विभिन्न कार्यो एवं योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद की स्थापना की गई है। पिछले चार दशकों के दौरान राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक आधारभूत ढांचा बना है तथा

वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी सार्मथ्य प्राप्त कर लिया गया है जिससे अन्य देशों पर भारत की निर्भरता घटी है। देश की मूलभूत समस्याओं तथा जनसंख्या, बेरोजगारी, स्वास्थय, पर्यावरण, ऊर्जा एवं खाधान्न इत्यादि के निवारण में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रही है।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी नीति

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करने और नई पहलों को दिशा देने के लिए सरकार ने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी नीति 2003 की घोषणा की थी। इस नीति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी प्रशासन के प्रति रवैया, मौजूदा भौतिक और ज्ञान संसाधनों के उचित प्रयोग, प्राकृतिक आपदाओं के प्रबंधन और उनसे उबरने के लिए नई तकतीकों और प्रणालियों के विकास, नई प्रौद्योगिकी का विकास, बौद्विक संपदा के सृजन और प्रबंधन तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लाभों और उपयोगों के बारे में आम जनता के बीच जागृति पैदा करने की रूपरेखा बनाई गई है।

हमारे देश में अनेक प्रकार का पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विशाल भंडार है। अनेक ऐसी जानकारियों है जो स्थानीय स्तर पर तो प्रचालित है, लेकिन इनका दायरा सीमित है। इन जानकारियों को भी लोगों के सामने लाया जा सकता है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग राष्ट्रीय अनुसंधान व विकास की एकेडमिक (अकादमिक) संस्थाओं द्वारा संयुक्त रूप से प्रस्तुत परियोजनाओं में सहायता देता है। यह विभाग उद्योगों और सामाजिक, आर्थिक मंत्रालयों के सहयोग से अनेक प्रौद्योगिकी विकास कार्यक्रमों की पहचान, सरंचना और संचालन में उत्प्रेरक का कार्य करता है। इस दिशा में विभाग के प्रयोग से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उभरते हुए नए क्षेत्रों में कई संस्थानों को कार्यक्रम शुरू करने में मदद मिली है जिनमें कृषि से लेकर अत्याधुनिक सेंसरों तक और सामग्री से लेकर जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र तक सब शमिल है। इनमें अग्रणी प्रौद्योगिकीयाँ जैसे जीन परिवर्तित बीजों, बायोचिप्स, आर. डी. एन. ए. उत्पादों, जीन परिवर्तित पशु, अतंरिक्ष अभियांत्रिकी आदि पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

अब तक परिषद ने लगभग 280 विशिष्ट रिपोटों को अंतिम रूप दिया है जिनमें, उद्योगों, संस्थानों, उद्यमियों और विशेषज्ञों के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भावी तस्वीर, विकल्प और परिदृश्य से जुड़ी जानकारी दी गई है।

आधुनिक परिदृश्य में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के अनुरूप नए आयाम जोड़ने की आवश्यकता है जिससे तकतीनी का तीव्र गति से अधिकाधिक विकास हो सके, जन सामान्य के लिए विज्ञान और प्रोद्योगिकी को सुबोध और सम्प्रेषणीय बनाया जा सके तथा उसमें विज्ञान की प्रवृति स्वाभाविक रूप से उत्प्रेरित की जा सके। भारत पिछले छह दशक से अपनी अधिकांश प्रौद्योगिकीय जरुरतों की पूर्ति दूसरे देशों से कर रहा है। अर्थव्यस्था के सशक्त ग्लोबल होने और उदारीकरण के दबाव के कारण आज नई प्रौद्योगिकी की आवश्यकता बढ़ गई है। वास्तव में विज्ञान और प्रौद्योगिकी गतिविधियों को बनाए रखने के लिए तथा सामाजिक आर्थिक चुनौतियों का सामना करने के लिए भारतीय जनमानस में वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक चेतना का विकास करना और उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना अनिवार्य है। वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीय विकास के लिए हम सब को आगे आना होना। एक व्यक्ति और एक संस्था से ही काम सफल नहीं हो सकता इसमें हम सब की सामूहिक और सार्थक भागीदारी की जरुरत हैं। देश में स्वदेशी प्रौद्योगिकी को बड़े पैमाने पर विकसित करने की जरुरत है और इस दिशा में जो भी समस्याएँ सामने आएगी उन्हें सरकार द्वारा अविलम्ब दूर करना होगा, तभी सही मायनों में हम विकसित राष्ट्र का अपना सपना पूरा कर पाएगें। अगर हम एक विकसित देश बनने की इच्छा रखते हैं, तो आंतरिक और बाहरी चुनौतियों से निपटने के लिए हमें दूरगामी रणनीति बनानी पड़ेगी क्योंकि स्वदेशी व आत्मनिर्भरता का कोई भी विकल्प नहीं होता।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने संवारा है, जीवन

अजय आर्य
केन्द्रीय विद्यालय, धमतरी, छतीसगढ़

परिचय

विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने हमारे जीवन को सहज और सरल बनाया है। आदम युग से लेकर आधुनिक काल तक मानव ने जीवन की प्रत्येक कठिनाई का समाधान विज्ञान के ही प्रकाश में ढूंढने की कोशिश ही है। अत्यंत सरल शब्दों में हम अगर विज्ञान शब्द को परिभाषित करें तो 'विशिष्ट ज्ञान' विज्ञान कहलाता है। संस्कृत शब्द विज्ञान के अनुसार 'वि' उपसर्ग के योग से 'विज्ञान' शब्द बनता है। वि उपसर्ग विशिष्ट अर्थ का बोधक है। किसी भी समस्या या कठिनाई के समाधान के लिये आवश्यक विशिष्ट ज्ञान इस "विज्ञान" शब्द में समाहित होता है। आधुनिक काल के आणविक अस्त्र शस्त्र जहाँ विज्ञान की देन हैं, वहीं आदिकाल में शिकार के लिये आवश्यक ईंट पत्थर तथा धातु से बनाये गए अस्त्र शस्त्र भी विज्ञान की देन कहलायेगा। विज्ञान सतत विकसित होता है। यह एक सतत विकास की प्रक्रिया है। विज्ञान ने मृत्यु तथा जीवन दोनों के रहस्यों को समझने में इंसान की मदद की है। विज्ञान के जो तथ्य खोजे जाते हैं, वे मनुष्य की आवश्यकता तथा कल्पना शक्ति के बल पर ही खोजे जाते हैं। इसीलिये अक्सर यह कहा जाता है कि 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है।

मनुष्य जब भावनाओं के आकाश में स्वयं को अकेला अनुभव करता है तब उसे संपर्क और संचार के द्रुतगामी साधनों की आवश्यकता होती है और वह बैलगाड़ी, मोटर, कार, नाव, बोट, जहाज, जलपोत, वायुयान, दूरभाष, चलदूरभाष, इंटरनेट जैसे तमाम नये साधनों की खोज करता है।

आकाश में उड़ते पंछी या पतंग को देखकर मनुष्य कल्पना करता है कि क्या वह भी ऐसे उन्मुक्त पक्षियों की भांति आसमान की सैर कर सकता है। यह कल्पना ही राइट ब्रदर्स को जन्म देती है और मनुष्य वायुयान के सहारे असमान की सैर करने लगता है। कल्पना, श्रम और लगन ही विज्ञान को आगे ले जाने में सहायक होते है।

प्रौद्योगिकी विज्ञान के खोजों को आम आदमी तक पहुंचाने का मार्ग है। वैज्ञानिक वायुयान के उड़ सकने का विज्ञान ढूंढते है, प्रौद्योगिकी मनुष्य को वायुयान में सैर कराती है। वैज्ञानिकों की तमाम खोजों को बाजार तक लाने की विधा को प्रौद्योगिकी कह सकते है। प्रौद्योगिकी खोजों को मनुष्य के उपयोग के लिये सुलभ कराती है। तमाम बड़ी बड़ी फैक्ट्रियां, उद्योग सब इसी का एक हिस्सा हैं।

आवश्यकता

हम अगर आज के अपने भौतिक जीवन पर दृष्टिपात करें तो शायद हम विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बिना क्षण भर भी आगे नहीं बढ़ पायेंगे। हमारे जीवन में आज मोबाइल अपरिहार्य हो गया है। एक साधारण सी दिखने वाली सुई से लेकर तमाम इलैक्ट्रोनिक उपकरण हमारे जीवन का संबल बने हुए है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की पहचान हमारे जीवन की प्रत्येक गतिविधि में स्पष्ट सुनाई देती है। हम गर्मी का सामना पंखे, कूलर या ए सी के सहारे करतें हैं। ठण्ड में हीटर या गीजल की याद आती है। कार, मोटर, यान, रेल सब हमारे जीवन का अनिवार्य हिस्सा बन गये हैं। हमने मृत्युदर को कम करने में सफलता अर्जित कर ली है। बहुत से रोगों को हम जड़ से उखाड़ने या फिर उससे मुकाबला

करने में विज्ञान के बल पर ही सक्षम हुए हैं। हमने विश्व की दूरी को आश्चर्यजनक रूप से कम कर दिया है। मिनटों में हमारी मील दूर बैठे व्यक्ति से संपर्क साधा जा सकता है। घंटे भर में देश की सीमाओं के पार जा सकतें हैं। आज हम सारे विश्व को एक गांव बनाते देख रहे हैं। 'ग्लोबल विलेज' की सोच हकीकत में बदल रही है। मिनटों सेकंडों में हम देश विदेश के लोगों से संपर्क कर सकते हैं। नैनो तकनीक ने दुनिया को बदल कर रख दिया। टी वी, रेडियो, फोन, गाड़ी जैसी अनेकों वस्तुओं का आज देश का गरीब कहे जाने वाला वर्ग भी प्रयोग कार रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी आज हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा बनी हुई है।

वैश्विक विकास तथा विज्ञान और प्रौद्योयोगिकी

जापान की चुनौतियां जगजाहिर है। वह प्राकृतिक संसाधनों का अभाव है। जापान ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बल पर ही विकास का लंबा रास्ता तय किया है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सहारे जापान ने प्राकृतिक चुनौतियों का मुकाबला किया है। दुनिया के बड़े–बड़े शहरों की पहचान विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बल पर ही है। विश्व स्तर पर यह सोचा जा रहा है कि भूखमरी, बीमारी जैसी आपदाओं का समाधान मिलकर निकाला जाये। वैश्विक संगठन इसके लिये काम कर रहे हैं। भारत में चलाये गये पोलियो उन्मूलन के कार्यक्रम की सफलता उसी का परिणाम है। भूकंप, सुनामी, तूफ़ान जैसी अनेक आपदाओं के नुकसान को विज्ञान के दम पर कम करने की कोशिश की गई है। लोगों के जीवन की प्रगति, अर्थव्यवस्था और सामाजिक बदलाव में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का महत्वपूर्ण योगदान है। कबिलाई जीवन से उठकर महानगरीय जीवन शैली को विकसित करने में इसी का योगदान है। तमाम जटिल धारणाओं/किवदंतियों तथा अंधविश्वासों/रूढ़ियों को दूर करने में भी विज्ञान ने अपना योगदान दिया है।

विश्व शांति और विज्ञान

अमेरिका के राष्ट्रपति ने कभी घोषणा की थी कि परमाणु और हाइड्रोजन बम ने विश्व शांति को अधिक सुरक्षित बना दिया है। यह बयान हमे सर्वथा उल्टा दिखाई देता है लेकिन इस बयान में काफी सच्चाई है। हम सब जानते हैं कि परमाणु हथियार घातक हथियार हैं। यह सारी दुनिया को नष्ट कर सकता है। हिरोशिमा तथा नागासाकी परमाणु विभीषिका के जीवन्त प्रमाण हैं। परमाणु और हाइड्रोजन बमके कारण बार युद्धों को टलते हुए हमने देखा है। गरीबी, बीमारी, भूख आदि मानव जाति के शत्रु हैं। वैज्ञानिक आविष्कारों ने हमें बहुमूल्य मशीनें दी है। उपग्रहों ने विश्व को पारदर्शी बनाने में मदद की है। भ्रमकी स्थितियां लगभग दूर हो गई हैं। विज्ञान ने प्रचार का बहुत प्रभावी साधन दिया है। रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र और सिनेमा प्रचार के बहुत शक्तिशाली साधन हैं। इन साधनों के माध्यम से दुनिया के लोग आसानी से आधुनिक युद्ध के भयानक प्रभाव का अनुभव कर सकते हैं। इन साधनों के से, युद्ध की भयावहता के चित्र लोगों को युद्ध की विभीषिका का ज्ञान करा रहे है। युद्ध के खिलाफ एक व्यापक जनमत तैयार हो रहा है। विज्ञान ने युद्ध को रोकने में मदद की है।

मानव विकास और विज्ञान

विज्ञान ने मानव विकास के मार्ग को भी प्रशस्त किया है। कृषि कार्य में भी वैज्ञानिक शोधों तथा तकनीकों का प्रयोग हो रहा है। पिछड़े और गरीब देशों को अब जीने का एक बेहतर अवसर प्राप्त हो रहा है। चिकित्सा विज्ञान के योगदान को सभी अनुभव कर रह हैं। कृत्रिम अंगों का निर्माण, जेनेटिक इंजीनियरिंग, परखनली शिशु, जीन की रचना, पेनिसिलिन, स्टेप्टोमाइसिन, आदि की खोज मानव विकास तथा प्रगति का नया अध्याय लिख रही है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी दुनिया के लोगों के लिए लंबा और स्वस्थ जीवन सुनिश्चित कर रहे हैं। जीवन सतत सहज और सरल हो रहा है। विज्ञान जहां

मानव की बढ़ती जनसंख्या को रोकने के उपाय ढूंढ रहा है, वहीं वह मनुष्य को समुद्र तथा अंतरिक्ष में बसाने की तैयारी भी कर रहा है।

विज्ञान और प्रौद्योयोगिकी की चुनौतियां

समय के साथ साथ विज्ञान की चुनौतियां भी बढ़ी है। अभी तक विज्ञान ने प्रकृति के संसाधनों के दोहन तथा उपयोग पर ही जोर दिया है। अब इसके दुष्परिणाम सामने आने लगे है। आज पर्यावरण के लिये विज्ञान अथवा औद्योगिकी नीतियों को दोषी ठहराया जा रहा है। वैज्ञानिकों को बिना मुहँ छिपाये इस चुनौती का स्वीकार करना होगा। विज्ञान का पूरा फोकस शताब्दी प्रकृति के संरक्षण पर होना चाहिये। 'विज्ञान प्रगति' के जनवरी 2010 के अंक में रजनी मोहगावकर द्वारा लिखित एक विज्ञान नाटिका प्रकाशित हुई थी। 'विज्ञान की पेशी' नामक इस नाटक में विज्ञान की चुनौतियां को रेखांकित किया गया है। इस नाटक का यह संवाद लगता है कि विज्ञान या विज्ञान का उपयोग करनेवाले लोगों (हम सबके लिये) लिखा गया है:

'मानव : नहीं भगवन, हम मानवों को अब अपनी भूल समझ में आ गई है। अब हम जी जान से इस पृथ्वी को संकट से बचाने में जुट जायेंगे, हरियाली बढ़ायेंगे, ग्रीन हाउस गैस कम करेंगे, वाहनों का रख रखाव ठीक से करेंगें। सभी प्राणियों के प्रति दया भाव रखेंगे।

विष्णु : ठीक है तुम्हे एक मौका और दिया जा रहा है। पृथ्वी से किसी अन्य प्राणी की शिकायत नहीं आती बस तुम्हारी ही आती है और अब मै भी नया अवतार लेकर आ रहा हूं जिसका नाम प्रकृति कुमार होगा जो पर्यावरण की रक्षा का सन्देश वैसे ही देगा जैसे मैंने गीता का ज्ञान दिया था।' मैं अगर अपनी पंक्तियों में हूँ ता –

रोग शोक संताप मिटाकर तूने अम्बर दिखलाया
अम्बर, सागर, अंतरिक्ष में विजयी ध्वज फहराया
धन्यवाद सौ बार तुझे तूने जीवन को महकाया
देख तेरी गाथा को मन मेरा है मुस्काया
अये विज्ञान अहसान बहुत है तेरे
फिर भी आशंका न जाने क्यूं मुझे है घेरे
निवेदन तुझसे बस इतना मेरा है
ध्यान रखो माँ प्रकृति का यहीं मेरा बसेरा है

विश्व में विज्ञान प्रौद्योगिकी का योगदान

लवकुश ठाकुर
आचार्य विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड

"कैसे बना यह ब्रह्माण्ड? विज्ञान लगातार इस गुत्थी को सुलझाने में लगा है। वैज्ञानिक शोध में जुटे हैं, जो उन्हे पदार्थ में द्रव्यमान की पहेली को सुलझा सके, इन्हीं कोशिशों के बीच वे इस नतीजे पर पहुंची कि पदार्थ कि द्रव्यमान हिस्स बोसोन यानि गॉड पार्टिकल के कारण होता है, बीते ढाई साल से दुनिया भर के वैज्ञानिको की साझा कोशिश इस कण तक पहुचने की रही है, ऐसा माना जा रहा है कि वैज्ञानिक इस गॉड पार्टिकल तक पहुंच गए हैं, अगर यह सच है तो ब्रह्माण्ड की उत्पति से जुड़े अनुतरित सवालों को जबाव हमारे सामने होगा।"

स्त्रोत–प्रभाव खबर–4 जुलाई 2012

विज्ञान प्रौद्योगिकी मानव दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण योगदान दिया हैं। मानव की आवश्यकता बढ़ने के साथ–2 विज्ञान और प्रौद्योगिकी के द्वारा खोज और अनुसंधान बढ़ती जा रही है।

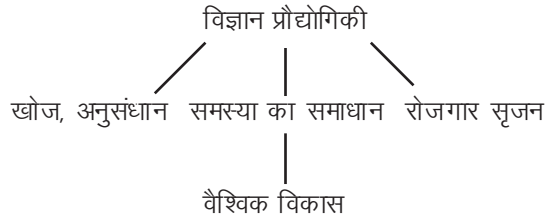

जिसका वैश्विक योगदान इस प्रकार है :

1. चिकित्सा।
2. कृषि।
3. रक्षा।
4. अंतरिक्ष।
5. सूचना तथा संचार।
6. शिक्षा।
7. उद्योग।
8. ऊर्जा।
9. खेल।
10. रोजगार सृजन, इत्यादि।

चिकित्सा

चिकित्सा क्षेत्र में विज्ञान प्रौद्योगिकी ने मानव जीवन के लिए वरदान साबित हुआ जिससे नई–नई खोज सामने आई, जैसे–स्टेम सेल, प्रोटीन संश्लेषण, जीनोम, डबल हैलिक्स सिद्धांत, विभिन्न रसायन

और उपकरणों का भी खोज किया गया, जैसे – EEG, ECG, MRI, पाइप स्वीमर, सिरीनियम (मलेरिया की दवा), एंटी रेट्रोवाइरस, वाई वाइलैंट, मोनो वाइलेंट आदि।

स्टेम सेल

वह सेल मानव के लिए वरदान माना जा रहा है, जिसने, मधुमेह, कैंसर, गंजेपन रक्त चाप, बांझपन आदि जटिल बिमारीयों से निजात दिला सकता है।

कृषि

विज्ञान प्रौद्योगिकी ने कृषि में एक नयी ऊर्जा दी, जिसने विश्व कि सात अरब जनसंख्या को भरण–पोषण की आवश्यकता को पूरा करने के लिए सामर्थ है। जैसे–गोल्डन राइस, ट्रांसजेनिक खेती, G M बीज, B T कपास और B T बैंगन जैसे फसलों की उत्पादन कर कृषि क्षेत्र का उत्पादन दर को न बढ़ाया, बल्कि किसानों को हो रहे समस्याओं के समाधान के लिए योगदान दिया है, जैसेः

(i) कृषि उपकरण।
(ii) बीज और उर्वरक उपलब्धता।
(iii) मिट्टी की गुणवता की जॉच एवं संरक्षण, जिससे किसानों को वैश्विक पहुंच हो सके तथा अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ा सके।

अंतरिक्ष

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने पिछले दिनों अंतरिक्ष के क्षेत्र में एक नया मुकाम हासिल करते हुए अपने 100वें मिशन का सफल परीक्षण किया, यह अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते कदम का सबूत है, कि आज वह काफी हद तक अपने विकास के इन रास्ती पर कदम बढ़ा रही है। एक समय ऐसा भी था, जब अमेरिका और खस का वर्चस्व था, जिसे स्पेस रेस के नाम से जाना गया, लेकिन अब दुनिया को पछाड़ कर चीन और भारत जैसे देशों ने अंतरिक्ष में अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे है। जैसेः

2016 तक भारत चंद्रयान–ए प्रेक्षेपित करेगा

अंतरिक्ष वर्चस्व में दो महाशक्तियों का होड़ 1950 के दशक में अमेरिका और सोवियत संघ के बीच देखने को मिला। सोवियत संघ ने 1957 में पहला कृत्रिम उपग्रह स्पुतनिक–1 पृथ्वी की कक्षा में प्रक्षेपित किया।

ऊर्जा

बढ़ती आबादी के साथ ऊर्जा की बढ़ती मांग ने एक नयी समस्या पैदा कर दी है, मांग बढ़ने से पारंपरिक उर्जा की कीमतें आसमान छूने लगी है वही दूसरी ओर ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों के सीमित होने (पेट्रोल, कोयला, LPG, CNG इत्यादि) से खत्म होने का भी खतरा है, ऐसे में भविष्य की ऊर्जा खर्चों को पूरा करने के लिए भारत सहित विश्व के अन्य देशों की अन्य वैक्लपिक स्त्रोत कि ओर रुख बदल लेना चाहिए। जैसे–पवन ऊर्जा, भूतापिय ऊर्जा ज्वारीय, तरंग ऊर्जा, बायोमास, सौर्य ऊर्जा और हाइड्रोजन उर्जा आदि। ये सभी स्त्रोत ऐसे है जिसे भविष्य में इस्तेमाल किया जा सकेगा, विज्ञान प्रौद्योगिकी ने आने वाले समय में ऊर्जा उपलब्धता के लिए रास्ता खोल दिया।

सूचना और संचार

सूचना प्रौद्योगिकी 21वीं शताब्दी का सबसे प्रभावी तंत्र है, जिसने दुनिया भर में बदवाल का सूत्रपात किया है। इस प्रौद्योगिकी प्रशिक्षित विश्व में प्रशासन, बैंकिंग, व्यापार, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ, समाज सेवा जैसी सभी क्षेत्रों में उपयोगी भूमिका निभा रही है।

इसी के महत्व को देखते हुए भूतपूर्व राष्ट्रपति ए पी जे अब्दुल कलाम ने कहा था कि –"गांव में शहरी सुविधा जुटाना ग्रामीण विकास की पूंजी है, जिसे सूचना तकनीक के उपयोग से सरल किया जा सकता है"

इंटरनेट, कम्प्यूटर, आई पैड़, आई फोन, प्रिंट मीडिया, इलैक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे संचार उपकरणों के खोज एवं अनुसंधान से पूरे विश्व का एक सूत्रपात में बांधना संभव हो पाया है।

रक्षा

वैश्विक आंतकवाद जैसी समस्याओं के लिए विश्व को रक्षा क्षेत्र में सशक्त रवैया अपनाना होगा, विज्ञान प्रौद्योगिकी ने रक्षा क्षेत्र में सराहनीय योगदान दिया जिसने विभिन्न रक्षा उपकरणों की खोज कर विश्व में हो रहे मानव अपराध को रोकने के लिए सशक्त और महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।
जैसे –

(i) DNA फिंगर प्रिंटिंग।
(ii) कम्प्यूटर का विकास।
(iii) विभिन्न उपकरणों का विकास, जैसेः

भारत में अग्नि–V बह्मोश, त्रिशूल, IGM, MISA, स्टील्थ विमान, रडार प्रणाली पायलट रहित विमान–लक्ष्य, निशांत और रुस्तम का विकास कर रक्षा क्षेत्र में विज्ञान प्रौद्योगिकी में योगदान दिया है।

ये सभी के अलावा विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान, शिक्षा, पर्यावरण परमाणु उर्जा, उद्योग, खेल, रोजगार सृजन इत्यादि में भी है। जिसने पूरे विश्व में क्रांतिकारी परिवर्तन और प्रासंगिकता को स्थापित किया है। बढ़ते वर्चस्व के साथ–साथ इससे समस्याओं का सामना भी करना पड़ रहा है। जैसे–साइबर युद्ध, E-4 ई–कचरा, ग्लोबल वार्मिंग, पर्यावरण प्रदुषण इत्यादि में। भारतीय परिपेक्ष में देखे तो निजीकरण और उदारीकरण के बाद से अपनी कदम को तेजी से इस ओर स्थापित किया है।

अतः उपरोक्त तथ्यों से यह पता चलता है, कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान हर क्षेत्र में है, और इसके विकास के स्तर को बढ़ाकर विश्व के अनसुलझे, रहस्यमय समस्याओं से रूबरू कराए सकें।

भारतीय गणित–वैदिक गणित

प्रज्ञा मिश्रा
रक्षा जैव उर्जा अनुसंधान संस्थान, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

विज्ञान जगत से लेकर व्यवहार जगत तक में गणित की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। चाहे वैज्ञानिक परिकल्पनाओं को सिद्धांत रूप में व्यक्त करने की बात हो या दैनिक जीवन में होने वाली लेन–देन की क्रियाएं, सभी की प्रमाणिक अभिव्यक्ति गणित की संक्रियाओं द्वारा ही सम्भव है। प्राचीन काल से ही गणित को एक महत्त्वपूर्ण विषय माना जाता रहा है। यहीं नहीं वेदांग ज्योतिष में इसकी उत्कृष्टता का उल्लेख कुछ इस प्रकार है–

यथा शिखा मयूराणां, नागानां मणयो यथा,
तद्वद्वेदांग शास्त्राणां, गणितं मूर्ध्नि वर्तते।।

अर्थात् जिस प्रकार मयूर की शिखायें और नाग की मणि उनके सर्वोच्च स्थान यानि की मूर्धा (मस्तिष्क) पर स्थित है, उसी प्रकार वेदों के सभी अंगों व शास्त्रों में गणित का स्थान सर्वोपरि है।

आदिकाल से ही भारतीय गणित का व्यवहारिक जीवन से लेकर ग्रह, नक्षत्र आदि की आकाशीय गणनाओं तथा ज्योतिष आदि के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। वर्तमान में प्रयुक्त होने वाला गणित मुख्य रूप से पाश्चात्य गणित ही है परन्तु इसमें वृहत् समावेश भारतीय गणित का भी है।

वैदिक गणित

एक परिचय

वेद हमारे देश की अमूल्य धरोहर हैं। आदि ग्रन्थ ऋगवेद से भारतीय गणित का इतिहास प्रारम्भ होता है। भारत में गणित उतना ही प्राचीन है जितना की यूनान में। प्राचीन काल में भारतीय मनीषियों ने गणित में अत्यंत उत्कृष्ट सिद्धांतों व प्रमेयों को प्रतिपादित किया। शंकराचार्य स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ ही वैदिक गणित के प्रणेता व आद्य संशोधक माने जाते हैं। उन्होंने बताया कि वैदिक गणित के सूत्रों की संख्या तेरह तथा उपसूत्रों की संख्या सोलह है। इन सूत्रों तथा उपसूत्रों का समूह ही वैदिक गणित का आधार हैं। वैदिक गणित अपने आप में अत्यंत सम्पूर्ण व समृद्ध है परंतु यह कोई अलग विषय न होकर गणित विषय का ही एक अंग है। वैदिक गणित में न केवल योग, व्यवकलन (घटाना), गुणन, भाग, लघुगणक, घन, घनमूल, वर्ग इत्यादि संक्रियाओं की विधियों का वर्णन है अपितु इनके अनुप्रयोगों व जटिल गणितीय विधियों का भी विस्तृत वर्णन है। वैदिक गणित में अंक गणित, बीज गणित तथा रेखा गणित तीनों का ही समावेश है। भारतीय गणित के इतिहास के अनुसार भारत में ज्यामिति का विकास यज्ञों के लिए विभिन्न आकार–प्रकार की वेदियों के निर्माण की अनिवार्यता के फलस्वरूप हुआ। और इसके साथ ही वृत्ताकार, आयताकार, त्रिभुजाकार इत्यादि आकृतियों का विकास भी हुआ। चाहे यज्ञ–वेदियों की अभीष्ट माप हो या फिर कृषि भू–क्षेत्रों की माप हो इन सभी में शूल्व (रज्जू या रस्सी) का प्रयोग होता था। अतः गणित की इस विधा का नाम शूल्व गणित या रज्जू गणित कहलाया। जो बाद में चलकर 'रेखा गणित' में परिणत हो गया। वैदिक गणितीय सूत्र अधिकांशतः शूल्व सूत्रों के रूप में ही हैं।

उपलब्धियां

शून्य तथा दाशमिक स्थानमान (दशमलव) प्रणाली का आविष्कार गणित के क्षेत्र में भारत की बहूमूल्य देन है। शून्य और दाशमिक स्थानमान प्रणाली के आविष्कार के बिना बड़ी से बड़ी संख्याओं का लिखना आज सम्भव न होता। आज यह प्रणाली विश्व प्रचलित है और इसने विज्ञान एवं गणित की ऊँचाईयों को एक नया आयाम दिया है। π का मान व समतल आकृतियों के लिए क्षेत्रमितीय सूत्र भी भारतीय गणित की विश्व को एक अमूल्य भेंट है। आर्यभट्ट ने π का मान जो 3.1416 के बराबर है को दशमलव के चार स्थानों तक ज्ञात किया। π का यही मान वर्तमान में विश्वभर में प्रयोग में लाया जा रहा है। भारतीय गणित की प्रमुख उलब्धियों में से एक है समकोण त्रिभुज का प्रमेय अर्थात 'कर्ण पर बना वर्ग शेष दो भुजाओं पर बने वर्गों के बराबर होता है'। वर्तमान काल में यह प्रमेय 'पाइथागोरस प्रमेय' के नाम से जाना जाता है। पर वास्तव में इस तथ्य का प्रतिपादन भारतीय गणितज्ञ बोधायन ने पाइथागोरस से लगभग 450 वर्ष पूर्व ही कर दिया था। किन्तु तत्कालीन समय में सामान्य शिक्षा का अंग न होने के कारण इसे ज्यादा प्रचलित/विस्तारित नहीं किया जा सका और फलस्वरूप यह प्रमेय यूनानी गणितज्ञ पाइथागोरस के नाम पर 'पाइथागोरस प्रमेय' के नाम से जाना जाने लगा।

महत्व

वैदिक गणित का अध्ययन कर चुके गणितज्ञों व शिक्षाविदों ने माना है कि वैदिक गणित के सूत्रों व उपसूत्रों को आसानी से कंठस्थ किया जा सकता है व इनका प्रयोग अत्यंत सरल है। इन पर आधारित संक्रियाओं में पदों की संख्या अत्यंत कम होती है जिससे गणना अत्यंत अल्प समय में की जा सकती है। प्रयोगकर्ता परिणाम की शुद्धता की जांच उपलब्ध विधियों द्वारा स्वयं कर सकता है। इसके सूत्रों को याद रखने मात्र से ही बड़ी से बड़ी गणनाओं को सरलता से हल किया जा सकता है। वास्तव में वैदिक गणित एक जादू जैसा है जो अंकों की पहेलियों को पलक झपकते सुलझा सकता है।

विद्वानों का मानना है कि वैदिक गणित का निरंतर अभ्यास व प्रयोग मन की एकाग्रता को बढ़ाता है। मौखिक रूप से प्रश्नों को हल करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने के कारण यह स्मृति–वर्धक का भी कार्य करता है। वैदिक गणित की सरलता और रोचकता मानव–मस्तिष्क को जिज्ञासु बनाती है जो अन्ततः मानव विचारों की प्रखरता और परिपक्वता का कारक होती है। स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ के अनुसार, वैदिक गणित के अध्ययन से मानव–मस्तिष्क के विकास की गति सामान्य से पॉच या छः गुना अधिक हो जाती है।

भविष्य में सम्भावनाएं

वैदिक गणित के अनुप्रयोगों का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। वैसे तो वैदिक गणित में शोध कार्यों की गति त्वरित रूप ले रही है पर आवश्यकता है सिर्फ इस गति को विद्युत की चपलता प्रदान करने की जो भविष्य में वैदिक गणित के नये पहलुओं को उजागर कर सके। वैदिक गणित विशेषकर कम्प्यूटर वैज्ञानिकों के बीच आकर्षण का केन्द्र–बिन्दु बना हुआ है। विश्व भर के कम्प्यूटर वैज्ञानिक वैदिक गणित का प्रयोग कर कम्प्यूटर की कार्य दक्षता बढ़ाने की सम्भावनाओं को तलाश रहे हैं। वैज्ञानिक वैदिक गणित द्वारा कम्प्यूटर विज्ञान की इंटरनेट सिक्योरिटी, डिजिटल सिग्नल प्रोसेसिंग इत्यादि प्रणालियों में कम्प्यूटर की प्रदर्शन क्षमता को बढ़ाने में शोधरत हैं।

वर्तमान भारतीय शिक्षा पद्धति में वैदिक गणित को उचित स्थान देकर इसको और उन्नत बनाने का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है। वैदिक गणित के सूत्रों व उपसूत्रों की नवीन व्याख्या, अनुप्रयोगों की विस्तारता और उनका नये रूप में प्रतिपादन वैदिक गणित के पंखों को एक नई उड़ान दे सकता है।

प्राचीन काल में भारतीय मनीषियों ने वैदिक गणित को उत्कृष्टता के चरम शीर्ष पर पहुँचा दिया था परन्तु इसके सीमित अनुप्रयोग, सीमित शोध व प्रचार ने उत्कृष्टता के इस रूप को धुंधला सा कर दिया। वर्तमान परिदृश्य में यह आवश्यक है कि वैदिक गणित के उज्ज्वल भविष्य व नई पहचान के लिए सभी गणितज्ञ, वैज्ञानिक, शिक्षाविद् एकजुट होकर सार्थक नीतियों का निर्धारण करें। फिर वो दिन दूर नहीं होगा जब सम्पूर्ण गणित जगत् में वैदिक गणित का सूर्य अपनी किरणें बिखेर रहा होगा और पूरा विश्व इसका स्वागत खुली बाहों से कर रहा होगा।

कम्प्यूटर नटेवर्क

ईश्वर सिंह
पद्धति तथा विश्लेषण संस्थान, दिल्ली

आज तकनीकी रूप से समर्थ दुनिया में कम्प्यूटर एक महत्त्वपूर्ण भुमिका निभा रहा है जिसने समस्त भूमण्डल को सीमित कर दिया है एवं ज्ञान विज्ञान और तकनीकी के एक स्थान से दूसरे स्थान पर सचंरण में क्रान्ति सी ला दी है। कम्प्यूटर के महत्व को इंटरनेट के उपयोग में हुई वृद्धि ने आगे बढाया है। इटंरनेट का उपयोग करने के लिए अपने कम्प्यूटर को किसी दूसरे उपकरण (जैसे कम्प्यूटर) से जोड़ना पडेगा। इसके लिए एक नेटवर्क की आवश्यकता होगी। जब दो या दो से अधिक कम्प्यूटर एक फीजिकल मीडिया के माध्यम से एक दूसरे से जुड़े होते हैं तो इस प्रकार स्थापित नेटवर्क कम्प्यूटर नेटवर्क कहलाता है जिसके माध्यम से सूचना का आदान–प्रादान होता है।

कम्प्यूटर नेटवर्क के घटक

फिजीकल मीडिया

एक नेटवर्क पर कम्प्यूटर्स प्रिंटर्स, सर्वर, आदि को आपस में जोडने के लिए तारों का प्रयोग किया जाता है। जिन्हें नेटवर्क कंबिल या ईथर नेट कहते है। जिसके सिरों पर आर जे 45 कनेक्टर लगाकर कम्प्यूटर में लगे नेटवर्क कार्ड के इथेर नेट पोर्ट कर जोड़ देते है।

सर्वर

सर्वर एक शक्तिशाली कम्प्यूटर होता है। जो नेटवर्क पर उपस्थित अन्य कम्प्यूटर को सेवाएं प्रदान करता है। सर्वर का डिजाइन इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए विशेष तकनीक द्वारा किया जाता है। जैसेकि अधिकतर संस्थानों में सर्वर का प्रयोग 24 घंटे होता हैं जिससे सर्वर में लगें इलैक्ट्रानिक उपकरण गर्म होते हैं और अत्यधिक हीट उत्पन्न करते हैं जिससे सर्वर के डाउन होने का खतरा बना रहता है। इसके लिए उपयुक्त कूलिंग तकनीक का उपयोग किया जाता है। सर्वर कई प्रकार के होते हैं जैसे फाइल सर्वर, मेल सर्वर, डाटा सर्वर आदि और सर्वर द्वारा नेटवर्क की सेक्यूरिटी और पालिसी मैनेज की जाती है।

नेटवर्क एडैप्टर

नेटवर्क एडैप्टर या नेटवर्क इंटर फेस कार्ड डाटा भेजने और प्राप्त करने के लिए एक सर्किट बोर्ड है। जिसमें आवश्यक उपकरण होते हैं। कम्प्यूटर सी पी यू में लगा होता है।

संसाधन

किसी नेटवर्क पर उपलब्ध प्रिंटर मॉडेम, फैक्स, प्लोटर आदि उपकरण नेटवर्क पर उपस्थित किसी भी यूजर के लिए संसाधन कहलाते है जिनका उपयोग यूजर अपनी आवश्यकता के अनुसार करता है।

यूजर कम्प्यूटर

जब नेटवर्क पर उपस्थित कोई कम्प्यूटर, नेटवर्क पर उपस्थित सर्वर से सेवाएं लेता है तो वह यूजर कम्प्यूटर कहलाता है।

प्रोटोकॉल

लिखित संचार के लिए इस्तेमाल के कुछ नियम है। जिन्हें कम्प्यूटर नेटवर्क पर एक–दूसरे से बात करने के लिए उपयोग करते हैं। हर कम्प्यूटर का अपना एक यूनिक इनंटरनेट प्रोटोकॉल होता है और यह यूनिक इंटरनेट प्रोटोकॉल कम्प्यूटर की अपनी डिजिटल पहचान है।

कम्प्यूटर नेटवर्क का वर्गीकरण

कम्प्यूटर नेटवर्क को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

लोकल एरिया नेटवर्क

लोकल एरिया नेटवर्क को लेन के रूप में भी जाना जाता है। यह प्रणाली नेटवर्किंग एक सीमित क्षेत्र में ही संभव है जैसे कार्यालय, घर आदि। लोकल एरिया नेटवर्क द्वारा दो कम्प्यूटर से लेकर 100 कम्प्यूटर्स को एक साथ जोड़ा जा सकता है।

वाइड एरिया नेटवर्क

वाइड एरिया नेटवर्क को लेन के नाम से जाना जाता है। संसाधनों को बहुराष्ट्रीय व्यापार के लिए नेटवर्क के उक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता है। इस प्रकार विभिन्न देशों के कार्यालय वैन सहायता से एक–दूसरे से जुड़े है। वैन कई लेन व मैन को एक साथ जोड़ कर बनाया जाता है। वैन का सबसे अच्छा उदाहरण इटंरनेट है जिसके द्वारा लाखो कम्प्यूटर एक साथ जुड़े होते हैं। वैन मे कम्प्यूटर आप्टिकल फाइवर (कांच), केबल, उपग्रह, रेडियो लिंक, मोइक्रोवेव लिंक, इंटरनेट आदि द्वारा आपस में जुड़े होते हैं।

मेट्रोपोलिटन एरिया नेटवर्क

मेट्रोपोलिटन एरिया नेटवर्क को मैन के नाम से भी जाना जाता है। मैन में आम तौर पर 5 से 50 किमी के बीच के क्षेत्र को शामिल किया जाता है जिसमें किसी मेट्रो शहर के विभिन्न कार्यालय को कवर किया जाता है।

कम्प्यूटर नेटवर्क के लाभ

1. नेटवर्क सूचना एवं डाटा को सचंरण की अनुमति प्रदान करता है।
2. फाइल शेयरिग कम्प्यूटर नेटवर्क का एक प्रमुख लाभ है। फाईल शेयरिंग में नेटवर्क पर उपस्थित कम्प्यूटर यूजर किसी को दूरस्थ फाइल को उपयोग करने की अनुमति प्रदान करता हैं और नेटवर्क पर उपस्थित किसी दूसरे यूजर को फाइल भेजता है।
3. रिसोर्स शेयरिंग भी कम्प्यूटर नेटवर्क का एक महत्त्वपूर्ण लाभ है। मान लीजिए किसी परिवार में पांच लोग हैं तथा सबके पास स्वयं का कम्प्यूटर है। उनके पास कम्प्यूटर नेटवर्क नहीं है। यदि अब उन्हे इन्टरनेट या प्रिंटर का उपयोग करना है तो उन्हे पांच मॉडेम व प्रिटंर की आवश्यकता होती है और यदि वे कम्प्यूटर नेटवर्क द्वारा रिसोर्स की शेयरिंग करें तो उन्हें एक ही मॉडेम और प्रिंटर कुशलता से सेवाएं प्रदान कर सकता है।
4. स्टोरेज क्षमता ही वृद्धि के लिए नेटवर्क पर एक से अधिक कम्प्यूटर है जो आसानी से फाईल शेयरिग कर सकते हैं। स्टोरेज क्षमता की समस्या काफी हद तक हल हो जाती है। स्टोरेज क्षमता की समस्या को नेटवर्क पर स्टोरेज (डाटा) सर्वर का डिजाइन करके दूर कर सकते हैं।
5. एकल कम्प्यूटर प्रणाली की तुल्ना में नेटवर्क प्रणाली पर कम्प्यूटिंग लागत प्रत्येक उपयोगकर्ता के लिए कम हो जाती है। मान लीजिए कई सॉफ्टवेयर जो बाजार में उपलब्ध हैं महंगे हैं और स्थापना में समय ले रहे हैं। नेटवर्क द्वारा इस मुद्दे को सगृहीत कर दूर किया जा सकता है या

एक सिस्टम या सर्वर पर स्थापित कर अलग अलग वर्कस्टेशन द्वारा इसका इस्तेमाल किया जा सकता है।

नेटवर्क सुरक्षा

कम्प्यूटर नेटवर्क सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में हर रोज प्रयोग होता है। व्यवसायों, सरकारी एंजेसियों और व्यक्तियों के बीच लेनदेन और संचार का संचालन कम्प्यूटर नेटवर्क द्वारा होता है। नेटवर्क सुरक्षा वे सब गतिविधियां हैं जो संगठनों, उद्यामों और संस्थानों के मूल्य, संपत्ति अखंडता व निरन्तरता आदि की रक्षा के लिए उत्तरदायी हैं। प्रभावी नेटवर्क सुरक्षा रणनीति द्वारा हम होने वाले खतरों की पहचान कर सकते हैं और सबसे उपयुक्त तरीके का चुनाव कर आने वाले खतरों से मुकाबला कर सकते हैं। दुनिया भर के लोगों को नेटवर्क की सुरक्षा प्रणाली का पता नहीं है। प्रभावी नेटवर्क सुरक्षा का कार्यान्वयन पथ लिंक और डाटा बेस की फिजिकल और डाटाबेस में उपस्थित डाटा की सुरक्षा करना है।

नेटवर्क सुरक्षा एक प्रक्रिया है जो आपके कम्प्यूटर के अनधिकृत उपयोग को रोकने के लिए अपनायी जाती है। दूसरे शब्दों में नेटवर्क सुरक्षा एक सॉफ्टवेयर तकनीक है जो अवैध उपयोग, खराबी परिवर्तन, अनुचित प्रकटीकरण, विनाश आदि से कार्यक्रमों (प्रोग्राम) और उपयोगकर्ताओं को एक सुरक्षित वातावरण के भीतर कार्य करने का मंच प्रदान करती है। यदि नेटवर्क सुरक्षा का पुख्ता प्रबन्धन नहीं किया गया तो बहुत असहनीय परिणाम हो सकते हैं जैसे कोई हैकर आपका ई–मेल या एकाउन्ट हैक कर उसका गलत इस्तेमाल कर सकता है अथवा आपके कम्प्यूटर को एक्सेस कर आपका डाटा चोरी कर सकता है, आपके कम्प्यूटर को क्रिप्ट कर सकता है और कुछ वायरस आपकी जानकारी के बिना आपके सिस्टम में घुस जाते हैं।

नेटवर्क सुरक्षा के प्रकार

1. अपने कम्प्यूटर डाटा का बैकअप बना कर रखें ताकि किसी भी अकारण समस्या से निपटा जा सके।
2. एक वेब फिल्टर या प्रॉक्सी का उपयोग करें जो बेवसाइटों को कन्ट्रोल करता हैं और सिस्टम को सेक्योर करता है।
3. एक हार्डवेयर फायरवाल/रूटर का प्रयोग करें जो किसी कम्प्यूटर सिस्टम की सुरक्षा की कोर है। यह कम्प्यूटर सिस्टम से डाटा बाहर भेजने तथा बाहर दूर क्षेत्र (इन्टरनेट) से कम्प्यूटर तक पहुंचाने वाले डाटा के सुरक्षा चेक का कार्य करता है।
4. एंटी वाइरस सॉफ्टवेयर किसी कम्प्यूटर नेटवर्क की सुरक्षा के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है जो नेटवर्क को बाहरी आघातो (जैसे वाइरस अटैक, मालेवयर अटैक) से सुरक्षा प्रदान करता है।
5. डाटा को सुरक्षित भेजने तथा रिसीव करने के लिए एन्क्रिप्शन तथा डिक्रिप्शन तकनीक का प्रयोग करें।
6. पासवर्ड को हैक होने से बचाने के लिए अत्यन्त जटिल पासवर्ड का प्रयोग करें जो करेक्टर, न्यूमेरिक और विशेष करेक्टर को मिलाकर हो।

सम्मिश्र पदार्थ द्वारा संरचना

दयानंद
उन्नत प्रणाली प्रयोगशाला, हैदराबाद, आंध्र प्रदेश

प्रस्तावना

प्रक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणालियों में भारयोग–यान होता है। भारयोग की संरचना कार्बन सम्मिश्र पदार्थ से की जाती हैं। प्रक्षेपास्त्र–यान का भार बहुत ही अधिक होता है। इसीलिए प्रक्षेपास्त्र का भार कम करने के लिए कार्बन सम्मिश्र पदार्थ का उपयोग किसा जाता है। ये प्रक्षेपास्त्र–यान धरातल से वायु मंडल में तीव्र गति से प्रवेश करता है तब प्रक्षेपास्त्र–यान अत्यधिक तापमान से प्रभावित होता है। प्रक्षेपास्त्र–यान की रक्षा के लिए कार्बन सम्मिश्र पदार्थों का उपयोग किया जाता है। प्रक्षेपास्त्र–यान चक्राकार मार्ग के आधारपर वायुमंडल में प्रवेश करता है तब वायुमंडल में उपस्थित वायु प्राक्षेप्य (प्राजकल) का वेग जीतना अधिक होता हैं उतना ही अधिक वायु प्रतिरोध होता है। इन वालों के अधीन प्रक्षेपास्त्र की अखंडता बने रहने के लिए 'कार्बन सम्मिश्र पदार्थों' का उपयोग किया गया है। प्रक्षेपास्त्र–यान वभिगों की संरचना अलग–अलग कार्बन–सम्मिश्र पदार्थों द्वारा विकसित पर एकीकृत किया जाता है।

प्रक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणाली का विकास कार्बन सम्मिश्र पदार्थों द्वारा कार्बन फाइबर एवं ऍपाक्सी रेजिन के योग से आंतरिक परत विकास, बाहरी परत का विकास कार्बन फाइबर एवं फेनॉलिक रेजिन योग से विकसित किया जाता है। भारयोग–यान जब वायुमंडल में तीव्र गति से प्रवेश करता है तब वायुमंडलिया घर्षण और पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण भारयोग–यान की सतह पर अत्यधिक ताप पड़ता है जिससे ऊष्मा उत्पन्न होती है। भारयोग–यान की भीतरी सतह का तापमान न्यूनतम होना आवश्यक है। इस अत्यधिक तापमान से भारयोग–यान की रक्षा के लिए 'कार्बन सम्मिश्र पदार्थ' ही सक्षम कर सकता है। इस भारयोग–यान के भीतर अत्याधुनिक नौवहन निदेशन प्रणाली एवं नियंत्रण प्रणालियां, नवीनतम संगणक प्रणालियां, उच्च गतियुक्त ऑनबोर्ड कंम्प्यूटर तथा त्रुटि–सहा सॉफ्टवेयर प्रणालियों यान में एक इलैक्ट्रॉनिक प्रणाली है जो किसी भी तरह के वाइब्रेशन, तपीय प्रभावों से सुरक्षित रखता है। इस अत्यधिक तापमान से कार्बन सम्मिश्र पदार्थों से बने उपकरण प्रभावित नहीं होते हैं और प्रक्षेपास्त्र यान बहुत ही सरलता से अपने लक्ष्य को भेद सकता है।

भारयोग–यान की अभिकल्पना करने से पूर्व कार्बन सम्मिश्र पदार्थ से बने उपकरणों को यांत्रिक गुण धर्म, तनाव प्रतिबल, प्रतिबल, प्रतशित विकृति आदि का परीक्षण एवं मूल्यांकन को ध्यान में रखकर अभिकल्पना की जाती है। उच्चताप को सक्षम करने योग्य परीक्षण प्रयोगशाला में तापमान संरचनात्मक परीक्षण किया जाता है और योग्यता प्रमाणित की जाती है। कार्बन सम्मिश्र के योग से विकसित कर संसाधन प्रक्रमण क्रमिक रूप से भिन्न तापांश द्वारा किया जाता है जिसके द्वारा 'सम्मिश्र' में जटिलता प्रदानकरती है। भारयोग उपकरणों को यंत्रीकरण द्वारा वांछित माप एवं आकार दिया जाता है, उपकरणों का विकिरणी चित्रण द्वारा उपकरणों में स्थित अवगुणों का पता लगाया जाता है। भारयोग में नियंत्रण प्रणालियों, युद्धशीर्ष जैसे महत्वपूर्ण उपकरणों को रखा जाता है। 'कार्बन सम्मिश्र' उच्च ताप–उच्च वेग को सहन करने की क्षमता पर यह प्रपत्र प्रस्तुत है।

प्राक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणालियां

इस प्रणाली का वर्गीकरण परास के आधार पर किया गया है। मध्यम परास प्राक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणाली, माध्यमिक परास प्राक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणाली, अंतर्महाद्वीपीय प्राक्षेपिकीय प्रक्षेपास्त्र प्रणाली इनमें वायुमंडल में प्रवेश करने की तकनीकी तथा नियंत्रण प्रणालियों, आर आई एन एस तथा सर्वाधिक आधुनिक तथा परिशुद्ध सूक्ष्म नौसंचान प्रणाली, एम आई एन एस के प्रयोग द्वारा जो स्थिर तथा गतिमान लक्ष्यको भेदने में सक्षम होती है। यह प्रणालियां भरतयोग–यान में एकीकृत किया जात है।

सम्मिश्र पदार्थ उपकरणों का मूल्यांकन

कार्बन सम्मिश्र पदार्थ उपकरणों को प्रक्षेपास्त्र प्रणाली में उपयोग में लाने से पूर्व 'कार्बन सम्मिश्र पदार्थ' के विकास के लिए यांत्रिक गुणधर्म जैसे तनाव प्रतिबल, प्रतशित विकृति संपीडन प्रतिबल, यंग प्रत्यास्थाला गुणक आदि पर विशेष ध्यान रखकर 'कार्बन सम्मिश्र पदार्थ' उपकरणों का विकास की अभिकल्पना की जाती है।

निष्कर्ष

भारयोग–यान की संरचना का विकास करने से पूर्व 'कार्बन सम्मिश्र पदार्थ' उपकरणों को उच्च तापमान संरचनात्मक परीक्षण प्रक्षेपास्त्र के विभिन्न विभाग पर मुड़ान बल भिन्न–भिन्न रहता है, इसका अध्ययन किया जाता है। गुणवत्ता एवं मूल्यांकन को ध्यान में रखकर भारयोग–यान की अभिकल्पना की जा रहा है।

संदर्भ

1. National Conference On Composites-2006
2. Manufacturing of Composite RVS Sections, Auto Clave Curing of RVS Composite Shells, Dr. R. Ramanarayanan, ASL, Hyderabad.

कार्बन के प्रकार और उसके बहुआयामी उपयोग

पी के जैन

कार्बन सामग्री केन्द्र, ए आर सी आई, हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश

कार्बन को ऐतिहासिक रूप से हीरे और ग्रेफाइट के रूप में जाना जाता था। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार संभवतः हीरों की जानकारी 1200 ई.पू. से ही थी। हीरे का प्रामाणिक प्राचीन संदर्भ हमारे युग की प्रथम शताब्दी के एक मिलिनियम के करीब माना गया है। पृथ्वी की बाहरी परत में उपस्थित लगभग 0.2 % पदार्थ में बडी मात्रा में पाये जाने वाले तत्वों में कार्बन का स्थान 19वां है। यद्यपि कार्बन प्रकृति में है मुख्यतः सम्मिश्रित और विस्तृत रूप में फैला है। यह बहुत कम मात्रा में मुक्त या तत्वीय रूप में पाया जाता है। यह सभी पशुओं और वनस्पतिय पदार्थों में मुख्य घटक की तरह उपस्थित है। कोयला पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस भी आवश्यक रूप से कार्बन के ही यौगिक हैं ।

कार्बन तत्वों में असामान्य है क्योंकि, इससे बड़ी संख्या में यौगिक बनते हैं जो हाइड्रोजन के सिवाय अन्य सभी तत्वों के सम्मिश्र की तुलना में कहीं अधिक होते हैं। मुख्यतः यह तीन अपरुपी रूपों में यानी हीरा, ग्रेफाइट और एमार्फस कार्बन (Amorphous carbons) के रूप में मौजूद रहता है । हाल ही में C–60 जैसे नये कार्बन परमाणुओं की खोज की गयी है और इसका नाम फुलरीन्स रखा गया। फुलरीन्स नये वर्ग के कार्बन तत्वों का एक उदाहरण है। संरचानात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो कार्बन सामग्रियों सामूहिक रूप से कार्बनों के एक परिवार का गठन करती हैं, हर कार्बन की अपनी असामान्य पहचान होती है। कार्बनों के परिवरों के सदस्यों के चारित्रिकीकरण को उनके अपने संरचनीय क्रम की सीमाओं में वर्णित किया जाता है, जबकि दूसरी ओर ऐसे भी कार्बन हैं जो ग्रेफाइटिक होते हैं। इन्हें ग्रेफाइटीकृत, एनिसोट्रापिक कार्बन्स कहा जाता है, जिसमें ग्रैफीन की परतें पर्याप्त प्लैनेरिटी और स्टैकिन्ग्स तथा हमेशा गैर–ग्रेफाइटिक (Non Graphitazable) होते हैं जो 2000 ^{0}C से भी ऊपर गरम करने के बावजूद भी तीन–दिशाओं (Three Dimensional) की XRD लाइने को भी प्रदर्शित नहीं करती, इन्हें गैर–ग्रेफाइटीय यानि की आइसोट्रिक कार्बन्स कहा जाता है और इस तरह के तमाम पोरस कार्बन (Porus carbons) इस वर्ग के अंतर्गत आते है।

अब प्रश्न है कि कार्बन ही क्यों इतना बहुमुखी तत्व है जो अपने आपको सुव्यवस्थित कर सकता है। नियतकालिक सारणी (Periodic Table) में कार्बत तत्व असाधारण पर है। इसका 6 का आणविक अंक चार बाहरी इलैकट्रानों के साथ बहु–बंधन बनाने योग्य है (sp–लीनियर, sp^2–पद तपदह sp^3) जो हीरे में है। कार्बन के कुछ औद्योगिक रूप निम्नानुसार हैं :

- उत्प्रेरित (एक्टिवेटेड) कार्बन्स
- कार्बन परमाणविक छनलियाँ
- कार्बन एअरोजैल्स, क्रायोजैल्स, और जीरोजैल्स
- उत्प्रेरक (कैटलिस्ट) समर्थन के रूप में कार्बन
- काला कार्बन (Carbon Black)

- कार्बन फाइबर रि–इन्फोर्स्ड सम्मिश्र (Composites)
- फुल्लरीन्स (Fullerenes)
- इंटरकैलेशन यौगिक (Intercalation Compounds)
- पायरोलायटिक कार्बन
- कार्बन नैनोट्यूब्स (SWCNT और MWCNT)
- ग्रेफीन

उद्योग में कार्बन अपरिहार्य तत्व है। कार्बन का सबसे बड़ा एकल उपयोग कोयले के रूप में लोहे तथा स्टील उद्योग के लिए होता है। इस कोयले के बडे अंश का उपयोग, ब्लास्ट फर्नेसों में लोहे के खनिज के न्यूनीकरण (Reduction) के लिए किया जाता है। कार्बन ब्लैक्स के प्रमुख अनुप्रयोग छपाई वाली स्याही, पेंट, पेपर और प्लास्टिक तथा रबड़ के उद्योग में उपयोग किया जाता है। कार्बन का लघु मात्राओं में उपयोग और सूखे सैलों और कार्बन के ब्रशों और इन्सुलेशन के निर्माण के लिए किया जाता है। गैस फेज्ड उत्प्रेरित कार्बनों के लिए सबसे बडा एकल अनुप्रयोग वायु या वाष्प के मिश्रण से सर्वव्यापी आर्गेनिक घुलनशीलों की रिकवरी में होता है। इसका दूसरा प्रमुख उपयोग प्राकृतिक और औद्योगिक गैसों के शुद्धिकरण और प्रथककरण में होता है। पायरोग्रेफाइट और निर्मित ग्रेफाइट के रेशों के रूपों को राकेटों, प्रक्षेपास्त्रों (मिसाइलों) और अन्य अंतरिक्ष यानों के लिए संघटकों के रूप में इनके प्रमुख अनुप्रयोग पाये जाते हैं।

तत्व के रूप में रहते समय कार्बन के साथ कोई विषैले प्रभाव जुड़े नहीं होते जबकि, दूसरी ओर अधिकांश कार्बन के यौगिक कई तेज विषैलेपन का प्रभाव लिये हुए होते हैं। इनमें कार्बन मोनोआक्साइड, कार्बन डाईआक्साइड, हाइड्रोजन सायनाइड और क्षारीय सायनाइड्स, कार्बन टेट्राक्लोराइड और कार्बन डाईसल्फाइड प्रधान हैं। आक्सीजन की तुलना में इसे न केवल तत्परता से सोख लिया जाता है, बल्कि यह रक्त के होमोग्लोबीन द्वारा अधिक मजबूती के साथ बंध भी जाता है। इसकी वजह से शरीर के महत्वपूर्ण अंगों को आक्सीजन ले जाने की खून की क्षमता घट जाती है और परिणामतः स्वरूप मस्तिष्क की क्षति, हृदय रोग और निमोनिया आदि हो जाते हैं। कार्बनडाई आक्साइड कम विषैला होने के कारण मुख्यतः सरल वासावरोधक और नशीले पदार्थ की तरह व्यवहार करता है। हाइड्रोजन सायनाइड और क्षारीय सायनाइड अत्यधिक विषैले होते हैं और तंतु आक्सीकरण के अवरोध के द्वारा जीव द्रव्यीय विषों की तरह कार्य करते हैं। कार्बन टेट्राक्लोराइड के वाष्पकणों के प्रति तीव्रता से संपर्क में आने के परिणाम स्वरूप यकृत (लीवर) और गुर्दों (किडनी) दोनों को गंभीर क्षति पहुँच सकती है। कार्बन डायसल्फाइड शक्तिशाली नशीला पदार्थ होता है, लेकिन इसके चिरकालिक या पुराने प्रभाव और गंभीर या घातक हो सकते हैं। इसके अत्यधिक संपर्क से स्नायु प्रणाली (नर्वस) सिस्टम को स्थायी क्षति पहुँच सकती है।

कार्बन नैनो–ट्यूब्स ने विश्वभर के कई वैज्ञानिकों की कल्पनाशक्ति को आकर्षित किया है। इन संरचनाओं की छोटी–छोटी लंबाई–चौड़ाईयों, ताकत और उल्लेखनीय भौतिक गुणों ने भावी अनुप्रयोगों की संपूर्ण रेंज के साथ उन्हें अति असामान्य सामग्री बना दिया है। इस समीक्षा में हम कार्बन नैनोट्यूब्स के कुछ महत्वपूर्ण सामग्री विज्ञान अनुप्रयोगों के बारे में वर्णन करेंगे। विशेषकर हम नैनोट्यूब्स के इलेक्ट्रानिक और इलैक्ट्रोकेमिकल अनुप्रयोगों, उच्च निष्पादन समिश्रों में मेकेनिकल रि–इन्फोर्समेंटों, नैनो ट्यूब्स आधारित फील्ड एमिटर्स और रासायनिक अवशेषों में नैनोप्रोबों के रूप में तथा अन्य नैनो संरचनाओं के सृजन के लिए टेंप्लेटों की तरह उनके उपयोग के बारे में चर्चा करते हैं। नैनोट्यूब्स के इलैक्ट्रानिकी गुणों और उपकरण अनुप्रयोगों की व्याख्या की जाएगी। इन अनुप्रयोगों की सिद्धि के परिणाम स्वरूप आनेवाली चुनौतियों पर निर्माण, प्रक्रिया के बारे में भी चर्चा की जाएगी ।

तापयनिक उत्सर्जन (थर्मियानिक एमीशन) की तुलना में इलैक्ट्रमों के लिए क्षेत्र उत्सर्जन (फील्ड एमीशन) आकार्षक स्रोत है। उच्च विद्युत क्षेत्र को पर्याप्त रूप से फर्मी स्तर के नजदीक वाले इलैक्ट्रान उत्सर्जन का मौलिक भौतिकशास्त्र अच्छी तरह से विकसित है। धातु सतह से उत्सर्जन करेंट का निश्चयन फाउलर नोर्डहैम समीकरणः I=a V2 exp (–bö $^{3/2}$ â) जहां I, V, ö, â क्रमशः अनुप्रयुक्त वोल्टेज, कार्य की क्रिया और क्षेत्र वर्धन घटक हैं। कार्बन नैनोट्यूब्स में नैनोमीटर साइज का ब्यास संरचनात्मक एकता, उच्च, विद्युतिक संचालकता और रासायनिक स्थिरता–जैसे गुणों का सही संयोजन होता है वहीं अच्छे इलैक्ट्रान उत्सर्जक बनते हैं।

डेंगू प्रकोप और रोकथाम

रीना तिलक
सशस्त्र सेना चिकित्सा महाविद्यालय, पुणे, महाराष्ट्र

दक्षिण पूर्व एशिया में खास करके बच्चों की मृत्यु का प्रमुख कारण डेंगू पाया गया है। अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष दुनिया भर में 50 लाख मामलों और 25 लाख मौतों के साथ 01 अरब लोगों के लिए डेंगू खतरे का कारण बन गया है। डेंगू Aedes aegypti नामक एक संक्रमित मादा मच्छर के काटने की वजह से और एक सीमित हद तक Aedes albopictus मच्छर द्वारा फैलने वाली वायरल बीमारी है। केवल भारत में ही नहीं बाल्कि अन्य उष्ण कटिबंधीय देशों में एडीज घनत्व हर समय उच्च होने के कारण यह डेंगू के पुनरूत्थान का प्रमुख कारण बन गया है।

पिछले 30 वर्षों में दुनिया बदली है और यह आश्चर्य की बात नहीं है कि एडीज भी अच्छे से पनप रहा है। मनुष्य के द्वारा उपयोग में लाने वाले कृत्रिम कंटेनरों में इस मच्छर का प्रजनन होता है जैसे कि घरेलू ऊपभोक्ता द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले गैर बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक कंटेनर, पुराने ऑटोमोबाइल टायर एवं घरेलू वातावरण में पाये जाने वाले अन्य अनेक कृत्रिम जलधारक पात्र इत्यादि। अस्थायी समाज 'अनियंत्रित शहरीकरण और मच्छर जनित रोगों के प्रति सामान्य अज्ञानता के कारण यह समस्या और अधिक बढ़ रही है। अशुद्ध पानी की आपूर्ति, पारंपरिक जल भंडारण पद्धति, कचरा संग्रहण करने की घटिया प्रक्रिया, बदलती जीवन शैली के साथ डेंगू मच्छरों से संक्रमित मनुष्यों का तेजी से आवागमन जैसे कारणों से मच्छरों का प्रजनन एवं डेंगू रोग बढ़ता है। अपर्याप्त स्वास्थ्य शिक्षा 'सीमित वित्तीय संसाधनों' अपर्याप्त मच्छर नियंत्रण कार्यक्रम और मच्छरों में कीटकनाशकों का प्रतिरोध डेंगू के अविर्भाव के प्रमुख कारण हैं जोकि एक सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौती बनती जा रही है।

डेंगू एवं DHF के खराब प्रबंधित 'गंभीर अथवा अनुपचारित मामलों के साथ साथ वैक्सीन की अनुपलब्धता के कारण उच्च मृत्यु दर (20 प्रतिशत) ने डेंगू प्रभाविन क्षेत्रों में मच्छर कम करने के कार्यक्रमों को युद्ध स्तर पर लागू करके समस्या को और न बढ़ने देने की आवश्यकता है।

इस महामारी को रोकने अथवा नियंत्रित करने के उददेश्य से कीट वैज्ञानिक 'मानव व्यवहार की निगरानी और सूचना के शीघ्र प्रसार हेतू डेंगू नेट लगवाना 'मामला प्रबंधन में मार्गदर्शन और वेक्टर नियंत्रण सहित महामारी वैज्ञानिक निगरानी प्रणाली स्थापित करने की आवश्यकता है। Aedes aegypti के कीट व वज्ञानिक निगरानी के दो घटक होते है। 1) लारवल निगरानी – कंटेनर ' हाऊस और Breteau इंडेक्स ovitraps का उपयोग और भौगोलिक सूचना प्रणाली का प्रयोग 2) लैडिंग कैच और रेस्टिंग बॉक्सेस का उपयोग करते हुए वयस्क मच्छर निगरानी ।

डेंगू सरल उपायों से अच्छी तरह से रोका जा सकता है जैसे :

क) जलधारक पात्रों ' सेप्टिक टैकों और गड्ढों को उचित कवर सुनिश्चित करने के साथ साथ मच्छर प्रजनन क्षेत्रों का उन्मूलन' कूड़ा करकट हटाना और ड्राय डे का पालन।

ख) मच्छर कॉईल और इलैक्ट्रिक वेपर मैट मच्छरदानी रिपेलैन्ट क्रीम द्वारा मच्छर के काटने से बचना और डेंगू से पीडित लोगों की सुरक्षा।

वेक्टर नियंत्रण उपायों में सम्मिलित है लारवल विरोधी गतिविधियॉ जैसे लार्वा खाने वाली मछलियॉ Temephos granules, Methoprene (lGR) और Biocide -Bacillus thuringiensis अंत israelensis अथवा वयस्क मच्छर विरोधी उपाय जैसे Detamethrin, pyrethrum कीटनाशी सहित fogs एवम ULV fogging.

यह बीमारी मुख्यत– लोगों की गतिविधियों अथवा लापरवाही के कारण होती है। सामुदायिक आधार पर किए गए कार्य इस महामारी को रोकने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इन सामुदायिक कार्यों में निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए

क) जागरूकता बढ़ाना

ख) लोंगों की सक्रिय भागीदारी

ग) समुदाय को डेंगू नियंत्रण के लाभ से अवगत कराना

घ) वेक्टर नियंत्रण की व्यवहार्यता और सादगी पर बल देना

ड) शीघ्र उपचार के लिए माताओं को शिक्षित करना

च) कचरा और स्कूल अभियान

सार्वजनिक स्वास्थ्य पेशेवरों 'नगर निकायें और समुदाय द्वारा मच्छर प्रजनन स्थानों की रोकथाम अथवा उन्हें नष्ट करने के संबंध में ठोस प्रयास डेंगू की रोकथाम और नियंत्रण के महत्त्वपूर्ण उपाय हैं ।

प्रवाह कोशिकाभित्ति–कार्य प्रणाली व उपयोग

नमिता कालरा
नाभिकीय औषधि एवं सम्बद्ध विज्ञान संस्थान, दिल्ली

प्रवाह कोशिकाभित्ति अर्थात् फ्लोसाइटोमीट्री शब्द दो भागों से मिलकर बना है, फ्लो यानि कि बहाव और साइटोमीटर– साइटो यानि कि कोशिका, मीटर यानि कि मापन करना अर्थात् कोशिका या उसके भागों का मापन या अध्ययन करना जब वह प्रवाह में हों यानि कि तरल स्थिति में हों। फ्लोसाइटोमीट्री में एक केन्द्रित किरण लेज़र का प्रयोग करके कोशिका व उसके भागों का अध्ययन करना होता है। इसमें हमारे अध्ययन के पदार्थ तरल अवस्था में होंगे ताकि हम एक निलंबन स्थिति में उसे प्राप्त कर उसका विस्तार से अध्ययन कर सकें।

लेज़र किरणों के प्रयोग से हम कोशिका के बाहरी आकार, भीतरी भागों जैसे कि माइटोकॉन्ड्रिया, नाभिक इत्यादि में कोई अन्तर आया हो, किसी भी प्रोटीन, डी एन ए., आर एन ए व कोई भी एन्टीबॉडी के बारे में जानकारी बहुत ही आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। यहां तक कि बिना किसी डाई के सिर्फ रक्त को लेकर ही हम प्रवाह कोशिकाभित्ति के विभिन्न मुख्य भागों जैसे कि लिम्फोसाइट, मोनोसाइट व ग्रेन्यूलोसाइट को आकार के आधार पर अलग–अलग कर सकते हैं।

प्रवाह कोशिकाभित्ति के क्षारीय सिद्धांत ये हैं :

- इसमें पद्धति में कोशिका या उसके उपभागों को बहुत तेजी से एक संवेदक से प्रवाहित होना पड़ता है जो ऐसे सिग्नल देते हैं जो कि उसी कोशिका के गुण स्वरूप के बारे में जानकारी देते हैं।
- इसमें मुख्यतः भौतिक गुण जैसे कि प्रकाश का अवशोषण, उत्सर्जन व उद्दीपित उत्सर्जन का मापन किया जाता है।
- प्रवाह सक्रियता द्वारा कोशिका के पदार्थों को एक समान जोर देकर हाइड्रोडायनेमिक दबाव द्वारा संवेदक से एक ही गति व उचित दूरी से पार किया जाता है।
- इन सिग्नलों को सही ढंग से कई गुणा बड़ा कर, इकट्ठा कर दर्शाया जाता है तथा डाटा प्रोसेसिंग केन्द्र द्वारा इसका मापन किया जाता है।
- अवशोषण व उत्सर्जन क्रिया के मापन के लिए ऐसे डाई का प्रयोग करते हैं जो कि हमारे द्वारा तथा हमारे फायदे के कोशिश पदार्थ से ही जुड़े ताकि हम उस भाग का सही ढंग से अध्ययन कर सकें।
- इस पद्धति द्वारा हम कोशिका व उसके उपभागों की संचरना तथा कार्य की पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

फ्लो साइटोमीट्री के मुख्यतः तीन भाग होते हैं :– फ्लूइडिक्स, ऑप्टिक्स व इलैक्ट्रॉनिक्स।

क. फ्लूइडिक्स में लवण 0.9 प्रतिशत NaCl या PBS का ही प्रयोग किया जाता है।

ख. ऑपटिक्स में किरण स्रोत– लेज़र या आर्क लैम्प का उपयोग होता है।

ग. इलैक्ट्रॉनिक्स में फोटोमलटिप्लाइर ट्यूब तथा कम्प्यूटर द्वारा सिग्नलों को बड़ा कर दर्शाया जाता

है। इसमें ऑप्टिकल सिग्नलों को इलैक्ट्रोनिक सिग्नलों में बदल देते हैं ताकि उसका आंकलन हो सके।

लेज़र किरण एक ही तरंग, उच्च दिशात्मकता, उच्च तीव्रता व उच्च संबद्धता की होती है । इस कारण जब लेज़र किरणें कोशिका से टकराती हैं तो लेज़र किरण के मार्ग में रूकावट उत्पन्न होने से किरणों की दिशा में परिवर्तन होता है।

फ्लोसाइटोमीट्री के प्रयाग से हम कोशिका से जुड़ी किसी भी प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जैसे कि:–

- कोशिका चक्र – किसी कोशिका के जीवन काल में हुए समस्त परिवर्तन जो उस सूत्री विभाजन तक होते हैं जैसे दुहिता कोशिकाएं
- कोशिका अंगों में बदलाव – BrdU, PI, PE
- रोगाक्षम (immune) अध्ययन – एंटीबायोटिक्स
- ऑक्सीकरण कंटिका – DCFDA, HE, DHR-123 इत्यादि रंजकों द्वारा कर सकते हैं।

यह एक बहुत ही फुर्तीली एवम् बिल्कुल सही पद्धति है। इसमें हम भिन्न डाइयों द्वारा डी एन ए आर एन ए., प्रोटीन, माइटोकॉन्ड्रिया, नाभिक, रोगाक्षम, अणुवीक्षण अध्ययन भी कर सकते हैं। इस पद्धति द्वारा हम एक नमूने से एक साथ भिन्न–भिन्न तथा कई कोशिका उपविभागो का अध्ययन कर सकते हैं ।

इस प्रकार फ्लोसाइटोमीट्री का बहुत अत्यधिक उपयोग है और एक उपयोगी यंत्र है जो कि चिकित्सा अध्ययन एवं रिसर्च अध्ययन में खूब प्रयोग किया जा रहा है। एड्स जैसी कई बीमारियों के टेस्ट भी इससे हो जाते हैं सॉर्टर द्वारा एक ही प्रकार की कोशिका व उसके अंगों को भी अलग कर सकते हैं जो कि रिसर्च व जांच में बहुत प्रयोगी भी सिद्ध हो रहे हैं।

इस प्रणाली द्वारा हम अपने नमूने में अलग–अलग आकार व प्रकार की कोशिकाओं में विभक्त कर उनका अलग–अलग अध्ययन भी कर सकते हैं। इसके लिए हम गेट लगा कर किसी एक या भिन्न–भिन्न भागों का अलग से अध्ययन भी कर सकते हैं। इसका प्रयोग हम एक साथ सभी नमूनों का मापन करके बाद में कभी भी कर सकते हैं। मृतक या क्षतिग्रस्त कोशिकाओं को अलग कर स्वस्थ कोशिकाओं का या ऊतक का अध्ययन बहुत ही आसानी, सरलता व तीव्रता के साथ इस पद्धति से किया जा सकता है। इसलिए प्रवाह कोशिकाभित्ति एक बहुत ही प्रभावशाली एवं उपयोगी पद्धति है।

संगणक–लगातार बदलाव, तकनीक व प्रयोग करने में

महेश कुमार, दीपमाला, तथा फूलदीप कुमार*
गंगा प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान, झज्जर, हरियाणा
**रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली*

सारांश

आज हम इस बात से इंकार नहीं कर सकते कि विश्व में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र ने उन्नति की है। इसने विश्व को आधुनिक, औद्योगिक समाज बनाने में बहुत सहायता की है। आज का समय एक आधुनिक प्रौद्योगिक को उपयोग करने का है और इन प्रौद्योगिक तरीकों में लगातार सुधार करना है।

आज हम सब संगणक से भली–भांति परिचित हैं। इसका रूपान्तरण आज हम अपनी आवश्यकता के अनुसार कर रहे हैं। यह विद्यालय और महाविद्यालय में इसका प्रयोग आसानी से किया जा रहा है, इससे थोड़ा आगे अगर हम अस्पताल में देखे तो संगणक को पुनव्यवस्थित करके हमने एक ऐसा यंत्र बनाया है जिसे हमें अपने पेट, मस्तिष्क और शरीर के किसी भी हिस्से के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और बीमारी का ईलाज कर सक्ते हैं। अगर हम थोड़ा और पुनव्यवस्थित रूप संगणक का देखे तो विद्युत उत्पादन में, तापमापी यंत्र और बहुत सारी जरूरी जानकारी के लिए किया जाता है। संगणक को हम अपने काम करने के स्थान व अपनी आवश्यकता के अनुरूप पुनव्यवस्थित कर सकते हैं। आज हम अंतरिक्ष के बारे में व उनकी तस्वीर व उसकी स्थिति के बारे में घर बैठे ही संगणक पर देख सकते हैं।

परिचय

संगणक इसके काम करने का तरीका बिल्कुल हमारे दिमाग के जैसा है, वैज्ञानिकों को संगणक बनाने की प्रेरणा मनुष्य के दिमाग से ली गयी है। हमारा दिमाग neurons से बना होता है। ये neurons एक दूसरे के साथ जुड़े होते हैं। इनमें कई तरह की अभिक्रिया होती रहती है। उन सबके हिसाब से ही हमारा दिमाग काम करता है। मनुष्य के दिमाग में 10 neurons होते हैं और उनका आपस में एक दूसरे को बांधे रखने के लिए वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क को ध्यान में रखकर एक आधुनिक यंत्र तैयार किया, यह यंत्र बनाने के लिए कुछ बातों को ध्यान में रखा गया है, कुछ नियम के आधार पर इसका आविष्कार किया गया है। परिणाम यह है कि हर बार हमें एक नया Artificial Neural network मिल जाता है।

कुछ सहव्यस्थित जिनका आज कल हम प्रयोग करते है। आज हम satellite की मदद से अंतरिक्ष और दुनिया के किसी भी हिस्से को देख सकते हैं। 1998 में ISS launch किया गया था। ISS (International space station) एक Artificial satellite है जिसको नंगी आंखों से देखा जा सकता है बिना किसी special equipment के।

आज हवाई जहाज में भी आटो पायलेट मे (प्रयोग) हो रहा है और अब कार और अन्य गाड़ियों में भी Auto पालयेट की सुविधाएं आने लगी है। ये एक गाड़ी के पायलेट की तरह ही काम करता है लेकिन यह कोई मनुष्य नहीं एक संगणक प्रोग्राम होता है जो पूरे कार्य को करता है।

अब हमें हमारा कोई डॉक्यूमेंट किताब–कापियों की जगह एक memory में store कर सकते हैं और पर्सनल भी रख सकते हैं, अगर हम कोई डॉक्यूमेंट safe / अलमारी में रखते हैं तो उनको भी Access किया जा सकता है। परन्तु संगणक की मदद से अब password को unlock करने में सफल हो गए हैं और फिर फिंगर प्रिंट password लोक और eyesretina lock आये जिनकी मदद से सिर्फ वही व्यक्ति जिसने उनको lock किया है Access कर सकता है।

अब भविष्य में एक ऐसी ID Chip बनाई जा रही है / सकती है जिससे मनुष्य के बारे में सारा डाटा और उसकी ID बिना किसी कागज से पहचानी जा सकती है। इसमें Seasor मनुष्य को सैंस करते हैं और उसका पूरा डाटा उदाहरण के लिए Identity, passport details, their country, everything अपने आप पता लगाई जा सकती है बिना finger print व eyeretina इससे भविष्य में कोई राशन कार्ड, passport etc. डॉक्यूमेंट साथ रखने की जरूरत नहीं होगी और न कोई व्यक्ति किसी फर्जी ID को नेम कर सकता है और आतंकवादी गतिविधि होने की संभावना भी कम हो जाती है। इससे अगर कोई व्यक्ति किसी जगह जाता है तो entry भी अपने आप हो जाती है। आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस भी संगठन संसार में एक महत्वपूर्ण वस्तु है। परन्तु Artificial intellitence अभी तक पूरी तरह Achieve नहीं की जा सकी है।

Artificial intelligence का मतलब है संगठक को मनुष्य की तरह बनाया जा सके। वह मनुष्य की तरह काम कर सके, सोच सके और अपने आप निर्णय ले सके।

Robots ने मनुष्य का काम और भी आसान हो गया है। Robot वहां भी जा सकते हैं जहां मनुष्य नहीं जा सकता लेकिन अभी तक Robot वही करता है जो उसको instruction दी जाती है। उसके अलावा वह किसी चीज को नहीं समझता परन्तु एक Artificial intelligence Robot वह होगा जो हर चीज समझ सके और उस परिस्थिति पर मनुष्य की तरह काम कर सके मतलब मनुष्य का copy right जिसकी आगामी समय में आने की सम्भावना है। आजकल स्कूलों में बच्चों को पढ़ाने के लिए Practical videos का इस्तेमाल हो रहा है जिससे बच्चे उसे देखकर आसानी से सीख सकते हैं और बहुत सारे video games आये हुए है जो बच्चों के खेलने के साथ उनकी जानकारी को बढ़ाते हैं। संगणक का इस्तेमाल Banks में भी अच्छी तरह हो रहा है या कहे की अब बिना संगणक के बैंक का काम आसान नहीं है। आज कल हम पैसे निकलवाने के लिए बैंक में फार्म भरने और लाईन में लगने की जरूर नहीं पड़ी और न ही कोई छुट्टी हमारे काम को बाधित करती है। यह सम्भव हो सकता है E-Banking और ATM machine से ATM से हम कहीं भी किसी भी वक्त पैसे निकलवा सकते हैं। जो हमें उसी वक्त पैसे दे देता और हमारा Account Update कर देता है। ATM एक तरह से हमारे लिए बैंक कैशियर का काम कर रहा है। 24 x 7 हमारे लिए काम आ रहा है। आज संगणक मनुष्य के सच व झूठ को पहचानने के लिए भी काम आ रहा है, जिसको पुलिस और अन्य सिक्योरिटी person use करते हैं। यह lie detector text मनुष्य की हृदय की धड़कन और शरीर व दिमाग की गतिविधियों से पता लगता है कि सच बोल रहा है या झूठ।

परन्तु संगणक के फायदे होने के साथ–साथ इसकी कुछ खामिया भी है। आजकल सबसे ज्यादा साइवर क्राइम ही है जो रोक पाना बहुत मुश्किल है। अगर हम किसी Network या किसी पेज और किसी खास व्यक्ति को ठसंबा करते हैं तो भी वह Access कर सकता है। इसका सबसे बड़ा और नया उदाहरण है Top Bundle यह आर्मी के लिए बनाया गया सॉफ्टवेयर था परन्तु कुछ कारणों के कारण कम्पनी और आर्मी में बीच इसके लिए करार नहीं हो सका और यह Hacking बाजार में आया जहां कोई भी व्यक्ति फिर भी Web page को Access कर सकता है।

विश्व को भारत की देन

प्रणव शास्त्री
उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत, उत्तर प्रदेश

परिचय

गायन्ति देवाः किलगीतकानि,
धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पद हेतु भूते,
भवन्ति भूयः पुरूषः सुरत्वात्।।

भारत ज्ञान का वह महाकोश है जिसकी नेह–निहारिका में चेतना का सुरम्य प्रकाश और सत्, चित् और आनन्द की त्रिवेणी अवरिल प्रवाहमान है। इसमें अवगाहन करने पर ज्ञान के मानदण्डों की अनन्त रत्न–राशियाँ प्राप्त होती हैं। संसार की सृष्टि समस्त जीवों की प्राण–शक्ति के स्रोत सूर्य से हुई, जिसकी प्रथम किरण भारत पर पड़ी। अखिल विश्व की मानवता के पूर्वज आदि मनु, जिनकी सन्तान होने के कारण हम मानव या मनुष्य कहलाये, इन्हीं सूर्य के वंशज थे। मनु मानवी जीवन–कलाओं के सूत्रधार थे। सामाजिक जीवन की समस्त कलाएं यथा–काव्य, नाट्य, अभिनय, नृत्य, गीत, वाद्य, वस्तु, मूर्ति, चित्र, पुस्तविधि आदि सभी के निरूपक 'नाट्यशास्त्र' का प्रणयन भारत के मुनि की देन है।

सभ्यता और सांस्कृतिक विकास के सर्वोच्च आसन पर समासीन मानव के विज्ञान का एकमात्र आधारभूत विशय गणित (अंकगणित) का भारत के कपिलमुनि ने आविष्कार किया। तुलसीदास ने प्रमाणित किया है :

आदि देव प्रभु दीनदयाला, जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला।
सांख्य सास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना, तत्व विचार निपुन भगवाना।।

गणित के क्षेत्र में शून्य की अवधारणा भारत की देन है। संस्कृत में शून्य को 'ख' कहते हैं। इसी कारण शून्य में गमन करने वाले पक्षियों को खग कहा जाता है। सर्वप्रथम आचार्य लगध ने ज्योतिष में शून्य के प्रभाव का वर्णन किया हे। भास्कराचार्य ने शून्य के प्रभाव के कारण ही लिखा है –अंकानां वामना गतिः। गणना विषयक शब्दावली–दस, शत (सौ), हजार, लाख, करोड़, अरब, खरब, शंख, नील, पद्म आदि भारत की देन है। विश्व के किसी भी देश के पास भारत से अधिक प्रामाणिक गणितीय संज्ञायें आज भी नहीं है। अभी हाल में हुए अध्ययन से सिद्ध हुआ है कि शून्य की अवधारणा का उल्लेख सर्वप्रथम महर्षि पाणिनि, पिंगल और लगध के ग्रन्थों में पाया जाता है जिन्होंने प्रोसोडी विज्ञान और प्रोसोडी गणित का आविष्कार किया था।

किसी भी संख्या को शून्य सहित दस अंकों में व्यक्त करना और प्रत्येक अंक को एक निरपेक्ष मान और स्थानीय मान देना विश्व गणित और विश्व सभ्यता को भारत का सबसे बड़ा योगदान है। भारत में दशमलव प्रणाली हड़प्पा काल से 3000 ईसा पूर्व भी प्रचलित थी।

बौधायन ने पाइथागोरस से एक शताब्दी पूर्व अंकगणितीय क्रियायें एवं वैदिक ज्यामितीय स्थापित कर दी थी। आधुनिक वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल एवं भारतीय जैन गणित 500 ई पू की देन है।

गणित की आधुनिक अंक लेखन पद्धति के क्षेत्र में इस बात से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इससे पूर्व भारत में खरोष्टी लिपि, ब्राम्ही लिपि, ग्वालियर लिपि और देवनागरी लिपियों का विकास किया गया और आधुनिक रोमन लिपि उसकी ऋणी है। भारतीय काल गणना विश्व की सबसे प्राचीन और प्रामाणिक है। किम् बहुना लिपि और लेखन कला का विकास भारत की देन है। वर्णो और अंकों को 'हिन्द' अर्थात् भारत से जाने के कारण आज भी उर्दू और अरबी में 'हिन्दसा' कहा जाता है।

काव्य के क्षेत्र में भगवान नटराज द्वारा नाटक, पुनश्च महाकाव्य, उपन्यास, कहानी, गीत, आख्यायिकों आदि का आविर्भाव भारत में हुआ। शिव के ताण्डव से नाट्य कला, कथकलि और भरत नाट्यम्, का अविष्कार भारत में हुआ। इस सन्दर्भ में इन्द्र के दरबार का उल्लेख अनेक ग्रन्थों में आया है।

संगीत का जन्म भारत में हुआ है। माँ सरस्वती संगीत की देवी है, वीणा उनका वाद्य है। कृष्ण की मोहनी तानों की उद्गाता वंशी के कारण ही वे वंशीधर कहे जाते हैं। वह वंशी भी भारत की देन है। तुम्बरू, नारद, हरिदास, तानसेन और बैजू बावरा जैसे शास्त्रीय संगीत के गायन और वादन के विस्तारक विश्व पटल पर भारत ने ही दिये हैं। कृष्ण की पौत्र–वधु चित्ररेखा चित्रकला की प्रणेता रही हैं जिन्हें अपने करतल पर चित्र उतारने की कला आती है। वह कला भी विश्व भर में भारत से गयी। आध्यात्म के क्षेत्र में भारत में इतनी उन्नति की कि वह भौतिक विकास में किंचित् पीछे ही रह गया। विद्यारण्य मुनि द्वारा आत्मस्वरूप का विवेचन विश्व का प्रथम, अन्तिम और अद्वितीय है। योगश्शास्त्र के प्रणेता ऋषि पतंजलि भी भारतीय थे।

दर्शन के क्षेत्र में चार्वाक का भौतिक दर्शन, गौतम का न्यायदर्शन, कणाद् का वैशेशिक दर्शन, कपिल मुनि का सांख्य दर्शन, पतंजलि का योगदर्शन, जैमिनि का पूर्व मीमांसा दर्शन, व्यास का उत्तर मीमांसा दर्शन, शंकराचार्य का वेदान्त दर्शन जैनाचार्यो का जैन दर्शन आदि भारत की देन है।

अर्थशास्त्र के क्षेत्र में आचार्य कौटिल्य अर्थशास्त्र के जनक हैं। जिन्होंने प्रथमतः राष्ट्रवादी अर्थशास्त्र की संकल्पना प्रस्तुत की। वास्तुकला के क्षेत्र में ई पू सातवीं शताब्दी में वास्तु संरचना का जो स्वरूप पाया गया है उसे अभी विश्व के अभियन्ता छू भी नहीं सके हैं। खगोल के क्षेत्र में आर्यभट्ट ने सूर्य की आभासी गति एवं खगोलीय यन्त्रों पर प्रकाश डाला है। सर्वप्रथम बनी धूप घड़ी, आर्यभट्ट की ही देन है। खगोल के क्षेत्र में बाल्मीकि सर्वप्रथम वैज्ञानिक माने जायेंगे जिनकी सूर्य, चन्द्र एवं अन्य ग्रहों की दूरियाँ एवं गतियां आज की प्रामाणिक दूरी एंव गतियों के अनुरूप ही हैं।

रसायन शास्त्री नागार्जुन के गन्थ रसरत्नाकर के रसायनशास्त्र के क्षेत्र में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी थी। नालंदा, उडंदपुर, विक्रमशीला व काशी में रसायनशास्त्र का अध्ययन करने हेतु विद्यार्थी दूसरे देशों से आते थे। चिकित्सा के क्षेत्र में अश्वनी कुमार और धन्वन्तरि समग्र चिकित्साशास्त्र के आविश्कर्ता हैं। उनसे क्रमशः, ब्रह्मा, चरक, सुश्रुत और कश्यप ने सीखा। आज विश्व का प्रत्येक देश भारत के इन ऋषियों का ऋणी हैं।

आज भौतिकी के क्षेत्र में अरस्तू, आर्किमिडीज, गैलीलियों, केपलर, न्यूटन आदि कितने ही नाम गिनाए जा सकते हैं। उल्लेखनीय है कि ये सब 384 ई पू तक ही हुए हैं। जबकि भार, माप, गुरूत्व बल, पिण्डों की गति, पाई एवं अनेक मापक सूत्रों का उल्लेख भास्कराचार्य ने पहले ही 400 ई0पू0 किया है। सम्भव है यह सब भारत के उपजीव्य रहे हों। ऋषि भारद्वाज की 'अंशुवोधिनी; में आधुनिक भौतिकी की सम्पूर्ण भाब्दावली और मापकों का उल्लेख पहले से विद्यमान है।

नौपरिवहन के क्षेत्र में –'नेवीगेशन' शब्द जो नावगति से बना है, दर्शाता है कि ग्रीक सभ्यता में भी भारत में जहाजरानी विभाग था। उनके राजचिन्ह ई 3500 वर्ष पूर्व के पाये गये हैं।

वैमानिकी के क्षेत्र में–भारत में एक लम्बी श्रृंखला प्राप्त होती है। विभिन्न शास्त्रों में 32 प्रकार के विमानों का उल्लेख है। महर्षि भारद्वाज के 'यन्त्र सर्वस्व' में विमान निर्माण, विमान रक्षा, यात्रियों की

रक्षा, यान के चालक की रक्षा व रक्षा–सामग्री का प्रथमतः उल्लेख है। आचार्य शौनक ने 56 प्रकार के कृतक विमानों का वर्णन किया है। समरांगण सूत्र में तेल के स्थान पर पारे से विमान उड़ाये जाने का उल्लेख है। पुष्पक विमान में यात्रियों के बढ़ जाने पर स्थान बढ़ाने तथा एक स्थान सदा ही खाली रहने की विशेषता का उल्लेख शास्त्रों में पाया जाता है।

आज विश्व के तमाम विकसित देश वैज्ञानिक एवं भौतिक प्रगति में अपना डंका भले ही बजवा रहे हों पर इन्हें जब कभी विश्व शान्ति या सद्भाव की याद आयेगी तो विश्वगुरू भारत के ही श्रीचरणों में ही आकर बैठना होगा।

उपग्रह के माध्यम से शिक्षाः विज्ञान की एक अमूल्य देन

इरफाना बेगम
विज्ञान प्रसार, कुतुब संस्थान, नई दिल्ली

मनुष्य ने सभ्यता के विकास के साथ–साथ ही नई खोजों एवं आविष्कारों को करने, जानने और उनको परखने के लिये प्रयास करना शुरू कर दिया। इसी क्रम में खोजों एवं आविष्कारों को क्रमबद्ध भी किया गया। धीरे–धीरे विकास के क्रम में विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने अपना अस्तित्व बनाते हुए नई खोजों और आविष्कारों की मदद से विकास के नये आयाम तय किये हैं। एक ओर आग की खोज और मकानों के निर्माण ने विकास को नई दिशा दी, वहीं इंसान ने पृथ्वी के गूढ़ रहस्यों को भी जानने और परखने का काम शुरू कर दिया। इसी श्रृंखला में वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष में उपग्रह को भेजने का दुरूह कार्य किया और वर्ष 1957 में 4 अक्तूबर को रूस ने अपना पहला उपग्रह अन्तरिक्ष में भेजने में सफलता प्राप्त की। इसके साथ ही अन्तरिक्ष में खोजों के नये युग का सूत्रपात भी हो गया। रूस द्वारा भेजा गया अंतरिक्षयान लगभग तीन माह तक अन्तरिक्ष में रहने के बाद 4 जनवरी 1958 को यह नष्ट हो गया।

भारत नें भी अपना उपग्रह अन्तरिक्ष में सफलतापूर्वक भेजने का क्रम वर्ष 1975 से प्रारम्भ किया जब 19 अप्रैल को आर्यभट्ट को आन्तिरक्ष में भेजा गया। भले ही यह उपग्रह अन्तरिक्ष में बहुत ही थोड़े समय यानि कि 96.3 मिनट रहा, फिर भी सफलता के एक युग का शुभारम्भ करने में सफल रहा। इसके बाद से निरन्तर विभिन्न प्रयोगों के माध्यम से अलग–अलग समयान्तराल पर अन्तरिक्ष में उपग्रह को सफलतापूर्वक भेजने का क्रम चलता रहा। प्रारम्भ में यह उपग्रह केवल अन्तरिक्ष के बारे में जानकारियां हासिल करने के होता था। धीरे–धीरे इनमें भी तकनीक का सुधार किया गया फिर इन्हें टीवी और अन्य सवेंदी कार्यक्रमों के लिये प्रयोग किया जाने लगा और वर्तमान समय में उपग्रह का प्रयोग शिक्षा के प्रचार और प्रसार के लिये किया जाने लगा। वर्ष 2004 में 20 अक्तूबर को एड्यूसेट उपग्रह का भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने अन्तरिक्ष में सफलतापूर्वक प्रक्षेपण किया। यह उपग्रह पूरी तरह से विज्ञान और तकनीक की शिक्षा के लिये समर्पित उपग्रह है जो कि देश के विभिन्न भागों में एस आई टी और आर ओ टी के माध्यम से विभिन्न वर्गो के लोगों में विज्ञान के प्रचार–प्रसार के लिये कार्य कर रहा है। इसके माध्यम से मुख्य रूप से दूरस्थ क्षेत्रों में विज्ञान और तकनीक को द्विपक्षीय वार्ता के द्वारा पहुचाना है। इसी क्रम में दूरस्थ क्षेत्रों के विद्यालयों में विक्टर्स कार्यक्रम, ग्रामसैट कार्यक्रमों का संचालन भी किया गया।

इसी क्रम में एड्यूसेट उपग्रह विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिये पिछले कई वर्षो से सतत प्रयास किये जा रहे हैं जिसमें देश के विभिन्न संगठन अपने–अपने स्तर पर अलग –अलग कार्य कर रहें हैं। एक उदाहरण के तौर पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा एड्यूसेट के माध्यम से प्रत्येक आयु वर्ग के लोगों के लिये विज्ञान विषयक लोकप्रिय कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है जिसमें दैनिक जीवन में विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी के प्रभाव और इसके बेहतर उपयोग पर विभिन्न भाषाओं में चर्चा–परिचर्चा एवं संगोष्ठियों का आयोजन किया जाता है जिनका प्रभावी रूप से आम जनमानस पर प्रभाव पड़ रहा है।

कृत्रिम उपग्रह का प्रयोग करते हुये कई संस्थान शिक्षा के प्रचार–प्रसार के कार्य में लगे हुए हैं। उपग्रह एड्यूसेट की मदद से एक बड़े समूह को एक साथ विज्ञान के किसी विशेष विषय पर जागरूक किया जा सकता है। अपनी निश्चित सीमाओं के भीतर उपग्रह के माध्यम से बेहतर तरीके से विज्ञान के प्रचार–प्रसार का कार्य किया जा सकता है जो कि लोगों को अन्धविश्वास से दूर करता है और नये रास्ते प्रदर्शित करता है। उपग्रह के माध्यम से विज्ञान के प्रचार–प्रसार का कार्य प्रत्येक आयु वर्ग के लोगों के लिये किया जा सकता है। इसका सबसे बड़ा लाभ है कि एक साथ हजारों की संख्या में लोगों से एक साथ संपर्क किया जा सकता है। मुख्य बात है कि एक ओर जहां विभिन्न शिक्षण संस्थान इस उपग्रह का प्रयोग करके के दूरदराज के क्षेत्रों में शिक्षा के विकास के कार्य में लगे हैं, वहीं दूसरी ओर विज्ञान और तकनीक के प्रचार–प्रसार के लिये विज्ञान प्रसार एड्यूसेट नेटवर्क निरन्तर प्रयत्नशील है। इन कार्यक्रमों में केवल वक्तव्य न होकर विभिन्न प्रकार के अन्य कार्यक्रमों को भी शामिल किया जाता है जो कि विज्ञान के प्रति लोगों कें रूझान को बढा सकें। इनमें विभिन्न स्तर के प्रशिक्षण शिविरों के अतिरिक्त, बच्चों कें लिये वार्ता–चर्चा एवं स्वयं करो आधारित कार्यक्रमों के आयोजन के साथ–साथ विज्ञान का बेहतर लेखन कैसे किया जा सकता है, पर भी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार से देखा जाये तो एड्यूसेट अपनें आप में विलक्षण तकनीक है जिसके माध्यम सें विभिन्न विधाओं में हर समूह के लिये विज्ञान और तकनीक की जानकारी हर स्तर पर दी जा सकती है।

विज्ञान और तकनीक की हर खोज मानव के विकास की कहानी कहती है इन्हीं के कारण आज के इस युग को साइबर युग का नाम दिया गया है। इस प्रकार देखा जाये तो विज्ञान एवं तकनीक की हर नई खोज ने विकास के क्रम में प्रत्येक व्यक्ति के ज्ञान को बढाने में मदद की है और लोगों को मुख्य धारा से जोड़ने की कोशिश की है। दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों के लिये भी इस खोज के द्वारा अपनी पसन्द के विषयों के बारे में जानकारी हासिल करने के मौके दिये है जिसके लिये कोई भी व्यक्ति इन एड्यूसेट केन्द्रों में आकर कार्यक्रमों में प्रतिभागिता करके सम्बन्धित वैज्ञानिकों अथवा सन्दर्भ व्यक्तियों से सीधे बातचीत करके समस्याओं का समाधान प्राप्त कर सकता है।

सफेद मूसली की सूखी जड़ो के मेथेनॉल अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता

मृदुला त्रिपाठी, प्रियंका चावला, टन्डन सिंह, तथा एर गेबर*
सीएमपी डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
**आई सी टी पी, ट्रिस्टे*

सारांश

इस शोध लेख में सफेद मूसली की सूखी जड़ों के मेथेनॉल अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता की जाँच की गई हैं। आक्सीकरणरोधी सक्रियता जाचने के लिए डी पी पी एच, रिड्यूसिंग पावर, बीटा कैरोटीन ब्लीचिंग, फ़ेरिक थायोसाइनेड और थायोबार्बितुरीक ऐसिड विधियों का प्रयोग किया गया हैं। वनस्पति अवतरण की डी पी पी एच विधि की आई सी 50 का मान 04 मिलीग्रम/मिलीलीटर पाया गया। वनस्पति अवतरण की रिड्यूसिंग क्षमता स्तर बी एच टी और गेल्लिक ऐसिड से बेहतर पाई गई। फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि और थायोबार्बितुरीक ऐसिड विधि के परिणाम भी प्रभावशाली पाये गये ? सफेद मूसली की जड़ें उच्च आक्सीकरणरोधी सक्रियता प्रदर्शित करती हैं। इस की आक्सीकरणरोधी सक्रियता कई रोगों के रोकथाम में काम आयेगी।

प्रस्तावना

आक्सीकरणरोधी सेल को मुक्त मूल कण के कारण होने वाली क्षति से बचाता हैं। आक्सीकरण प्रतिक्रिया सेल के प्राकृतिक चयापचयी प्रक्रिया का भाग है, और आक्सीकरणरोधी प्रतिक्रिया ही मुक्त मूलक की उत्पाति का कारण भी हैं। मुक्त मूलक सेल के मुख्य अंग जैसे कि सेल डी एन ए, सेल झिल्ली पर आक्रमण करता है जो की प्रौढ, हृदय रोग, कर्कट रोग, आदि का मूल कारण हैं। कई वनस्पति तत्व जैसे की पालीफिनाल की आक्सीकरणरोधी सक्रियता निर्धारित की गई हैं[1]। वनस्पति मूल के पालीफिनाल जैसे कि कैटेकिनस प्रौढ, हृदय रोग आदि के विरोधी पाये गये है, जो कि उनकी मुक्त मूलक संमार्जक सक्रियता की विषेशता हैं। भले ही कृत्रिम आक्सीकरणरोधी जैसे कि बी एच टी, गेल्लिक एसिड आदि उपलब्ध हैं पर इन से संबंधित दुष्प्रभाव भी हैं। अधिकांश समय से वनस्पति प्रजाति के आक्सीकरणरोधी क्षमता का अध्ययन किया गया हैं। हमारी शोध का मुख्य उद्देश्य सफेद मूसली की सूखी जड़ो के मेथेनॉल अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता का अध्ययन करना हैं। सफेद मूसली उत्तर भारत में पाया जाता हैं। इसका उपयोग महत्तवर्पूण औषधि के रूप में किया जाता हैं। इसकी जड़े शक्तिवर्धक पेय की तरह सेवन की जाती हैं। सफेद मूसली का औषधीय गुण उसमे पाये जाने वाले 17 प्रतिशत सपोनिन मूल के कारण व्युत्पद हैं। हाल ही में सफेद मूसली में कामोत्वेजक शक्ति का संकेत दिया गया हैं। इस शोध लेख में सफेद मूसली की सूखी जड़ों के मेथेनॉल अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता की जाँच भिन्न–भिन्न पद्धतियों से की गई हैं जैसे कि डी पी पी एच विधि, रिड्यूसिंग पावर विधि, बीटा कैरोटीन ब्लीचिंग विधि, फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि और थायोबार्बितुरीक ऐसिड विधि।

सामग्री एंव विधि

500 ग्राम सफेद मूसली की सूखी जड़ें बजार से खरीदकर उनको पीस लेने के बाद मेथेनॉल में 2 दिन के लिए भिगो दिया गया। फिर उसको छानने के बाद छनिश को वाष्पित करके वनस्पति अवतरण बनाया गया।

विधिया

डी पी पी एच विधि

वनस्पति अवतरण और स्तर गेल्लिक एसिड और बी एच टी की हाइड्रोजन देने की क्षमता डी पी पी एच विधि द्वारा नियत की गई [3]। डी पी पी एच स्थिर मुक्त मूलक होने के कारण इस का उपयोग इस स्पेक्ट्रामेट्रीक विधि में एक विशेष अभिकर्मक के रूप में किया जाता हैं। डी पी पी एच जामूनी रंग का विलयन बनाता है। वनस्पति अवतरण जब अपना हाइड्रोजन डी पी पी एच को दे देता हैं तो डी पी पी एच विलयन का विरंजन हो जाने के कारण वह पीले विलयन में बदल जाता हैं। 0.002 प्रतिशत डी पी पी एच का मेथेनॉल विलयन बनाया गया। वनस्पति अवतरण के भिन्न–भिन्न सान्द्रण अलग–अलग परखनली में लेकर उनमें 2 मिलीलीटर डी पी पी एच और 02 मिलीलीटर मेथेनॉल मिलाकर 30 मिनट के लिए अंधेरे में रखा गया। स्तर गेल्लिक एसिड और बी एच टी के लिए भी स्वरूप विधि का उपयोग किया गया। उस के बाद भिन्न–भिन्न विलयन की प्रकाश संबंधी सक्रियता यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से 517 नैनोमीटर पर नापी गई।

रीड्यूसींग पावर विधि

वनस्पति अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता रिड्यूसिंग पावर विधि से निर्धारित की गई [4]। इस विधि में वनस्पति अवतरण के भिन्न–भिन्न सान्द्रण को अलग–अलग परखनली में लेकर 01 मिलीलीटर आसुत जल मिलाया गया। फिर इस विलयन में 2.5 मिलीलीटर फास्ट बफर (0.2 मोलर, पी एच 6.6) और 2.5 मिलीलीटर पोटैशियम फैरीसाइनाइड (1 प्रतिशत) मिश्रित किया गया पूरे विलयन को 50 डिग्री सेल्सियस तापमान में 20 मिनट के लिए इंगक्यूबेशन में रखने के बाद 2.5 मिलीलीटर ट्राइक्लोरो एसीटिक एसिड (10 प्रतिशत) मिलाया गया और 10 मिनिट के लिए 3000 एर पीएम में अपकेन्द्रित होने रख दिया गया। अपकेन्द्रित विलयन की ऊपरी सतह को 2.5 मिली परखनली में लेकर 2.5 मिली आसुत जल और 0.5 मिली फैरिक क्लोराइड मिलाने के बाद इन सभी की प्रकाश संबंधी सक्रियता यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से 700 नैनोमीटर पर नापी गई। स्वरुप विधि स्तर गेल्लिक एसिड और बी एच टी के लिए भी उपयोग की गई।

बीटा कैरोटीन ब्लीचिंग विधि

0.02 मिग्रा क्रिस्टलाइन बीटा कैरोटीन को 10 मिली क्लोरफॉर्म में मिलाया गया फिर इस विलियन में 20 मिग्रा लिनोलिइक ऐसिड 200 ट्वीन 80 अभिकर्मक मिलाया गया। इस विलियन में उपस्थित क्लोरोफॉर्म को रोटेटोरी इवोपरेटर में 40 डिग्री सेल्सियस तापमान में 5 मिनट के लिए इवैपरैट किया गया। लगातार फेटने के साथ 50 मिली आसुत जल मिलाने के बाद इमल्शन मिला। 0.5 इमल्शन में 0.1 एमएल वनस्पति अवतरण मिलाया गया और गेल्लिक एसिड स्तर के रुप में उपयोग किया गया। स्तर और वनस्पति अवतरण युक्त परखनली को 50 डिग्री सेल्सियस तापमान में जल उष्मक में रखने के बाद यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से लगातार 2 घंटे के लिए 20 मिनट के अन्तराल पर 470 नैनोमीटर पर नापी गई[5]।

फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि

4.0 मिलीग्राम वनस्पति अवतरण में 01 मिलीलीटर लिनोलिइक ऐसिड (2.5 प्रतिशत एथनोल में) मिलीलीटर फास्टे बफर और 01 मिली आसुत जल मिलाकर 40 तापमान में अंधेरे में रख दिया गया। अब 2.5 मिलीलीटर इस विलियन में 8.5 एम एल 75 प्रतिशत एथनोल और 0.2 मिलीलीटर 30 प्रतिशत एमोनियम थायोसाइनेट मिलाया गया। ठीक तीन मिनिट बाद 0.2 मिली फ़ेरिक क्लोराइड और 3.5 प्रतिशत हाइड्रक्लोरिक एसिड सक्रियता खोल में मिलाया गया और गाढ़े रंग की प्रकाश संबंधी सक्रियता यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से 500 नैनोमीटर पर नापी गई 6।

थायोबार्बितुरीक ऐसिड विधि

फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि के लिए तैयार विलियन में 2 मिलीलीटर 2.0 प्रतिशत ट्राईक्लोरो एसीटिक एसिड और 2 मिली 2.67 प्रतिशत थायोबार्बितुरीक एसिड मिलाया गया। विलियन को जल उष्मक पर रखकर उसके ठंड़ा हो जाने के बाद प्रकाश संबंधी सक्रियता यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से 532 नैनोमीटर पर नापी गई[1]।

परिणाम

भिन्न–भिन्न सान्द्रण का प्रभाव मुक्त मूलक संमार्जकता पर डी पी पी एच विधि द्वारा नियत किया गया। चित्र 1 में वनस्पति अवतरण की निरोधन प्रतिशत का मान देखा जा सकता हैं। सान्द्रण में बढ़ाव के साथ निरोधन प्रतिशत में भी बढ़ाव देखा जा सकता है जिसका मान 22.2, 25.26, 30.54, 45.0, 57. 49 प्रतिशत पाया गया। स्तर बी एच टी और गेल्लिक एसिड के लिए निरोधन प्रतिशत का मान 54. 10, 59.01, 61.20, 69.20, 76.10 और 20.10, 23.20, 27.31, 31.10, 35.01 प्रतिशत पाया गया।

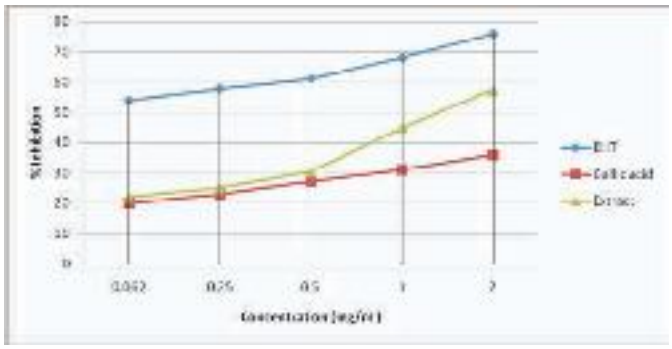

चित्र 1. डी पी पी एच विधि से वनस्पति अवतरण और स्तर बी एच टी और गेल्लिक ऐसिड की निरोधन प्रतिशत का मान।

निरोधन प्रतिशत सीधे आक्सीकरणरोधी सक्रियता निर्धारित करता है वनस्पति अवतरण नें स्तर गेल्लिक एसिड से बेहतर आक्सीकरणरोधी सक्रियता दिखाई हैं। वनस्पति अवतरण की आई सी 50 का मान 0. 4 मिग्रा/मिली पाया गया।

रिड्यूसिंग क्षमता किसी भी कण के आक्सीकरणरोधी सक्रियता का प्रमाण देती हैं। चित्र 2 में वनस्पति अवतरण की रिड्यूसिंग क्षमता दिखाई गई हैं। वनस्पति अवतरण की रिड्यूसिंग क्षमता स्तर बी एच टी और गेल्लिक एसिड से बेहतर पाई गई।

वनस्पति अवतरण की एंटी ब्लीचिंग सक्रियता का अध्ययन वनस्पति अवतरण और इमलशन के विलयन की रंग गाढ़ता की जाँच यू वी विज़बल स्पेक्ट्रामेट्रिक विधि से लगातार 2 घंटे के लिए 2.0

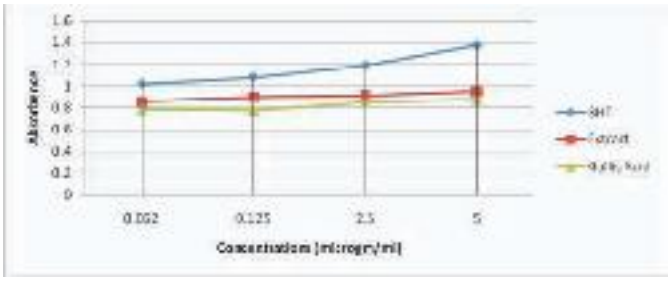

चित्र 2. वनस्पति अवतरण और स्तर बी एच टी और गेल्लिक एसिड की रिड्यूसिंग क्षमता।

मिनट के अन्तराल पर 470 नैनोमीटर पर की गई। आरंभिक सान्द्रण 100 प्रतिशत मानी गई। पहले 2.0 मिनट में वनस्पति अवतरण ने 85 प्रतिशत ब्लीचिंग दिखाई और स्तर गेल्लिक एसिड के लिए या मान 85 प्रतिशत पाया गया। 01 घंटे के इंगक्यूबेशन के बाद ब्लीचिंग में गिरावट देखी गई जिसका मान 69 तथा 63 प्रतिशत पाया गया। दूसरे घंटे या मान और गिरके 47 प्रतिशत हो गया जब की स्तर के लिए या मान 56 पाया गया (चित्र 3)।

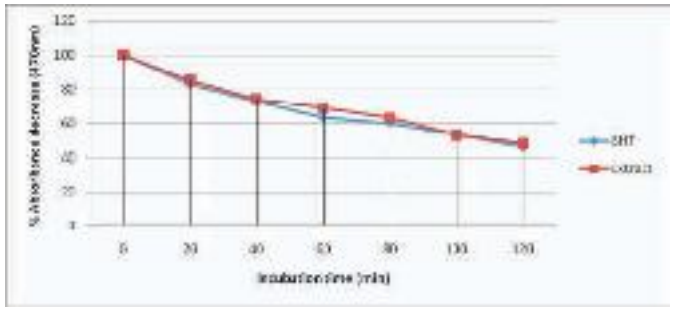

चित्र 3. वनस्पति अवतरण और बीएचटी की एंटी ब्लीचिंग सक्रियता।

लिपिड परआक्सिडेशन के आरंभ में परक्साइड के बनाने की मात्रा फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि से नापी गई। जहाँ परक्साइड फेरस क्लोराइड के साथ प्रतिक्रिया करके फ़ेरिक आयन बनाता हैं। फ़ेरिक आयन थायोसाइनेड के साथ प्रतिक्रिया करके लाल रंग का विलयन बनाता हैं। वनस्पति अवतरण की पराक्साइड ना बनाने देने की क्षमता इसी विधि से नापी गई (चित्र 4) जो की वनस्पति अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता निर्धारित करता हैं। समान नतीजे थायोबार्बितुरीक एसिड विधि के लिऐ प्राप्त हुए (चित्र 5)।

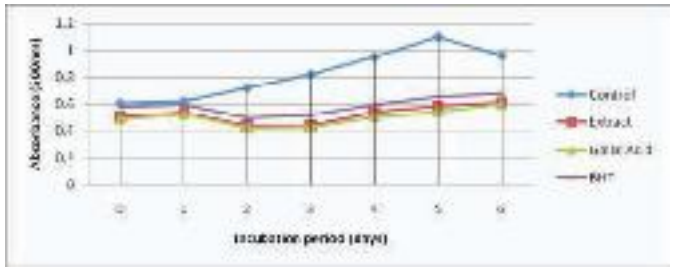

चित्र 3. फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि से वनस्पति अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता।

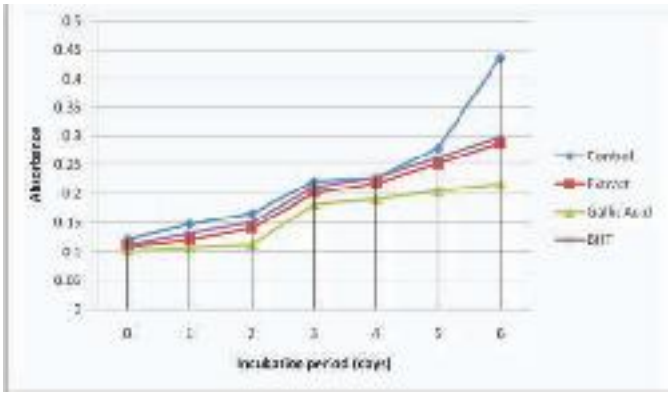

चित्र 2. थायोबार्बितुरीक ऐसिड विधि से वनस्पति अवतरण की आक्सीकरणरोधी सक्रियता।

विवेचना

सदियों से रोगों के इलाज के लिए प्राकृतिक उपचारों का उपयोग किया जाता हैं। सफेद मूसली का उपयोग एक महत्वर्पूण जड़ी बूटी कि तरह सदियों से किया जाता हैं और आयुर्वेद में भी इस का जिक्र है। सफेद मूसली की अणुजीव विरोधी सक्रियता, उत्तेजक विरोधी सक्रियता की चर्चा कई शोध लेखों में की गई हैं पर इसकी आक्सीकरणरोधी सक्रियता की क्षमता पर बहुत कम काम हुआ है [11,12]। हमारी शोध अध्ययन के नतीजों से साफ पता चलता है कि सफेद मूसली एक प्रभावशाली आक्सीकरणरोधी हैं। जो भी विधि इस शोध अध्ययन में नियोजित की गई थी, वहां सब सरल पर महत्वर्पूण नतीजे देने वली थी। डी पी पी एच विधि एक सरल पर महत्तवर्पूण आक्सीकरणरोधी सक्रियता जांचने की विधि हैं 8। डी पी पी एच विधि के नतीजों से साफ पता चलता हैं की वनस्पति अवतरण की निरोधन प्रतिशत क्षमता स्तर गेल्लिक एसिड से बेहतर पाई गई। रिड्यूसिंग क्षमता किसी भी कण की आक्सीकरणरोधी सकियता का प्रमाण देती हैं [9,10]। उच्च सान्द्रण पर उच्च वनस्पति अवतरण की शक्तिशाली रिड्यूसिंग सक्रियता दिखता हैं वनस्पति अवतरण की रिड्यूसिंग क्षमता सान्द्रण के साथ बढ़ती दिखाई दी जो की वनस्पति अवतरण की उच्च रेडाक्स सामर्थ्य, रिड्यूसिंग क्षमता या हाइड्रोजन देने की क्षमता की और प्रकाश डालता हैं।

बीटा कैरोटीन ब्लीचिंग विधि बहुत साद्यारण पर विशिष्ट आक्सीकरणरोधी सकियता जाँचने की विधि हैं। वनस्पति अवतरण के बीटा कैरोटीन विधि ब्लीचिंग के नतीजे स्तर बीएचटी से बेहतर पाये गये। फ़ेरिक थायोसाइनेड विधि और थायोबार्बितुरीक एसिड विधि के परिणाम भी प्रभावशाली पाये गये।

निर्ष्कष

हमारी शोध का मुख्य उद्देश्य सफेद मूसली की आक्सीकरणरोधी क्षमता का अध्ययन करना था। सफेद मूसली की इतनी प्रभावशाली आक्सीकरणरोधी क्षमता कई रोगो के इलाज में उपयोग की जा सकती हैं।

सन्दर्भ

1. होउ डबल्यू सी, लिन आर डी, चेंग के टी, हंग वाई टी, चो सी एच, चेंन सी आई, हवांग एस वाई, ली एम एच (2003). फ्री रैडिकल स्कैविन्ज ऐक्टिवटी आफ ताइवानीसी नेटिव प्लैन्ट फाइटोमेडिसन 10:170–1751.

2. कहकोनीन एम पी, हो पी ए ए आई, वुओरेला एच जे, रोहा जे, पिहलाजा के, कुजाला एस टी, हेइनओनेन एम (1999). ऐन्टीआक्सिडन्ट ऐक्टिवटी आफ प्लैन्ट एक्स्ट्रैक्ट कन्टैनिंग फिनालीक काम्पाउन्ड. जर्नल आफ ऐग्रिकल्चर फूड केमस्ट्री. 47:3954–396.2.

3. खालाफ एन ए, शाकया ए के ओथामैन एस, ईएल अगाबार ज़ेड, फ़राह एच. (2008). एंटीआक्सिडन्ट एक्टिवटी आफ सम कामन प्लैन्ट. टकिंश जर्नल अव बायोलाजि. 32:51–55.

4. हूडा फ़ाजान एन, नोरिहम ए, नोराकिआ ए एस, बाबजी ए एस. (2009). ऐन्टीआक्सिडन्ट ऐक्टिवटी इन प्लैन्ट मेथनोल एक्स्ट्रैक्ट कन्टैनिंग फिनालीक काम्पाउन्ड. ऐफ्रिकन जर्नल आफ बाइओटेक्नालजी. 8:484–489.

5. हिकमेट जी, एटीस बी, दुरमाज़ जी, एरदोगान एस, यीलमाज़ आई. (2005). ऐन्टीआक्सिडन्ट फ्री रैडिकल स्कैविन्ज ऐन्ड मेटल चीलेटींग केरक्टरिस्टिक्स आफ प्रोपिलस. अमेरिकन जर्नल आफ बाइओकेमस्ट्री ऐन्ड बाइओटेक्नालजी. 1:27–31.

6. किकुजाकि एच, नकटनि एन. (1993). ऐन्टीआक्सिडन्ट इफेक्ट आफ सम जिंन्जर कन्स्टिचूअन्ट. जर्नल आफ फूड साइअन्स. 58:1407–1410.

7. आटोलेनधि ए. (1959). इन्टरैक्शन ऑफ एस्कार्बिक ऐसिड ऐन्ड माइट्रोकाडिंया लाइपिड. आर्चिव आफ बायोकेमस्ट्री ऐन्ड बायोफिज़िक्स. 79:355–363.

8. कोलेवा, वेन बिक टी ए, लिनसेन जे पी एच, डी ग्रुट ए. (2002). स्क्रीनिंग आफ प्लैन्ट एक्स्ट्रैक्ट फॉर ऐन्टीआक्सिडन्ट ऐक्टिवटी ए कम्पैरटिव स्टडी ऑन थ्री टेस्टिंग मैथड्स. फाइटोकेमिकल अनैलिसिस. 13:9–17.

9. मेर एस, कन्नअर जे, अक़ारि बी, हाउस एस पी (1995). डिटर्मनेशन ऐन्ड इन्वाल्टमन्ट आफ ऐक्वीएस रिड्यूसिंग काम्पाउन्ड इन आक्सडैशन डिफेन्स सिस्टम आफ वेरीअस सेनेसिंग लीव्ज़. जर्नल अव ऐग्रिकल्चर फूड केमस्ट्री. 43:1913–1917.

10. मेनसर एल आई, मेनेनज़ी एफ एस, लेटोस जी जी, रेज एस, सेन्टोस टी, कौब सी एस, लेटोस एस जी(2001). स्क्रीनिंग आफ ब्रजिल्यन प्लैन्ट एक्स्ट्रैक्ट फॉर एंटीआक्सिडन्ट एक्टिवटी बाइ द यूस आफ डी पी पी एच फ्री रैडिकल मैथड्. फाइटोथेरपी रिसर्च 15:127–130.

११. सुन्दरम् एस, दिवेदी पी, पुरवार एस. (2011). ऐन्टी बैक्टिरीअल एक्टिवटी ऑफ कूड एक्स्ट्रैक्ट आफ क्लोरोफाइटम बोरीवीलीयानम्. रिसर्च जर्नल आफ मेडिसनलल प्लैन्टस.

12. चक्रवर्ती जी एस, ऐरी बी (2009). फाइटोकेमिकल ऐन्ड ऐन्टी माइक्रोबीयल स्टडी आफ क्लोरोफाइटम बोरीवीलीयानम. इन्टरर्नेशनल जर्नल आफ फार्मसूटिकल स्टडी ऐन्ड ड्रग रिसर्च. 1:110–112.

भारतीय कृषि में मौसम–आधारित परंपरागत देशज ज्ञानः एक अध्ययन

श्याम किशोर वर्मा, बी यु दुपारे, तथा जगदीशन ए के
राष्ट्रीय सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र, खण्डवा रोड़, इंदौर, मध्य प्रदेश

सारांश

पृथ्वी के स्रोतों का इष्टतम प्रयोग करके मनुष्य द्वारा प्रारंभिक उददेश्यों, जैसे भोजन, कपड़ा, ईंधन आदि की आपूर्ति के लिए जो क्रियाएं की जाती हैं वे कृषि कहलाती हैं जैसे फसल उत्पादन, फलोत्पादन, शाकोत्पादन, पशुपालन, मधुमक्खी पालन, रेशम कीट पालन, लाख कीट पालन, वर्मी कल्चर, मछली पालन आदि आदि। विश्व में कृषि का विकास 1,000 बी. सी. से पूर्व आरंभ हुआ जिसमें शिकार करना एवं इकट्ठा होना, 8700 में भेड़ पालन 7,700 में बकरी पालन, 7500 में गेहूं, जौ की खेती, 6,000 में गौपशु और सूकर पालन, 4400 में मक्का की खेती, 3500 में आलू की खेती, 3000 में कांसे के औजारों का प्रयोग, 2900 में हल का विकास, सिंचित खेती की शुरुआत 2700 में चीन में रेशम कीट पालन, 2300 में चना, नाशपाती, सरसों, कपास की खेती, मुर्गी, भैंस, हाथी घरेलू उपयोग हेतु पालन, 2200 में धान की खेती 1800 में रागी की खेती, 1725 में ज्वार की खेती, 1500 में गन्ने की खेती सिंचाई में विकास, 15वी शताब्दी में नारंगी, जंगली बैंगन, अनार की खेती की शुरुआत हुई।

भारतवर्ष में 16वीं शताब्दी में पुर्तगालियों द्वारा अनेक फसलों का विकास किया गया। आलू, टमाटर, मिर्च, कददू, पपीता, अन्नानास, अमरूद, मूंगफली, तम्बाकू, रबर आदि। 1903 में सिंचाई आयोग का गठन किया गया। 20वीं शताब्दी की शुरुआत में लार्ड कर्जन की सरकार द्वारा कृषि विकास की नींव डाली। सन् 1905–1907 में देश में 6 कृषि कालेज, साबौर, कानपुर, कोयंम्बटूर, लायलपुर (अब पाकिस्तान) खोले गए। सन 1929 (21 जून) इंपिरियल कॉउंसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च (जिसे बाद में (भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद कहा गया) का शुभारंभ संकल्प 23 मई 1929 में पंजीयन 16 जुलाई 1929 को किया गया। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद दिसंबर सन 1973 में कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान मंत्रालय भारत सरकार में स्थापित किया गया। भारतीय कृषि के इस विकास गाथा के अंतरगत विभिन्न उतार–चढ़ाव एवं परिवर्तनों के साथ एवं मौसम एवं जलवायु की देशी विविधताओं के साथ विकास किया जिसमें परम्परागत देशी तकनीकों का महत्त्वपूर्ण योगदान और आज के जलवायु परिवर्तन के समय में उनकी वैज्ञानिक सोच के साथ आवश्यकता पड़ रही है। पं. जवाहरलाल नेहरू ने स्वतंत्रता के पूर्व कहा था कि ''हर चीज इंतजार कर सकती है लेकिन कृषि नही अर्थात कृषि समय की क्रिया है।''

कवि घाघ ने कहा है, ''खेती खसम सेती'' अर्थात खेती की देखरेख एक पति की तरह निगरानी से संभव है।'' अतः आज इस जलवायु परिवर्तन के दौर में खेती को प्रभावित होने से बचाने के लिए देशी परांपरागत कृषकों के ज्ञान को वैज्ञानिक तौर पर आत्मसात करना अति आवश्यक है।

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन–भारत संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन के रूपरेखा सम्मेलन का सदस्य देश है जिसका उद्देश्य ग्रीन हाउस गैसों को वायुमण्डल के एक स्तर पर केंद्रित करना है ताकि मनुष्य जलवायु प्रणाली में खतरनाक हस्तक्षेप न कर सके।

सम्मेलन में विभिन्न पक्षों को उसके सचिवालय के माध्यम से निम्न प्रमुख सूचनाएं देने को कहा गया है:

(i) मॉन्ट्रियल समझौते से नियंत्रित होने वाली गैसों के उत्सर्जन के स्रोतों के और सभी ग्रीन हाउस गैसों के धीरे–धीरे कम होने की जहां तक क्षमता अनुमति देती है उसकी राष्ट्रीय सूची।

(ii) समझौते को लागू करने के उपायों का विवरण।

(iii) कोई अन्य सूचना जिसे पार्टी समझौते में उद्देश्यों को हासिल करने के लिए उचित समझती है। पर्यावरण मंत्रालय परियोजना को क्रियान्वित करने के लिए नोडल एजेंसी है।

भारत ने 2002 में क्योटो समझौते को स्वीकार किया और इसका एक उद्देश्य राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुरूप स्वच्छ विकास लागू करना है। समझौते के अनुसार संक्रांतिकाल के दौरान की अर्थव्यवस्थाओं सहित विकसित देश ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन 2008–12 के दौरान 1990 के स्तरों से औसतन 5.2 प्रतिशत कम करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। 28 फरवरी 2007 तक राष्ट्रीय सी डी एम प्राधिकरण ने बायोमास आधारित 526 परियोजनाओं को मंजूरी दी। प्राधिकरण ने पुनरोपयोगी ऊर्जा, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, लघु जलीय एवं ऊर्जा क्षमता के क्षेत्र में अनेक परियोजनाओं को स्वीकृति दी है। इन परियोजनाओं से देश में विदेशी निवेश और अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग बढ़ेगा।

भारतवर्ष पर्यावरण और जलवायु के मामले में विश्व का प्रेरणा स्रोत रहा है जिससे प्रेरित होकर विश्व के महान लोग यहां बस गए। भारत में प्रकृति, वृक्षों वनों पेड़ पौधों की महत्ता पूरे विश्व में जानी मानी जाती है हमारे देश में प्रकृति को भगवान तूल्य माना जाता है जैसे–स्वामी विवेकानंद ने कहा– ''अपने देश में जो उत्सव त्यौहार, व्रत, उपवास, मनाये जाते है उनका उद्देश्य रहता है मानव जीवन से जुड़े हुए सारे तत्वों और वनस्पतियों को अंतःकरण से प्यार करना।''

ईसाई पादरी– एंड्रियन फार्स्टसयूज ने अपनी पुस्तक ''दी लेसर क्रिश्चियन चर्चेज में लिखा–चौथी शताब्दी में फारस में रहने वाले ईसाई वहां जब सताए जाने लगे वे भागकर भारतवर्ष में आकर बस गए और प्रकृति उपसाना में जुट गए।''

भारत की प्राकृतिक सुषमा और भूमि की उर्वरा शक्ति को देखकर चीनी यात्री–ह्वेनसांग ने कहा था–''यहां की भूमि कितनी उपजाऊ है ? अन्न का तो पूछना ही नही। जंगलों की हरियाली अद्भुत है और फूलों तथा फलों की आश्चर्यजनक अधिकता है।'' अतः हमारे पूर्वज ऋषि मुनियों, कृषकों ने हमारी खेती, वनों के पर्यावरण एवं जलवायु के बदलाव को बार–बार हजारों वर्षो से उतार चढ़ाव को आंक कर/देख कर कहावतें, मुहूर्त, कृषि कार्य और उसके क्रियान्वयन एवं बचाव की भविष्यवाणी से कृषि प्रबंधन के तौर तरीके ईजाद कर कृषि कार्यो को सफल बनाया जिसका आगे अध्ययन किया जा रहा है।

परंपरागत (देशी) तकनीकी ज्ञान क्या है ?

मानव का विकास लगभग दस लाख वर्ष पूर्व हुआ, मगर आधुनिक मानव (मानव होमो सेपियन्स) लगभग ढाई लाख वर्ष पूर्व विकसित हुआ जिन्हें मौसम जलवायु के संबंध में ज्ञान सबसे पहले हुआ। भारत देश विज्ञान के क्षेत्र में प्राचीन काल से अग्रणी रहा है प्रकृति की प्रघटनाओं के प्रेक्षणों और लम्बे

अनुभव के आधार पर ही लोग पुष्ट सामान्य निष्कर्षों को निकालते थे। लोक विज्ञान पर गहन अनुशंसा के उपरांत आज भी परंपरगत देशी तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता है। वैज्ञानिक विवेक के आधार पर थोथे अंधविश्वासों को नकारने और खरे उतरने वाले लोक–विश्वासों को स्वीकारने की क्योंकि कृषि और मौसम का चोली–दामन का साथ है। विश्व में आज भी विज्ञान के अध्ययन और अनुसंधान का आधार परंपरागत (देशी) तकनीकी ज्ञान है। परन्तु इसी चकाचौंध में हम अपने देश के विज्ञान की पुरानी धरोहर से दूर होते जा रहे हैं। यह निर्विवाद सत्य है कि भारत में कृषि शताब्दियों से होती है और इसमें उतार चढ़ाव आते रहे हैं। भारत में फसलें उगाने के लिये सिंचाई तो ऋग्वेद काल से होती आई है परन्तु कृषि के लिये वर्षा का महत्व उस समय भी उतना ही रहा होगा जितना आज प्राचीन कृषि वैज्ञानिक मौसम विज्ञान के भी ज्ञाता होते थे। मौसम विज्ञान का अध्ययन पहले ज्योतिष शास्त्र के अंतर्गत किया जाता था। ऐसे प्राचीन कृषि एवं ज्योतिष शास्त्र के सुप्रसिद्ध ज्ञाताओं में महर्षि पाराशर, वराह मिहिर, घाघ, भड्डरी के नाम उल्लेखनीय हैं जिनका ज्ञान और अनुभव आज भी हमारे कृषकों में प्रेरणा और मार्गदर्शन की दृष्टि से लोकप्रिय है जिसे हम परंपरागत (देशी) तकनीकी ज्ञान की संज्ञा दे सकते हैं।

पद्धति विज्ञान

ग्रामीण कृषक, वृद्धजन, महिला कृषक, कृषक परिवार के सगे संबंधी, ग्रामीण बाजार, सोया चौपाल, कृषि उपज मंडी में आये किसान, सब्जी विक्रेता, अनाज विक्रेता, पशुपालक, मत्स्यपालकों से विचार–विमर्श एवं वार्तालाप, दोस्त, शिक्षकों के अनुभव कृषि कवि घाघ, भड्डरी का संकलन, मालवा के ग्रामीण अंचल–बीजलपूर, आंबाचंदन, भगोरा–सिमरोल जगजीवन ग्राम, बोरखड़ी, बड़गौदा के कृषक वृद्धजन झाबुआ आदिवासी अंचल–बेटवासा, कालीखेतीयार के वृद्ध कृषक।

निमाण–बड़वाह, बलवाड़ा, करही, कबाना, बावीग्राम के कृषक सतपूणा, नर्मदा वेली–ग्राम ढाबा खूर्द, इटारसी, बैतूल बाजार, बैतूल, सोहागपुर, बटामा के कृषकों का अनुभव।

भारतीय कृषि में परांपरागत (देशी) तकनीकी ज्ञान का अभिप्राय

भारत वर्ष में फसलें उगाने के लिए उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर प्राचीन कृषि एवं ज्योतिषशास्त्र के प्रसिद्ध ज्ञाताओं में महर्षि पाराशर का काल 1300 ईसा पूर्व माना जाता है। उनके सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "कृषि पाराशर" में कृषि पर नक्षत्रों के प्रभाव, मेघ और प्रकार, वर्षा होने के लक्षण, कृषि की देखभाल, हल–बैल, कृषि उपकरण, जुताई विषयक अन्य कार्यों, बैलों के चयन, बोवाई, रोपण कटाई भंडारण पर बहुमूल्य–वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध है। इस ग्रन्थ के आरम्भ में महर्षि पाराशर लिखते हैं कि कृषि के लिये वर्षा जरूरी है और जीवन के लिए कृषि। अतः मनुष्य को सबसे पहले वर्षा विषयक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। वर्षा के ज्ञान के लिये वर्षा के स्वामी बादलों की प्रकृति, वर्षा के जल की मात्रा का ज्ञान होना जरूरी है अतः ग्रामीण अंचल, सीमांत किसान, अनपढ़ किसानों के लिये यह परंपरागत (देशी) तकनीकी ज्ञान का संप्रेषण आवश्यक है और यह जैव विविधता, जलवायु विविधता वाले इस देश के लिये अति आवश्यक है।

भारतीय परिदृश्य की सर्वव्यापी एवं मध्य प्रदेश के जलवायु क्षेत्र के प्रमुख मालवा, निमाण, झाबुआ, सतपुड़ा क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली परंपरागत (देशी) जलवायु आधारित कहावतें एवं कृषि संबंधी मुहूर्त–

कृषि संबंधी मुहूर्त

(1) **सामान्य कृषि कार्य का मुहूर्त**– रोहिणी, पुनः मूल खेती, अश्विनी, हस्त, दोनों उत्तरा, मृग, घनि, अनुः नक्षत्र कृषि कार्य में प्रशस्त है।

(2) **हल चलाने का मुहूर्त**– शुभ नक्षत्र, मूल, विशा, मघा, स्वा, पुनः पूव, धनि, तीनों उत्तरा, रोहि,

मृग, चित्रा, अनुखेती हस्त अश्व एवं अभिजीत दिनों में शनि एवं रवि को छोड़कर तथा तिथियों में 4,9,14 एवं 30 को छोड़कर सब दिन शुभ है।

(3) **बीज बोने का मुहूर्त**– मंगलवार को छोड़कर तथा तिथियों में 4,6,8,14 एवं 30 को छोड़कर नक्षत्रों में– मूल, मघा, तीनों उत्तरा, मृग, चित्रा, अनु, खेती, हस्त, अश्व, अभिजित शुभ नक्षत्र है।

खेती, सूखा, वर्षा एवं कृषि प्रबंधन की भविष्यवाणियों से संबंधित कहावतें एवं उनका तात्पर्य–

(4) **धान रोपण का मुहूर्त**–नक्षत्र–दिशा, पूर्वा, शद्र, मूल, रोहिणी, शत, उ.कार्य शुभ दिन– रवि, बुध, गुरू एवं शुक्र शुभ, तिथियों में 4,14,30 को छोड़कर।

(5) **फसल काटने का मुहूर्त**– मूल, ज्योष्ठा, आर्दा, अएलेखा, पू.भा, हस्त, कृति, पूष, स्वा.माष, तीनों उत्तरा पू.वा भरणी, चित्रा, पुष्प नक्षत्र शुभ दिन शनि व मंगल को छोड़कर तिथि–4,9,14 को छोड़कर सब शुभ, यदि साथ में वृष, वृश्चिक या कुम्भ लग्न हो तो उत्तम।

(6) **धान्य मर्दन एवं उरव पेरना**–पू.फा.उ.का.–श्रवण, मघा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मूल, अनुराधा, रेवती, नक्षत्रों में शनि, मंगल, तथा रिक्तिका, तिथि– 4,9,14 को छोड़कर अन्य तिथि में धान्य मर्दन करें (दोनों पक्षों की तिथि 4,9,14 रिक्ति तिथियां होती हैं)

(7) **वाटिका रोपण**– शनि, मंगल, रिक्ति्ता, तिथियों को छोड़कर अन्य वार एवं तिथियों में विशा, मृदु, ध्रुव, क्षित्र तारा नक्षत्रों में स्थिर अथवा द्विस्वभाव लग्न में।

(8) **कदली रोपण**– मंगल, शनि को छोड़कर भाद्रपक्ष एवं धनिष्ठा नक्षत्रों को छोड़कर वृक्षारोपण विहित अन्य नक्षत्रों में 1,2,3,6 तिथि और शुभ लग्न में कदली रोपण करें।

घाघ और भड्डरी कृषि कवियों की सर्वव्यापी, सार्वभौमिक, परिचालित एवं कृषि, मौसम, वर्षा, प्रबंधन की प्रमुख कहावतें एवं उनका तात्पर्य –

सूखा पर कहावतें

(1) चैत वर्षा आई, और सावन सूखा जाई।
एक बूंद जो जैब में परे, सहस बूंद सावन की हरे।।
तात्पर्य–यदि चैत में वर्षा होगी तो सावन के महीने में सूखा पड़ेगा।

(2) दिन में गर्मी रात में ओस।
कहे घाघ वर्षा सौ कोस।।
तात्पर्य–घाघ कवि कहते है दिन में गर्मी और रात में ओस गिरने से वर्षा दूर है।

(3) कर्क राशि में मंगलवारी।
ग्रहण पड़े दुर्भिक्ष बिचारी।।
तात्पर्य–यदि चन्द्रमा कर्क राशि में हो उस दिन मंगल हो और ग्रहण पड़े तो निश्चय अकाल मानो।

(4) जेठ चले पुरवाई।
सावन सूखा जाई।।
तात्पर्य–यदि जेठ के महीने में पुरवा हवा चले तो सावन के महीने में सूखा पड़ेगा।

(5) यदि माघ के माह में जाड़े के बजाय गर्मी पड़े और जेठ में गर्मी की बजाय जाड़ा पड़े व पहल वर्षा तालाब भर जावे तो समझ लेना चाहिए कि इस वर्ष सूखा पड़ेगा।

(6) जब बरखा चित्रा में होय।
सारी खेती जावें सोय।।
तात्पर्य–चित्रा नक्षत्र में वर्षा होने से फसल नष्ट हो जाती है।

(7) कोकी बोले, आय आकाश।
तब नाही वर्षा की आस।।
तात्पर्य–यदि मुर्गी आकाश में उड़कर बोलेगी तो वर्षा नही होगी।

(8) आदि न बरसे आद्रा, हस्त न बरसे निदान।
सुनो घाघ कहे भड्डरी, भए किसान पिसान।।
तात्पर्य–यदि आद्रा नक्षत्र आरंभ में और हस्त नक्षत्र अंत में न बरसे तो किसान पिस जावेंगे।

घाघ की वर्षा की कहावतें

(1) उल्टौं जो बादल चढ़े, विधवा खड़ी नहाय।
घाघ कहे सुन भड्डरी, वह बरसे बह जाय।।
तात्पर्य–हवा से विपरित चलने वाला बादल अवश्य बरसता है खड़ी होकर स्नान करने वाली विधवा की निर्लज्जता से पता चलता है कि साथ भाग जावेगी।

(2) दूर गुड़ासा दूरें पानी।
नियरे छुड़ासा नियरा पानी।।
तात्पर्य–यदि गुड़ासा पक्षी दूर बोले तो वर्षा दूर है यदि पास बोले तो समझ लीजिये की वर्षा आने वाली है।

(3) करियां बदरा डरवावे।
भुवरा बदरा पानी लावे।।
तात्पर्य–काला बादल केवल वर्षा का भय दिखाता है परन्तु भूरा बादल अच्छी वर्षा करता है।

(4) पूरब के बादल पछिया जावै, पतली घॉड़ी के मोटी पकावे।
पछुआ बादर पूरब को जावै, मौटी छाड़िके पतली खावे।।
तात्पर्य–यदि बादल पूरब से पश्चिम की ओर जावे तो वर्षा अच्छी होगी अन्न खूब उपजेगा। यदि पश्चिम की ओर से पूरब जावे तो वर्षा कम होगी।

(5) माघ पूस जो दिखता चले।
तो सावन में लच्छन भले।।
तात्पर्य–यदि माघ तथा पूस में दक्षिण दिशा की हवा चले तो सावन में अच्छी वर्षा होगी।

(6) आषाढ़ आठै अँधियारी जो निकले चंदा जलधारी।
चंदा निकले बादल फोड़, साढ़े तीन महीना वर्षा योग।।
तात्पर्य–यदि आषाढ़ बदी अष्टमी को चन्द्रमा बादल में से प्रकट हो तो साड़े तीन माह तक वर्षा उत्तम होगी।

पावरा आदिवासियों का अच्छी वर्षा का आह्वान

पावरा आदिवासियों के प्रमुख देवता 'बागदेव' एवं इंदल (इन्द्रदेव) भगवान हैं जो पहाड़ों के बीच निवास के कारण बाघ को देव का प्रतीक मानते है। इन्द्रदेव की पूजा के समय कदम्ब वृक्ष की छोटी

छोटी टहनियों को भूमि में गाड़कर पूजते हैं उनका विश्वास है कि कदम्ब की हरी टहनियों को देखकर इंद्रदेव प्रसन्न होकर खूब पानी बरसाएंगे जिससे जीवन में खुशियों की बहार आएगी।

कृषि प्रबंधन जलवायु के अनुसार कहावतें

(1) घाघ कवि कहते हैं– "यदि पानी को रोके रखने वाली क्यारी को तोड़ दिया जावे तो खेत उजाड़ हो जावेगे।"

तात्पर्य–गांव के लोग मोटी–मोटी मेड़ों को तोड़कर/काटकर पतला करते जा रहे हैं जिससे जल का संरक्षण नहीं हो पाता है बहाव हो जाता है।

(2) गांव के किसान दिपावली पर अलसी या अरण्डी तेल का दिया जलाते थे इससे फसलों के शत्रु कीड़े आकर मर जाते थे।

(3) मध्य प्रदेश के भोपाल जिले की बैरसिया तहसील के गांव लालू खेड़ी जसमूर खुर्द के किसान श्री प्रतापसिह मीणा ने खेती करते समय एक अभिनव प्रयोग किया हवन/अग्निहोत्र का जिसके फलस्वरूप उनके खेत की फसलें बिना खाद दिए ही अच्छा उत्पादन देती हैं।

(4) दक्षिण भारत में एक सरकारी बैंक अधिकारी श्री एम के कैलाशमूर्ति ने नौकरी छोड़कर केले की खेती जीरो फार्मिंग की जिसमें बिना कोई खाद उर्वरक वर्षा तक न ड़ालकर फसल का दुगुना उत्पादन प्राप्त किया जिससे जलवायु और पर्यावरण का सही संतुलन बना है।

(5) कृषि कार्य के लिये दक्षिणी हवा कुलक्षणी है।
किन्तु वही हवा माघ पूस में दक्षिण से चले तो सुलक्षणी जानना चाहिए।

(6) कटाई और औसाई के लिए पछुआ हवा सुलक्षणी है।

(7) सावन में यदि पूरब की हवा चलती है तो वर्षा का योग नहीं है।

कृषि संबंधित लोकोक्तियाँ

(1) बुद्ध बृहस्पति दो भले, शुक्र न भला बरवान।
रवि मंगल बोती करे, द्वार न आवै धान।।

तात्पर्य–धान की बुवाई हेतु बुध और गुरु शुभ दिन है। शुक्र अशुभ है। अगर रविवार और मंगल को धान बोया जाएगा तो उपज नहीं के समान होगी ऐसा लोकमत है।

(2) भादो की छंटी चांदनी जो अनुराधा होय।
उबड़–खाबड़ बोय दे, अन्न धनेरा होय।।

तात्पर्य–कवि ने अपनी लोकोक्ति में स्पष्ट कहा है कि भादों में अनुराधा नक्षत्र हो तब अनुपजाऊ धरती में भी धान बो देने से उपज हो जाती है।

(3) आषाढ़ जोतो लड़के ढार सावन भादो हरवा है।
क्वांर जोतो घर का बैल, तब उफचे उनहारे।।

तात्पर्य–किसान को चाहिए कि आषाढ़ माह में साधारण जुताई करें। सावन भादों में उससे अधिक परन्तु क्वांर में इतनी अधिक जुताई करे कि उसे दिन–रात का भान ही न रहे, तभी तो अच्छी और अधिक उपज होगी।

झाबुआ (मध्य प्रदेश) के आदिवासी अंचल के अनुमान/लोकोक्तियाँ

फसल प्रबंधन विषयक

(1) **ताड़ को हांडी लगाई उसमें पड़ी ताड़ी।**
ताड़ी में पड़े कीड़ा तो खेत में होय कीड़ा।।

तात्पर्य–ताड़ वृक्ष में ताड़ी हेतु मटकी लगाने के बाद उस में भरी ताड़ी में यदि कीड़े पड़ें तो समझना कि खेत में कीड़े पड़ेंगे।

(2) खेती के कीड़े मारने के लिए शिव बाबा की मान करते पूजा करते उससे खेतों के कीड़े कम हो जाते हैं।

(3) फसल का फूल गिरने पर इतवार को काले पेंट को खेत में गाड़कर उल्टा टांगने से फूल नहीं गिरता है और राखोड़ा खेत के आसपास डालने से फूल नहीं गिरते हैं।

(4) मक्के को सियाल (भाडली) खाने पर खेत के आसपास इतवार को उल्टा हाथ से लकड़ी घुमाने पर खेत को सियार नहीं खाता है।

वर्षा का आकलन

(5) अकोड़ा का पांटा को कलशे में चिपकाकर देखते हैं कि चिपका है तो अकाल पड़ेगा, कलशा खुल जाता है तो पानी गिरेगा कलशा कम खुलेगा तो कम बारिश होगी।

(6) तीर कमान के दो पिंचा में तवे की राख और एक में दूसरे में लकड़ी की राख लगाने पर दोनों पिंचा बराबर रखने पर और काल की दूकाल की पुकार करने पर यदि काल होगा तो तवे की राख वाला पिंचा चढ़ेगा और ज्यादा बारिश पर लकड़ी की राख वाला पिंचा चढ़ेगा।

(7) कांसे की थाली और मूसल कांसे की थाली में मूसल खड़ा करने पर यदि खड़ा हो तो बारिश ज्यादा होगी यदि मूसल गिर जाता है तो बारिश कम होगी।

मध्य प्रदेश के सतपुड़ा नर्मदा वैली जिला बैतूल होशंगाबाद में परंपरागत देशी कृषि प्रबंधन एवं वर्षा सूखा के अनुमान की लोकोक्तियाँ,

(1) वर्षा की संभावना न होने एवं बुवाई फसल उत्पादन में कमी होने पर बुजुर्ग महिलाएं खेतों में हल चलाती हैं और इन्द्रदेव का आह्वान करती हैं कि वर्षा खूब हो, जल्दी हो।

(2) मेघा पानी दे गुड धानी दे को गाकर मेंढक को बांधकर घर–घर जाकर गेहूँ का दाना लेकर गुड़ लेकर घुघरी गुड़ का प्रसाद महादेव पर चढ़ाते हैं कि वर्षा अच्छी हो।

(3) टिटिहरी नामक पक्षी के अण्डों की संख्या क्या है उस आधार पर वर्षा के महीनों का अंदाजा लगाते हैं। यदि तीन अण्डे दिए हैं तो तीन माह वर्षा होगी।

(4) यदि वर्षा नहीं होती है तो भोर सुबह सूर्योदय के पूर्व ढोलक मंजीरे के साथ प्रभात फेरी निकालकर श्रीराम जयराम जय जयराम पानी बरसे रामै राम की ढींडी यात्रा निकालते हैं।

(5) वर्षा के अच्छे आह्वान के लिए यज्ञ, हवन, महादेव बाबा के मंदिर पर इक्का और सत्ता किया जाता है और वर्षा की मांग की जाती है।

(6) वर्षा एवं पर्यावरण के लिए यज्ञ, हवन किए जाते हैं कि इसके धुएं अग्नि से वर्षा आ जाती है।

(7) यदि चिड़िया धूल में नहाती है तो वर्षा की अच्छी खबर है।

(8) यदि बारिश के पानी में बुलबुले उठते हैं तो भारी बारिश और झड़ी की संभावना है।

(9) शुक्रवार की बादरी रहे शनिचर छाए जो कि बिन बरसे न जाए।

(10) तीतर पंख की बादली यदि छा जावे तो अवश्य ही बतर आ जावेगी। यदि भूरे बादल छावे तो वर्षा की संभावना हो जाती है।

(11) यदि ओले पड़ें और बिजली कड़के तो घर के बाहर हंसिया, कुलहाड़ी सब्बल लोहे का औजार डालने पर बिजली ओले का असर कम हो जाता है।

(12) होली की राख को खेत की मेड़ के आस–पास ड़ालने से और महादेव बाबा के मंदिर का पानी, तालाब बावड़ी का पानी फसल में गुरुवार, बुधवार को डालने से फसलों को कीड़ों के प्रकोप से बचाया जा सकता है।

तुलसीकृत रामचरित मानस में लिखा है–

फूले कांस सकल मही छाई।
जून बरषाकृत प्रकट बुढ़ाई।।

तात्पर्य–जब कांस नामक घास में फूल आ जाते हैं इसका मतलब है वर्षा ऋतु अब खत्म हो चुकी है।

वर्षा खेती सूखा–भविष्यसूचक कहावतों का स्पष्टीकरण।

कृषि प्रबंध से संबंधित

मास	तिथि	लक्षण	फल
चैत (मार्च/अप्रैल)	8 शुक्ल	आकाश से धूल बरसे	जिधर बिजली चमके उधर अकाल पड़ेगा।
चैत	9 शुक्ल	पानी बरसे	वर्षा का गर्भवाल जावेगा।
चैत	10 शुक्ल	बादल बिजली	चौमासे भर वृष्टि।
बैसाख (अप्रैल)	8, 14 कृष्ण	जिस दिशा में बादल हो	उसी दिशा में वर्षा होगी।
बैसाख	1 शुक्ल	बादल और बिजली	अच्छी फसल।
ज्येष्ठ (मई)	3 शुक्ल	वर्षा हो	दुर्भिक्ष पड़ेगा।
ज्येष्ठ	महीनेभर	पूरा महीना तपे	वर्षा की आशा।
ज्येष्ठ	1 से 10 शुक्ल	पानी की बूंदे गिरे	सूखा पड़े।
आषाढ़ (जून)	1 कृष्ण	बादल गरजे	भादों में वर्षा होगी।
आषाढ़	9 कृष्ण	बदल जोर से गरजे	चारों ओर अकाल।
श्रावण (जुलाई)	4 कृष्ण	बादल बरसे	उपज सवाई होगी।
श्रावण	5 कृष्ण	जोर की हवा चले	सूखा।
भाद्रपद (अगस्त)	11 कृष्ण	बादल जमे रहे	चौमासे भर वर्षा न होगी।
आश्विन (सितम्बर)	मलमास हो	शनिवार हो	अकाल पड़ेगा।
कार्तिक (अक्टूबर)	11 शुक्ल	बादल और बिजली	आषाढ़ में अच्छी वर्षा।
कार्तिक	12 शुक्ल	बादल गरजे	चौमासा भर अच्छी वर्षा।
अगस्त (नवम्बर)	8 कृष्ण	बादल दिखाई देवे बिजली चमके	सावन भर वर्षा।
पौष (दिसम्बर)	10 कृष्ण	वर्षा हो	सावन कृष्ण दशमी को वर्षा हो।
पौष	7 कृष्ण	पानी न बरसे	आर्द्रा बरसेगा।
माघ (जनवरी)	7 कृष्ण	बादल बिजली हो	चौमासे भर वर्षा।
माघ (फरवरी)	9 शुक्ल	बादल रहे	भादों में वर्षा अधिक होगी।
फागुन (मार्च)	2 शुक्ल	बादल हो पर बिजली न हो	सावन भादों में वृष्टि (वर्षा)।
फागुन	7,8,9 शुक्ल	बादल, बिजली, हवा, वर्षा	भादों में अमावस को वर्षा।

कृषकों के जलवायु आधारित परंपरागत देशी सामान्य ज्ञान की सीमाएं और बाध्यताएं

(1) देशी परंपरागत ज्ञान का प्रलेखन एवं पाठ्य सामग्री आसानी से लिपिबद्ध एवं प्रचार–प्रसार के अभाव के कारण अपनाने में क्रियान्वयन में सही कसौटी पर नहीं क्रियान्वित हो पा रही है।

(2) परंपरागत देशी ज्ञान को वैज्ञानिक समुदाय द्वारा सही विश्वास के साथ अध्ययन में नहीं लाया जाकर तुलनात्मक अनुसंधान से दूर ही रखा जा रहा है।

(3) आधुनिक कृषि शिक्षा में इस परंपरागत ज्ञान को विषय–सूची में अध्ययन से दूर रखा गया है, जबकि देश की पुरातन मान्यताओं से ही विज्ञान फलीभूत हो रहा है।

(4) शिक्षा एवं अनुसंधान में हिन्दी ज्ञान कोश, संस्कृत ज्ञान कोश, दोहा, चौपाई, कहावतों की भाषा के जानकारों का पूर्णतः अभाव है। वैज्ञानिक शिक्षा अंग्रेजी में और अनुसंधान की तकनीकी रूप में प्रयोगशालाओं में अंग्रेजी शिक्षा भाषा के माध्यम से होना इन पुरातन ज्ञान को भूलता जा रहा है।

(5) कृषकों को कृषि अनुसंधान मौसम की जानकारी का उचित एवं सही संप्रेषण उनकी क्षेत्रीय भाषा में न कर कठिन शब्दावली के प्रयोग को माध्यम बनाया जा रहा है। देशी तकनीकों को संप्रेषण व प्रचार–प्रसार में कोई स्थान नहीं दिया गया है।

(6) देशी ज्ञान का प्रभावीकरण, प्रमापीकरण, क्रियान्वयन को कठिन समझ कर अपनाने में सही तौर पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

(7) सर्वव्याप्त आधार न प्रदान करना एवं भाषायी वैमनस्यता और क्षेत्रीयता के कारण सही प्रचार–प्रसार तथा वैज्ञानिक कसौटी पर अध्ययन कर तुलनात्मक अनुसंधान के लिए सरकारी रवैया न अपनाया जाना।

(8) भारत में जनसंख्या के दबाव को देखकर अधिक–से–अधिक उत्पादन और खाद्यान्न की अधिक मांग के कारण आधुनिक तकनीकी विधियों तथा यंत्रों को अपनाने के कारण परंपरागत देशी तकनीकों को नहीं अपनाया जा रहा है।

(9) किसानों द्वारा जोखिम उठाने की प्रवृत्ति में अधिक लाभ कमाने के कारण केवल वैश्विक प्रणालियों की ओर रुझान का बढ़ना।

(10) वैज्ञानिक अनुसंधान देशी परंपराओं को न अपनाकर विश्व स्तर की समकक्षता और वैश्विक विकास की दौर की ओर ही ध्यान लगाकर अनुसंधान प्रक्रिया अपना रहे हैं एवं अध्ययन, संप्रेक्षण प्रचार–प्रसार आधुनिकता से करने में विश्वास रखते हैं।

कृषकों को जलवायु–आधारित परंपरागत (देशी) सामान्य ज्ञान की तकनीकों को प्रभावकारी बनाने की आवश्यकता।

परंपरागत देशी सामान्य तरीकों के बारे में मौसम विज्ञान के क्षेत्र में कोई भी अनुसंधान कार्य नजर नहीं आता है। मौसम विभाग के विशेषज्ञों को भारत की परंपरागत देशी धरोहर पर अनुसंधान कार्य की पहल करना चाहिए जिससे मौसम की पूर्व जानकारी के आधार पर बाढ़, सूखे तथा अकाल से भारतीय खेती को बचाने की नई प्रौद्योगिकी विकसित हो सके। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने गांव–गांव जाकर घाघ की 412 भडहरी की 195 और भडडली की 81 कहावतों का संकलन किया है तथा संकलित की गई कहावतों के आधार पर वर्ष के सभी महीने में वर्षा के लक्षणों और फल का एक महत्त्वपूर्ण विवरण तैयार किया है जिसकी जानकारी हम सबके लिए जिज्ञासा, का विषय हो सकती है। कृषि जगत में ये कहावतें आज भी किसानों का मार्गदर्शन करती आ रही है। भारत में फसलें उगाने के लिए सिंचाई तो ऋग्वेद काल से होती आई है परन्तु कृषि के लिए वर्षा का महत्त्व उस समय भी उतना ही रहा होगा, जितना

आज है क्योंकि उस काल में कृषि विशेषज्ञों के लिए मौसम विज्ञान में विशेष अध्ययन और अनुसंधान करना आवश्यक होता था। इस कारण भारत में प्राचीन पद्धतियों को अपनाकर कृषि शताब्दियों से होती आई है और इसमें उतार–चढ़ाव आते रहे हैं। यहां के मौसम विज्ञान की पुरानी उपलब्धियां आधुनिक विज्ञान के लिए आज भी कुछ रहस्य बनी हुई हैं और अनुसंधान के लिए भारतीय वैज्ञानिकों का आह्वान कर रही हैं और आगे भी इस दिशा में भारतीय वैज्ञानिकों को अनुसंधान की आवश्यकता रहेगी और परंपरागत (देशी) सामान्य ज्ञान की तकनीकों को प्रभावकारी बनाना हमारी प्राथमिकता होगी।

निष्कर्ष

परंपरागत देशी तकनीकी ज्ञान लोकोक्तियां, कहावतें, हमारे कृषक समुदाय के लिये एक अमूल्य सामग्री है, जिसके आधार पर सीमांत ग्रामीण कृषक, पशुपालन, रेशम कीटपालक, मत्स्यपालक एवं वन आधारित उद्योग धंधों में संलग्न ग्रामीण समाज आज भी इन परंपराओं को देवतुल्य मानते हुए जीवन–यापन के प्रमुख साधनों का सफलतापूर्वक अपनाकर भारत की ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था को संभाले हुए हैं और मजबूत बना रहे हैं। ये देशी ज्ञान वैज्ञानिक समुदाय के लिए उनकी अनुशंसाओं और अनुसंधान के लिये खोज का प्राथमिक साधन सिद्ध होती हैं और अनुसंधान में सहायक हैं तथा आज के आधुनिक विज्ञान के लिए उनके विकास और कृषि उत्पादन के लिए सहायक होना एवं इनका अनुमानों पर खरा उतरना अति आवश्यक है, क्योंकि कृषि और मौसम का चोली दामन का संबंध है। कृषि के लिए वर्षा जरूरी है और जीवन के लिए कृषि। अतएव मनुष्य को सबसे पहले वर्षा विषयक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। वर्षा के बिना कृषि संभव नहीं, अतः वर्षा के लिए वर्षा के स्वामी बादलों की प्रवृत्ति, वर्षा के जल की मात्रा का ज्ञान होना जरूरी है। मौसम विज्ञान का अध्ययन पहले ज्योतिषशास्त्र के अंतर्गत किया जाता था। ऐसे प्राचीन कृषि एवं ज्योतिषशास्त्र के सुप्रसिद्ध ज्ञाताओं में महर्षि पाराशर, वराहमिहिर, घाघ भडडरी के नाम उल्लेखनीय है जिनका ज्ञान और अनुभव आज भी हमारे कृषकों में प्रेरणा और मार्गदर्शन की दृष्टि से लोकप्रिय है। अतः भारत की इस महत्वपूर्ण धरोहर पर अनुसंधान कार्य के पहल की आवश्यकता है, ताकि मौसम की पूर्व जानकारी के आधार पर बाढ़, सूखे तथा अकाल से भारतीय खेती को बचाने की नवीन प्रौद्योगिकी विकसित की जा सके।

संदर्भ

1. इंडियन जर्नल ऑफ एक्सटेंशन शिक्षा, जनवरी –1999 एवं 35 नंबर–1 और 2 टिकाऊ खेती के लिए प्रसार शिक्षा और प्रशिक्षण, पेज नं. 100 श्री कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'।
2. भारत–2008 प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
3. संकलन घाघ और भड्डरी की प्रसिद्ध कृषि कहावतें।
4. बैंक ऑफ इंडिया (खंडवा क्षेत्र) शताब्दी बुक एवं कृषक जगत का सम्मिलित परिशिष्ट कोश।
5. रामचरित मानस ग्रंथ (तुलसीदास)।
6. प्रतियोगिता दर्पण संस्करण / कृषि विज्ञान–10 / 2006।
7. भारतीय लोक संस्कृति में पेड़–पौधे संस्करण 1994–डॉ कमल कांत हिरक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्।
8. बागवानी राजभाषा पत्रिका प्रवेशांक 2008 भारतीय बागबानी अनुसंधान संस्थान बैंगलूर।
9. विज्ञान गरिमा सिंधु, वर्ष 1989 अंक 6 वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

समाज के विकास में विज्ञान की भूमिका

अनीप कुमार,[1] अंशु[2], फूलदीप कुमार[3], तथा संदीप गोयत[4]
जीन्द तकनीकी संस्थान, जीन्द,[1]
पी डी एम अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बहादुरगढ, हरियाणा[2]
रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली[3]
एन.सी. तकनीकी संस्थान, इसराना, पानीपत[4]

विज्ञान की पैदाइश और उसका विकास मनुष्य की पैदाइश और उसके विकास से अलग नही है। मनुष्य पशुओं से अलग प्रजाति के रूप में न सिर्फ शारीरिक भिन्नता के कारण पहचाना जाता है, बल्कि उसकी चेतना भी अलग तरह की तथा अधिक विकसित है। यह चेतना उसे पशुता से बचाती है और मानवीय बनाती है। दरअसल मानवीय होने का अर्थ है, अपने स्वंय से बाहर की दुनिया के प्रति सवेंदनशील होना अपने अलावा दूसरो का भी दुख दर्द समझना और उसे महसूस करना। एक तर्क संगत न्यायप्रिय और समदर्शी समाज बनाना। प्रकृति के साथ भी एक टिकाऊ और स्वस्थ रिश्ता बनाना। पशुता से मानवीय चेतना की और मनुष्य को ले जाने वाली विकास की प्रक्रियाओं में मनुष्य के आदि पूर्वजों द्वारा एक बेहतर और अधिक सहूलियत वाला जीवन पाने की छटपटाहट एक मुख्य कारण रहा होगा। इसी क्रम में उसकी श्रम और विचार की क्षमता में इजाफा हुआ। बोलने की और भाषा गढने की क्षमता विकसित हुई, और वह अन्य पशुओं से अलग चेतनाशील मनुष्य बना।

प्रागैतिहासिक काल में अनुभव और कौशल से सीखे हुए ज्ञान–विज्ञान का इस्तेमाल लोगों ने अपनी व्यावहारिक जरूरतो के लिए तो किया, परन्तु इसका सैद्धातिक स्वरूप समाजो कें संगठित होने और उसमें विचार विमर्श करने के लिए अलग से संस्थांए बनाने से ही संभव हुआ है। आधुनिक विज्ञान का दर्शन लगभग चौदहवी शताब्दी के विमर्श से निकाला। ग्रीक विचारको की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका रही। परन्तु उस काल की स्थापित राज्य और धर्म संता की संस्थाओं ने इसे आसानी से स्वीकार नही किया। धार्मिक कटरपंथियों द्वारा स्थापित तत्कालिन सत्य के उलट विज्ञान के विमर्श से निकले सत्य को प्रतिपादित करने क लिए ब्रूनों को जिंदा जला दिया गया। गैलीलियों को सार्वजनिक रूप से प्रताडित किया गया। विज्ञान के इतिहास में ऐसे अनेक ज्वलंत उदाहरण हैं। विज्ञान के विकास के प्रमाणिक इतिहास का अध्ययन करे तों हम देखेंगे की असंगत अतार्किक और अन्यायपूर्ण राज्य तथा धर्म व्यवस्थाओं के दबावों को झेलते समाजों ने ब्रूनों, कोपरनिकस, गैलीलियों, न्यूटन, डार्विन जैसे कांतिकारी वैज्ञानिक पैदा किये, जिन्होने सामान्य ज्ञान और पूरानी मान्यताओं पर टिके ज्ञान को चुनौती दी। इन वैज्ञानिक सिद्धांतो ने उस दौर के समाज के विकास की दिशा को बहुत गहरे तक प्रभावित किया।

विज्ञान एवं समाज के इतिहास का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि कोपरनिकस, ब्रूनों, गैलीलियों केपलर और न्यूटन की स्थापनाओं ने ब्रहमांण्ड और मनुष्य को नियंत्रित करने वाली दुनिया की पारम्परिक समझ पर अनेक सवाल खडे कर दिये। भले ही इन नई बातों को सबने तत्काल नहीं स्वीकार किया, और राजतंत्र एवं पुरोहिततंत्र ने तो इन नई अवधारणाओं का घोर विरोध भी किया, परन्तु समाज के बीच से ऐसे अनेक लोग आगे आने लगे, जिनकी चेतना को इन नए विचारों ने झकझोर दिया। उन्होने

paper 654.pmd 238 11/9/2013, 10:41 PM

राजा पुरोहित और धनकुबेरों के गठंबंधन का पारम्परिक ढांचा पहचानना शुरू कर दिया । उन्होने यह समझ लिया कि यह ढांचा शेष श्रमजीवि समाज पर अपना नियंत्रण कायम रखने की साजिश है। उनके श्रम पर ऐश करने की शासकों की रणनीति को जनता समझने लगी, और तब शासको द्वारा लोगों पर लादे गये पारम्परिक नकली ज्ञान से जनता में से पैदा हुए बुद्धिजीवियों का मोह भंग होना शुरू हो गया। नए विचारों की पैदाइश ने समाज के पारम्परिक ढांचे को हिलाना शुरू कर दिया। ईश्वर के नाम पर थोपे गए पुरोहित ज्ञान के निहित स्वार्थ को पहचानने के बाद लोगों ने नए विचारकों और नए विचारों को अपनाना शुरू कर दिया। आधुनिक और वैज्ञानिक समाज के निर्माण की शुरूआत इन्हीं बीजों से हुई। डार्विन, लैमार्क, लुईस पाश्चर जैसे यूरोपिय प्रकृति विज्ञानियों की स्थापनाए, कि जीव यहीं पृथ्वी पर क्रमशः भौतिक और जैविक प्रकियाओं द्वारा पैदा हुआ है, न कि किसी अमूर्त अदृश्य ईश्वर की रचना है, विज्ञान और समाज के विकास में बडी घटनांए थी। इन्होने मनुष्य की चेतना को गहरे तक प्रभावित किया। अलौकिक रहस्यमयी शक्तियों से लोगों का भय कम हुआ और उनमें से राजा पुराहित और धनकुबेरों की तिकडी के अमानवीय शासन को ईश्वर की कृपा की बजाय मनुष्य की तिकडम की उपज मानने वालो की संख्या बढने लगी। भले ही ऐसे लोग समाज में थोडे थे, नए यूग के सुत्रपात के लिए यह एक बडा कारण था इस तरह हम देखते हैं कि आधुनिक विश्व के विकास में विज्ञान की चेतना ने नियामक भूमिका निभाई। वरना पूरी दूनिया में राजतन्त्र सामन्तवाद की जगह लोकतंत्र कायम नहीं हो पाता। पिछले 25–30 वर्षो में विज्ञान की खोजो ने जो दिशा पकडी है उसने मनुष्य और मशीनो के इस्तेमाल की नई व्याख्याएं दी है। एक तरफ तो विज्ञान ने सत्य के कई, नए आयाम उद्घाटित किये है, जीवन तथा जगत के अन्तर्सम्बन्धों पर नई रोशनी डाली है। तथा एक विश्व व्यापी दर्शन के तौर पर मनुष्य सत्ताा के केन्द्र में स्थापित हुआ है, तो दूसरी और जनता में विज्ञान को लेकर अनेक भ्रांतिया विकसित हुई है। विज्ञान को इसके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक सदर्भो से अलग हथियार और बाजार का एक उपकरण मात्र बना दिया गया है। इस तरह से इस प्रवृति के चलते विज्ञान के दर्शन की सार्वभौमिकता तार्किकता सत्य को उदघाटित करने की खूबी, सर्वजनहिताय भूमिका और विश्व व्यापी मानसिक आर्थिक और सामाजिक विकास की क्षमताऐं धुमिल हो रही हैं। विज्ञान के तकनीकिकरण को ही फोकस में रखने का एक नतीजा यह है कि इसका फायदा सिर्फ कुछ व्यक्तियों या समूहों के हाथों में सिमटता जा रहा है। शेष बडा समाज सिर्फ बाजार बन कर रह गया है। आम जनता उभोक्ता है खरीददार है और मनुष्य के रूप में उसकी स्थिती बहुत कम हुई है। विज्ञान पर नियंत्रण करने वाली ताकतें विज्ञान के तकनीकीकरण को चमत्कृत कर देने वाली चीजो के रूप में पेश कर रही है। अपनी बिक्री बढाने के लिए ये ताकते पूरी दुनिया को एक खुला बाजार बनाना चाहती है। जहां कोई वैधानिक रोक टोक न हो और वे दुनिया भर के लोगों को अपने उत्पादों का खरीददार बना पाये। इसके लिए वे तमाम प्रचार माध्यमों पर नियन्त्रण कायम करके लोगों के दिमागों को प्रभावित कर रही हैं। इसके अतिरिक्त वे सत्ता एवं समाज के प्रभावी एवं प्रबुद्ध लोगों को विभिन्न तरीको से प्रभावित करके इस अन्ध उपभोक्तावाद को एक लॉजिक देने की कोशिश भी कर रही हैं। पागलपन के दौरे की तरह पैदा होने वाले इस अंध उपभोक्तावाद पृथ्वी पर लंबे जैविक एवं सामाजिक विकास से समृद्ध हुए मानवीयता के विशिष्ट गुणों को खतरे में डाल दिया है। कल्पना करिए एक ऐसे अंध उपभोगी समाज की जो अमानवीय हो जगंली पशुओ की तरह क्रुर और हिसंक हो इतना मतलबी हो कि सिर्फ अपने लिए ही जीता हो। विडम्बना यह है कि आधुनिक समय में वह समाज पशुवत नहीं कहलाना चाहेगा इसलिए व्यक्तिवाद, उपभोक्तावाद, साम्राज्यवाद और सामंतवाद जैसी पूरातन आदिम प्रवृतियों की नयी व्याख्याएं गढ़ी जा रही हैं और धार्मिक उन्माद और अन्ध राष्ट्रवाद का साम्राज्यवादी पूंजी के साथ नया गठजोड़ कायम हो रहा है।

paper 654.pmd 239 11/9/2013, 10:41 PM

विज्ञान का दर्शन आज के समाज में सबसे आसानी से स्वीकार होने वाला दर्शन है। इसलिए इस पूरी कवायद को विज्ञान के साथ जोडकर किसी अति आधुनिक दर्शन की तरह पेश किया जा रहा है। कैसा होगा वह समाज जिसकी नींव डाली जा रही है। यदि इन गैर मानवीय प्रवृतियों के विकास और प्रसार को समय रहने रोका नही गया तो जो समाज बनेगा उसकी धुंधली तस्वीर आज भी बनायी जा सकती है। मध्यवर्ग के अधिकांश लोग और वैज्ञानिक शोध एवं शिक्षण से जुडे लोग भी दुर्भाग्यवंश अपने दायित्वों को सामाजिक और नैतिक प्रश्नों से अलग करके देखते है। वे सोचते है कि उनका काम तो ज्ञान की खोज या ज्ञान का प्रसार है। इनका अच्छा उपयोग होगा या बुरा, इससे उनको मतलब नहीं है। पर यहा यह रेखांकित करना उचित रहेगा कि किसी भी ज्ञान को ऐतिहासिक सामाजिक सांस्कृति आर्थिक और भौगोलिक परिप्रेक्ष्य से अलग करके देखने का नजरिया या उससे सार्वभौमिक दर्शन से काट कर देखने की दृष्टि न तो बौद्धिक विचार प्रक्रिया की कसौटी पर खरी उतरती है न ही वैज्ञानिक तो क्या वे वैज्ञानिक या विज्ञान शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका ठीक तरह से निभा रहे हैं। यह एक विचारणीय प्रश्न है। दूसरी बात यह है कि वे जिस मध्यवर्ग के हिस्से है वह खुद और इस तरह वे स्वयं तथा उनका अपना परिवार भी विज्ञान के बाजारीकरण से उपजी त्रासदियों का शिकार उतना ही होगा जितना दूसरे लोग सिर्फ अधिक से अधिक मुनाफे के दर्शन पर विकसित हो रही निरंकुश बहुराष्ट्रीय बाजार व्यवस्था विश्व भर से छांट बीन कर मध्य वर्ग के थोडे से लोगों को अपने उत्पादों को रोजगार तो दे सकती है कुछ अधिक कुशल लोगों को मोटी तनख्वाह भी दे सकती है। परन्तु मध्यवर्ग का बडा हिस्सा उसका खरीददार है, उपभोक्ता है इससे अन्य कुछ लेते रहना है देना नहीं है और न सिर्फ निम्नवर्ग के गरीब और साधनहीन लोग बल्कि मध्यवर्ग के भी अधिकतम लोग इस त्रासदी के शिकार होगें। आज यह बाते लोग देख नही पा रहे हैं। यह एक बहुत दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है।

इस तरह हम देखते है कि आधुनिक और औद्योगिक समाज के बीच अपना भरोसा कायम करने व बावजूद विज्ञान की सामाजिक भूमिका साफ नही हो पा रही है। समाज के विकास के जिस दौर में राज्यसत्ता और धर्मसत्ता द्वारा कही जाने वाली बातों पर लोग आंख मूंद कर विश्वास करते थे उस दौर में अच्छे जीवन की सभी सहुलियतें धर्म व्यवस्था के शीर्ष पर बैठे मठाधीश राज्य व्यवस्था के शीर्ष पर बैठे सामंत तथा अर्थव्यवस्था शीर्ष पर बैठे पूंजीपति के पक्ष में जाती है। पर विज्ञान के दर्शन के पुख्ता होने के साथ साथ तर्क करने सवाल उठाने और दबे कुचले प्रताडित तबकों द्वारा विरोध तथा प्रतिरोध करने की स्थितियां पैदा हुई और इस तरह वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास ने पूरातन समाज को आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विज्ञान के दर्शन और इसकी भीतरी ताकत ने आम लोगों के बीच सत्ता के शोषण और अत्याचार के खिलाफ उठे संघर्ष को खडा करने में स्पष्ट अन्तः दृष्टि दी, सैद्धांतिक तर्क दिये। आधुनिक समाज के निर्माण में यह बात मील का पत्थर साबित हुई। विज्ञान के इस दर्शन को और वैज्ञानिक नजरिये को दरकिनार करने से आज के इस नये दौर में विज्ञान की सामाजिक भूमिका प्रशनो के घेरे में है। आधुनिक समाज में सत्ता के खेल में विज्ञान की जितनी भागीदारी बढी है जनता की मुक्ति में नहीं। ऐसा क्यो ? यह जानने के लिए विज्ञान का इस्तेमाल करने वाली तमाम संस्थाओं की मंशा उनका चरित्र और उन पर नियंत्रण के मसले कों समझना होगा। इस दौर में एक बार फिर से विज्ञान के सामाजिक विमर्श को समृद्ध करना होगा। वर्तमान में चल रही प्रवृतियों और दिशाओं का विश्लेषण एवं उनके प्रभावों की विवेचना करनी होगी।

दर्शन के रूप में जहां विज्ञान सत्य तर्क, और सार्वभौमिकता का दर्शन है तथा तर्क सम्मत प्रमाणिक अन्तर्सम्बन्धों वाला एवं तथ्यों पर आधारित न्याय संगत आधुनिक समाज की आधार भूमि बनाता है, तकनीक के रूप में वह एक दुधारी तलवार है जो आगे पीछे दोनों ओर वार कर सकता है। इसलिए इसका तकनीकी इस्तेमाल करते समय स्पष्ट दिशा और सजग संचालन जरूरी है। विज्ञान के नियंत्रण

paper 654.pmd 240 11/9/2013, 10:41 PM

और प्रबन्धन के तत्व इसके दर्शन के भीतरी भी निहित है और बाहर भी। इनकी तहों को परत दर परत खोलना होगा।

विज्ञान के नियंत्रण और प्रबंधन प्रश्नो पर विचार करे तो हम देखते है कि ज्ञान की दूसरी धाराओं की तरह विज्ञान भी राज्य सत्ता और पूंजी सत्ता द्वारा इस्तेमाल होता रहा है। देश के भीतर का परिवेश हमारी पहली चिंता है। हमें विचार करना चाहिए की वर्तमान में भारतीय समाज में जो घटनाऐं हो रही हैं वे क्या देश समाज और आम जनता के हित में हैं और विज्ञान किन दिशाओं में तथा किन प्रयोजनों में इस्तेमाल हो रहा है। इसका नियंत्रण किसके हाथों में है और विज्ञान के उपयोग की दिशांए क्या है। जो कुछ चल रहा है वह कितना हमारे हित में है और कितना हमारे विरूद्ध है, एक नागरिक, एक शिक्षक एक वैज्ञानिक, एक किसान एक मजदूर, एक कर्मचारी, आदि के रूप में हमें क्या करना चाहिए। हमें हस्तक्षेप के बिन्दुओ को पहचान कर अपने विरूद्ध हो रहे ज्ञान विज्ञान के इस्तेमाल को रोकना चाहिए। यही हमारे हित में है। आम जनता और उसके समाज के हि में है। देश के हित में है।

हम देखतें हैं कि आज भारतीय समाज में कई अमानवीय और जन विरोधी घटनाऐं घट रही हैं और विज्ञान भी कहीं न कही ज्ञान के रूप में, साख के रूप में, तकनीकि सहुलियतों के रूप में, या प्रचार तन्त्र के रूप में इन प्रवृतियों और घटनाओं में इस्तेमाल हो रहा है। देशी विदेशी साम्राज्यवाद ने बहुत बडे पैमाने पर नये दौर में पूरे देश में कब्जा जमा लिया है। धनकुबेरों का कब्जा सभी तरह की संस्थाओं पर (मसलन शिक्षा, शोध और उत्पादन वितरण के स्त्रोतों पर) बढता जा रहा है और इस दौर में शासन प्रशासन और उद्योगपति/व्यापारी का गठजोड एक नियामक शक्ति के रूप में कायम हुआ है। विज्ञान की उपलब्धियों का इस सत्ताधारी गठजोड ने खुब इस्तेमाल किया है और अपनी ताकत बहुत बढा ली है । मीडिया पर भी इसी गठजोड का कब्जा है । और इस दौर में निजिकरण के दर्शन को लेजिटमेट करने में मुख्य धारा का मीडिया तंत्र पूरी रणनीति के साथ सामने है। निजिकरण के शोषण से देश को बचाना आज एक प्रमुख चुनौती है। दूसरी बडी घटना हुई है, धर्म के फासीवाद इस्तेमाल की। बहु संख्यकवाद को एक बर्बर ताकत के रूप में देखने की मध्ययुगीन प्रवृति को बडे लुभावने तरीके से समाज में प्रस्तुत किया जा रहा है और इसे राष्ट्रवाद कहा जा रहा है। जनतंन्त्र की तरह ही धर्मनिरपेक्षता और लिंग समानता जो आधुनिक विकसित समाजों की एक प्रमुख पहचान है और जिसे हासिल करने के लिए मनुष्य और इसके समाजों ने लम्बा संघर्ष किया है, आज के आधुनिक भारत में बहुत भयानक सक्रमंण से गुजर रहे हैं। धर्म और फासिज्म का अन्तर मिटाया जा रहा है और इस फासिस्ट स्वरूप ले रहे धर्म को विज्ञान का नाम लेकर एवं इसकी वैशाखी लगाकर खडा किया जा रहा है। आज के विज्ञान आंदोलन को इस जनविरोधी फासिस्ट धर्म की सत्ता से और इसे लेजिटमैंट करने के लिए विज्ञान से गठजोड के पेंच को खोलकर जनता के सामने इसका असली चेहरा लाना होगा।

एक समस्या विज्ञान को एक जटिल और इलीट ज्ञान की तरह देखने की भी है। आज की तमाम पाठय पुस्तकें इस विशिष्ट ज्ञान के रूप में परिभाषित करती है। यह विशिष्ट क्या है। अगर विज्ञान लोगों के बीच पैदा हुआ, लोगों की खातिर इसका स्वरूप कायम हुआ, और लोगों के लिए यह एक आर्थिक सामाजिक और उन्हें सहूलियतें देने वाले दर्शन और ज्ञान के रूप में पहचाना गया, तो इसे विशिष्ट क्यों रखा जाये। यह भी लोगों के बीच एक ज्ञान बल्कि सामान्य ज्ञान की तरह जाना, समझा और परखा जाना चाहिए। हर ज्ञान की तरह विज्ञान भी एक हद तक सामान्य है। यह भी उस रूप में विशिष्ट है जिसमें ज्ञान की गहराई में उतर कर अध्ययन विचार विमर्श और विश्लेषण से इसकी नई दिशायें एवं इसके नये अन्तर्सम्बन्ध खोजे जाते है। जो मनुष्य और उसके समाज को और उसकी मानवीयता को नई ऊचाईयां दे सकें। इस विशिष्टता को इसकी जटिलता के रूप में पेश करना गलत है। जटिलता

paper 654.pmd 241 11/9/2013, 10:41 PM

तो पहचान न होने से बनती है। जैसे जैसे लोगों के बीच विज्ञान की वास्तविकता की पहचान बनेगी वैसे वैसे इसका सरल और सुबोध स्वरूप सामने आता रहेगा। इसको अनावश्यक रूप से विशिष्ट और जटिल कह कर प्रचारित करन इसे आम लोगों से दूर रखने की साजिश है। लोगों का विज्ञान के साथ एक सहज रिश्ता बने इसके लिए जरूरी है कि विज्ञान का एक साफ और स्पष्ट सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक विमर्श खडा हो सके जो उन्हें अपनी जिंदगी से अपनी मुश्किलों से अपने सपनों से और अपने भविष्य से जुडा लगे। जो उनकी समस्याओं और सपनों से सबोधित करता हो। जो उन्हे अपने बीच का और भरोसे के लायक लगे। जो प्रमाणिक लगे और प्रमाणिक लोगों द्वारा संचालित हो फिर संवाद के तरीके लोगों के माकुल हो उनसे विषय और संवाद दोनो स्तरो पर एक गर्म जोशी भरा और वास्तविक चिंताओ और चुनोतियों के साथ जुडने वाला विज्ञान ही उनका अपना विज्ञान होगा। स्थानीय संदर्भो बोलियों ओर भाषाओं में विज्ञान का विमर्श बहुत कम हो पाया है। हिंदी और उतरी भारत की भाषाओं में और भी कम इसके बढाने की बहुत जरूरत है। विज्ञान के इस तरह के जन पक्षीय विमर्श की आज पहले से अधिक आवश्यकता है। इसके मानवीय और सामाजिक सरोकारों को विकसित करने की जरूरत है। जिससे एक बेहतर किस्म की मानवीय सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय परिस्थितियां पैदा हों। विज्ञान की दिशा उसके विमर्श की दिशा उसके शोध एवं प्रसार की दिशा ऐसी हो जो पर्यावरण का विनाश न करे, बल्कि पर्यावरण प्रकृति के साथ एक गहरा आत्मीय और टिकाऊ रिश्ता बनाये।

परमाणु ऊर्जा का ज्ञान परमाणु बम बनाने के लिए नहीं बल्कि मनुष्य के लिए सहुलियतें पैदा करने में इस्तेमाल हो। जैनेटिक और जैव तकनीकि रिसर्च भविष्य में विकृत मनुष्य या गुलाम पैदा करने के लिए न हो बल्कि लोगों की समस्याओं को हल करने के लिए हो। विज्ञान का दर्शन लोगों की चेतना का हिस्सा बने। वे चीजो को उनके तमाम आयामों और तहों के साथ देखने और समझने के लिए इससे प्रेरणा लें। तर्क करना विश्लेषण करना, विमर्श करना संवाद करना विवेचनात्मक नतीजे निकालना उनकी संस्कृति का हिस्सा बने। वे अपनी बदहाली एवं तकलीफ देह स्थितियों के कारणों को समझ पायें और उनसे निकलने के लिए साथ साथ मिल कर प्रयास करें। एक दूसरे का सहारा बनें यह विज्ञान ही जन विज्ञान है। यह विज्ञान के ज्ञान का सार्थक एवं मानवीय उपयोग है।

विज्ञान और समाज के अन्तर्सम्बन्धों पर समय समय पर दुनिया भर में विचार विमर्श करने की कोशिशें होती रही हैं। भारत में भी इसी विमर्श से विज्ञान का एक जनपक्षीय स्वरूप भी कायम हुआ है, जो विज्ञान के दर्शन और इसके इस्तेमाल को आम लोगों से जोडना चाहता है दरअसल विज्ञान का दर्शन और इसके तकनीकी कारण के तरीके लोगों के बीच से ही निकलकर एक दौर में प्रयोगशालाओं और बाजार तक गये। जब पूंजी और बाजार के खिलाडियों ने विज्ञान की बहुआयामी ताकत को पहचान लिया तो इसको लोगों से अलग करके अपने कब्जे में लेने की कवायद शुरू कर दी, और इसी का नतीजा है कि आज इन शक्तियों ने एक तरफ तो सार्वजनिक संस्थाओं को (जिनमें अभी भी एक हद तक काम करने की स्वतंत्रता और डेमोक्रेटिक प्रणाली कायम है) नष्ट करना तथा छिन भिन्न करना शुरू कर दिया है, तो दूसरी और पूर्ण नियंत्रण वाले संस्थान स्थापित करने शुरू कर दिये हैं। ताकि आम लोगों से विज्ञान का बचा खुचा रिश्ता भी खत्म किया जा सके। इन ताकतो ने जनपक्षीय विज्ञान के खिलाफ कई तरह के अन्तर्राष्ट्रीय, बहुराष्ट्रीय और धर्मान्धता की समर्थक की ताकतो के साथ गठजोड कायम कर लिया है। विश्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष आदि संस्थाओं पर इनका शिकंजा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के रूप में इन्होने पूंजी का विशाल साम्राज्य कायम किया है और दुनिया को ग्लोबल विलेज यानि एक वैश्विक गांव कहकर ये लोग सारे प्राकृतिक और मानवीय संसाधनो का बाजारीकरण कर रहे हैं, दोहन कर रहे हैं, उपभोग कर रहे हैं। जनविरोधों को दबाने के लिए सेना की विध्वसक ताकत का इस्तेमाल किया जा रहा है। इसके लिए युद्ध लेजिटमेसी कायम करने की कवायद भी ये ताकतें कर

paper 654.pmd 242 11/9/2013, 10:41 PM

रही है। विज्ञान के जनपक्षीय विमश से इसके उद्देश्य और इन प्रवृतियों को खतरा है, इसलिए वे इस तरह की कोशिशों को तोडने और समाप्त करने की कोशिश करते रहते हैं।

पिछले कुछ वर्षो में भारत की उदारीकरण और बाजारीकरण वाली अर्थव्यवस्था के माध्यम से इन्होने अपनी कोशिशें अधिक नियोजित और संगठित की हैं और यहां की सत्ता से इनका गठजोड बहुत पुख्ता हुआ है। इनके द्वारा संचालित तमाम सुधारों के केन्द्र में भारत और तीसरी दुनिया के ज्ञान विज्ञान और उत्पादन के ढांचो को तहस नहस करना, डिसइन्वेस्टमैंट करना सार्वजनिक संस्थानों को प्राइवेट समूहों के हाथों बेच देना मुख्य है। ये लोग इन संस्थानों में सुधार की बात इनके संचालन में पारदर्शिता की बात, जनतांत्रिक नियंत्रण की बात नहीं करते। न इन देशों की सरकारें ही इस तरह की बात करती हैं। एक बने बनाएं ढांचें को औने पौने दामों पर बेचकर हाथ झाड लेने में बेचने वालों के बडे लाभ निहित होते हैं। खरीद फरोख्त में इन ताकतों का मन अधिक लगता है। इन ढाचों को सबसे लिए सुलभ एवं उपयोगी बनाने एवं इनके कुशल संचालन की कोशिश से जनता को तो लाभ होगा। शायद सत्ता को उतना लाभ न मिले इसलिए वह इन बाजारीकरण की शक्तियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर खडी है। विज्ञान के दर्शन और उसके सार्वभौमिक जनपक्षीय एवं सामाजिक स्वरूप को सैद्धांतिक और अव्यावहारिक बाते कहकर खारिज करने और नकारने की कौशिशे हो रही है। ये विज्ञान को कुछ नुस्खों तक सीमित रखना चाहते है। आज विज्ञान के सारे विमर्श को इन्होने मात्र इन्फोरमेशन टेक्नॉलाजी और बायोटेनालॉजी की तकनीकों के विस्तार एवं इनके बाजारीकरण तक सीमित कर दिया है। हमारी देशी सत्ता एवं मीडिया का विमर्श भी जोर शोर से इस प्रचार में शामिल है। कि भारत इन क्षेत्रो में विस्तार करके ही दुनिया में अपनी श्रेष्ठता साबित कर सकता है। ज्ञान विज्ञान को इस तरह खण्डित और भ्रमित करके देखना सत्ता और बाजार के लिए तो उपयोगी हो सकता है जनता के लिए नहीं। जनता की त्रासदी जनता की मुश्किलें इस तरह के इकहरे एवं बाजारी विज्ञानवाद से बढेंगी कम नहीं होंगी। सारी पूंजी इन्ही क्षेत्रों में लगेंगी शोध एवं प्रसार की दिशांए इधर ही होंगी। बाकी क्षेत्र बाकी लोगों का कौशल नष्ट होगा। बाकी ढांचे बिखर जायेंगें, अब तक जतन से हासिल किये गये मानवीय कौशल नष्ट हो जायेंगें और अचानक एक दिन गुब्बारा फुटेगा और हम मटियामेट हो जायेंगें।

यह कैसी बुद्धिमानी है कैसा विकास है अभी हाल ही में इनफोरमेशन टेक्नालॉजी का ठूस ठूस कर फुलाया हुआ गुब्बारा फूट गया और अचानक त्राहि त्राहि मच गयी। फिर बायोटेक्नालॉजी, जेनेटिक और बायोमेडिकल क्षेत्रों के गुब्बारे में हवा भरी जाने लगी है। विज्ञान की ताकत को इस तरह संकरा और अलौकिक बना देना एक जनविरोधी और गैर वैज्ञानिक प्रवृति है। इसे समझने की जरूरत है। सूचना क्रांति ताकतवर और समृद्ध लोगों के लिए तो जरूर बहुत उपयोगी है। टेलीविजन और इन्टरनेट के जरिए दुनिया के किसी सुरक्षित कोने में बैठ कर पूरे विश्म में लोगों के दिमागों को उनके अपने घरों में बैठे बैठे ही नियत्रिंत किया जा सकता है। बाजार के विस्तार में एवं अंध उपभोक्तावाद का जुनून कायम करने में साम्राज्यवादी पूंजीवादी गठजोड इसका भरपूर इस्तेमाल कर भी रहा है।

यह संचार क्रांती उन लोगों को तो सहुलियते प्रदान करती है, जो इसकी कीमत चुका सकते हैं पर दुनिया भर और खासत्तौर पर तीसरी दुनिया के गरीब लोगों को जिनकी संख्या बहुत बडी है, कुछ भी राहत नहीं देती। उनकी जीविका के साधन घट रहे है। नौकरिया कम हो रही हैं। खेत बंटते जा रहे है और उनका जीवन मुश्किल होता जा रहा है। बायो मैडिकल रिसर्च और जैव तकनीकी के क्षेत्र में हुई प्रगति ने एक तरफ बहुत सी औद्योगिक एवं स्वास्थय संबंधी सहुलियते पैदा की हैं पर ये सहुलियते इतनी महंगी है कि आम आदमी दवाओं के बिना और इलाज के बिना मर रहा है। और बायोमैडिकल रिसर्च का शोर आसमान छू रहा है। एक तरफ उम्र बढने और अमरता की और बढाने की कवायद हो रही है तो दूसरी और सरकारी अस्पतालो की खस्ता हालत के चलते दवाओं और

paper 654.pmd 243 11/9/2013, 10:41 PM

इलाज के अभाव में दुनिया की बडी आबादी दम तोड रही है किसानो के कब्जे से बीजों का कब हटाकर औद्योगिक घरानो का कब्जा कायम हो रहा है। एक तरफ अनाज के गोदाम भरे पडे है और दूसरी तरफ कई इलाको में और कई परिवारों में लोग भूखों मर रहे है। खाद और कीटनाशकों के अंधा धुंध प्रयोस से जमीन बंजर हो रही है लोग बीमार हो रहे हैं। औद्योगिक कचरा जमीन पानी, हवा तथा खाने पीने की चीजों में न जाने कितने तरह की जानी अनजानी जहर की थैलियां भरता जा रहा है। नई नई बीमारियां पैदा हो रही है, और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं बेहाल हो रही हैं। यह इक्कीसवीं शताब्दी की शुरूआत का एक दृश्य है और विज्ञान का सामाजिक विमर्श यही से शुरू करना होगा। इस दौर में उन गम्भीर वैज्ञानिकों के लिए अपने अस्तित्व को बचाए रखने का संकट पैदा हो गया है जो स्वतंत्र रूप से आम जनता के लिए विज्ञान का अध्ययन शोध एवं प्रसार कर रहे हैं। उनका अध्ययन और शोध खतरे में है क्योंकि उसके लिए धन और समर्थन देने वाले आर्थिक सामाजिक ढांचे नष्ट हो रहे हैं, और उनकी जगह बाजार और मुनाफे को ध्यान में रखकर चलने वाले प्राइवेट ढाचें बन रहे है जिन पर बाजार की शक्तियों का नियंत्रण है। वे विज्ञान को अल्प दृष्टि से इस्तेमाल करने की प्रवृति से प्रेरित हैं, इन्हीं दबावों के चलते विकास के बेहतर मॉडल को विज्ञान प्रभावित नहीं कर पा रहा है। इस तकनीकवाद ने दरअसल मनुष्य का बहुत अवमूल्यन किया है। तकनीक को इतनी बड़ी नियामक शक्ति के रूप में देखा जा रहा है। बायोमेडिकल में होने वाली नई नई खोजों का लाभ भले ही आम लोगों को नहीं हो रहा है बहुत बड़ी संख्या में औरतों और गरीब लोगों का शरीर, विशेष तौर पर तीसरी दुनिया में एक प्रयोग और इस्तेमाल की चीज बना दिया गया है।

हर युग और काल में एवं हर देश एवं समाज में विज्ञान की एक दूसरी धारा भी लगातार सक्रिय रही है। यूरोपीय नवजागरण एवं उसके बाद के नवजागरणें में इसका एक संगठित स्वरूप निकल कर आया है। यह धारा है विज्ञान को उसके पूरे कद में देखना एवं सभी लोगों के हित में साधना विज्ञान का दर्शन इसका तकनीकी इस्तेमाल एवं सत्य तर्क और प्रमाण के आधार पर कायम किये गये इसके सिद्धात मनुष्य के समाज को अधिक न्यायप्रिय अधिक साधन सम्पन्न और अधिक चेतनाशील बनाने में बहुत ही सार्थक एवं उपयोगी भूमिका निभा सकते हैं। लोगों के लिए अनुकूल पर्यावरण उचित भोजन, वस्त्र, मकान, दवांए मनोरंजन के साधन, उचित ईलाज और शोषण विहीन सम्मानजनक जिन्दगी देने में विज्ञान की जो ताकत है उसका इस्तेमाल करने की वकालत एवं इसके जनविरोधी स्वरूप को समझकर इसका विरोध करने की कोशिश भी लगातार हो रही है। इसके लिए नये सामाजिक नवजागरण की जरूरत है।

paper 654.pmd 244 11/9/2013, 10:41 PM

लोक प्रशासन–कला या विज्ञान?

नरेश कुमार लोर[1], फुलदीप कुमार[1], तथा विनोद कुमार[2]
[1]*रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र, दिल्ली*
[2]*ग्राफिक प्वाइंट, दिल्ली*

व्यवहार में, लोक प्रशासन का अस्तित्व उतना ही पुराना है जितनी पुरानी हमारी सभ्यता, लेकिन सिद्धान्तः विषय के रूप में इसकी शुरूआत 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में। यह राजनीति विज्ञान से पृथक हुआ तभी से इसके अस्तित्व पर संकट शुरू हुआ और तभी से इस अवधारणा को भी बल मिला कि इसे विज्ञान में रखा जाए या कला में।

लोक प्रशासन एक कला के रूप में

प्रशासन से अभिप्राय किसी विशेष उद्देश्य को पूरा करने हेतु विभिन्न व्यक्तियों से काम करवाना और काम लेना है। इसमें क्रिया पक्ष की प्रधानता है, प्रशासन में वही व्यक्ति सफल हो सकता है जो दूसरों से काम करवाने का ढंग जानता हो। अतः प्रशासन एक कला है। कला के पूर्ण विकसित रूप को प्राप्त करने के लिए जहाँ ज्ञान, अनुभव, योग्यता, चार्तुय, लगन परिश्रम एंव युक्ति की जितनी जरूरत है, वहीं अभ्यास की भी उतनी ही जरूरत है।

लोक प्रशासन के 'कला' होने के पक्ष में तर्क

- कला के अन्तर्गत सत्यम शिवम सुंदरम की अभिव्यक्ति
- सर्वमान्य सिद्धान्त
- विकास की प्रक्रिया
- परिवर्तनशीलता
- अभ्यास की आवश्यकता
- प्रत्येक कला का अपना माध्यम होता है।
- प्रत्येक कला में सृजनात्मक अभिव्यक्ति होती है।
- विशेष रूचि एंव गुण
- सिद्धान्त एंव व्यवहार के अर्न्तसम्बंध का बोध कला है।

लोक प्रशासन विज्ञान के रूप में

विज्ञान ज्ञान की वह शाखा है जो तथ्यों को व्यवस्थित रूप में संजोती है ओर सामान्य नियमों को खोज निकालने का प्रयत्न करती है। सर्वप्रथम यह तथ्यों को एकत्रित करती है, और उनके पारस्परिक कार्य–कारण सम्बंध प्रदर्शित करते हुए कुछ मान्य निष्कर्षों तक पहुँचने का प्रयत्न करती है।

लोक प्रशासन को विज्ञान की श्रेणी में लिया जा सकता है। लोक प्रशासन के जनक वुडरो विल्सन ने सन् 1887 में ही इसे 'प्रशासन का विज्ञान' कहा था। लोक प्रशासन की वैज्ञानिकता का विचार करते समय इसे तीन वर्गों में बांटा जा सकता है।

- यह एक विज्ञान है, अन्य प्राकृतिक विज्ञानों की तरह।
- लोक प्रशासन कभी विज्ञान नहीं बन सकता।
- हम विज्ञान नही है, लेकिन होकर रहेंगे और यह सम्भव है।

लोक प्रशासन के 'विज्ञान' मानने के पक्ष में तर्क

- ज्ञान का क्रमबद्ध अध्ययन
- निश्चितता का अंश
- वैज्ञानिक पद्धति का विकास
- सिद्धान्तों का विकास
- भविष्यवाणी की क्षमता
- शिक्षा एंव प्रशिक्षण
- निश्चित नियम
- प्रबन्धात्मक का अभाव
- गुणों की समानता

उपरोक्त के समग्र विश्लेषण के बाद सारतः यह कहा जा सकता है कि लोक प्रशासन एक कला भी है और विज्ञान भी है। चार्ल्सवर्थ की भांति यह कहना समीचीन प्रतीत होता है कि लोक प्रशासन विज्ञान भी है तथा कला भी। उन्ही के शब्दों में "लोक प्रशासन कला है क्योंकि इसमें उत्तमता, नेतृत्व, उत्साह तथा उच्च विचारों की आवश्यकता होती है, यह एक विज्ञान है क्योंकि इसमें आगमनात्मक विश्लेषण, सतर्कतायुक्त नियोजन तथा विवेकपूर्ण साधनों की आवश्यकता है।"

निष्कर्षत लोक प्रशासन उसी भांति एक 'सामाजिक विज्ञान है, जिस भांति राजनीति विज्ञान और प्रबंध विज्ञान है।'

संदर्भ

1. सुगम लोक प्रशासन।
2. लोक प्रशासन–बी एल फाडिया।
3. इंटरनेट।

लेखकों के बारे में...

श्री सुरेश कुमार जिन्दल, वर्तमान में रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र (डेसीडॉक), दिल्ली के निदेशक के रूप में कार्य कर रहे हैं। आपने थापर अभियांत्रिकी तथा प्रौद्योगिकी संस्थान, पटियाला, पंजाब से इलैक्ट्रॉनिक्स तथा संचार विषय में अभियांत्रिकी स्नातक उपाधि प्राप्त की। आपने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई आई टी), खड़गपुर से दूरसंचार विषय में प्रौद्योगिकी स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। आपको ऑपरेशन रिसर्च में प्रबंधन स्नातकोत्तर उपाधि भी प्राप्त है। आप सामरिक संचार के क्षेत्र में उत्कृष्ट विशेषज्ञता रखते हैं। आपने राष्ट्र हेतु स्वदेशी प्रौद्योगिकियों के विकास में विशेषतः संचार नेटवर्कों के अभिकल्पन तथा स्थापन में विशिष्ट योगदान दिया है। आपने राष्ट्र में प्रथम बार सुवाह्य संचार की नींव रखी। आपने नारद परियोजना के अंतर्गत रक्षा सेवाओं हेतु उपग्रह संचार तथा नेटवर्किंग के अभिकल्पन, विकास तथा स्थापन में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। इस संचार प्रणाली का उपयोग श्रीलंका में भारतीय शांति सेना तथा भारतीय सेना के मध्य संचार हेतु किया गया। यह उस समय भारतीय सैन्य मुख्यालय तथा भारतीय शांति सेना के मध्य एकमात्र संचार की व्यवस्था थी। आपने कॉम्बैट नैट रेडियो (सी एन आर) के परियोजना निदेशक के रूप में भारत इलैक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड को यह प्रौद्योगिक हस्तांतरित की।

आपने राष्ट्रीय महत्त्व के विभिन्न कार्यक्रमों, जिनमें एकीकृत प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम भी शामिल है, के लिए सामरिक संचार आवश्यकताओं की पूर्ति में योगदान दिया। सामरिक संचार के परियोजना निदेशक के रूप में आपने 24X7X365 रूप में कार्य करने के लिए निर्मित विभिन्न संचार नेटवर्कों तथा प्रणालियों का अभिकल्पन, विकास तथा स्थापन राष्ट्र के विभिन्न स्थानों पर किया।

आपने 14 सम्पादित पुस्तकें प्रकाशित की हैं। आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हैं, इनमें 2007 में प्रधानमंत्री द्वारा सामरिक योगदान हेतु विशेष सम्मान, 2012 में संचार तथा सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री द्वारा वेब रत्न सम्मान, तथा 2013 में राष्ट्र भाषा स्वाभिमान न्यास द्वारा राजभाषा रत्न सम्मान शामिल हैं। आपका नाम लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड में सबसे बड़ा हिन्दी विज्ञान सम्मेलन आयोजित करने के लिए विश्व रिकार्ड की श्रेणी में दर्ज है। आपको वर्ष 2014 में लोकप्रिय विज्ञान संचार पुरस्कार प्रदान किया गया है। आपकी तीन पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्री फूलदीप कुमार, वर्तमान में रक्षा वैज्ञानिक सूचना तथा प्रलेखन केन्द्र (डेसीडॉक), दिल्ली में वैज्ञानिक के रूप में कार्य कर रहे हैं। आपने महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा से 2002 में इलैक्ट्रॉनिक्स तथा संचार विषय में अभियांत्रिकी स्नातक उपाधि प्राप्त की। आपने 2005 में गुरू जम्भेशवर विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा से पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। आप वर्ष 2005 से डी आर डी ओ में कार्यरत हैं। विज्ञान संचार, प्रलेखन तथा डिजिटल प्रकाशन आपकी विशेषज्ञता के क्षेत्र हैं। आप डी आर डी ओ समाचार (मासिक) तथा प्रौद्योगिकी विशेष (त्रैमासिक) प्रकाशनों के सम्पादक हैं। आपने राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में लगभग 60 शोध पत्र/आलेख प्रस्तुत किए हैं। आपने 18 सम्पादित पुस्तकें प्रकाशित की हैं। आप चार राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा दो अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के आयोजन में सम्मिलत रहे हैं। आपको 2009 में शिक्षक विकास परिषद, गोवा द्वारा विज्ञान संचारक सम्मान, वर्ष 2011 एवं 2013 में प्रौद्योगिकी समूह पुरस्कार, वर्ष 2012 में वर्ष का वैज्ञानिक पुरस्कार, वर्ष 2013 में ईशीर, जोधपुर द्वारा विज्ञान श्री सम्मान, तथा वर्ष 2014 में लोकप्रिय विज्ञान संचार पुरस्कार प्रदान किया गया। आपका नाम लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड में सबसे बड़ा हिन्दी विज्ञान सम्मेलन आयोजित करने के लिए विश्व रिकार्ड की श्रेणी में दर्ज है। आपकी तीन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।